THE HISTORY OF RAJPUTANA

VOLUME V,

PART II.

राजपूताने का इतिहास

पांचवीं जिल्द,

दूसरा भाग

THE

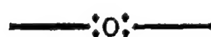
HISTORY OF RAJPUTANA

VOLUME V, PART II.



HISTORY OF THE BIKANER STATE

PART II.



BY

MAHĀMAHOPĀDHYĀYA RĀI BAHĀDUR
SĀHITYA-VĀCHASPATI
Dr. Gaurishankar Hirachand Ojha, D. Litt. (Hony.)



PRINTED AT THE VEDIC YANTRALAYA,
AJMER.



First Edition } 1940 A. D. { *Price Rs. 9.*

Published by

Mahamahopadhyaya Rai Bahadur Sahitya-Vachaspati,
Dr. Gaurishankar Hirachand Ojha, D. Litt, Ajmer.



Apply for Author's Publications to:—

(*i*) *The Author, Ajmer.*

(*ii*) *Vyas & Sons, Book-sellers,*

AJMER.

राजपूताने का इतिहास

पांचवीं जिल्द, दूसरा भाग

बीकानेर राज्य का इतिहास

द्वितीय खंड

ग्रन्थकर्त्ता

महामहोपाध्याय रायबहादुर साहित्य-वाचस्पति

डॉक्टर गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्० (ऑनरेरी)

बाबू चांदमल चंडक के प्रबन्ध से

वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर में छपा

प्रथम संस्करण } वि० सं० १९९७ { मूल्य रु० ६)



महाराजा अनूपसिंह

आर्य-संस्कृति के परम उपासक

संस्कृत भाषा के धुरंधर विद्वान्

अनेक ग्रन्थों के रचयिता

और

विद्वज्जनों के आश्रय-दाता

बीरवर

महाराजा अनूपसिंह

की

पवित्र स्मृति को

सादर समर्पित

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक मेरे राजपूताने के इतिहास की पांचवीं जिल्द के अन्तर्गत प्रकाशित बीकानेर राज्य के इतिहास का दूसरा खंड है। राजपूताने के इतिहास में बीकानेर राज्य के राठोड़ों के इतिहास का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। युद्ध-वीरता, दान-वीरता, विद्या-प्रेम, नीति-चातुर्य्य आदि की दृष्टि से यहां के नरेशों का सदा उच्च स्थान रहा है। वैसे तो उनका सारा गौरवपूर्ण इतिहास ही पाठकों के सामने है और वे उसका अवलोकन करेंगे ही, पर यहां संक्षेप में उसपर प्रकाश डालना अनुचित न होगा।

प्रथम खंड के आरंभ में हमने इस राज्य की भौगोलिक स्थिति, राठोड़ों से पूर्व के राजवंशों और दक्षिण आदि के राठोड़ राजवंशों का संक्षेप से उल्लेख करते हुए जोधपुर राज्य के मूल पुरुष राव सीहा से राव जोधा तक का संक्षिप्त (संक्षिप्त इसलिए कि उनका विस्तृत इतिहास राजपूताने के इतिहास की चौथी जिल्द अर्थात् जोधपुर राज्य के इतिहास के अन्तर्गत आ गया है) वृत्तांत देकर राव बीका से लगाकर महाराजा प्रतापसिंह तक बीकानेर राज्य के नरेशों का सविस्तर वर्णन किया है।

यह कहा जा सकता है कि राव बीका-द्वारा बीकानेर राज्य की

स्थापना होने के पूर्व इस मरुप्रदेश की आवादी बहुत कम थी और जल का अभाव होने से यहां वाहरी आक्रमणकारियों को अनेक कठिनाइयों का अनुभव करना पड़ता था। महाभारत के पीछे यहां स्वतंत्र गण राज्य थे, जिनमें यौद्धेय (जोहिया) मुख्य थे। परमारों के पीछे चौहानों की उन्नति के युग मे इस प्रदेश के चौहान साम्राज्य के अन्तर्गत होने के प्रमाण मिलते हैं। फिर मुसलमानों का भारत पर अधिकार होने के समय यह प्रदेश कई खंडों में विभक्त होकर, यहां के मूल निवासी जोहिये, जाट आदि स्वतंत्र हो गये। उसी समय के आस-पास निकट वसनेवाले भाटियों और परमारों की एक शाखा सांखलों ने भी इसके कुछ भाग पर अधिकार स्थापित किया। फिर उन्हीं जातियों से मारवाड़ के स्वामी राव जोधा के ज्येष्ठ पुत्र वीका ने अपने वाहु-वल से विक्रम की सोलहवी शताब्दी के प्रारम्भ में यह प्रदेश छीनकर अपने वंशजों के लिए वीकानेर राज्य की स्थापना की। इतिहास वतलाता है कि वीका को उसके पिता राव जोधा ने जोधपुर राज्य के पैतृक स्वत्व से वंचित रखकर नवीन राज्य की स्थापना के लिए उत्तेजित किया, जिसपर उसने थोड़े से साथियों के साथ मारवाड़ से उत्तर की ओर जाकर तत्कालीन जोधपुर राज्य से भी कई गुना वड़े राज्य की स्थापना की, जो भूभाग की दृष्टि से भारतवर्ष के वर्तमान देशी राज्यों में भी उल्लेखनीय है। वह वड़ा वीर, रणकुशल, पितृ-भक्त, त्यागी और उदार नरेश था और उसका नाम भारत के इतिहास में सदा सुवर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

राव वीका के वहुत समय पूर्व ही भारतवर्ष मे मुसलमानों का प्रवेश हो चुका था और पंजाब, अजमेर तथा कई अन्य प्रदेशों पर उनका प्रभुत्व स्थापित हो गया था। ऐसी दशा में उनमें और वीकानेर के राजाओं में संघर्ष होना स्वाभाविक ही था। वीकानेर पर मुसलमानों का सबसे पहला और वड़ा आक्रमण राव वीका के पौत्र राव जैतसी (जैतसिंह) के राज्यकाल में हुआ, जिसमें उसने हुमायूं के भाई कामरां की विशाल फ़ौज को परास्तकर काफ़ी यश प्राप्त किया। इसके वाद ही जोधपुर के राव मालदेव के साथ की लड़ाई में वह मारा गया और वीकानेर राज्य का

अधिकांश भाग जोधपुरवालों के अधिकार में चला गया। तब राव कल्याणमल ने सर्वप्रथम शक्तिशाली मुसलमानों की मित्रता से लाभ उठाकर शेरशाह की सहायता से अपना गया हुआ राज्य वापस लिया। यहीं से बीकानेर राज्य के इतिहास का नया युग प्रारम्भ होता है। शेरशाह के वंश के अंत के साथ मुग़लों का फिर बोलबाला हुआ और हुमायूं ने पुनः मुग़ल साम्राज्य की बाग-डोर संभाली। उसके पुत्र अकबर के समय मुग़लों की स्थिति सुदृढ़ होकर उनका प्रभुत्व बहुत बढ़ा। राजपूताना के राज्यों के बीच पारस्परिक वैर विरोध की भावना बहुत बढ़ी हुई होने से राव कल्याणमल ने मुग़ल सम्राट् अकबर के साथ मैत्री स्थापित कर ली, जो मुग़लों के ह्रास के समय तक बनी रही। इसका परिणाम बीकानेर राज्य के लिये अच्छा ही हुआ। राज्य की अभिवृद्धि और आन्तरिक स्थिति के दृढ़ होने के साथ ही बीकानेर के महाराजा समय-समय पर मुग़ल-वाहिनी का सफलतापूर्वक संचालन कर प्रतिष्ठा और यश के भागी बने। बीकानेर के नरेशों में से महाराजा अनूपसिंह, महाराजा गजसिंह तथा महाराजा रत्नसिंह को मुग़ल बादशाहों की तरफ़ से विभिन्न अवसरों पर "माही मरातिब" का सर्वोच्च सम्मान प्राप्त हुआ था, जो इस बात का सूचक है कि मुग़लों के राज्य में बीकानेर के नरेशों का स्थान बड़ा ऊंचा रहा। इस युग में बादशाह औरंगज़ेब के समय तक बीकानेर राज्य में साहित्य, कला और वैभव का अच्छा विकास हुआ। महाराजा रायसिंह, सूरसिंह, कर्णसिंह, और अनूपसिंह इस युग के बड़े प्रभावशाली राजा हुए और उनका मुग़ल साम्राज्य के निर्माण एवं विकास में काफ़ी हाथ रहा तथा समय-समय पर उन्हें ऊंचे मनसब मिले। उक्त राजाओं के राज्य-समय में बीकानेर के साहित्यिक जीवन में बड़ी उन्नति हुई। वे स्वयं साहित्यिक-रुचि-संपन्न थे और उनके आश्रय में कई बाहरी विद्वानों ने अनेक अमूल्य ग्रन्थों की रचना की।

अकबर-द्वारा जमाई हुई मुग़ल साम्राज्य की नींव औरंगज़ेब के राज्य-समय में उसके अनुचित व्यवहार और धार्मिक कट्टरता के कारण

हिल गई। ऐसी प्रसिद्धि है कि उसके विश्वासघात से अन्य नरेशों की महाराजा कर्णसिंह ने रक्षा की, जिसके एवज़ में उन्होंने उसे "जय जंगलधर बादशाह" का विरुद दिया। उसकी निर्भीकता, स्वाभिमान और वीरता का यह उपयुक्त पुरस्कार था। बीकानेर के कई एक नरेश बादशाहों की तरफ़ से दक्षिण के प्रबंध के लिए नियुक्त रहे, और वहीं उनका देहांत हुआ।

वि० सं० की अट्ठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से ही मुग़ल सम्राज्य की अवनती होने लगी। मुग़ल बादशाहों की कमज़ोरी से उनके विरोधियों की संख्या बढ़ गई और चारों ओर अराजकता का साम्राज्य फैल गया। ऐसी अवस्था में स्वभावतः ही राजपूताना के राजाओं ने भी मुग़ल बादशाहों के साथ के अपने संबंध में कमी कर दी। फलस्वरूप राजपूताना के विभिन्न राज्यों के पारस्परिक कलह में फिर वृद्धि हो गई, जिससे उनकी पर्याप्त हानि हुई। उन्हीं दिनों जोधपुर राज्य के स्वामियों ने बीकानेर राज्य को हस्तगत करने का कई बार उद्योग किया, परंतु इसमें उन्हें सफलता न मिली।

उसी समय भारतवर्ष के कई भागों पर विलायत की ईस्ट इंडिया कंपनी का अधिकार हो गया। क्रमशः उसका प्रभुत्व बढ़ने लगा। साथ ही मरहटों की संगठित शक्ति के कई टुकड़े हो गये और गायकवाड़, सिंधिया होलकर आदि राज्यों का अलग-अलग आविर्भाव होकर देश में अव्यवस्था और लूट-मार का बाज़ार गर्म हो गया। सिखों ने अपने लिए पंजाब में एक प्रबल राज्य क़ायम कर लिया। ऐसे समय में बीकानेर के आन्तरिक झगड़ों पर क़ाबू रखते हुए बाहरी हमलों से उसको सुरक्षित रखने का श्रेय महाराजा गजसिंह को है, जो वीर और नीतिकुशल होने के साथ ही विद्वान् और योग्य शासक था। उसके ज्येष्ठ भ्राता अमरसिंह के होते हुए भी वह अपनी योग्यता के कारण ही सरदारों-द्वारा बीकानेर का महाराजा बनाया गया था। उसने अस्त-प्राय मुग़ल शक्ति से भी मेल बनाये रक्खा और दिल्ली के बादशाह अहमदशाह को अवसर पड़ने पर सैनिक सहायता

भी पहुंचाई, जिसके एवज़ में उसे बादशाह की तरफ़ से "राजराजेश्वर, महाराजाधिराज, महाराजशिरोमणि" की उपाधियां प्राप्त हुईं। उसके पीछे महाराजा राजसिंह और प्रतापसिंह बीकानेर के स्वामी हुए, पर वे अधिक समय तक राज्य न कर पाये। प्रतापसिंह के साथ ही बीकानेर राज्य के इतिहास का पहला खंड समाप्त होता है।

प्रस्तुत दूसरे खंड में महाराजा सूरतसिंह से लगाकर महाराजा सर गंगासिंहजी तक का विस्तृत इतिहास और बीकानेर राज्य के सरदारों का वृत्तांत सन्निविष्ट है। महाराजा सूरतसिंह ने योग्यतापूर्वक शासन प्रबंध कर, जो थोड़ी बहुत अव्यवस्था राज्य में फैल गई थी, उसे दूर किया। उसके समय में राजपूताना में भी मरहटों का आतंक बहुत बढ़ गया था और वे राजपूताना के कई राज्यों—उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, बूंदी और कोटा—को पददलित कर वहां के नरेशों से ख़िराज वसूल करने लगे थे। ऐसे समय में बीकानेर राज्य का उनके प्रभाव से अछूता बच जाना महाराजा सूरतसिंह की शक्ति और नीति-चातुर्य्य का ही द्योतक है।

उसी समय के आस-पास अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी का बढ़ता हुआ प्रभुत्व देखकर राजपूताना के राज्यों के स्वामी अपनी रक्षा की लालसा से अंग्रेज़ सरकार के संरक्षण में जाने लगे। ई० स० १८१८ में लॉर्ड हेस्टिंग्ज़ के समय अंग्रेज़ सरकार और राजपूताना के राज्यों के बीच अलग-अलग संधियां स्थापित हुईं। बीकानेर राज्य का अंग्रेज़ सरकार के साथ मैत्री-संबंध स्थापित होने पर, वहां की आंतरिक स्थिति में बहुत सुधार हुआ और अराजकता एवं डाकेज़नी बन्द होकर शांति, सुव्यवस्था तथा समृद्धि का विकास होने लगा। क्रमशः शासन-शैली में भी परिवर्तन होकर प्रजा-हितैषी कार्यों की योजनाएं हुईं। इस पारस्परिक मैत्री का बीकानेर के नरेशों ने अब तक पूर्ण रूप से निर्वाह किया है और आवश्यकता पड़ने पर समय-समय पर उन्होंने धन और जन से अंग्रेज़ सरकार को पूरी सहायता पहुंचाई है। प्रत्येक युद्ध के अवसर पर उन्होंने जिस तत्परता का प्रदर्शन किया वह राठोड़ों के गौरव के अनुरूप ही है।

ई० स० १८५७ का सिपाही विद्रोह अंग्रेज़ों के लिए बड़े संकट का और भारतीय नरेशों के लिए परीक्षा का अवसर था, जिसमें महाराजा सरदार-सिंह ने स्वयं ससैन्य विद्रोहियों के दमनार्थ जाकर अपना कर्तव्य पालन किया।

बीकानेर राज्य में जो सुधार आजकल दिखाई देते हैं उनमें से अधि-कांश का श्रेय महाराजा डूंगरसिंह को है। देश में शांति और सुव्यवस्था का आविर्भाव तो हो ही गया था। महाराजा ने प्रजा के हितों को ध्यान में रखते हुए अनेक प्रकार की सुविधा पहुंचानेवाली योजनाएं तैयार की, पर उनके कार्यरूप में परिणत किये जाने का अवसर उसके जीवनकाल में न आया। उसके कोई सन्तान न होने से उसने अपने भ्राता सर गंगासिंहजी को अपना उत्तराधिकारी निर्वाचित किया, जो सात वर्ष की आयु में वि० सं० १९४४ में बीकानेर राज्य के स्वामी हुए। इन्होंने अपने ५३ वर्ष के सुदीर्घ शासनकाल में जो-जो प्रजाहित के कार्य किये, विगत महायुद्ध तथा अन्य कई युद्धों में अंग्रेज़ सरकार को जो सहायता पहुंचाई एवं इनके समय में बीकानेर राज्य की जो आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक उन्नति हुई वह पाठकों से अविदित नहीं है। फिर भी यहां इतना कहना अनुचित न होगा कि वीरता, नीति-कुशलता, उदारता, सत्यपरायणता, व्याख्यान-पटुता आदि गुणों के कारण महाराजा साहब भारत के एक रत्न हैं और इनकी कीर्ति केवल हिन्दुस्तान में ही नहीं अपितु सुदूर देशों में भी फैली हुई है। गंग-नहर-द्वारा बीकानेर राज्य के उत्तरी भाग के जल-कष्ट को दूर कर उसे पंजाब के समान उपजाऊ बनाने का इनका भगीरथ प्रयत्न केवल प्रशंसा के योग्य ही नहीं बल्कि अनुकरणीय भी है। बीकानेर की अभूतपूर्व उन्नति और अनुपम शोभा जो इस समय नज़र आती है उसका श्रेय भी महाराजा सर गंगासिंहजी को ही है।

उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन-द्वारा पाठकों को यह ज्ञात हो गया होगा कि भारतवर्ष के इतिहास में बीकानेर राज्य का प्रारम्भ से ही बड़ा गौरवपूर्ण स्थान रहा है और समय-समय पर यहां के शासकों ने वीरता, उदारता

और आत्मोत्सर्ग के अभूतपूर्व उदाहरण लोगों के सामने रक्खे हैं।

जो नीति हमने राजपूताना के इतिहास की पिछली जिल्दों में रक्खी है उसका बीकानेर राज्य के इतिहास में भी पालन किया गया है। कपोल-कल्पित और मन-गढ़न्त बातों को पूर्व नीति के अनुसार इतिहास में समावेश न करने के नियम का निर्वाह करते हुए हमने प्रमाणोक्त बातों को ही ग्रहण किया है और जहां से कोई वर्णन लिया गया यथास्थान उसका उल्लेख कर दिया गया है। इतिहास के दोनों पहलुओं पर दृष्टि रखते हुए पक्ष और विपक्ष की बातों पर विचार कर युक्ति एवं तर्क से जो बात माननीय जान पड़ी उसे ही हमने ग्रहण किया है और जहां-जहां मत-भेद हुआ वहां हमने अपने विचार भी प्रकट कर दिये हैं। केवल एक पक्षीय मत पर विद्वान् लोग अक्सर विश्वास नहीं करते, अतएव ऐसे कई विवाद-ग्रस्त विषयों को, जिनका अन्यत्र तो उल्लेख है पर वहां की प्राचीन ख्यातों आदि में कुछ भी वर्णन नहीं है, हमको छोड़ देना पड़ा है, क्योंकि हम उन्हें सन्देह-रहित नहीं कह सकते।

प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में हमने जिन-जिन साधनों का उपयोग किया है उनका विशद विवेचन प्रथम खंड की भूमिका में आ गया है, इसलिए उसकी पुनरावृत्ति करना अनावश्यक है। परन्तु बीकानेर राज्य की विस्तृत ख्यात, जो दयालदास की ख्यात के नाम से प्रसिद्ध है और "देशदर्पण" एवं "आर्य आख्यान कल्पद्रुम" के रचयिता दयालदास का यहां कुछ परिचय देना अप्रासंगिक न होगा। अधिकांश प्राचीन रचनाओं में उनके लेखकों का कुछ न कुछ परिचय अवश्य मिलता है, किंतु दयालदास ने अपनी ख्यात के प्रारंभ अथवा अंत में कहीं भी अपना परिचय नहीं दिया है। इससे तो यही अनुमान होता है कि वह अपनी प्रसिद्धि का विशेष अभिलाषी न था। मारू चारण जाति की भादलिया शाखा की एक उप-शाखा सिंढायच है। ऐसी प्रसिद्धि है कि नरसिंह भादलिया को नाहड़राव पड़िहार ने कई सिंहों को मारने के एवज़ में "सिंहढाहक" की उपाधि दी थी, जिसका अपभ्रंश "सिंढायच" है। इसी वंश मे बीकानरे राज्य के

कूंथिया गांव में वि० सं० १८५५ (ई० स० १७६८) के लगभग सिंढायच दयालदास का जन्म हुआ था। वह महाराजा रत्नसिंह का विश्वासपात्र होने से राज्य-संबंधी कार्यों में भाग लिया करता था और इस प्रसंग में उदयपुर, रीवां आदि राज्यों मे भी गया था। उसे इतिहास से बड़ा प्रेम था और वह बीकानेर राज्य ही नहीं बाहर की भी कई रियासतों के इतिहास का अच्छा ज्ञान रखता था। महाराजा रत्नसिंह ने समय समय पर उसका अच्छा सम्मान कर उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि की। अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि होने के पीछे राजपूताना के राजाओं को अपने अपने यहां का इतिहास संग्रह करवाने की आवश्यकता जान पड़ी, तब महाराजा रत्नसिंह ने दयालदास को ही इस कार्य के लिए उपयुक्त समझ अपने राज्य का इतिहास तैयार करने की आज्ञा दी। इसपर उसने प्राचीन वंशावलियां, बहियां, शाही फ़रमान, प्राचीन क़ाग़ज़-पत्र, पट्टे, परवाने आदि संग्रह कर परिश्रमपूर्वक बीकानेर राज्य का विस्तृत इतिहास लिखा, जिसको "दयालदास की ख्यात" कहते हैं। इसमें सरदारसिंह के राज्यारोहण तक का हाल है, जिससे कहा जा सकता है कि यह वि० सं० १९०९ (ई० स० १८५२) के आस-पास सम्पूर्ण हुई होगी। कर्नल पाउलेट ने अपने "गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट" के तैयार करने में अधिकतर इसी का आधार लिया है। इसके अतिरिक्त उस (दयालदास) ने वैद मेहता जसवंतसिंह के आदेशानुसार वि० सं० १९२७ में "देशदर्पण" की रचना की। महाराजा डूंगरसिंह ने इन दो ऐतिहासिक ग्रन्थों से ही संतोष न कर उसे समस्त भारतवर्ष का प्रान्तीय भाषा में इतिहास लिखने की आज्ञा दी। इसपर वि० सं० १९३४ में उसने "आर्य आख्यान कल्पद्रुम" की रचना की। दयालदास नब्बे से अधिक वर्षों की आयु में वि० सं० १९४८ (१८९१) के वैशाख मास में काल-कवलित हुआ। वह महाराजा सूरतसिंह, रत्नसिंह, सरदारसिंह और डूंगरसिंह का कृपापात्र रहा। उसके प्रपौत्र आवड़दान के पास इस समय भी बीकानेर राज्य की तरफ़ से मोकलेरा, बासी और कूंबिया गांव विद्यमान हैं।

विद्वद्वृंद को प्रारंभ से ही मेरे ग्रंथों के अवलोकन करने की रुचि रही है। मुझे आशा है कि मेरा बीकानेर राज्य का इतिहास भी उन्हें रुचिप्रद होगा। यह सर्वांगपूर्ण है, इसका दावा तो मैं नहीं कर सकता, पर इसमें आधुनिक शोध को यथासंभव स्थान देने का प्रयत्न किया गया है। शोध का अंत हो गया ऐसा नहीं कहा जा सकता। अभी बहुत कुछ करना बाक़ी है और भविष्य में और भी नवीन महत्वपूर्ण वृत्त ज्ञात होने की पूरी आशा है। ऐसी दशा में भी मुझे विश्वास है कि मेरा यह इतिहास भावी इतिहास-लेखकों के पथ-प्रदर्शन में अवश्य सहायता पहुंचायेगा।

त्रुटियां रहना संभव है, क्योंकि भूल मनुष्य मात्र से होती है और मैं इसका अपवाद नहीं हूं। फिर इस समय मेरी वृद्धावस्था भी है। कुछ त्रुटियों के लिए शुद्धि-पत्र लगा दिया गया है, फिर भी जो अशुद्धियां पाठकों की नज़र में आयें उनकी सूचना मुझे मिलने पर दूसरी आवृत्ति के समय उनका यथाशक्य सुधार कर दिया जायगा।

जैसा कि मैं इस पुस्तक के प्रथम खंड की भूमिका में लिख चुका हूं यह वर्त्तमान बीकानेर नरेश जेनरल राजराजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि महाराजाधिराज श्रीमान् महाराजा सर गंगासिंहजी साहब बहादुर की असीम कृपा और इतिहास प्रेम का ही फल है कि यह इतिहास अपने वर्तमान रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। मुझे इसके प्रणयन में जिस समय जिस सामग्री की आवश्यकता पड़ी वह अविलम्ब मुझे प्राप्त हुई। मैं इसके लिए श्रीमानों का चिरकृतज्ञ रहूंगा। इसी प्रकार मैं बीकानेर के सुयोग्य रेवेन्यू मिनिस्टर मेजर महाराज मान्धातासिंह; सांडवा के स्वामी मेजर जेनरल सरदार बहादुर राजा जीवराजसिंह; विद्याप्रेमी ठाकुर रामसिंह, एम० ए०; स्वामी नरोत्तमदास, एम० ए० और वीठू रिड़मलदान का भी अत्यन्त आभारी हूं, क्योंकि उनसे मुझे सदैव सत्परामर्श और प्रोत्साहन मिलता रहा है।

अंत में मैं काशी-निवासी श्रीहृदयनारायण सरीन, बी० ए०, जो गत छः वर्षों से मेरे सहकारी हैं तथा पं० नाथूलाल व्यास का, जिन्होंने आरंभ

से ही मेरे इस इतिहास के प्रणयन में मनोयोग-पूर्वक कार्य किया है, नामोल्लेख करना आवश्यक समझता हूं। मुझे अपने पुत्र प्रो० रामेश्वर ओझा, एम० ए०, एवं निजी इतिहास-विभाग के कार्यकर्ता पं० चिरंजीलाल व्यास से भी पूरा सहयोग प्राप्त हुआ है, अतएव उनका नामोल्लेख करना भी आवश्यक है।

अजमेर,
ज्येष्ठ कृष्णा द्वितीया
वि० सं० १९९७ } गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा

विषय-सूची

आठवां अध्याय

महाराजा सूरतसिंह और महाराजा रत्नसिंह

विषय	पृष्ठांक

नवां अध्याय

महाराजा सरदारसिंह और महाराजा डूंगरसिंह

दसवां अध्याय

महाराजा सर गंगासिंहजी

ग्यारहवां अध्याय

बीकानेर राज्य के सरदार और प्रतिष्ठित घराने

परिशिष्ट

अनुक्रमणिका

चित्र-सूची





महामहोपाध्याय रायबहादुर साहित्यवाचस्पति डा० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्०-रचित तथा संपादित ग्रन्थ

स्वतन्त्र रचनाएं—

		मूल्य
(१) प्राचीन लिपिमाला (प्रथम संस्करण)	...	अप्राप्य
(२) भारतीय प्राचीन लिपिमाला (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण)	...	अप्राप्य
(३) सोलंकियों का प्राचीन इतिहास—प्रथम भाग	...	अप्राप्य
(४) सिरोही राज्य का इतिहास	...	अप्राप्य
(५) बापा रावल का सोने का सिक्का	...	।।)
(६) वीरशिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह	...	।।=)
(७) * मध्यकालीन भारतीय संस्कृति	...	रु० ३)
(८) राजपूताने का इतिहास—पहली जिल्द (द्वितीय संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण)	...	रु० ७)
(९) राजपूताने का इतिहास—दूसरी जिल्द,		
उदयपुर राज्य का इतिहास—पहला खंड	...	अप्राप्य
उदयपुर राज्य का इतिहास—दूसरा खंड	...	रु० ११)
(१०) राजपूताने का इतिहास—तीसरी जिल्द,		
पहला भाग—डूंगरपुर राज्य का इतिहास	...	रु० ४)
दूसरा भाग—बांसवाड़ा राज्य का इतिहास	...	रु० ४।।)
तीसरा भाग—प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास	...	यंत्रस्थ
(११) राजपूताने का इतिहास—चौथी जिल्द,		
जोधपुर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड	...	रु० ८)
जोधपुर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड	...	यंत्रस्थ
(१२) राजपूताने का इतिहास—पांचवीं जिल्द,		
बीकानेर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड	...	रु० ६)
बीकानेर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड	...	रु० ९)

---

* प्रयाग की "हिन्दुस्तानी एकेडेमी"-द्वारा प्रकाशित। इसका उर्दू अनुवाद भी उक्त संस्था ने प्रकाशित किया है। "गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी" (अहमदाबाद) ने भी इस पुस्तक का गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया है, जो वहां से १) रु० में मिलता है।

		मूल्य
(१३) राजपूताने का इतिहास—दूसरा खंड	...	अप्राप्य
(१४) राजपूताने का इतिहास—तीसरा खंड	...	रु० ६)
(१५) राजपूताने का इतिहास—चौथा खंड	...	रु० ६)
(१६) भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री	...	॥)
(१७) ‡ कर्नल जेम्स टॉड का जीवनचरित्र	...	।)
(१८) I राजस्थान-ऐतिहासिक-दन्तकथा—प्रथम भाग ('एक राजस्थान निवासी' नाम से प्रकाशित)	...	अप्राप्य
(१९) × नागरी अंक और अक्षर	...	अप्राप्य

सम्पादित

(२०) * अशोक की धर्मलिपियां—पहला खंड (प्रधान शिलाभिलेख)	...	रु० ३)
(२१) * सुलेमान सौदागर	...	रु० १।)
(२२) * प्राचीन मुद्रा	...	रु० ३)
(२३) * नागरीप्रचारिणी पत्रिका (त्रैमासिक) नवीन संस्करण, भाग १ से १२ तक—प्रत्येक भाग	...	रु० १०)
(२४) * कोशोत्सव स्मारक संग्रह	...	रु० ३)
(२५-२६) ‡ हिन्दी टॉड राजस्थान—पहला और दूसरा खंड (इनमें विस्तृत सम्पादकीय टिप्पणियों-द्वारा टॉड-कृत 'राजस्थान' की अनेक ऐतिहासिक त्रुटियां शुद्ध की गई हैं)	...	रु० ४)
(२७) जयानक-प्रणीत 'पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य' सटीक	...	यंत्रस्थ
(२८) जयसोम-रचित 'कर्मचंद्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम्'	...	यंत्रस्थ
(२९) मुंहणोत नैणसी की ख्यात—दूसरा भाग	...	रु० ४)
(३०) गद्य-रत्न-माला—संकलन	...	रु० १।)
(३१) पद्य-रत्न-माला—संकलन	...	रु० ॥।)

---

‡ खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर-द्वारा प्रकाशित ।

× हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग-द्वारा प्रकाशित ।

* काशी नागरीप्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित ।



ग्रन्थकर्त्ता-द्वारा रचित पुस्तकें 'व्यास एण्ड सन्स', बुकसेलर्स, अजमेर के यहां भी मिलती हैं ।

राजपूताने का इतिहास

पांचवीं जिल्द, दूसरा भाग

बीकानेर राज्य का इतिहास

द्वितीय खण्ड

आठवां अध्याय

महाराजा सूरतसिंह और महाराजा रत्नसिंह

महाराजा सूरतसिंह

जन्म तथा गद्दीनशीनी

महाराजा सूरतसिंह का जन्म वि० सं० १८२२ पौष सुदि ६ (ई० स० १७६५ ता० १८ दिसम्बर) को हुआ था तथा वि० सं० १८४४ आश्विन सुदि १० (ई० स० १७८७ ता० २१ अक्टोबर) को वह बीकानेर के सिंहासन पर बैठा[1]।

राज्य में विद्रोह करनेवालों को दंड देना

वि० सं० १८४७ में कई स्थानों में विद्रोह हो जाने के कारण उसने ससैन्य उसको दबाने के लिए प्रस्थान किया। सर्वप्रथम उसने चूरू पर चढ़ाई की, जहां का ठाकुर शिवसिंह उसकी सेवा में उपस्थित हो गया। उससे दंड के ६५००० रुपये वसूल कर वह राजपुर गया। वहां का भट्टी खानबहादुर उसकी सेवा में उपस्थित हो गया, जिससे उसने पेशकशी के २०००० रुपये लिये। फिर नौहर में रहनेवाले विद्रोही नाहटा मनसुख एवं अमरचन्द को दंड देकर वह बीकानेर लौट गया[2]।

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६५। पाउलेट-कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' में गद्दी बैठने का समय आश्विन सुदि १२ दिया है (पृ० ७३)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६५। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७३।

जोधपुर से मेल स्थापित होना

वि० सं० १८४८ (ई० स० १७६१) में उसका जोधपुर के शासक विजयसिंह से मेल स्थापित हो गया, जिसने उसके पास टीका भेजा[1]। इससे पूर्व विजयसिंह सुलतानसिंह का पक्षपाती था। उसके सूरतसिंह से मिल जाने पर सुलतानसिंह तो उदयपुर चला गया तथा मोहकमसिंह और अजयसिंह[2] सिंध जा रहे। इसके दो वर्ष बाद वि० सं० १८५० (ई० स० १७६३) में विजयसिंह का देहांत हो गया[3] और उसके स्थान में उसका पौत्र भीमसिंह[4] जोधपुर की गद्दी पर बैठा[5]।

जयपुर से मेल स्थापित होना

वि० सं० १८५५ (ई० स० १७६८) में जब सूरतसिंह बीदासर में ठहरा हुआ था, उसकी सेवा में जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह का दूत गोगावत-शंभूसिंह गया। परस्पर मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हो जाने पर सूरतसिंह ने भी अपनी तरफ़ से व्यास हरिशंकर भांनीदासोत को जयपुर भेजा, जिसने जाकर वहां के सीमा-सम्बन्धी झगड़े का निपटारा किया[6]।

वि० सं० १८५६ (ई० स० १७६६) में सूरतसिंह ने गांव सोढल में

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है वह ऊपर पृ० ३६५ टि० २ में दिया जा चुका है।

(२) टॉड-कृत 'राजस्थान' से पाया जाता है कि यह अपने भाई सुलतानसिंह के साथ जयपुर जा रहा था (जि० २, पृ० ११३६)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में विजयसिंह की मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि १८५०) आषाढ वदि १४ (ई० स० १७६३ ता० ७ जुलाई) को होनी लिखी है (जि० २, पृ० १०५)।

(४) यह विजयसिंह के दूसरे पुत्र भोमसिंह का बेटा था। दयालदास ने इसे फ़तहसिंह का पुत्र लिखा है, जो ठीक नहीं है।

(५) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७३।

(६) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७३।

सूरतगढ़ का निर्माण कराया[1]। यह गढ़ कुंभाणे के ठाकुर की मारफ़त भट्टियों से मिलकर बनवाया गया था। कुछ ही दिनों बाद भट्टियों ने देश में उत्पात करना आरंभ किया।

भट्टियों से लड़ाई

इसकी सूचना मिलते ही महाराजा ने भटनेर पर २००० सेना भेजी, जिसमें रावतसर का रावत बहादुरसिंह, भूकरके का ठाकुर मदनसिंह, जैतपुरे का ठाकुर पद्मसिंह, बेलासर का पड़िहार सांगी आसकरण, सिख टीकासिंह, पठान अहमदख़ां आदि थे। इस सेना के बीगोर में पहुंचने की ख़बर लगते ही ज़ाब्ताख़ां ने ७००० फ़ौज के साथ आकर इसका सामना किया। भट्टी रात को तो लड़ते थे और दिन को दो कोस दूर डबली गांव में चले जाते थे, जिससे राठोड़-सैन्य को दम मारने का भी समय न मिलता था। तब बीकानेरी फ़ौज ने विपक्षियों पर एक दम आक्रमण करने का निश्चय किया और रावतसर से रसद आदि सामान लाने के लिए आदमी भेजे। भट्टियों ने जब रसद के आने का समाचार सुना तो वे उसपर टूट पड़े। इसी समय राठोड़ों ने भी प्रबल वेग से उनपर आक्रमण कर दिया। कुछ समय की भीषण लड़ाई के पश्चात् विजय राठोड़ों ही की हुई। डबली पर अधिकार करने के अनन्तर बीगोर में फ़तहगढ़ नामक एक गढ़ बनवाया गया, जहां सारे रावतोत सरदारों और ख़ज़ांची को रखकर शेष फ़ौज बीकानेर लौट गई[2]।

---

(१) वीरविनोद भाग २, पृ० ५०८।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६५। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७३।

इस सम्बन्ध में टॉड लिखता है—'वि० सं० १८५७ (ई० स० १८०१) में महाराजा के बड़े भाई सुरताणसिंह और अजबसिंह ने, जो जयपुर जा रहे थे, भटनेर आकर महाराजा को गद्दी से उतारने के लिए, विरोधी सरदारों और भट्टियों की सेना एकत्र की, लेकिन कुछ उस (महाराजा) के अत्याचारों का स्मरणकर अथवा धन पाकर अलग ही बने रहे। बीगोर नामक स्थान में महाराजा का विद्रोहियों से सामना हुआ। दोनों दलों में भीषण लड़ाई हुई, जिसमें भट्टियों के ३००० आदमी मारे गये। विरोधियों की पूर्णतया पराजय हुई और महाराजा ने युद्धक्षेत्र में एक क़िला बनवाकर

मरहटों ने राजपूताना के कई राज्यों पर अपनी चौथ लगा दी थी, जो बराबर उनके पास पहुंचती न थी। जब उन्हें अपनी फ़ौज की तनख़्वाह चुकाने के लिए रुपयों की आवश्यकता होती तब उन्हें अलग-अलग राज्यों अथवा प्रजा से जिस तरह बन पड़ता रुपया वसूल करना पड़ता था।

जयपुर के महाराजा की सहायता करना

इसके लिए, ऐसे अवसरों पर उन्हें उन राज्यों पर सेना भेजनी पड़ती थी। वि० सं० १८५६ (ई० स० १७६६) में सिन्धिया के नर्मदा के उत्तरी भाग के सेनाध्यक्ष लकवा[1] (मराठा) ने वामनराव[2] को जयपुर पर आक्रमण करने की आज्ञा भेजी और साथ ही यह भी लिखा कि पहले के अनुसार ही वह वहां से रुपये वसूल करे। उक्त आदेश के प्राप्त होते ही वामनराव

उसका नाम फ़तहगढ़ रक्खा (राजस्थान; जि० २, पृ० ११३६-४०)।'

टॉड के उपर्युक्त वर्णन में सुरताणसिंह और अजबसिंह के नाम आये हैं, परन्तु दयालदास की ख्यात में उनके नाम नहीं हैं।

(१) लकवा दादा लाड, सारस्वत (शेणवी) ब्राह्मण था। उसके पूर्वजों ने सावन्तवाड़ी राज्य के पारखा व आरोवा के देसाइयों को बीजापुर के सुलतान से सरदारी दिलाई थी। इसी कृतज्ञता के कारण उन्होंने लकवा के पूर्वजों को आरोवा व चीखली गांवों में जागीर दी थी, जो अब तक उनके वंश में चली आती है। युवा होने पर लकवा सिन्धिया के मुख्य मुत्सद्दी बालोबा तात्या पागनीस के पास चला गया और वहां प्रारम्भ में अहलकार तथा पीछे से सिन्धिया के ५२ रिसालों का अफ़सर बना। सेनापति जिवबा दादा की अध्यक्षता में वह अपने अधीनस्थ रिसालों सहित कई लड़ाइयां लड़ा, जिससे उसकी प्रसिद्धि हुई। इस्माइलबेग के साथ आगरा के युद्ध में उसने बहुत वीरता दिखाई, जिसपर उसे 'शमशेर जंगबहादुर' की उपाधि मिली। फिर वह पाटन के युद्ध में इस्माइलबेग से, लाखेरी के युद्ध में होल्कर की सेना से और अजमेर की लड़ाइयों में भी लड़ा। इन लड़ाइयों से उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया। दौलतराव सिन्धिया के समय वह राजपूताने का सूबेदार नियुक्त हुआ। फिर वह उदयपुर गया, जहां जॉर्ज टॉमस से उसकी लड़ाई होती रही। वि० सं० १८५९ माघ सुदि ५ (ई० स० १८०३ ता० २७ जनवरी) को सलूंबर में ज्वर से उसका देहांत हुआ।

(२) सिन्धिया के उत्तरी प्रदेश के सेनाध्यक्ष लकवा का अधीनस्थ सरदार।

ने जॉर्ज टामस[1] को भी इस चढ़ाई में सम्मिलित होने के लिए लिखा। पहले तो उसने इनकार किया, परन्तु जब वामनराव ने कुछ रुपये देने का वादा किया तो उसने स्वीकार कर लिया और उसके शामिल हो गया। इस सम्मिलित सेना के कछवाहों के देश में प्रवेश करते ही जयपुर के महाराजा (प्रतापसिंह) की थोड़ी सेना, जो उधर थी, पीछी लौट गई। भिन्न-भिन्न जगहों के स्वामियों से रुपये वसूल करते हुए तब वे (मरहटे) फ़तहपुर की ओर अग्रसर हुए, जहां के बचे हुए एक कुएं पर उन्होंने अधिकार कर लिया[2]। जयपुर राज्य की सेना भी उन्हें निकालने के लिए शीघ्रता से आ रही थी, जिसके निकट आ जाने का समाचार पाकर टॉमस ने अपनी सेना की रक्षा के लिए उस प्रदेश में वहुतायत से होनेवाले

---

(१) 'जॉर्ज टॉमस' राजपूताने में 'जाफ़ फिरंगी' के नाम से प्रसिद्ध है। उसका जन्म वि० सं० १८१३ (ई० स० १७५६) में आयर्लैंड में हुआ था। वह ई० स० १७८१ (वि० सं० १८३८) में एक अंग्रेज़ी जहाज़ से मद्रास आया। पांच वर्ष तक वह कर्नाटक में पोलिगरों के साथ रहा। फिर कुछ समय तक हैदराबाद के निज़ाम की सेना में रहकर ई० स० १७८७ (वि० सं०१८४४) में वह दिल्ली चला गया और बेगम समरू की सेवा में रहा, जहां वह बहुत प्रसिद्ध हुआ। ई० स० १७९३ (वि० सं० १८५०) से वह आपा खांडेराव के पास रहा। ई० स० १७९७ (वि० सं० १८५४) में आपा खांडेराव के मरने पर उसके उत्तराधिकारी वामनराव से अप्रसन्न होकर वह पंजाब की ओर चला गया और हरियाने को जीतकर उसने जॉर्जगढ़ बनाया। फिर हिसार, हांसी, सिरसा पर भी उसने अधिकार कर लिया, जिससे उसकी शक्ति बढ़ गई। वह राजपूताने तथा पंजाब में कई लड़ाइयां लड़ा। उसके प्रतिस्पर्धी पैरन और कप्तान स्मिथ ने भी जॉर्जगढ़ में उसका मुकाबला किया, तब वह ब्रिटिश सीमा-प्रान्त की तरफ़ भागा, जहां से कलकत्ते जाते हुए ई० स० १८०२ (वि० सं० १८५९) के अगस्त मास में वह मर गया।

(२) राजपूताने के कई स्थलों में जल की अत्यधिक कमी होने के कारण परस्पर लड़नेवालों में से एक दल कुएं आदि पाटने तथा दूसरा उनपर अधिकार करने के प्रयत्न में रहा करता था। इस लड़ाई में भी शत्रु के आगमन की सूचना पा जयपुर-वालों ने कुएं बन्द करने शुरू कर दिये थे। टॉमस के पहुंचने तक केवल एक कुआँ बच रहा था, जिसपर बड़ी लड़ाई के बाद उसने अधिकार कर लिया।

कंटीले पेड़ों को काटकर सामने आड़ लगा दी। थोड़े समय बाद ही जयपुर की सेना भी उससे केवल चार कोस की दूरी पर आ लगी। कई बार दोनों दलों का सामना हुआ, जिसमें जयपुर की सेना की पराजय हुई और उसके बहुत से सैनिक काम आये तथा उन्होंने सन्धि के लिए बातचीत आरम्भ की, परन्तु पेशकशी की रक़म बहुत कम होने से इस सन्धि-वार्ता का परिणाम कुछ न निकला। तब दोनों ओर से पुनः युद्ध के आयोजन होने लगे। घास आदि का उचित प्रबन्ध न हो सकने के कारण टॉमस की घुड़सवार सेना बड़े कष्ट में थी। ऐसे समय में बीकानेर के महाराजा (सूरतसिंह) ने पांच हज़ार सेना जयपुर की सहायतार्थ भेज दी। इस प्रकार जयपुर की शक्ति बढ़ जाने पर टॉमस के लिए वहां से वापस लौट जाने के अतिरिक्त अन्य उपाय नहीं रह गया। उसने अपनी सेना एकत्र कर उसे लौट जाने की आज्ञा दी। लौटती हुई सेना का विपक्षियों ने दो दिन तक पीछा किया और उसे वे मारते रहे। पीछे से जयपुरवालों ने वामनराव से सन्धि कर ली[1]।

जॉर्ज टॉमस की बीकानेर पर चढ़ाई

जयपुरवालों के साथ की लड़ाई में सहायता देने के कारण, जॉर्ज टॉमस ने बीकानेर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। जलकष्ट का उसे पिछली बार अनुभव हो चुका था, अतएव इस बार उसने बहुतसी पखालें पानी से भरवाकर अपनी सेना के साथ रख लीं और पहले से अधिक फ़ौज के साथ वर्षा ऋतु के आरंभ में उसने बीकानेर की ओर प्रस्थान किया। इस चढ़ाई की सूचना समय पर सूरतसिंह को मिल गई, जिससे वह इसे निष्फल करने के लिए प्रस्तुत हो गया। तोपख़ाना न होने के कारण वह खुले मैदान में टॉमस के विरुद्ध ठहर न सकता था, अतएव सीमाप्रान्त के प्रत्येक नगर में उसने पर्याप्त पैदल सेना रख दी।

---

(१) विलियम फ्रैंकलिन, मेमॉयर्स ऑव् मिं० जॉर्ज टॉमस (ई० स० १८०५); पृष्ठ १९१-७७। हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेन्चरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० १४८-५६।

टॉमस ने सर्वप्रथम जीतपुर (जैतपुर) गांव पर चढ़ाई की, जहां उस समय तीन हज़ार व्यक्ति थे। एक ही हल्ले में उसने वहां अधिकार कर लिया, पर इस लड़ाई में उसके दो सौ सैनिक काम आये। फिर जीतपुर के लोगों ने रुपये देकर अपने जान व माल की रक्षा की। इस पहली सफलता के बाद टॉमस को आगे बढ़ने में विशेष कठिनाई नहीं हुई। उधर धीरे-धीरे सूरतसिंह के अधिकांश सरदार उसका साथ छोड़कर चले गये। शेष थोड़े से राजपूतों के सहारे टॉमस की फ़ौज का मुक़ाबला करना निरर्थक जानकर सूरतसिंह ने एक वकील भेजकर उससे सुलह की बात चीत की। दो लाख रुपये देने की शर्त पर युद्ध बंद हो गया। इस रक़म में से कुछ रुपये तो उसी समय टॉमस को दे दिये गये, शेष के लिए सूरतसिंह ने जयपुर के अपने व्यापारियों के नाम हुंडी लिखकर दे दी, परन्तु वहां से उन हुंडियों के रुपये वसूल नहीं हुए[1]।

बीकानेर पर जॉर्ज टॉमस की दूसरी चढ़ाई

विगत संधि के समय दी हुई हुंडियों के रुपये वसूल न होने के कारण टॉमस सूरतसिंह पर बहुत क्रुद्ध था, अतएव पंजाब, उदयपुर आदि की चढ़ाइयों से निवृत्ति पाकर उसने पुनः बीकानेर के विरुद्ध हथियार संभाले। इन दिनों सूरतसिंह का भट्टियों से झगड़ा चल रहा था, जिन्हें अधीन

(१) विलियम फ्रैंकलिन, मेमॉयर्स ऑव् मि० जॉर्ज टॉमस (ई० स० १८०५) पृ० १७७-८६। हर्बर्ट कॉम्प्टन, यूरोपियन मिलिटरी एड्वेन्चरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० १५६-७।

इनमें से पहली पुस्तक में लिखा है कि सूरतसिंह को राज्यप्राप्ति के समय काफ़ी ख़ज़ाना मिला था, पर अपव्यय आदि के कारण वह शीघ्र समाप्त हो गया, जिससे धन संग्रह करने में वह क्रूर और अत्याचारी हो गया। इस कारण लोग उससे अप्रसन्न रहते थे। उक्त पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि अवध के कृत्रिम नवाब वज़ीरअली की तरफ़ से काबुल के बादशाह ज़मानशाह के पास जाते हुए उसके आदमियों को सूरतसिंह की आज्ञानुसार उसके सैनिकों ने लूट लिया और बाद में उन्हें मार डाला। इस लूट में २७००००० रुपये और बहुतसा सामान सूरतसिंह के हाथ लगा (पृ० १८० और नोट तथा पृ० २३७ पर नोट)।

दयालदास की ख्यात में टॉमस की उपर्युक्त चढ़ाई का उल्लेख नहीं है।

रखने के लिए उसने भटिंडा से पांच कोस दक्षिण पश्चिम में एक सुदृढ़ गढ़ (फतहगढ़) बना लिया था। इस गढ़ में रक्षक-सेना के अतिरिक्त उसने बहुत से सवार भी रख दिये थे, जो समय-समय पर भट्टियों पर धावा कर उनके मवेशी आदि छीन लिया करते थे। इस प्रतिदिन के दुर्व्यवहार से तंग होकर भट्टी अपना देश छोड़ देने का विचार कर रहे थे। इसी समय टॉमस के बीकानेर के सीमा प्रान्त में पहुंचने का समाचार उन्हें मिला। तब कुछ भट्टी सरदारों ने उससे मिलकर पूर्वोक्त गढ़ को नष्ट करने एवं बीकानेरवालों की तकलीफ़ों से मुक्ति प्रदान कराने के बदले में उसे चालीस हज़ार रुपये देने का वचन दिया। टॉमस ने यह शर्त स्वीकार कर ली और दस दिन के सफ़र के पश्चात् वह भटनेर पहुंच गया। बीकानेरी सेना से सुरक्षित भटनेर दुर्गम-प्रायः क़िला था, क्योंकि वहां से बारह कोस से कम दूरी पर पानी नहीं मिल सकता था। टॉमस गढ़ के भीतर के सैनिकों पर आक्रमण करने का प्रबन्ध कर ही रहा था, ऐसे में वे क़िला खाली कर चले गये। तब उसने वहां भट्टियों का अधिकार करा दिया[1]। फिर अन्य कई स्थान भी उसने जीते तथा कई लड़ाइयां लड़ीं, जिनसे तथा वहां की बुरी जल-वायु के कारण उसकी दो-तिहाई सेना नष्ट हो गई। इसी समय भट्टी सरदारों में से एक का भाई, जो उससे बैर रखता था, उससे खुल्लम-खुल्ला विरोध करने लगा। तब टॉमस ने सतर्कता के लिए अपने कैम्प को और भी सुदृढ़ बना लिया। उस रात्रि को कई बार विपक्षियों ने उसपर आक्रमण किया, पर हरबार विफल होने पर वे निराश होकर लौट गये[2]।

(१) दयालदास की ख्यात में भी लिखा है कि फ़तहगढ़ के निर्माण के वर्ष ही भट्टी 'जाफ़ फिरंगी' (जॉर्ज टॉमस) को चढ़ा लाये, जिसने भट्टियों तथा बलारा (बूला) एवं मंगलूणा के ठाकुरों की सहायता से फतहगढ़ को जीतकर वहां भट्टियों का अमल करा दिया (जि० २, पत्र ६५)।

(२) विलियम फ्रैंकलिन-कृत 'मेमॉयर्स ऑव् मि० जॉर्ज टॉमस' में एक स्थल पर (पृ० १८२) लिखा है कि सूरतसिंह के नौकरी में विभिन्न देशों के यूरोपियन व्यक्ति हैं, जो बीकानेर के गढ़ में रहते हैं।

अनन्तर टॉमस ने फतहवाद पर अधिकार किया, जिसको भी उसने अन्य विजित स्थानों की भांति जला दिया। यह संभव था कि निकट भविष्य में उसका सारे देश पर अधिकार हो जाता, परन्तु इसी समय बीकानेरवालों को पटियाला के सिख-शासक से सहायता प्राप्त हो गई। इन दोनों राज्यों में मेल स्थापित हो जाने और पटियाले से एक हज़ार सवारों की सहायता आ जाने के कारण लड़ाई का रूप बदल गया। ऐसी दशा में टॉमस ने युद्ध जारी रखना उचित न समझा और वह बची हुई सेना के साथ झज्झर को लौट गया[1]।

सूरतसिंह का भट्टियों से फतहगढ़ छुड़ाना तथा आस-पास नये थाने स्थापित करना

भट्टियों का अधिकार फतहगढ़ से हटाने के लिए बीकानेर की फ़ौज सूरतगढ़ में आई, जहां से रावत बहादुरसिंह (रावतसर), रावत पद्मसिंह (जैतपुर), चैनसिंह (वाणासर), सिख टीकासिंह, साणी आसकर्ण आदि ने रात्रि के समय चढ़ाई कर सीढ़ी के सहारे गढ़ में प्रवेश किया। इसपर बाध्य होकर गढ़ के भीतर के भट्टियों ने बीकानेर की अधीनता स्वीकार कर ली, जिससे गढ़ पर पुनः सूरतसिंह का अधिकार हो गया, जहां सिख टीकासिंह और मेहता ज्ञानसिंह ५०० घोड़ों के साथ रक्खे गये। वि० सं० १८५७ माघ सुदि ११ (ई० स० १८०१ ता० २५ जनवरी) को भटनेर से ७ कोस दूर गांव टीबी और भैराजका में भी थाने स्थापित कर वहां बीकानेर की सेना रक्खी गई। अनन्तर वि० सं० १८५८ (ई० स० १८०१) में एक थाना अभोर में भी स्थापित किया गया[2]। उसी वर्ष महाराजा के पुत्र मोतीसिंह का जन्म हुआ[3]।

उन दिनों मौजगढ़ में दाउदपुत्र खुदाबख़्श था। पीर जानी बहावलखां

(१) विलियम फ्रैंकलिन; मेमॉयर्स ऑव् मि० जॉर्ज टॉमस, पृ० २२३-२६। हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेन्चरर्स ऑव् हिन्दुस्तान, पृ० १६८-६।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६५-६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७४।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६।

से उससे बनती न थी, जिससे उस (बहावलख़ां) ने फ़ौज भेजकर मौज़गढ़ पर अधिकार कर लिया। तब ख़ुदाबख़्श अपने कतिपय केहरांणी अनुयायियों के साथ महाराजा सूरतसिंह के पास चला गया। उसने एकान्त में महाराजा से अपने कष्टों का निवेदन करने के उपरान्त कहा कि यदि आप हमारा इलाक़ा हमें दिलाने में सहायक हों तो हम आपका सिन्ध में अधिकार करा दें। महाराजा ने जब सहायता देने का वचन दिया, तो ख़ुदाबख़्श ने फूलड़ा, वल्लर, मीरगढ़, जामगढ़, मारोठ और मौजगढ़ पर उसका अधिकार करा देने का वादा किया। फिर मेहता मंगनीराम की अध्यक्षता में सूरतसिंह ने २५००० सेना ख़ुदाबख़्श के साथ रवाना की, जो अनूपगढ़ होती हुई वल्लर पहुंची। दस दिन तक वहां दाउदपुत्रों से लड़ाई हुई, जिसके अन्त में अपनी प्राणरक्षा का वचन ख़ुदाबख़्श से ले गढ़वालों ने गढ़ ख़ाली कर दिया और वहां बीकानेर का अधिकार हो गया। उस गढ़ में १०० सवारों के साथ मेहता जयसिंहदास को छोड़कर बीकानेरी सेना फुलड़ा पहुंची जहां के क़िलेदार ने भी ७ दिन की लड़ाई के बाद क़िला ख़ाली कर दिया। फिर बीकानेर की फ़ौज मीरगढ़ जा लगी। पन्द्रह दिन के घेरे के अन्त में हल्लाकर वह गढ़ भी अधीन कर लिया गया, परन्तु इस लड़ाई में बीकानेर के ४०० आदमी काम आये। इसी प्रकार क्रमशः मारोठ, मौज़गढ़ आदि पर भी बीकानेरी सेना का आधिपत्य हो गया। मौजगढ़ की थानेदारी ख़ुदाबख़्श को दी गई। अनन्तर विजयी सेना ख़ैरपुर को लूटती हुई भावलपुर पहुंची। इसी बीच बहावलख़ां ने आधा राज्य ख़ुदाबख़्श के अधिकार में ही रहने देने का वचन दे उससे मेल कर लिया। तब ख़ुदाबख़्श ने दो लाख रुपये फ़ौज ख़र्च के देकर बीकानेरी सेना को बिदा कर दिया[1]।

मौजगढ़ के ख़ुदाबख़्श की सहायता करना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ९९। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७४। टॉड ने इस घटना का संवत् १८५६ (ई० स० १७९९) दिया है (राजस्थान; जि० २, पृ० ११४१)।

खानगढ़ पर छल से अधिकार करना

वि० सं० १८५९ मार्गशीर्ष वदि १३ (ई० स० १८०२ ता० २३ नवम्बर) को मैनासर के बीदावत रायसिंह तेजसोत[1] तथा गांव सेला के ठाकुर अजीतसिंह को बुलाकर सूरतसिंह ने उन्हें खानगढ़ पर, जहां बहुत ख़ज़ाना होना सुना जाता था, छल से अधिकार करने के लिए कहा। तब वे बीकानेर के गांवों में दिखावटी लूट-मार करते हुए जोधपुर इलाक़े में चले गये। वहां के अजबसिंह से और खानगढ़ के खान से वहुत स्नेह था। रायसिंह तथा अजीतसिंह उसके पास गये और उसके हाथ का लिखा पत्र लेकर खानगढ़ के निकट पहुंचे। अनन्तर उन्होंने वहां के क़िलेदार से कहलाया कि हम सिन्ध के स्वामी के पास जा रहे हैं अतः हमारे लिए रसद आदि सामान का प्रबन्ध करा दो। क़िलेदार ने तत्काल घास-पानी का प्रबन्ध करवा दिया और स्वयं शामको मुलाक़ात के लिए आने को कहलाया। गढ़ के पास ही कुछ महाजनों की दुकानें थीं, रायसिंह ने अपने ५० आदमी सामान खरीदने के बहाने वहां भेज दिये। सन्ध्या समय ८० आदमियों के साथ क़िलेदार बीकानेर के सरदारों से मिलने के लिए गया। अफ़ीम का दौर चलते समय ही बीकानेरवालों ने अचानक उनपर आक्रमण कर दिया। क़िलेदार रायसिंह के हाथ से मारा गया और उसके साथी भी जीवित न बचे। उधर महाजनों की दुकानों पर बैठे हुए आदमियों ने भी गढ़ पर आक्रमण कर दिया। रायसिंह तथा अजीतसिंह भी समय पर शेष सैनिकों के साथ उनकी सहायता को पहुंच गये, जिससे गढ़ के भीतर के लोगों को गढ़ छोड़कर भागना पड़ा। इस प्रकार उक्त गढ़ पर बीकानेरी सेना का अधिकार हो गया, परन्तु जिस खज़ाने के लिए इतना किया गया वह न मिला[2]।

(१) ठाकुर बहादुरसिंह रचित 'बीदावतों की ख्यात' में भी इसका ख़ानगढ़ पर भेजा जाना लिखा है, परन्तु उसमें इस घटना का संवत् १८५८ (ई० स० १८०१) दिया है (जि० १, पृ० २४१-२)।

(२) दयालदास की ख्यात जि० २, पत्र ९६-७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७४-५।

वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में बीकानेर से एक सेना सुराणा अमरचंद, खजानची मुलतानमल, पड़िहार ज़ालिमसिंह आदि के साथ चूरू भेजी गई, जहां के स्वामी से उक्त व्यक्तियों ने पेशकशी के २१ हज़ार रुपये वसूल किये[1]।

चूरू के स्वामी से पेशकशी लेना

भट्टियों का झगड़ा अभी भी शान्त नहीं हुआ था। कभी-कभी वे विद्रोह कर ही दिया करते थे अतएव वि० सं० १८६१ (ई० स० १८०४) में बीकानेर से सुराणा अमरचंद[2] की अध्यक्षता में ४००० सेना भटनेर भेजी गई, जिसने गढ़ के दक्षिण ओर के अनूपसागर कुएं पर अधिकार कर लिया। वहां कच्ची गढ़ी निर्माण कर वे गढ़वालों से लड़ने लगे। जब बहुत दिन बीत जाने पर भी इस प्रकार लड़ते-लड़ते गढ़ पर अधिकार न हो सका तो एक दिन सीढ़ी लगाकर बीकानेरी सेना ने उसमें प्रवेश करने का प्रयत्न किया, परन्तु इसमें सफलता न मिली तथा साहोर का रावतोत उम्मेदसिंह, आभटसर का बीदावत मोहनसिंह[3], जैतपुर का नैनसी सोढ़ा आदि ७० सरदार काम आये। तब पांच-पांच सौ सवार दिन और रात दोनों समय गढ़ के चौतरफ़ गश्त देने लगे, जिससे रसद आदि सामान गढ़ में पहुंचना बन्द हो गया। ऐसी परिस्थिति में ज़ाब्ताखां को बाध्य होकर बीकानेर के सरदारों से कहलाना पड़ा कि यदि हम पर आक्रमण न करने का वचन दिया जाय तो हम और हमारे साथी गढ़ छोड़कर चले जावें। ऐसा वचन मिल जाने पर ज़ाब्ताखां आदि सब भट्टी गढ़ छोड़कर राजपुरा चले गये

भटनेर से भट्टियों का निकाला जाना

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६।

(२) पाउलेट ने राणा अमरचन्द लिख दिया है (गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७५), जो ग़लत है। यह सुराणा अमरचन्द होना चाहिये, जैसा कि दयालदास की ख्यात में है। सुराणा महाजनों की एक शाखा है।

(३) ठाकुर बहादुरसिंह लिखित 'बीदावतों की ख्यात' में भी भटनेर पर चढ़ाई होने तथा उसमें आभटसर के बीदावत मोहनसिंह के मारे जाने का उल्लेख है (जि० १, पृ० २५३-५४)।

और वि० सं० १८६२ (ई० स० १८०५) में वहां बीकानेर राज्य का अधिकार हो गया। मंगलवार के दिन गढ़ पर अधिकार होने के कारण उसका नाम हनुमानगढ़ रख दिया गया और भट्टियों को उसमें जाने से वर्जित कर दिया गया। इस लड़ाई में बहुत अच्छा कार्य करने के एवज़ में सुराणा अमरचंद को एक पालकी दी गई तथा वह बीकानेर का दीवान बना दिया गया[1]।

जोधपुर के महाराजा मानसिंह पर चढ़ाई

दयालदास लिखता है—'जोधपुर के स्वामी भीमसिंह की मृत्यु के समय उसका चचेरा भाई मानसिंह जालोर के घेरे में था। सिंधियों के सहायक हो जाने पर वह तुरन्त जोधपुर गया और वहां की गद्दी उसने अपने अधिकार में कर ली। उन दिनों भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ था। पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह तथा अन्य ठाकुरों के कहने पर मानसिंह ने इस आशय की तहरीर लिख दी कि यदि उस (देरावरी राणी) के गर्भ से कन्या उत्पन्न हुई तो उसका विवाह जयपुर अथवा उदयपुर में कर दिया जायगा और यदि पुत्र हुआ तो वह मेरा तथा जोधपुर का स्वामी बनेगा। तब देरावरी राणी तलहटी के महलों में जा रही। मानसिंह ने इस जड़ को उखाड़ डालने का प्रयत्न किया, परन्तु वह सफल नहीं हुआ और काल पाकर देरावरी राणी से धोकलसिंह का जन्म हुआ। उस समय दरबार की ओर से नाज़िर तथा दासियां पहरे पर उपस्थित थीं, पर सवाईसिंह (पोकरण का ठाकुर) के प्रयत्न से नवजात बालक खेतड़ी पहुंचा दिया गया और तब कहीं उसके जन्म की बात प्रकट की गई[2]।

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ९६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७५। टॉड, राजस्थान; जि० २, पृ० ११४२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में, जो मानसिंह के समय में ही बनी थी, लिखा है—'मानसिंह वि० सं० १८६० मार्गशीर्ष वदि ७ (ई० स० १८०३ ता० ५ नवम्बर) को जोधपुर पहुंचा। उधर सवाईसिंह ने जोधपुर आते समय भीमसिंह की देरावरी राणी को सिखा-पढ़ाकर चोपासणी भेज दिया। जब सरदारों के समझाने पर

यह सब कार्य सवाईसिंह के ही उद्योग से हो रहा है, ऐसा विचार कर मानसिंह ने उसे छल से मरवाने का षड्यन्त्र रचा, पर इसका पता लग जाने से सवाईसिंह ने दरबार में आना-जाना छोड़ दिया[1] और जब मानसिंह ने उसे प्रधान का पद देकर बुलाया तब वह पोकरण जाने का बहाना कर जयपुर चला गया[2] तथा वहां के महाराजा जगतसिंह से धोकलसिंह की सहायता करने की प्रार्थना की। इस सहायता के बदले में उसने सांभर का इलाक़ा तथा फ़ौज ख़र्च उसे देने का वचन दिया[3]। जगतसिंह

मानसिंह ने उसे वहां से बुलाने का विचार किया, तब सवाईसिंह ने निवेदन किया कि देरावरी राणी गर्भवती है, कदाचित् उसके पुत्र हुआ तो उसका क्या प्रबन्ध होगा? महाराजा (मानसिंह) ने उसी समय तहरीर लिख दी कि यदि ऐसा हुआ तो वही पुत्र राज्य का स्वामी होगा और मैं पुनः जालोर वापस चला जाऊंगा। फिर महाराणी चोपासणी से बुलाई गई, परन्तु सवाईसिंह की सलाह से वह तलहटी के महलों में ठहर गई। मानसिंह को बुरा तो अवश्य लगा पर उसने कुछ कहा नहीं और तलहटी में नाज़िर तथा दासियां आदि पहरे पर रख दीं। गर्भ पूरा होने पर राणी के सम्बन्धियों ने उसके पुत्र होना प्रकट कर एक बालक को गुप्त रूप से खेतड़ी पहुंचा दिया (जि० ३, पृ० ५-१४)।'

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है (जि० ३, पृ० १६ और ३०)।

(२) टिप्पण १ में उल्लिखित ख्यात के अनुसार पहले सवाईसिंह ने पत्र लिखकर जयपुर नरेश से बात की थी, पीछे से वहां से बुलाये जाने पर वह जयपुर गया (जि० ३, पृ० २७ और ३०-३१)।

(३) टिप्पण १ में उल्लिखित ख्यात में इस बात का स्पष्टीकरण नहीं किया गया है।

जगतसिंह के इतनी जल्दी चढ़ाई करने का वचन देने का कारण उक्त ख्यात में इस प्रकार लिखा है—'पहले भीमसिंह की सगाई उदयपुर की राजकुमारी कृष्णकुंवरी के साथ हुई थी। उस (भीमसिंह) के मर जाने पर उदयपुरवालों ने जयपुर टीका भेजने का निश्चय किया। इसकी ख़बर मिलने पर मानसिंह ने होल्कर को, जो पहले से ही उसका मित्र था, सहायतार्थ बुलाया तथा अपने सरदारों को भी युद्ध की तैयारी करने की आज्ञा दी। अनन्तर उसने फ़ौज भेजकर जयपुर जाते हुए टीके को पीछा उदयपुर भिजवा दिया। इससे जगतसिंह (जयपुर का महाराजा) के दिल में उसकी

ने सहायता देना तो स्वीकार कर लिया, परन्तु बीकानेर की सहायता के बिना सफल होना कठिन था अतएव उसने सवाईसिंह को सूरतसिंह के पास बीकानेर जाकर सहायता प्राप्त करने की सलाह दी। तब वह (सवाईसिंह) जगतसिंह का पत्र लेकर महाराजा सूरतसिंह के पास गया और उससे सारी हक़ीक़त निवेदन कर सहायता की याचना की तथा बदले में ८४ गांवों के साथ फलोधी का परगना, जो अजीतसिंह के समय में जोधपुर में मिल गया था, वापस देने की तहरीर लिख दी[1]। इस अवसर पर मानसिंह ने भी कहलाया कि फलोधी तो मैं ही आपको दे दूंगा, आप मेरे विरोधियों को सहायता न दें[2], परन्तु सूरतसिंह ने मानसिंह का कथन स्वीकार न किया और मेहता ज्ञानजी, पुरोहित जवानजी आदि को ८००० सेना के साथ भेज वि० सं० १८६३ फाल्गुन वदि ३ (ई० स० १८०७ ता० २५ फ़रवरी) को फलोधी अपने अधिकार में कर ली[3]। उधर जयपुर की सेना ने सांभर पर अधिकार कर लिया।

तदनन्तर जगतसिंह ने जयपुर से ससैन्य प्रस्थान किया तथा बीकानेर से फ़ौज के साथ चलकर सूरतसिंह नापासर, बीदासर तथा

तरफ़ से वैर ने घर कर लिया। इन्द्रराज ने जयपुर आदमी भेजकर इस शर्त पर जयपुर और जोधपुर में मेल करा दिया कि जयपुरवाले की बहन जोधपुर ब्याही जाय तथा जोधपुरवाले की पुत्री का विवाह जयपुर में कर दिया जाय, परन्तु कुछ ही दिनों बाद उदयपुर के टीके के सम्बन्ध के अपमान की याद दिलाकर सवाईसिंह ने जगतसिंह को अपने पक्ष में कर लिया (जि० ३, पृ० २७-३१)।'

टॉड ने भी इसका उल्लेख किया है (राजस्थान जि० २, पृ० ११४२-३)। साथ ही उसने सवाईसिंह का धौंकलसिंह को साथ लेकर जयपुर जाना भी लिखा है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि बडलू के ठाकुर शार्दूलसिंह की मारफ़त सवाईसिंह को बीकानेर के सूरतसिंह की सहायता प्राप्त हुई। फलोधी आदि दिये जाने के कथन का उसमें उल्लेख नहीं है (जि० ३, पृ० ३१)।

(२) इसका भी उल्लेख जोधपुर राज्य की ख्यात में नहीं है।

(३) टॉड ने जोधपुर नगर पर अधिकार होने के पश्चात् फलोधी बीकानेर को दिया जाना लिखा है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०८६)।

मलसीसर होता हुआ सीकर पहुंचा जहां के ठाकुर लक्ष्मीसिंह ने उसका स्वागत किया। फिर सूरतसिंह पलसाणा पहुंचा जहां जगतसिंह भी उससे मिल गया। अनन्तर बीकानेर तथा जयपुर की सम्मिलित सेना दांता रामगढ़ तथा मारोठ होती हुई मीठड़ी पहुंची[1]। जोधपुर से मानसिंह भी ८०००० फ़ौज के साथ उसका मुक़ाबला करने के लिए गींगोली में आया। प्रथम १३ दिन तो दोनों पक्षों में सन्धि की बातचीत चली, पर जब उसका कोई फल न निकला तो युद्ध की तैयारी हुई। गींगोली के निकट दोनों ओर की फ़ौजो का मुक़ाबला हुआ। इस अवसर पर जोधपुर की तरफ़ के कई प्रतिष्ठित सरदार सवाईसिंह से आकर मिल गये, जिससे मानसिंह की पराजय हुई। उसका सामान आदि लूट लिया गया तथा उसे प्राण बचाकर मेड़ता होते हुए जोधपुर भागना पड़ा। यह युद्ध वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि २ (ई० स० १८०७ ता० ११ मार्च) को हुआ[2]।

जोधपुर पर घेरा डालना

दयालदास लिखता है—जोधपुर पहुंचकर मानसिंह ने गढ़ को सुदृढ़ कर उसके भीतर से शत्रु का मुक़ाबला करने का प्रबन्ध किया। मीठड़ी से प्रस्थान कर सूरतसिंह तथा जगतसिंह भी पर्वतसर,[3] हर्सोर, भीखणिया, पीपाड़, बीसलपुर तथा चैनवाड़ी होते हुए जोधपुर पहुंचे और चार पहर तक नगर को लूटा। इसके उपरान्त मोरचेबन्दी कर गढ़ घेरा गया। इस अवसर पर महाराजा सूरतसिंह स्वयं तो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि जगतसिंह को सवाईसिंह की लम्बी-चौड़ी बातों पर विश्वास न था अतएव वह (सवाईसिंह) अकेला ही सारी सेना लेकर गींगोली गया तथा जगतसिंह और सूरतसिंह मारोठ में रहे। उसके वहां सफल होने पर वे दोनों भी उसके शामिल हो गये थे (जि० ३, पृ० २३-६)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६७-८। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५०८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७५।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि परवतसर में जगतसिंह के सरदारों ने लौट जाने का उससे अनुरोध किया था, परन्तु सवाईसिंह के धौंकलसिंह को गद्दी बिठाने तक साथ रहने का आग्रह करने पर वह रुक गया (जि० ३, पृ० २७)।

चैनवाड़ी में था, पर उसकी फ़ौज गुलावसागर पर सिंघी जोधराज के मकान के पास थी[1]। उस ओर से जोधपुर का गढ़ अरक्षित था, अतएव उधर से गढ़ पर तोपों की बड़ी मार हुई। महाराजा जगतसिंह का मोरचा राई के वाग की तरफ़ था[2]।

'सात मास[3] तक गढ़ पर तोपों की मार होने के पश्चात् गढ़ के भीतर से राणियों के कहलाने पर सूरतसिंह ने सिंघी के स्थान से अपनी तोपें हटवा दीं। मानसिंह भी इस लड़ाई से तंग आकर गढ़ परित्याग करने के विचार में था, अतएव उसने अपने कुछ सरदारों को इस संबंध में शर्तें तय करने के लिए सवाईसिंह के पास भेजा। सवाईसिंह के कहने पर तथा सूरतसिंह के छल न करने का आश्वासन पाकर मानसिंह ने आउवे के ठाकुर माधोसिंह, नींबाज के सुलतानसिंह, आसोप के केसरीसिंह, कुचामण के विश्वनाथसिंह तथा इंद्रराज सिंघी को सूरतसिंह के पास भेजकर कहलाया कि यदि आप गढ़ के भीतर का हमारा सब सामान आदमी भेजकर जालोर पहुंचा देने तथा मारवाड़ और जोधपुर का जो भी प्रवन्ध हो उसमें मुझे भी शरीक रखने का वचन दें तो मैं एक मास में गढ़ छोड़कर चले जाने को तैयार हूं। इसपर सवाईसिंह ने कहा कि हमें उपरोक्त शर्तें स्वीकार हैं पर साथ ही आपको सारा फ़ौज ख़र्चा देना होगा तथा जव तक धोकलसिंह नाबालिग़ है तव तक जोधपुर का प्रवन्ध जयपुर नरेश के हाथ में रहेगा[4]। पर सवाईसिंह की कही हुई दूसरी शर्त

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सिगोरिया की भाखरी (पहाड़ी) के ऊपर बीकानेर का मोरचा था (जि० ३, पृ० ४२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि पहले सवाईसिंह फ़ौज लेकर जोधपुर गया। जगतसिंह तथा सूरतसिंह पीछे से वहां पहुंचे थे (जि० ३, पृ० ३८)।

(३) टॉड ने केवल पांच मास तक जोधपुर के क़िले पर घेरा रहना लिखा है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०८६)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि मानसिंह ने सन्धि करने की नीयत से सवाईसिंह के पास आदमी भेजकर कहलाया कि मुझे इन्द्रराज की मारफ़त

आये हुए सरदारों को मन्जूर नहीं हुई। तब सवाईसिंह ने एकांत में सूरतसिंह से निवेदन किया कि यदि आपकी अभिलाषा धोकलसिंह को राज्य दिलाने की है तो आप इन सरदारों को छल से मरवा दें। ऐसा अवसर फिर नहीं आवेगा, परन्तु सूरतसिंह वचन-बद्ध था, उसने ऐसा कुत्सित कार्य करने से इनकार कर दिया। सवाईसिंह ने फिर भी अपनी बात पर दुबारा ज़ोर दिया, पर सूरतसिंह अपने निश्चय से डिगा नहीं। अनन्तर उसने सिरोपाव देकर आगत सरदारों को पीछा गढ़ में विदा किया। कुछ ही दिनों बाद सूरतसिंह मोतीझिरे की बीमारी से ग्रस्त हुआ, तब उसने जगतसिंह की सलाह से अपनी सेना वहीं छोड़ देश को प्रस्थान किया[1]। वि० सं० १८६४ आश्विन वदि १३ (ई० स० १८०७ ता० २६ सितम्बर) को नाग तालाब होते हुए वह भवाद पहुंचा जहां सारे सैन्य सहित जगतसिंह भी आकर उससे मिल गया। महाराजा ने जब जयपुर नरेश से अचानक घेरा उठाने का कारण पूछा तो उसने बतलाया कि आपके जाते ही मेरा चित्त भी चढ़ाई से हट गया, इसीलिए मैं घेरा उठाकर चला आया हूं[2]। वहां से जगतसिंह तो जयपुर को गया, सवाईसिंह सेना सहित

मालूम हुआ है कि नागौर तो तुमने अपने अधीन कर ही लिया है, उसके अतिरिक्त और जो परगने तुम कहो मैं धोंकलसिंह को दे दूं। सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि सन्धि तभी हो सकती है जब आप जोधपुर छोड़कर जालोर चले जावें और जयपुर के इस युद्ध में ख़र्च हुए बाईस लाख रुपये चुका दें, परन्तु यह शर्तें स्वीकार नहीं हुईं (जि० ३, पृ० ४३)। कुछ दिनों बाद इन्द्रराज ने फिर सन्धि करने का प्रयत्न किया और धोंक्लसिंह को नागौर, डीडवांणा, कोलिया, मेड़ता, परबतसर, मारोठ, सांभर तथा नांवा देने को कहा, परन्तु सवाईसिंह अपनी पहली शर्त पर अड़ा रहा, जिससे यह प्रयत्न भी निष्फल गया (जि० ३, पृ० ४५)।

(१) वीरविनोद में भी लिखा है कि मोतीझिरा की बीमारी के कारण सूरतसिंह बीकानेर को लौटा था (भाग २, पृ० ५०८)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि नवाब मीरख़ां पूरा सम्मान प्राप्त न होने के कारण अप्रसन्न था, अतएव वह इस लड़ाई में जोधपुर का साथ छोड़कर जयपुरवालों से जा मिला था। बाद में जयपुर के दीवान ने ख़र्च भेजना

नागौर जा रहा[1] एवं सूरतसिंह बीकानेर चला गया, जहां थोड़े दिनों बाद वह स्वस्थ हो गया[2]।'

नागौर में रक्खी हुई बीकानेर तथा जयपुर की सेना का खर्चा चलाना जब सवाईसिंह आदि से मुश्किल हो गया तो दोनों सेनाएं अपने अपने ठिकानों को लौट गईं। इसी बीच मानसिंह एवं नवाब मीरखां में ऐक्य-सम्बन्ध स्थापित हो गया। सवाईसिंह आदि की शक्ति कम पड़ते ही मानसिंह के आदेशानुसार मीरखां ने नागौर जाकर छल से उन विरोधी सरदारों को मौत के घाट उतार दिया[3]। अनन्तर मानसिंह ने इन्द्रराज की अध्यक्षता में बीकानेर पर सेना भेजी[4]। इसी समय सिंध,

जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई

बन्द कर दिया, जिससे सेना में बड़ा कष्ट होने लगा। इसी समय इन्द्रराज ने मीरखां को खर्च आदि देने का वचन दिया, जिससे वह पुनः जोधपुर का सहायक हो गया और उसने जयपुर से शिवलाल बख़्शी के साथ आती हुई सहायक सेना को नष्ट कर दिया। बाद में उसने सेना साथ ले जयपुर पर कूच किया। जब इसकी ख़बर जगतसिंह को हुई तब वह चिन्तित हुआ और रातों-रात वि० सं० १८६४ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १८०७ ता० १४ सितम्बर) को युद्धक्षेत्र छोड़कर चला गया। सवाईसिंह ने उसे रोकने का प्रयत्न किया पर वह रुका नहीं (जि० ३, पृ० ३३-४८)।

'वीरविनोद' (भाग २, पृ० ४०८) तथा टॉड-कृत 'राजस्थान' (जि० २, पृ० १०८७) में भी महाराजा जगतसिंह के अचानक भागने का यही कारण दिया है। दयालदास की ख्यात में जैसा ऊपर लिखा गया है, केवल चित्त हट जाने से युद्ध छोड़ कर जाना लिखा है, जो ठीक नहीं जान पड़ता। इस सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की ख्यात अथवा टॉड का कथन ही अधिक विश्वसनीय है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी सवाईसिंह का अन्य सरदारों के साथ नागौर जाना लिखा है (जि० ३, पृ० ४८)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ९८-९। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७५-६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ३, पृ० ५२-४) तथा टॉड-कृत 'राजस्थान' (भाग २, पृ० १०८८) में इस घटना का विस्तृत वर्णन है।

(४) दयालदास की ख्यात में इस सेना की संख्या ८०००० (?) लिखी है,

जैसलमेर, सीकर, चूरु आदि से भी अलग-अलग सेनाओं ने बीकानेर इलाक़े पर आक्रमण किया और जगह-जगह दंगा फ़साद करने लगीं[1]। इस प्रकार बीकानेर चारों ओर से शत्रुओं-द्वारा घिर गया। फलोधी में शत्रु-सेना के पहुंचने पर पुरोहित जवानजी तथा मेहता ज्ञानजी ने वीरतापूर्वक उसका सामना कर उसे पीछे हटा दिया। जिस समय जोधपुरी सेना के बीकानेर पर चढ़ने का समाचार मिला उस समय सांडवे का ठाकुर जैतसिंह, साह अमरचन्द, डूसर दुर्जनसिंह आदि सीमा प्रान्त के प्रबन्ध के लिए नियुक्त थे। उन्होंने शत्रु सेना का असाधारण वीरता एवं चतुराई से सामना किया और कई वार उसे रोकने का प्रयत्न किया। अंत में जोधपुर का बहुतसा माल-असबाब अपने अधीन कर जैतसिंह, अमरचन्द आदि अपने साथ की तोपों सहित, जिन्हें जोधपुरवाले लेना चाहते थे, बीकानेर चले गये। दो मास तक शत्रु की फ़ौज गजनेर में पड़ी रही और रोज़ छोटी-छोटी लड़ाइयां होती रहीं, परन्तु नगर पर उसका अधिकार न हुआ[2]।

परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात में २०००० (जि० ३, पृ० ५६) और टॉड-कृत 'राजस्थान' में केवल १२००० सेना इन्द्रराज के साथ भेजा जाना लिखा है (जि० २, पृ० १०६१)।

(१) वीरविनोद में भी इस अवसर पर दाउदपुत्रों और जोहियों आदि का बीकानेर में उत्पात करना लिखा है (भाग २, पृ० ५०८), परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात में अथवा टॉड के ग्रन्थ में इसका उल्लेख नहीं है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६-१००। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इसका उल्लेख नहीं है। इसके विपरीत उसमें लिखा है कि बीकानेर के सरदारों ने ७००० सेना के साथ जोधपुर की सेना का सामना किया, परन्तु उन्हें हारकर भागना पड़ा (जि० ३, पृ० ५६)। टॉड लिखता है कि बीकानेर का राजा (सूरतसिंह) फ़ौज लेकर मुक़ावले को आया, परन्तु वापरी के युद्ध में उसे पराजित होकर भागना पड़ा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

दो मास बीतने पर लोढ़ा कल्याणमल ने मानसिंह से निवेदन किया कि इतने दिनों में भी इन्द्रराज ने बीकानेर के गढ़ पर अधिकार नहीं किया। वह बीकानेरवालों से मिला हुआ है, इसीलिए यह देरी हो रही है। यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं जाकर बीकानेर को जोधपुर के अधीन करने का प्रयत्न करूं। मानसिंह के मन में उसकी बात बैठ गई और उसने तत्काल अपने हाथ का लिखा पत्र देकर उसे ४००० फ़ौज के साथ बीकानेर की तरफ़ भेजा। मार्ग में देशणोक पहुंचने पर उसने करणीजी के सन्मुख कहा कि सुना जाता है आप बीकानेर राज्य की रक्षक हो। मैं बीकानेर ख़ाली करा लूंगा, आपसे हो सके सो करना। जब इसकी सूचना इन्द्रराज को मिली तो उसने इस आशय का एक पत्र सूरतसिंह की सेवा में भेजा—

बीकानेर तथा जोधपुर में सन्धि

"मेरे लिए मानसिंह और आप समान हैं। आपने जो जोधपुर में सन्धिवार्ता के समय सवाईसिंह की सलाह के विरुद्ध मेरे प्राणों की रक्षा की थी, वह उपकार मैं भूला नहीं हूं। अब लोढ़ा मेरी शिकायत कर बीकानेर पर अधिकार करने की प्रतिज्ञा करके आया है सो इसे सज़ा देना चाहिये।"

उपरोक्त पत्र पाने पर सूरतसिंह ने बीकावतो, बीदावतों[1], कांधलोतों, भाटियों, मंडलावतों तथा रूपावतों में से चुने-चुने वीरों के साथ सुराणा अमरचन्द को ४००० सवार देकर उस(कल्याणमल)पर भेजा। उधर कल्याणमल ने गजनेर-स्थित सेना को शीघ्रतापूर्वक बीकानेर की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी तथा कुछ सेना को अपने पास आने को लिखा, परन्तु फ़ौजवालों ने यह विचार किया कि लड़ाई तो हम लड़ेंगे और सारा श्रेय लोढ़ा को मिलेगा, अतएव उन्होंने ऊपरी तत्परता तो बहुत दिखलाई पर कूच न किया। तब लोढ़ा कल्याणमल स्वयं गजनेर गया। इसी समय सुराणा अमरचन्द भी ससैन्य आ पहुंचा। दोनों फ़ौजों का सामना होने पर मारवाड़

(१) ठाकुर बहादुरसिंह की लिखी हुई 'बीदावतों की ख्यात' से भी पाया जाता है कि बीदावतों ने इस लड़ाई में बहुत भाग लिया था (जि० १, पृ० २८७ ८)।

के बहुत से सरदार काम आये तथा कल्याणमल सैन्य सहित भाग निकला। अमरचन्द ने उसका पीछा कर एक कोस दूरी पर उसे पकड़ लिया और उसे युद्ध करने को बाध्य किया। थोड़ी ही देर में उसे अमरचन्द ने वन्दी कर लिया। उसका सारा सामान आदि लूट लिया गया तथा ढड्ढा शार्दूलसिंह और सुलतानसिंह का भी दो लाख रुपये का माल वीकानेरवालों के हाथ लगा। बाद में महाराजा सूरतसिंह ने लोढ़ा कल्याणमल को मुक्त कर दिया, जो अपमानित होकर अपने देश लौट गया। यह समाचार मानसिंह को मिलने पर उसने इन्द्रराज को ही इस कार्य पर फिर नियुक्त कर दिया[1]। अनन्तर सूरतसिंह ने भविष्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की। उन दिनों भूकरके का ठाकुर अभयसिंह क़ैद में था और वहां का अधिकार उसके पुत्र प्रतापसिंह के हाथ में था, उसने निवेदन किया कि मैं वीस हज़ार भाटियों और जोहियों को सहायतार्थ ला सकता हूं, पर वाय के ठाकुर प्रेमसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी। उसने कहा कि भाटियों और जोहियों के देश में आने से राज्य खतरे में पड़ जायगा। सूरतसिंह को भी उसकी बात पसन्द आ गई, अतएव उसने जोधपुर के सरदारों से मेल की बातचीत की। फलोधी[2] तथा सिन्ध के जीते हुए छः गढ़ और तीन लाख रुपये फ़ौज-खर्च देने की शर्त पर संधि हो गई[3]। उपर्युक्त स्थानों से वीकानेरी सेना वापस आ जाने पर तथा रुपयों के ओल में कई प्रतिष्ठित सरदारों को साथ ले जोधपुर की सेना वापस लौट गई। पीछे से सुराणा अमरचन्द रुपया भरकर ओल में सौंपे हुए

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इन घटनाओं का उल्लेख नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस चढ़ाई से पूर्व ही फलोधी पर सिंघी जसवन्तराय ने अधिकार कर लिया था (जि० ३, पृ० ५५)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ३, पृ० ५६) एवं 'वीरविनोद' में तो तीन लाख रुपये ही दिये हैं, परन्तु टॉड केवल दो लाख रुपये लिखता है (राजस्थान जि० २, पृ० १०११)।

व्यक्तियों को वापस ले आया[1]।

यूरोप में जिस समय फरासीसियों का प्रभुत्व बढ़ रहा था, उस समय लार्ड मिन्टो[2] की नीति-कुशलता के कारण पूर्व में उनका दबदबा घट रहा था। फिर भी महत्वाकांक्षी नैपोलियन[3] की बढ़ती हुई प्रभुता चिन्ता का विषय थी। यह तो नहीं कहा जा सकता कि उसका वास्तविक उद्देश्य भारतवर्ष पर चढ़ाई करने का था, परन्तु उसने एशिया की विभिन्न जातियों को, जहां उसका प्रभाव पड़ सकता था, अंग्रेज़ों के विरुद्ध भड़काने का प्रयत्न अवश्य किया था। उसने वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में एक दूत-दल फारस में भेजा, जिसे विफल करने के लिए भारत तथा विलायत दोनों स्थानों से दूत-दल वहां भेजे गये। मालकम[4] दो बार लॉर्ड मिन्टो के आदेशानुसार फ़ारस गया, परन्तु वह अपने विख्यात ग्रन्थ

मॉनस्टुअर्ट एलिफन्स्टन का बीकानेर जाना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १००-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

(२) हिन्दुस्तान का गवर्नर जेनरल—ई० स० १८०७ से १८१३ तक।

(३) नैपोलियन बोनापार्ट—ई० स० १७६९ (वि० सं० १८२६) में इसका जन्म हुआ था। एक साधारण सैनिक से बढ़ते-बढ़ते यह महत्वाकांक्षी युवक ई० स० १८०४ (वि० सं० १८६१) में फ्रांस का बादशाह हो गया और थोड़े ही दिनों में यूरोप के एक बड़े हिस्से पर इसका अधिकार हो गया तथा इसका आतंक बहुत जम गया था। पर जिस वेग से इसका उत्थान हुआ था उतनी ही शीघ्रता से इसका पतन हुआ और अपने अंतिम दिन सेंट हेलेना में क़ैद में बिताकर ई० स० १८२१ (वि० सं० १८७८) में इसका देहांत हो गया।

(४) सर जान मॉलकम—इसका जन्म ई० स० १७६९ में हुआ था। ई० स० १७८२ में यह ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेवा में प्रविष्ट हुआ तथा सेरिंगापटम के घेरे में यह उपस्थित था। ई० स० १७९८-१८०१ में लॉर्ड वेलेज़ली ने इसे पर्शिया जाने के लिए चुना था। इसने भारतवर्ष से सम्बन्ध रखनेवाले कई ग्रन्थ लिखे। ई० स० १८२७ में यह बंबई का गवर्नर नियुक्त हुआ तथा विलायत लौटने पर ई० स० १८३३ में इसका देहांत हो गया।

'हिस्ट्री ऑव् पर्शिया' के लिए मसाला जुटाने के अतिरिक्त और कुछ न कर सका[1]। उसी वर्ष (ई० स० १८०८ में) मॉन्स्टुअर्ट एलफिन्स्टन[2] भी भारत से काबुल भेजा गया। उसका रास्ता बीकानेर राज्य से होकर पड़ता था। मेजर अर्सकिन लिखता है—'बीकानेर की विचित्र जलवायु के कारण (जो गर्मी में बहुत गर्म और सर्दी में बहुत सर्द रहती है) जब एलफिन्स्टन ई० स० १८०८ के नवम्बर मास (वि० सं० १८६५ मार्गशीर्ष) में राजधानी (बीकानेर) की तरफ़ जा रहा था, मार्ग में नाथूसर[3] में केवल एक दिन में उसके दल के साथ के नौकरों के अतिरिक्त तीस सिपाही बीमार पड़ गये। जिस समय वह काबुल जाते हुए बीकानेर पहुंचा उस समय जोधपुर की सेना निराशा की दशा में क़िले को घेरे हुए थी। महाराजा (सूरतसिंह) ने उसका समुचित सत्कार किया और उससे कहा कि मुझे अंग्रेज़ सरकार अपनी रक्षा में ले ले, परन्तु यह स्वीकार नहीं किया गया, क्योंकि ऐसा करना अंग्रेज़ों की तत्कालीन नीति के विरुद्ध था। बीकानेर में रहते समय प्रथम सप्ताह में ही एलफिन्स्टन के सब मिलाकर चालीस मनुष्य काल के ग्रास हुए[4]।'

इसके बाद एलफिन्स्टन ने बचे हुए आदमियों के साथ काबुल की ओर प्रस्थान किया, परन्तु वह पेशावर से आगे न जा सका, क्योंकि

---

(१) स्मिथ; दि ऑक्सफ़र्ड हिस्ट्री ऑव् इंडिया; पृ० ६१३-४।

(२) इसका जन्म ई० स० १७७९ में हुआ था और ई० स० १७९५ में यह ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेवा में प्रविष्ट हुआ। ई० स० १८१९ से १८२७ तक यह बंबई का गवर्नर रहा। ई० स० १८५९ में इसका देहांत हो गया।

(३) दयालदास की ख्यात से भी पाया जाता है कि ई० स० १८०८ के नवम्बर मास में एल्फिन्स्टन नाथूसर होता हुआ बीकानेर पहुंचा (जि० २, पृ० १०१)।

(४) राजपूताना गैज़ेटियर; जि० ३, पृ० ३१२ और ३२४। दयालदास की ख्यात (जि० २, पृ० १०१) तथा पाउलेट-कृत गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट (पृ० ७६) में भी काबुल जाते समय एल्फिन्स्टन के बीकानेर से गुज़रने का उल्लेख है।

शाह शुजा[1], जिसके पास वह भेजा जा रहा था, कुछ ही दिनों बाद राज्य से निकाल दिया गया, अतएव इस दूत-दल के जाने से कोई प्रत्यक्ष राजनैतिक लाभ न हुआ। एलफिन्स्टन ने वहां पहुंचकर अफ़ग़ानिस्तान की तत्कालीन दशा के अध्ययन में अपना अधिकांश समय व्यय किया। उसके इस गंभीर शोध का फल 'ऐन एकाउन्ट ऑव दि किंगडम ऑव् काबुल (काबुल के राज्य का वृत्तान्त)' ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित हो गया है[2]।

विद्रोही ठाकुरों पर अमरचंद का जाना

वि० सं० १८६६ (ई० स० १८०९) सांडवे का विद्रोही ठाकुर जैतसिंह बीकानेर में पकड़ लिया गया। अमरचन्द ने उसको मुक्त करने के बदले में, सांडवे जाकर अस्सी हज़ार रुपये दंड के ठहराये। उसी वर्ष बीकानेर की सेना ने वाघपुर पर चढ़ाई की। वि० सं० १८६७ (ई० १८१०) में एक सेना भूकरका भेजी गई, जिसपर वहां का स्वामी प्रतापसिंह अभयसिंहोत गढ़ छोड़कर भाग गया। तब वहां महाराजा

---

(१) अहमदशाह दुर्रानी का पौत्र। कुछ दिनों तक यह काबुल का बादशाह रहा, पर ई० स० १८०९ (वि० सं० १८६६) में यह राज्य से हटा दिया गया। तब बहुत दिनों तक इधर-उधर भटकने के बाद वह कुछ दिनों तक सिन्ध में रहा, जहां से हैदराबाद ठहरने के उपरान्त जैसलमेर होता हुआ ई० स० १८३५ (वि० सं० १८९२) में बीकानेर राज्य में पहुंचा। इसका इरादा उधर से होकर लुधियाना जाने का था। उसी वर्ष बीकानेर, जैसलमेर आदि के पारस्परिक झगड़ों आदि का निर्णय करने के लिए लेफ्टिनेन्ट ट्रॉविलियन के साथ अंग्रेज़ अधिकारियों का एक दूत-दल बीकानेर आया, जिसमें लेफ़्टिनेन्ट बोइलो भी था। उनके कोलायत पहुंचने पर उन्हें राज्यच्युत शाह शुजा के वहां से दो मील दूरी पर मढ गांव में होने का पता चला, जिसने क़ाज़ी भेजकर उन्हें मिलने के लिए बुलवाया। बाद में अंग्रेज़ों ने इसे काबुल की गद्दी फिर दिलवाई, पर ई० स० १८४२ (वि० सं० १८९९) में यह अपने भतीजे-द्वारा मार-डाला गया (बोइलो, पर्सनल नरेटिव ऑव् ए टूर थ्रू दि वेस्टर्न स्टेट्स ऑव् राजवाड़ा; पृ० २७-८)।

(२) स्मिथ, दि ऑक्सफ़र्ड हिस्ट्री ऑव् इंडिया; पृ० ६१४। डॉडवेल; दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, जि० ५, पृ० ४८७।

की तरफ़ से थानेदारें नियुक्त कर दिया गया। वि० सं० १८६८ में अमरचन्द सुराणा सूरजगढ़ (शेखावाटी) को लूटकर बहुत सा सामान बीकानेर लाया। इसके दूसरे साल ही वह सेना लेकर मैणासर के बीदावतों पर गया तथा वहां के विद्रोही ठाकुर रतनसिंह को रत्नगढ़ में क़ैद कर उसे फांसी पर लटका दिया। उन्हीं दिनों उसने भटनेर पर भी चढ़ाई की, जहां के विद्रोही भट्टियों को उसने मारा। तत्पश्चात् वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में अमरचन्द सीधमुख गया तथा प्राण-रक्षा का वचन दे वहां से भूकरका के भागे हुए ठाकुर प्रतापसिंह, सीधमुख के ठाकुर नाहरसिंह, भाद्रा के ठाकुर पहाड़सिंह रामसिंहोत तथा उसके पुत्र लक्ष्मणसिंह को क़ैदकर वह बीकानेर ले आया, जहां लक्ष्मणसिंह को छोड़कर शेष तीनों मार डाले गये। बाद में सीधमुख का इलाक़ा नाहरसिंह के भाई को पेशकशी के १०००० रुपये लेकर दे दिया गया[1]।

बीकानेर तथा जोधपुर में मेल होना

वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) के श्रावण मास में जोधपुर के महाराजा के गुरु आयस देवनाथ के बीच में पड़ने से बीकानेर तथा जोधपुर के महाराजाओं में मेल की बातचीत स्थिर हुई। तब सिंढायच खेतसी एक मनुष्य के साथ जोधपुर भेजा गया। अनन्तर गुरु आयस देवनाथ के साथ देशणोक होता हुआ सूरतसिंह नागौर पहुंचा, जहां मानसिंह भी आकर उपस्थित हो गया तथा दोनों में मेल हो गया। वहां से सूरतसिंह का विचार चूरू जाने का था, परन्तु चौमासा (वर्षा-ऋतु) होने के कारण अपने सरदारों की सलाह से वह सीधा बीकानेर चला गया[2]।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६-७।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०१-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७७।

वि० सं० १८७० कार्तिक वदि २ (ई० स० १८१३ ता० ११ अक्टोबर) को सूरतसिंह ने चूरू की ओर प्रस्थान किया। बीदासर होता हुआ जब वह रतनगढ़ पहुंचा तो वहां सीकर का रावराजा लक्ष्मणसिंह उसकी सेवा में उपस्थित हुआ। फिर घूमांदे होता हुआ वह देपालसर पहुंचा, जहां की गढ़ी नष्टकर उसने उसके किवाड़ करणीजी के मन्दिर में भिजवा दिये। वहां से बीकानेर की सेना खासोली होती हुई चूरू पहुंची। तब नवलगढ़ का शेखावत मुहब्बतसिंह तथा बिसाऊ का श्यामसिंह उसकी सेवा में उपस्थित हो गये, जिनकी मारफ़त २५००० रुपये पेशकशी के ठहराकर वहां का स्वामी शिवसिंह राज्य की सेवा में प्रविष्ट हो गया[1]।

देपालसर को नष्टकर चूरू से पेशकशी ठहराना

कुछ समय तक चूरू के स्वामी ने पेशकशी के रुपये नहीं चुकाये। महाराजा सूरतसिंह रिणी चला गया, और वि० सं० १८७१ (ई० स० १८१४) के प्रथम भाद्रपद मास में उसने अमरचंद को ससैन्य चूरू पर भेज दिया। अमरचंद ने गढ़ को घेरकर चार मास तक उसपर तोपों की मार की तथा पांच-पांच सौ सवारों से दिन-रात उसकी निगरानी की, जिससे रसद आदि का भीतर पहुंचना बन्द हो गया। इस कष्ट से मुक्त होने के लिए शिवसिंह ने सीकर आदमी भेजकर रसद मंगवाई, जिसपर रावराजा लक्ष्मणसिंह ने दो हज़ार आदमियों के साथ रसद का सामान चूरू रवाना किया। इसकी सूचना मिलते ही सुराणा अमरचन्द ने अपने सैनिकों के साथ रसद लानेवालों पर आक्रमण किया। गढ़ के भीतर से भी कुछ राजपूत उसी समय रसद लेने को आये। इस अवसर पर भीषण युद्ध हुआ तथा दोनों ओर के बहुत से आदमी काम आये, परन्तु विजय अंत में बीकानेरवालों की ही हुई। सीकर के

चूरू पर बीकानेर का अधिकार होना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०२। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७७।

राजपूत भाग निकले, चूरूवाले गढ़ में घुस गये तथा रसद का सारा सामान बीकानेरवालों के हाथ लगा। बीकानेरवालों का घेरा तथा तोपों की मार उसी प्रकार जारी थी, इसी बीच वि० सं० १८७१ (ई० स० १८१४) के कार्तिक सुदि में ठाकुर शिवसिंह का अचानक देहांत हो गया। तब खेतड़ी के ठाकुर अभयसिंह-द्वारा जीवनरक्षा का वचन प्राप्तकर शिवसिंह का पुत्र पृथ्वीसिंह सकुटुम्ब जोधपुर चला गया और उसी वर्ष मार्गशीर्ष वदि १ (ता० २८ नवम्बर) को चूरू पर महाराजा का अमल हो गया। अमरचन्द की इस सफलता से सूरतसिंह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे राव के ख़िताब से विभूषित किया। अनन्तर महाराजा स्वयं जाकर कुछ दिनों तक उस गढ़ में रहा[१]।

अमरचन्द को मरवाना

सुराणा अमरचन्द का जिस वेग से अभ्युत्थान हुआ था, अब उससे भी अधिक शीघ्रता से उसका पतन आरम्भ हुआ। अचानक महाराजा सूरतसिंह की अकृपा हुई और उसपर राज्य की ओर से एक लाख रुपया दंड किया गया। राज्य के कई प्रतिष्ठित सरदार—पड़िहार चैनजी, ख़वास रामकर्ण, कोतवाल आसकर्ण आदि—अमरचन्द के विरोधी थे। उन्होंने एक झूठी चिट्ठी नवाब मीरख़ां के मुंशी की तरफ़ से अमरचन्द को लिखी हुई तैयार की, जिसका आशय यह था कि तुम्हारा सारा समाचार मैंने नवाब साहब से निवेदन कर दिया है; तुम जल्दी आओ क्योंकि तुम्हारे आने पर ही सारी बातें पक्की होंगी। अनन्तर उन्होंने यह पत्र महाराजा के समक्ष उपस्थित कर कहा कि अमरचन्द ने सीकर की तरफ़ से नवाब से बात तय की है सो मीरख़ां ६०००० फ़ौज के साथ बीकानेर में आकर उत्पात करेगा। इसपर महाराजा ने अमरचन्द को गिरफ्तार करा लिया। अमरचन्द ने अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने का प्रयत्न किया तथा वह तीन लाख रुपया दंड का भी भरने के लिए तैयार हो गया, परन्तु उसके विरोधी तो उसकी मृत्यु

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७७।

के अभिलाषी थे, जिससे अन्त में वह (अमरचन्द) केवल झूठी शिकायतों के कारण मार डाला गया। उसी वर्ष जोधपुर में मीरख़ां के द्वारा गुरु आयस देवनाथ एवं इन्द्रराज सिंघी भी छल से मारे गये[1]।

चूरू पर अधिकार करने के पश्चात् वहां के थाने पर सुराणा हुकुमचन्द नियुक्त कर दिया गया। वि० सं० १८७२ (ई० स० १८१५) के फाल्गुन मास में चूरू का भागा हुआ ठाकुर पृथ्वीसिंह, मानसिंह, सालिमसिंह (बणीरोत), देपालसर के रुद्रसिंह तथा शेखावाटीवालों की सहायता ले सरसला के ठाकुर रणजीतसिंह की साजिश से सरसला में आ पहुंचा। उन्हीं दिनों बीकानेर में मेहता भीमजी को हटाकर मेहता अभयसिंह और मुहब्बतसिंह को दीवान का कार्य सौंपा गया तथा चूरू में मेहता ज्ञानजी नियुक्त किया गया। चूरू का ठाकुर पृथ्वीसिंह, भादरा का प्रतापसिंह, दद्रेवा का सूरजमल, जसाणे का अनूपसिंह (शृंगोत), रावतसर का बहादुरसिंह, बिरकाली का दलपतसिंह (शृंगोत), सीकर के स्वामी एवं भट्टी, जोहियों आदि की सहायता से बीकानेर में उत्पात करने लगे। तब बीकानेर से मेहता अभयसिंह फ़ौज के साथ रावतसर भेजा गया, जहां पहुंचकर उसने सुप्रबन्ध की स्थापना की तथा बहादुरसिंह से पेशकशी के २०००० रुपये ठहराये। अनन्तर वह सेना भादरा पहुंची। प्रतापसिंह ने कई दिन तक वीरतापूर्वक उसका सामना कर गढ़ को बचाया। तब बीकानेरी सेना ने पटियाले से सिक्खों को सहायतार्थ बुलाया, जिनके ज़बरदस्त घेरे से तंग आकर प्रतापसिंह बात ठहराकर सकुटुम्ब गढ़ ख़ाली कर चला गया एवं भादरा पर सिक्खों का अधिकार हो गया। फिर बीकानेर की सेना चूरू पहुंची। पृथ्वीसिंह ने सीकर तथा बिसाऊ की

चूरू के ठाकुर से मिलकर अन्य ठाकुरों का उत्पात करना

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी देवनाथ एवं इन्द्रराज सिंघी के मरवाये जाने का उल्लेख है (जि० ३, पृ० ७१-२)।

सम्मिलित सेना के साथ चूरू पर आक्रमण कर सीढ़ी के सहारे गढ़ में प्रवेश करने का प्रयत्न किया, पर सफलता न मिली। कई बार बाद में भी उसने गढ़ पर हमले किये, पर हरबार विफल-प्रयत्न होकर उसे पीछे लौटना पड़ा तथा उसकी तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये। तब बाध्य होकर उसे मृत-सैनिकों को छोड़कर वहां से प्रस्थान करना पड़ा। लौटते समय उसने मार्ग में पड़नेवाले बीकानेर के रतनगढ़ थाने पर आक्रमण किया, जहां का क़िलेदार लालशाह सैय्यद अपने बहुत से साथियों के साथ लड़ता हुआ मारा गया। वहां दो दिन रह और लूट-मार कर पृथ्वीसिंह सेना सहित रामगढ़ चला गया[1]।

मीरख़ां की बीकानेर पर चढ़ाई

वि० सं० १८७३ (ई० स० १८१६) के ज्येष्ठ मास में मीरख़ां की फ़ौज बीकानेर पर आक्रमण करने के इरादे से नीबी होती हुई छापर पहुंची। इसकी सूचना मिलते ही सूरतसिंह ने मेहता मेघराज सहजरामोत को फ़ौज देकर रवाना किया। उसने बीदासर तथा सांडवे में थाने स्थापित कर वहां का समुचित प्रबन्ध किया। इसी बीच बीदावतों ने मीरख़ां की फ़ौज का एक हाथी व १५० घोड़े लूट लिये, जिसपर उस (मीरख़ां) के आदमियों ने महाराजा के पास आकर निवेदन किया कि हमने देश को कुछ भी हानि नहीं पहुंचाई है, अतएव हमारा सामान हमें वापस दिलवाया जाय। तब महाराजा की आज्ञानुसार माली उम्मेदराम तथा गाडण शंकरदान ने छापर जाकर लूटा हुआ माल बीदावतों से वापस दिलवा दिया, जिसपर मीरख़ां लौट गया[2]।

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८।

ठाकुर बहादुरसिंह लिखित 'बीदावतों की ख्यात' में भी इस घटना का उल्लेख है (जि० १, पृ० २६८)।

उसी वर्ष श्रावण मास में पुनः सीकर व शेखावाटी की सहायता प्राप्तकर चूरू के ठाकुर पृथ्वीसिंह ने मानसिंह, सालिमसिंह, कर्णसिंह आदि सरदारों एवं पांच हज़ार सेना के साथ रतनगढ़ पर आक्रमण किया। बीकानेर की तरफ़ के पुरोहित जेठमल ने बड़ी वीरतापूर्वक उनका सामना किया और वह लड़ता हुआ मारा गया। इस अवसर पर सांडवा, गोपालपुरा और चाड़वास के बीदावत भी बीकानेर के विरुद्ध षड्यंत्र में शामिल थे। अतएव ये सब युद्ध के समय अपनी सेना सहित अपने-अपने ठिकानों को चले गये और पृथ्वीसिंह का सामना न किया। यह समाचार प्राप्त होने पर महाराजा को सुराणा अमरचन्द की याद आई। तीन दिन तक रतनगढ़ में लड़ने के उपरान्त तंग होकर पृथ्वीसिंह रामगढ़ चला गया और वहां से ही देश का बड़ा नुक़सान करने लगा। फिर उसने सीकर के ठाकुर की मारफ़त जमशेदख़ां (होल्कर का सैनिक अफ़सर) को अपनी सहायता के लिए बुलाया, जिसने शेखावाटी में बड़ा नुकसान किया। उसी की सहायता से पृथ्वीसिंह ने चूरू के बहुत से माल-असबाब, मवेशी और धन पर हाथ साफ़ किया[1]।

पृथ्वीसिंह का पुन. उत्पात करना

इधर तो चूरू के ठाकुर का उत्पात जारी था, उधर इसी बीच मीरख़ां ने दूसरी बार बीकानेर पर चढ़ाई की और वह देपालसर होता हुआ खासोली जा पहुंचा, जहां अचानक महामारी उत्पन्न हो जाने से उसकी बड़ी हानि हुई। तब वह तुरन्त वहां से प्रस्थान कर झूंझणू चला गया, जहां शेखावतों के पांचों परगनों से उसने एक लाख रुपये दंड के ठहराये[2]।

मीरख़ां की दुबारा बीकानेर पर चढ़ाई

अनन्तर मीरख़ां ने चूरू के ठाकुर से कहलाया कि मुझे सामान दिया जाय तो मैं चूरू को बीकानेर से छुड़ा लूं। पृथ्वीसिंह ने सीकर के

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०६।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८।

पृथ्वीसिंह का चूरू पर अधिकार होना

रावराजा से सामान देने का निवेदन किया, पर वहां से कोई प्रबन्ध न होने से वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१७) में उसने खोहर के क़िले में जाकर गांव कडवासर के बणीरोत कान्हसिंह से भेंट कर सहायता की प्रार्थना की। चूरू के गढ़ में उन दिनों ६०० गुसांई रहते थे। कान्हसिंह ने ४००० रुपया तथा एक गांव देना ठहराकर उन्हें आक्रमण के समय गढ़ का द्वार खोल देने पर राज़ी कर लिया। यह खबर मिलने पर पृथ्वीसिंह ने नरहड़ जाकर क़ायमखानियों को ५०० रु० रोज़ाना फ़ौजखर्च देना ठहराकर अपने शामिल कर लिया। फिर बणीरोतों से तीन हज़ार रुपये दंड के वसूल कर यह सम्मिलित सेना कान्हसिंह से मिली तथा गुसांइयों से दिन का निश्चय कर चूरू पर आक्रमण किया। प्रतिज्ञानुसार गुसांइयों ने द्वार खोल दिये, तब शत्रुओं के ३०० सैनिक तो नगर में गये तथा उतने ही गढ़ की ओर बढ़े। उनका शब्द सुनते ही मेहता मेघराज युद्ध का साज सजकर सामने आया और असीम पराक्रम दिखलाकर मारा गया। फलस्वरूप चूरू पर क़ायमखानियों का अधिकार हो गया। फिर १६००० सेना के साथ जमशेदखां के आकर फ़ौजखर्च मांगने पर पृथ्वीसिंह ने अपने पुत्र भानजी को ओल में दे दिया और इस प्रकार चूरू पर उसका अधिकार हुआ। फिर क़िले को घेरकर उसपर तोपें चलाई गईं। चार दिन के युद्ध के बाद मेहता भूपालसिंह तथा सूबेदार देवीसिंह गढ़ खाली कर चले गये तथा वहां वि० सं० १८७४ कार्तिक सुदि १५ (ई० स० १८१७ ता० २३ नवम्बर) को पृथ्वीसिंह का अधिकार हो गया[1]।

उस समय तक अंग्रेज़ों का अमल हांसी, हिसार आदि तक हो चुका था और उनके प्रभुत्व की धाक अधिकांश भारत में जम चुकी थी। राज्य

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८।

वीरविनोद में भी चूरू के ठाकुर का अपना क़िला लेना लिखा है, परन्तु उसमें इस घटना का संवत् १८७२ (ई० स० १८१७) दिया है (भाग २, पृ० ५०६)।

के भीतर की ऐसी विप्लव की दशा में महाराजा सूरतसिंह ने अंग्रेज़ों से सन्धि स्थापित करने का निश्चय किया। इस सम्बन्ध में उसने पहले मेहता अबीरचन्द को अंग्रेज़ों के पास भेजने का विचार किया था, परन्तु वह गोली लग जाने से बीमार पड़ा हुआ था, अतएव ओझा काशीनाथ इस कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए मि० चार्ल्स थियोफिलस मेटकाफ़ के पास दिल्ली भेजा गया। उसने अपने स्वामी की सारी इच्छा उसे समझाकर निम्नलिखित शर्तों पर बीकानेर की ओर से अंग्रेज़ सरकार से वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१७) में सन्धि की[1]।

महाराजा की अंग्रेज़ सरकार से सन्धि

पहली शर्त—ऑनरेबल कम्पनी तथा महाराजा सूरतसिंह, उनके उत्तराधिकारियों एवं क्रमानुयायियों के बीच निरन्तर मैत्री, पारस्परिक मेल और स्वार्थों के ऐक्य का सम्बन्ध रहेगा और एक पक्ष के मित्र तथा शत्रु दोनों पक्षों के मित्र तथा शत्रु समझे जायंगे।

दूसरी शर्त—अंग्रेज़ सरकार बीकानेर के राज्य और देश की रक्षा करने का इक़रार करती है।

तीसरी शर्त—महाराजा, उनके उत्तराधिकारी एवं क्रमानुयायी अंग्रेज़ सरकार के साथ अधीनतापूर्ण सहयोग का व्यवहार रक्खेंगे, उस (अंग्रेज़ सरकार) की महत्ता स्वीकार करेंगे और किसी दूसरे राजा अथवा राज्य से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रक्खेंगे।

चौथी शर्त—महाराजा, उनके उत्तराधिकारी एवं क्रमानुयायी बिना अंग्रेज़ सरकार की जानकारी तथा अनुमति के किसी भी राजा अथवा राज्य से अहद-पैमान न करेंगे, परन्तु मित्रों तथा सम्बन्धियों के साथ उनका साधारण मैत्री का पत्रव्यवहार पूर्ववत् ही जारी रहेगा।

पांचवीं शर्त—महाराजा, उनके उत्तराधिकारी एवं क्रमानुयायी किसी से ज़्यादती न करेंगे; यदि दैवयोग से किसी से झगड़ा हो गया तो वह

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८।

मध्यस्थता एवं निर्णय करने के लिए अंग्रेज़ सरकार के सामने पेश किया जायगा।

छठी शर्त—चूंकि बीकानेर राज्य के कुछ व्यक्तियों ने लूटमार और डकैती का बुरा मार्ग इख़्तियार कर लिया है और बहुतों का मालमता लूटकर दोनों दलों (अंग्रेज़ों तथा राज्य) की शान्तिप्रिय प्रजा को कष्ट पहुंचाया है, इसलिए अंग्रेज़ी राज्य की सीमा के अंतर्गत रहनेवालों की अब तक लूटी गई सब सम्पत्ति वापस दिलाने एवं भविष्य में अपने राज्य के लुटेरों और डाकुओं का पूर्णतया दमन करने का महाराजा इक़रार करते हैं। यदि महाराजा उनका दमन करने में समर्थ न हों तो उनके मांगने पर अंग्रेज़ सरकार उन्हें सहायता देगी, परन्तु ऐसी दशा में महाराजा को फ़ौज का सारा खर्च देना पड़ेगा; अथवा उस दशा में जब कि उनके पास ख़र्चा चुकाने के साधन उपस्थित न होंगे तो उसके बदले में अपने राज्य का कुछ भाग अंग्रेज़ सरकार के सिपुर्द कर देना होगा, जो उस ख़र्च की भरपाई हो जाने पर महाराजा को वापस मिल जायगा।

सातवीं शर्त—महाराजा के मांगने पर, अंग्रेज़ सरकार महाराजा से विद्रोह करने एवं उनकी सत्ता को न माननेवाले ठाकुरों तथा राज्य के अन्य पुरुषों को उनके अधीन करेगी। ऐसी दशा में सारा फ़ौजख़र्च महाराजा को देना पड़ेगा, परन्तु उस दशा में जब कि उनके पास ख़र्चा चुकाने के साधन उपस्थित न होंगे, उन्हें अपने राज्य का कुछ भाग अंग्रेज़ सरकार के सिपुर्द कर देना होगा, जो उस ख़र्च की भरपाई हो जाने पर उन्हें वापस मिल जायगा।

आठवीं शर्त—अंग्रेज़ सरकार के मांगने पर बीकानेर के महाराजा को अपनी शक्ति के अनुसार फ़ौज देनी होगी।

नवीं शर्त—महाराजा, उनके उत्तराधिकारी एवं क्रमानुयायी अपने राज्य के खुदमुख़्तार राजा रहेंगे तथा उक्त राज्य में अंग्रेज़ी हुकूमत का प्रवेश न होगा।

दसवीं शर्त—चूंकि अंग्रेज़ सरकार की यह इच्छा और अभिलाषा

है कि बीकानेर और भटनेर का मार्ग काबुल और खुरासान आदि से व्यापार-विनिमय के लिए सुरक्षित एवं आने-जाने के योग्य कर दिया जाय, अतएव महाराजा अपने राज्य के भीतर ऐसा करने का इकरार करते हैं, ताकि व्यापारी सकुशल और बिना किसी बाधा के आया-जाया करें और राहदारी का जो दर निश्चित है वह बढ़ाया न जायगा।

ग्यारहवीं शर्त—ग्यारह शर्तों का यह अहदनामा होकर इसपर मि० चार्ल्स थियोफिलस् मेटकाफ़ तथा ओझा काशीनाथ की मुहर और हस्ताक्षर हुए। श्रीमान् गवर्नर जेनरल तथा राजराजेश्वर महाराजा श्रीमान् सूरतसिंह बहादुर की तसदीक की हुई इसकी नकलें आज की तारीख के बीस दिन बाद आपस में एक दूसरे को दी जावेंगी।

ता० ६ मार्च ई० स० १८१८ (फाल्गुन सुदि २ वि० सं० १८७४) को दिल्ली में लिखा गया।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़. | मुहर |

(हस्ताक्षर) ओझा काशीनाथ. | मुहर |

| गवर्नर जेनरल की छोटी मुहर | (हस्ताक्षर) हेस्टिंग्स.

इस अहदनामे की श्रीमान् गवर्नर जेनरल ने घाघरा नदी पर पतरसा घाट के निकट के डेरे में ता० २१ मार्च ई० स० १८१८ (फाल्गुन सुदि १४ वि० सं० १८७४) को तसदीक़ की।

(हस्ताक्षर) जे० ऐडम
गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी[1].

(१) एचिसन, ट्रीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्ज़, जि० ३, पृ० २८८-६०। प्रिन्सेप्स; नरेटिव ऑव् पोलिटिकल एण्ड मिलिटरी ट्रान्ज़ेक्शन्स; पृ० ४३७। मैलिसन्स; नेटिव स्टेट्स ऑव् इण्डिया, पृ० ११५। दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १०७-८।

वि० सं० १८७५ भाद्रपद सुदि १४ (ई० स० १८१८ ता० १४ सितंबर) को महाराजकुमार रत्नसिंह के पुत्र सरदारसिंह का जन्म हुआ । अनन्तर महाराजा की आज्ञानुसार मेहता अबीरचन्द ने दिल्ली जाकर अहदनामे की शर्त के अनुसार अंग्रेज़ों से विद्रोही ठाकुरों का दमन करने के लिए फ़ौज भेजने की प्रार्थना की । इस कथन की जांच करने के उपरान्त जेनरल एलनर की अध्यक्षता में अंग्रेज़ी फ़ौज ने बीकानेर में प्रवेश किया। फ़तियाबाद और हिसार पर अधिकार करके यह सेना सीधमुख में पहुंची, जहां का ठाकुर पृथ्वीसिंह (शृंगोत) दस दिन तक तो खूब लड़ा, पर अंत में भागकर शेखावाटी में चला गया। फलस्वरूप वहां अंग्रेज़ों का दख़ल हो गया। जसाणे का शृंगोत ठाकुर अनूपसिंह तथा बिरकाली का दलपतसिंह भी देश में बड़ा फ़साद करते थे, अतएव दोनों जगहों पर एक साथ सेनाएं भेजी गईं। कुछ देर की लड़ाई के बाद उक्त स्थानों के ठाकुर भी भागकर शेखावाटी में चले गये तथा वहां अंग्रेज़ी सेना का दख़ल हो गया। अनन्तर जेनरल एलनर फ़ौज सहित कूचकर ददेवा गया। वहां के बीका ठाकुर सूरजमल ने १२ दिन तक तो अंग्रेज़ों का सामना किया, पर पीछे से वह भी भागकर सीकर चला गया। फिर अंग्रेज़ी सेना सरसला पहुंची, जहां का ठाकुर बणीरोत रणजीतसिंह पन्द्रह दिन लड़ने के उपरान्त रात्रि के समय गढ़ छोड़कर भाग गया। वहां से यह फ़ौज जारीया पहुंची। केवल कुछ दिन की लड़ाई के पश्चात् बणीरोत मानसिंह के भाग जाने पर वहां भी अंग्रेज़ी सेना का दख़ल हो गया। वहां से फ़ौज के चूरू पहुंचने पर एक मास तक तो पृथ्वीसिंह ने लड़ाई की, परन्तु अंत में वह भी गढ़ छोड़कर रामगढ़ चला गया। गांव सुलखणिया व नीवां में बीका

विद्रोही सरदारों का दमन करने में अंग्रेज़ों की सहायता लेना

पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; शेष संग्रह, संख्या ३; पृ० १६३-४ ।

बीकानेर के नरेशों ने पहले मरहटों आदि को किसी प्रकार का ख़िराज नहीं दिया, इसीलिए अंग्रेज़ सरकार ने भी उनसे ख़िराज नहीं लिया ।

शेरसिंह किशनसिंहोत ने अपने गढ़ बना लिये थे, अंग्रेज़ी सेना ने उसे निकालकर दोनों गढ़ों पर अपना अधिकार किया। फिर सेना ने सुजानगढ़ के बीदावत ठाकुर जैतसिंह से खरबूज़ी का क़िला छीना। ऊपर लिख आये हैं कि भाद्रा का गढ़ पटियाले के सिक्खों की सहायता से अधीन हुआ था और वहां सिक्खों का अधिकार हो गया था। जब अंग्रेज़ सरकार से वह इलाक़ा वापस दिलवाने को बीकानेर राज्य की ओर से कहा गया तो उन्होंने पटियाले लिखा-पढ़ी कर वह इलाक़ा खाली करवा लिया। फ़ौजखर्च न मिलने के कारण १० महीने तक वहां अंग्रेज़ों का अधिकार रहा। बाद में खर्चा मिल जाने पर वह बीकानेर को दे दिया गया और वहां कोटासर का पड़िहार भोमसिंह, डागा जोरावरमल एवं दायमा ब्राह्मण लक्ष्मणराय रक्खे गये। अन्य क़िलों में भी इसी प्रकार राज्य की ओर से हाकिम नियुक्त किये गये[1]।

महाराजा के पुत्रों के मेवाड़ में विवाह

वि० सं० १८७७ आषाढ़ वदि ८ (ई० स० १८२० ता० ३ जुलाई) को महाराजा सूरतसिंह के कुंवरों में से ज्येष्ठ रत्नसिंह का विवाह उदयपुर के महाराणा भीमसिंह की पुत्री तथा मोतीसिंह का विवाह महाराणा के निकट के संबंधी महाराज शिवदानसिंह की पुत्री[2] से हुआ। इस अवसर पर जैसलमेर के रावल गजसिंह तथा कृष्णगढ़ के कुंवर मोहकमसिंह के भी विवाह मेवाड़ में हुए[3]।

वि० सं० १८७८ (ई० स० १८२१) में वारू के विद्रोही ठाकुर जवानसिंह मालदोत पर सुराणा हुक्मचन्द तथा पुरोहित जवानजी की

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०८-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७८-६।

(२) महाराज भीमसिंह के पुत्र बागोर के स्वामी शिवदानसिंह की पुत्री।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १०६-१०। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५०६-१०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७६।

बारू के विद्रोही ठाकुर का मारा जाना

अध्यक्षता में बीकानेर से सेना भेजी गई। पच्चीस दिन की लड़ाई के पश्चात् जवानसिंह मारा गया। बीकानेरी सेना भानीसिंह तथा अनाड़सिंह नाम के अन्य दो मालदोतों को पकड़कर बीकानेर ले आई, जहां वे दोनों क़ैद में डाल दिये गये। बारू के गढ़ का सारा सामान ज़ब्त कर लिया गया[1]।

वि० सं० १८७९ कार्तिक सुदि १३ (ई० स० १८२२ ता० २६ नवम्बर) को जयपुर की तरफ़ से चौमूं का ठाकुर कृष्णसिंह नाथावत

जयपुर से विवाह के लिए सन्देशा आना

एवं सिंघी हुकमचन्द बीकानेर की राजकन्या मदनकुंवरी के विवाह के सम्बन्ध में बातचीत करने आये। कुछ दिनों पहले झलाय के ठाकुर का एक परगना नवाई जयपुर ने खालसे कर लिया था तथा बिसाऊ के श्यामसिंह ने डूंडलोद के रणजीतसिंह और उसके पुत्र प्रतापसिंह को मार उसकी सारी भूमि पर स्वयं अधिकार कर लिया था। इस अवसर पर महाराजा सूरतसिंह ने नवाई तथा डूंडलोद, वास्तविक हक़दारों को पीछा दे-देने का जयपुरवालों से वचन लिया[2]।

उन्हीं दिनों टीबी के गांवों के सम्बन्ध में महाराजा सूरतसिंह तथा अंग्रेज़ सरकार के बीच लिखा-पढ़ी हुई। महाराजा का कथन था कि वे

टीबी के गांवों के सम्बन्ध में अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी

गांव भटनेर में शामिल होने से बीकानेर राज्य के अन्तर्गत हैं, अतएव मुझे वापस मिलने चाहियें, परंतु बहुत कुछ लिखा-पढ़ी होने पर भी टीबी के गांव अंग्रेज़ सरकार ने उस समय सूरतसिंह को वापस न दिये[3]।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७९।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७९।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११०-११। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७९।

वि० सं० १८८१ (ई० स० १८२४) में दद्रेवा के ठाकुर सूरजमल बीका ने भड़ेच इलाक़े के गांव कैरू से चढ़कर अंग्रेज़ी इलाक़े के गांव वहल का थाणा लूटा और वह वहीं रहने लगा। जब सलेधी का संपतसिंह वहां पहुंचा तो सूरजमल उस स्थान का परित्याग कर गांव वूढ़ेड़ में जा रहा। अंग्रेज़ सरकार को इसकी ख़बर मिलने पर अबीरचन्द मेहता, जो उन दिनों दिल्ली में था, उसका प्रबन्ध करने के लिए भेजा गया। इसी बीच हिसार की अंग्रेज़ी सेना ने सूरजमल पर चढ़ाई कर उसे वहां से निकाल दिया। तब वह (सूरजमल) बीदावतों के गांव सेला की गढ़ी में जा रहा। इसपर बीकानेर से मेहता सालमसिंह तथा खुराणा लक्ष्मीचंद की अध्यक्षता में उसपर सेना भेजी गई। १० दिन तो सेले के ठाकुर ने बीकानेर की सेना का सामना किया, पर अंत में उसे गढ़ छोड़कर भागना पड़ा। ऐसी दशा में सूरजमल भी भागकर गांव लाधड़िया की गढ़ी में चला गया। बीकानेरी फ़ौज ने उसे वहां भी जा घेरा। इसी प्रकार वह आठ गढ़ियों में भागा, पर हर जगह उसका पीछा किया गया और उसका निवासस्थान नष्ट कर दिया गया[1]।

दद्रेवा के विद्रोही ठाकुर का दमन

वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) के ज्येष्ठ मास में गवर्नर जेनरल लॉर्ड एम्हर्ष्ट का मेरठ में आगमन हुआ। इस अवसर पर महाराजा के वकील मेहता अबीरचन्द ने वहां उपस्थित होकर अनेक मूल्यवान वस्तुएं महाराजा की ओर से गवर्नर को भेंट कीं। उसके विदा होते समय उसे खिलअत आदि मिली[2]।

मेहता अबीरचन्द का लॉर्ड एम्हर्ष्ट की सेवा में जाना

उसी वर्ष मि० एडवर्ड ट्रेवेलियन सीमा-सम्बन्धी झगड़ा तय करने

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११२। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७६।

के लिए बीकानेर आया। उसके पास मेटकाफ़ का इस आशय का एक खरीता था कि जो ज़मीन परगना बेनीवाल की बीकानेर के पास है यदि वह सूरतसिंह की साबित हुई तो उसी के पास रक्खी जायगी अन्यथा अंग्रेज़ी राज्य में मिला ली जायगी। पर इसकी जांच होने पर फैसला बीकानेर के विरुद्ध हुआ तथा टीबी और बेनीवाल के ४० गांव बीकानेर राज्य से अलग हो गये[1]।

अंग्रेज़ सरकार के साथ सीमा-सम्बन्धी निर्णय

महाराजा सूरतसिंह की चार राणियों—राजावत शृंगारकुंवरी, जैसलमेरी अभयकुंवरी, वरसलपुरी श्यामकुंवरी और पंवार सरदारकुंवरी—के नाम मिलते हैं। उसके तीन पुत्र—रत्नसिंह, मोतीसिंह[2] और लक्ष्मीसिंह—तथा दो पुत्रियां—मदनकुंवरी[3] और लाभकुंवरी—हुईं[4]।

विवाह तथा सन्तति

वि० सं० १८८५ चैत्र सुदि ६ (ई० स० १८२८ ता० २४ मार्च) सोमवार को महाराजा सूरतसिंह का स्वर्गवास हो गया[5]।

मृत्यु

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११३-४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

(२) इसका जन्म वि० सं० १८५६ (ई० स० १८०२) में हुआ था तथा वि० सं० १८८२ कार्तिक वदि ३ (ई० स० १८२५ ता० ३० अक्टोबर) रविवार को इसका देहांत हो गया। इसके साथ इसकी स्त्री दीपकुंवरी सती हुई, जो बीकानेर के राज्य परिवार में आख़िरी सती थी, जिसके स्मरणार्थ बीकानेर में देवीकुंड पर प्रतिवर्ष मेला लगता है।

(३) इसका जन्म वि० सं० १८७१ (ई० स० १८१४) में हुआ था तथा वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में इसका देहांत हो गया।

(४) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११४।

(५) ·········अथास्मिन् शुभसंवत्सरे श्रीविक्रमादित्यराज्यात् संवत् १८८५ वर्षे शाके १७५० प्रवर्त्तमाने·········मासोत्तमे मासे

महाराजा सूरतसिंह का व्यक्तित्व

महाराजा सूरतसिंह का राज्यकाल अंग्रेज़ों के अभ्युत्थान का समय कहा जा सकता है। जैसे पहले मुग़लों के प्रबल प्रवाह के सामने हिन्दू राजाओं को बहना पड़ा था, वैसे ही अब अंग्रेज़ों की प्रबल शक्ति के आगे हिन्दू-मुसलमान सब अवनत होते जा रहे थे। उनका अमल हांसी, हिसार तक हो चुका था और उनके प्रभुत्व की धाक अधिकांश भारत में जम चुकी थी। इधर बीकानेर राज्य की आन्तरिक दशा भी बिगड़ रही थी। आये दिन राज्य के सरदार विद्रोही हो जाते थे, जिनका दमन करने में ही महाराजा को सारी शक्ति लगा देनी पड़ती थी। टामस की दो बार की चढ़ाइयों तथा जोधपुर के साथ की लड़ाइयों में भी बीकानेर का कम नुक़सान न हुआ था। ऐसी परिस्थिति में उसने अंग्रेज़ों से मेल कर लेना ही उचित समझा और इस महत्व-पूर्ण कार्य को उत्तमता से पूरा करने के लिए ओझा काशीनाथ दिल्ली भेजा गया, जिसने मि० चार्ल्स मेटकाफ़ से मिलकर सन्धि की शर्तें तय कीं। यह घटना बीकानेर राज्य के इतिहास में बड़ा महत्व रखती है, क्योंकि अंग्रेज़ो के साथ संधि स्थापित हो जाने पर उनकी सहायता से विद्रोही सरदारों का पूरी तरह दमन होकर राज्य में पुनः सुख और शान्ति की स्थापना हुई। जो सम्बन्ध महाराजा सूरतसिंह ने अंग्रेज़ों से स्थापित किया उसका अब तक निर्वाह होता है और अंग्रेज़ सरकार तथा बीकानेर के बीच अब भी सुदृढ़ मैत्री विद्यमान है।

महाराजा सूरतसिंह बड़ा वीर, नीतिवेत्ता और न्यायप्रिय था। वह केवल तलवार लेकर लड़ना ही नहीं जानता था, वरन् मेल के महत्व को भी ख़ूब

चैत्रमासे शुभे शुक्लपक्षे रामनवम्यां (९) सोमवासरे·········राठोड़-वंशतिलकः श्रीमद्राजराजेश्वरशिरोमणिः श्रीमन्महाराजाधिराजमहाराज-श्री १०८ श्रीसूरतसिंहजीवर्मा······वैकुठपरमधामप्राप्तः।······।

बीकानेर का महाराजा सूरतसिंह का मृत्यु स्मारक।

समझता था। जहां उसे मेल करने में लाभ दिखाई पड़ता वहां वह बिना अधिक सोच-विचार किये ही ऐसा कर लेता। वह अन्याय होता हुआ नहीं देख सकता था। जोधपुर के महाराजा भीमसिंह के पुत्र धोकलसिंह का हक़ मानसिंह-द्वारा छिनता हुआ देखकर वह यह अन्याय सहन न कर सका और जयपुर के महाराजा जगतसिंह के साथ उसका सहायक बन गया। वह शत्रु पर दग़ा से वार करने का विरोधी था। प्राणरक्षा का वचन पाकर संधि की शर्तें तय करने के लिए आये हुए जोधपुर के सरदारों को उसने अपने आदमियों की सलाह के अनुसार मारा नहीं, वरन् संधि की शर्तें स्वीकार न होने पर भी उन्हें सिरोपाव आदि देकर सम्मानपूर्वक वापस भेजा।

जहां महाराजा में इतने गुण थे वहां एक दुर्गुण भी था। वह कान का कच्चा था। जिस सुराणा अमरचन्द ने अपनी वीरता से अनेक बार विद्रोही सरदारों का दमन किया और जिसे स्वयं उस (महाराजा) ने राव का ख़िताब देकर सम्मानित किया था, उसे ही कई सरदारों के बहकाने में आकर और उनकी झूठी शिकायतों पर विश्वास कर महाराजा ने बाद में मरवा दिया। पीछे से इस अपकृत्य का महाराजा को पछतावा भी रहा।

महाराजा ने अपने राज्यकाल में सूरतगढ़ बनवाया था।

महाराजा रत्नसिंह

महाराजा रत्नसिंह का जन्म वि० सं० १८४७ पौष वदि ६ (ई० स० १७९० ता० ३० दिसम्बर) को हुआ था और वह वि० सं० १८८५ वैशाख वदि ५ (ई० स० १८२८ ता० ५ अप्रेल) को बीकानेर के सिंहासन पर बैठा[1]।

जन्म तथा गद्दीनशीनी

उसी वर्ष ज्येष्ठ सुदि ३ (ता० १६ मई) को गवर्नर जेनरल की तरफ़ से महाराजा के पास बधाई का खरीता आया तथा दूसरा ख़रीता

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८०।

धोंकलसिंह को राज्य में प्रवेश करने की मनाई

दिल्ली के रेज़िडेंट के पास से इस आशय का आया कि जोधपुर के इलाक़े में धोंकलसिंह उत्पात कर रहा है, उससे आप किसी प्रकार का सम्बन्ध न रक्खें। महाराजा ने उसी समय अपने सरदारों को आज्ञा दी कि कोई भी उस(धोंकलसिंह)को राज्य में प्रवेश न करने दे[1]।

जैसलमेर पर चढ़ाई

वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२९) में जैसलमेर इलाके के गांव राजगढ़ के भाटी राजसी आदि बीकानेर के सरकारी सांडों का टोला पकड़ ले गये। शाह मानिकचन्द ने उनका पीछा कर उधर के हाकिम से सांडों को वापस दिला देने के लिए कहा, परन्तु उसके कुछ ध्यान न देने पर वह बीकानेर लौट गया। तब बीकानेर से महाजन के ठाकुर वैरिशाल, मेहता अभयसिंह तथा सुराणा हुकुमचन्द की अध्यक्षता में तीन हज़ार[2] फ़ौज जैसलमेर पर भेजी गई, जिसने उधर जाकर लूटमार शुरू की। इसपर जैसलमेर से भी बीकानेर की सेना का सामना करने के लिए फ़ौज आई। वासणपी गांव के पास बड़ी लड़ाई हुई, परन्तु सेना कम होने से विजयलक्ष्मी ने जैसलमेरवालों का साथ दिया और निकट था कि बीकानेरवालों का नगारा छिन जाता, परन्तु एक वीर सिक्ख ने अपना प्राण देकर उसकी रक्षा की[3]।

बीकानेर का यह आक्रमण अंग्रेज़-सरकार के साथ की वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१८) की सन्धि की पांचवीं धारा के विरुद्ध होने से अन्त में अंग्रेज़ सरकार ने इसमें हस्तक्षेप किया और उदयपुर के महाराणा जवानसिंह को मध्यस्थ बनाकर दोनों राज्यों मे सुलह करा दी। महाराणा

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११४।

(२) लक्ष्मीचन्द-लिखित 'तवारीख़ जैसलमेर' में बीकानेर से दस हज़ार सेना जैसलमेर पर जाना लिखा है (पृ० ८०) तथा उससे यह भी पाया जाता है कि इस चढ़ाई में बीकानेर का पक्ष कमज़ोर ही रहा।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११५। लक्ष्मीचन्द, तवारीख़ जैसलमेर, पृ० ७९-८१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८०।

स्वयं तो न गया, परन्तु उसने अपने विश्वासपात्र सेठ जोरावरमल को इस काम के लिए भेज दिया, जिसने दोनों राजाओं तथा अंग्रेज़ अफ़सरों से मिलकर परस्पर हर्जाना[1] दिलाने की शर्त पर उनमें मेल कराने की व्यवस्था की[2]।

इन दोनों राजाओं का पीछे से परस्पर किस प्रकार मिलाप हुआ, इसका लेफ़्टिनेन्ट वोइलो ने, जो उस प्रसंग पर उपस्थित था, अपनी यात्रा की पुस्तक में वड़ा रोचक वर्णन किया है, जिसका आशय नीचे दिया जाता है—

'वीकानेर और जैसलमेर के राजाओं का अपनी-अपनी सीमा के घड़ियाला और गिरराजसर गांवों में ता० ६ मई ई० स० १८३५ (वि० सं० १८९२ वैशाख सुदि १२) को आगमन निश्चित हुआ था, अतः उस दिन मैं भी घड़ियाला जा पहुंचा, परन्तु वहां यह मालूम होने पर कि वीकानेर के महाराजा के आने में अभी एक दिन की देर है मैं गिरराजसर चला गया। घड़ियाला वीकानेर की सुदूर पश्चिमी सीमा पर वसा हुआ एक गांव है, जिसमें १३० घरों की वस्ती और एक छोटा सा क़िला है। महारावल के ठहरने के लिए चुना हुआ गांव गिरराजसर घड़ियाला से वड़ा है और उसमें तीन सौ से अधिक घर और एक क़िला है। वहां पहुंचने पर मैं पुनः लेफ़्टिनेन्ट ट्रॉविलियन से मिला, जो महारावल को दसवीं तारीख़ को वहां लाने में सफल हुआ था। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, वही दिन दोनों राजाओं के पारस्परिक मिलाप के लिए नियत हुआ था, परन्तु उनके थके हुए होने के कारण यह कार्य दो दिन के लिए स्थगित कर दिया गया। ता० १२ मई को दोनों राज्यों की सीमा के ऊपर दौलतख़ाना (दरवार के लिए वड़ा शामियाना) खड़ा करने का प्रवन्ध हुआ। उस स्थान पर सौ फुट लम्बी और चौवीस फुट चौड़ी जगह में दोनों ओर

(१) एचिसन; ट्रीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्स जि० ३; पृ० २७७-८।

(२) लक्ष्मीचन्द-कृत 'तवारीख़ जैसलमेर' (पृ० ८०) में भी इसका उल्लेख है।

बराबर-बराबर भूमि में खेमे खड़े किये गये। मुलाक़ात के लिए नियत स्थान के दक्षिणी भाग में लेफ़्टिनेन्ट ट्रॉविलियन का खेमा था। शामियाने में एक सिंहासन इस प्रकार रक्खा गया था, जिससे उसका आधा-आधा भाग दोनों राज्यों की सीमा में पड़ता था। अन्य प्रबन्ध भी इसी भांति निष्पक्षता के साथ किये गये थे। दोनों राजाओं के लिए ऐसा प्रबन्ध किया गया था कि उनका आगमन एक ही समय दौलतखाने में हो। दो विभिन्न द्वारों से खेमे में राजाओं का आना निश्चित हुआ था, अतएव उनकी पेशवाई करने के लिए पैदल सेना को, दो भागों में विभाजित कर, दोनों ओर के दरवाज़ों पर खड़ा कर दिया गया था। घुड़सवार दोनों सीमाओं पर खेमे के सामने एक पंक्ति में खड़े किये गये थे। तोपें उनके पीछे इस प्रकार रक्खी गई थीं कि एक-एक तोप सीमा के दोनों तरफ़ पड़ती थी। उनके सम्मान का अन्य प्रबन्ध भी सूर्य्यास्त से पूर्व कर लिया गया। फिर एक तोप दाग़ी गई, जिसपर महाराजा ने अपने दरबारियों सहित घड़ियाला से प्रस्थान किया जो पूर्वोक्त स्थान से १½ मील दूरी पर था। महारावल को दो मील का मार्ग तय करना पड़ा, जिससे वह कुछ देर में पहुंचा और इस प्रकार दोनों राजाओं के खासों (ढकी हुई पालकियों) में से उतरने के पूर्व ही उनकी १७ तोपों की सलामी अलग-अलग सर हो गई।

'प्रबन्ध तो ऐसा किया गया था कि दोनों राजा अपने साथ अधिक आदमी न लावें लेकिन फिर भी तीन हज़ार व्यक्ति एकत्रित हो गये और सजे हुए हाथी, घोड़े, नक्कारे, निशान आदि से उस स्थान की शोभा बहुत बढ़ गई। किसी राजा के लिए पेशवाई नहीं रक्खी गई थी, क्योंकि मैं (बोइलो) ही एक व्यक्ति इस कार्य के लिए था, जो पूर्व और पश्चिम से आनेवाले दोनों राजाओं की एक साथ पेशवाई नहीं कर सकता था। खेमे के निकट पहुंचने पर सैनिकों ने दोनों राजाओं का स्वागत किया। बहुत से ठाकुर और महाजन भी उनके साथ थे और अपने जीवन में प्रथम बार दोनों राजा एक ही तम्बू के नीचे एकत्र हुए। लेफ़्टिनेन्ट ट्रॉविलियन खेमे के बीच में सीमा के मध्य में खड़ा हुआ था। दोनों के

निकट पहुंचने पर उसने अपना एक-एक हाथ दोनों की ओर बढ़ाया और उनका मिलाप करा दिया। फिर दोनों ने एक दूसरे से जुहार किया। जिस समय वे दोनों परस्पर गले लगे उस समय सारा दरबार 'मुबारक-मुबारक़' की ध्वनि से प्रतिध्वनित हो उठा। इसके बाद दोनों राजा सिंहासन पर बैठे। इस बीच उनके दरबारी भी अन्दर आ गये। कुछ दरबारी तो भड़कीली पोशाक और कीमती आभूषण पहने हुए थे, परन्तु महाराजा और महारावल केवल श्वेत रंग के जामे और मोतियों और पन्नों के कंठे पहने थे तथा दोनों की कमर में ख़ंजर लगे हुए थे। लेफ्टिनेन्ट ट्राविलियन महाराजा की दाहिनी तरफ़ ग़लीचे पर बैठा था और मैं महारावल की बाईं तरफ़। उनके मंत्री तथा सरदार उनके चारों तरफ़ घेरा बनाकर बैठे थे, दरवाज़ों के सामने के ग़लीचों पर अन्य सम्मानित सरदार थे और निम्न श्रेणी के सरदार बाहर तक खड़े हुए थे। इस अवसर पर मारवाड़ (मेवाड़) का सब से बड़ा साहूकार जोरावरमल, जो दोनों में से किसी के साथ नहीं आया था, लेकिन दोनों का मित्र था, जैसलमेर की पंक्ति की तरफ़ बैठा था।

'इस मिलाप के समय दोनों राजा अपने सरदारों का एक दूसरे को परिचय देते और अंग्रेज़ अधिकारियों की प्रशंसा कर रहे थे। कुछ समय के उपरान्त इत्र और पान आदि हुआ तथा दोनों को समान सम्मान के साथ विदा करने की सावधानी पर विशेष रूप से ध्यान रक्खा गया। इस अवसर पर ट्राविलियन ने अपने एक-एक हाथ से दोनों के अंग पर एक ही समय इत्र लगाया, जिससे महारावल बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि इससे उसका यह संशय कि दाहिनी ओर बैठे हुए अधिक शक्तिशाली महाराजा को ही प्रथम इत्र लगाया जावेगा, मिट गया। दोनों ने अंग्रेज़ अधिकारियों और फिर एक दूसरे को धन्यवाद दिया। इसके बाद दोनों ने सिंहासन से अलग खड़े होकर एक दूसरे से जुहार किया और जैसे खेमे में आये थे वैसे ही वे विभिन्न द्वारों से विदा हुए। इस अवसर पर सलामी की तोपें नहीं दाग़ी गईं, परन्तु दोनों शासकों के अपने-अपने खेमों में पहुंचने पर उनकी तरफ़ के लोगों ने सलामी सर की।

'इस प्रकार मेल हो जाने पर पीछे की मुलाक़ातों में कोई आपत्ति न रही। फिर दोनों के एक दूसरे के खेमों में जाकर मिलने की व्यवस्था की गई। ता० १६ मई को महारावल महाराजा के घड़ियाले के खेमे में मिलने को गया जहां उसका अच्छा स्वागत हुआ। बड़ी देर के वार्तालाप के बाद महाराजा ने उसे उचित उपहार आदि देकर विदा किया। उसी रात्रि को वह महारावल के गिरराजसर के खेमे में जाकर उससे मिला, जहां उसका समुचित सम्मान किया गया और महारावल ने उसे हाथी, घोड़े, रत्न आदि भेंट किये। इन दोनों ही अवसरों पर दोनों ने एक ही थाल में भोजन किया और नाच-जलसे के अनन्तर आपस में बड़ी देर तक बात-चीत होती रही।

'इस अच्छे काम को पूरा करने के लिए लेफ़्टिनेन्ट ट्राविलियन ने दोनों ओर के तीन-तीन विश्वासपात्र व्यक्तियों की एक सभा कराके आपस में एक लिखित इक़रारनामा करा दिया, जिसके अनुसार भविष्य में एक राज्य का दूसरे राज्य पर चढ़ाई न करने, वहां शरण लेनेवाले अपराधियों को लौटा देने और यदि अकेला एक राज्य किसी दुश्मन का सामना करने में असमर्थ हो तो दोनों राज्यों का मिलकर उसका दमन करने आदि का निश्चय हुआ[1]।'

भावलपुर के ख़ान ने फूलड़ा, बल्लर, मारोठ तथा मौजगढ़ पर पहले ही अधिकार कर लिया था तथा अब वह अधिक भूमि दबाने के विचार में था। ऐसी परिस्थिति में महाराजा ने अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी की, परन्तु वहां से यही उत्तर मिला कि आप सिंध की अमलदारी में किसी प्रकार से दख़ल न दें[2]।

मारोठ तथा मौजगढ के सम्बन्ध में अंग्रेज सरकार से लिखा-पढी

जयपुर, जोधपुर तथा बीकानेर राज्यों के कतिपय सरदार इधर-

(१) पर्सनल नरेटिव ऑव् ए टूर थ्रू दि वेस्टर्न स्टेट्स ऑव् राजवाड़ा; पृ० ८१-८।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११६।

उधर के इलाक़ों में लूट-मार कर जीवन-यापन करते थे, जिससे साधारण प्रजा का जीवन ख़तरे में बीतता था। उपर्युक्त राज्यों की ओर से अब तक उनकी समुचित व्यवस्था नहीं हुई थी। अतएव वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२६) के श्रावण मास में मि० जॉर्ज क्लार्क जयपुर, जोधपुर तथा बीकानेरवालों से मिल ऐसे सरदारों का प्रबन्ध करने तथा कुछ मुकदमों का फ़ैसला करने के लिए शेखावाटी में गया। इस अवसर पर महाराजा रत्नसिंह ने मेहता हिंदूमल एवं शाह हुकुमचन्द को उसकी सेवा में भेजा तथा जयपुर से बख़्शी मुन्नालाल और जोधपुर से भंडारी लक्ष्मीचन्द उसके पास गये। मुक़दमों के फ़ैसले के सम्बन्ध में बात-चीत होने के बाद डाकुओं के प्रबन्ध के बारे में यह निश्चित हुआ कि तीनों राज्य अपने-अपने इलाक़ों में उनकी जितनी गढ़ियें हों उन्हें नष्ट कर दें तथा वहां राज्य की ओर से थाने स्थापित कर दें[1]।

जॉर्ज क्लार्क का शेखावाटी में जाना और डाकुओं के प्रबन्ध के बारे में निश्चय करना

अनन्तर बीकानेर की ओर से सुराणा हुकुमचन्द डाकुओं का प्रबन्ध करने के लिए रक्खा गया। उसने थोड़े दिनों में ही गांव लोढ़सर के बीदावत स्वामी को गिरफ़्तार कर उसकी गढ़ी गिरा दी एवं वहां राज्य का थाना बैठा दिया। इसी प्रकार उसने मीगणां, बांभणी, देवणी, चारी, सेला आदि गांवों की भी गढ़ियें गिराईं और वहां राज्य के थाने बैठाये[2]।

डाकुओं के प्रबन्ध के लिए हुकुमचन्द की नियुक्ति

महाजन के ठाकुर वैरिशाल ने अपने इलाक़े में बावरी, जोहिये आदि २०० लुटेरों को आश्रय दे रक्खा था तथा वह उनकी मारफ़त बीकानेर इलाक़े में चोरी, डाका आदि डलवाया करता था। जब महाराजा रत्नसिंह को इसकी ख़बर मिली तो

महाजन के इलाक़े पर अधिकार करना

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८०।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११६।

पहले उसने उसको चेतावनी दी, परन्तु जब उसका कोई फल न हुआ तो उसने वि० सं० १८८६ कार्तिक वदि १ (ई० स० १८२६ ता० १३ अक्टोबर) को सुराणा हुकुमचन्द को फ़ौज के साथ उसपर भेजा। वैरिशाल सेना का आगमन सुनते ही भागकर भटनेर इलाक़े के गांव टीबी में, जो अंग्रेज़ों की अमलदारी में था, चला गया। उसके पुत्रों आदि ने तीन दिन तक तो बीकानेर की सेना का मुक़ाबिला किया, परन्तु इस व्यर्थ के खून-ख़राबे से कोई लाभ न देख प्रधान अमरावत मदन (मीठड़ियां) तथा देवीसिंह (ठकराणा), वैरिशाल के पुत्र अमरसिंह एवं बुधसिंह को संग ले हुकुमचन्द के पास उपस्थित हो गये और उन्होंने क़िला उसे सौंप दिया। कुछ ही दिनों बाद अपने अपराधों की माफ़ी का पक्का वचन महाराजा रत्नसिंह से प्राप्तकर वैरिशाल भी उसकी सेवा में हाज़िर हो गया। महाराजा ने उससे पेशकशी के ६०००० रुपये ठहराकर महाजन का इलाक़ा १४० गांवों के साथ उसे वापस दे दिया और साथ ही क़िला समर्पण करनेवाले अमरावतों को किसी प्रकार का दंड न देने का वचन भी उससे लिया। अनन्तर महाजन का ठाकुर अमरावतों को साथ लेकर अपने इलाक़े में गया जहां पहुंचकर उसने अपने वचन के विरुद्ध उन्हें तथा अन्य कितने ही विरोधी ठाकुरों को मरवा दिया और स्वयं अपना सामान आदि लेकर गांव फूलड़े में जा रहा। यह समाचार जब रत्नसिंह को मालूम हुआ तो उसने सुराणा हुकुमचन्द को फ़ौज देकर महाजन पर भेजा, जिसने वहां अधिकार कर इलाक़े का समुचित प्रबन्ध किया[1]।

महाजन के ठाकुर का जैसलमेर जाना

महाजन का ठाकुर वैरिशाल अपने विरुद्ध आचरण करनेवालों को मरवाकर भावलपुर के इलाक़े में चला गया था। महाराजा रत्नसिंह ने इसकी सूचना दिल्ली के रेज़िडेंट के पास भेजी, तो उसने इस सम्बन्ध में भावलपुर के ख़ान को लिखा। इसपर ख़ान ने वैरिशाल को अपने इलाक़े से बाहर

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५१०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८०-१।

निकलवा दिया। तब वैरिशाल जैसलमेर इलाक़े में चला गया और वहां सेना एकत्र करने लगा। पूगल का राव रामसिंह भी उससे मिला हुआ था; उसने जैसलमेर के रावल गजसिंह से सहायता प्राप्त की तथा, वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) के ज्येष्ठ मास में पूगल जाकर लड़ने की तैयारी की। इधर महाराजा रत्नसिंह ने अपने दीवान लक्ष्मीचन्द सुराणा को फ़ौज देकर महाजन, तथा मेहता मोहनलाल को ससैन्य रणधीसर भेजा। उसने पहुंचते ही पूगल के गांव भानीपुर के विद्रोही भाटी रूपसिंह को क़ैद कर बीकानेर भिजवा दिया तथा भानीपुर को लूटा, परन्तु जैसे ही उसने वहां से केलां की ओर प्रस्थान किया, वैसे ही पूगल से सेना ने आकर रणधीसर को लूटा तथा वहां के जागीरदारों को मार डाला। इस घटना की सूचना रत्नसिंह ने दिल्ली के रेज़िडेंट को भेजी, जिसने रामसिंह तथा वैरिशाल को उत्पात न करने के लिए कहलाया, परन्तु उसका कोई परिणाम न निकला। इसी समय बणीरोत जोरावरसिंह, लाड़खानी, जोधा, चांदावत तथा मेड़तियों आदि ने ३००० सेना के साथ गांव जसरासर, भादासर आदि से लाखों रुपये की सम्पत्ति लूटी तथा सलेधी, शेखावत आदि भी उनका अनुकरण कर इधर-उधर लूट-मार करने लगे। बीदावत भी इस अवसर पर चुप न बैठे। वे भी जयपुर और जोधपुर के कुछ राजपूतों की सहायता से राज्य के गांव लूटने लगे। ऐसी परिस्थिति में रत्नसिंह ने फिर दिल्ली के रेज़िडेंट के पास पत्र भेजकर प्रबन्ध करने के लिए कहलाया। इसके उत्तर में वहां से जवाब आया कि अजमेर तथा जयपुर के एजेंटों को इसकी सूचना दे दी गई है एवं जयपुर, जोधपुर और जैसलमेर भी लिख दिया गया है, आशा है अब सब प्रबन्ध हो जायगा। यदि इतने पर भी प्रबन्ध न हुआ तो नसीराबाद की छावनी से पलटन भेजी जायगी[१]।

उन्हीं दिनों महाराजा रत्नसिंह ने ठाकुर हरनाथसिंह, ज़ालिमचन्द

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५१०। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१।

तथा सुराणा हुकुमचन्द को सेना देकर गांव केलां में भेजा। उधर पेमा

विद्रोही सरदारों का दमन करना

और बावरी जोरा आदि ४००० सेना के साथ देश में लूटमार करने आ रहे थे। केलां से हरनाथसिंह एवं सुराणा लालचन्द ने उनपर आक्रमण किया, जिसमें लुटेरों के बहुतसे आदमी मारे गये तथा बाक़ी भाग गये एवं बावरी गोरा पकड़ा गया। वणीरोत जोरजी तथा बीदासर का कानसिंह उन दिनों गांव बिगा में थे और वहां के निवासियों से रुपये वसूल करते थे। उनपर सुराणा माणिकचन्द ने आक्रमण किया। कुछ देर तक तो लुटेरे सरदारों ने उसका सामना किया, पर अंत में वे भाग गये। विजयादशमी करके रत्नसिंह ने भी बीकानेर से प्रस्थान किया और कांनासार होता हुआ केलां पहुंचा, जहां उसके पास दिल्ली के रेज़िडेंट का इस आशय का खरीता आया कि ता० १६ अक्टोबर को नसीराबाद से अंग्रेज़ी फ़ौज रवाना होगी, आप उसके सारे प्रबन्ध का अभी से आयोजन करें। रत्नसिंह ने उसी समय अंग्रेज़ी सेना के लिए प्रबन्ध करने की आज्ञा निकाल दी। अनन्तर उसने अपने सरदारो के साथ पूगल की ओर प्रस्थान किया। इस समय उसके साथ चूरू का ठाकुर पृथ्वीसिंह, मंघरासर का हरनाथसिंह, वैद मूलचंद और सुराणा हुकुमचंद आदि थे। उनके सतासर पहुंचते ही वैरिशाल पूगल से भागकर जैसलमेर चला गया। बीकानेर की फ़ौज ने तब राव रामसिंह (पूगल) के आदमियों पर आक्रमण किया, जो हारकर गढ़ में घुस गये। फिर मोरचाबंदी कर गढ़ पर तोपों की मार की गई, जिससे तंग आकर गढ़वालों ने प्राणरक्षा का वचन ले आत्मसमर्पण कर दिया तथा गढ़ पर बीकानेर का अधिकार हो गया। कुछ दिनों बाद वैद मेहता हिन्दूमल के प्रयत्न से राव रामसिंह भी महाराजा रत्नसिंह की सेवा में उपस्थित हो गया, जिसे उसने गुढ़ा आदि गांव दे दिये। वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) में बीकानेर लौटने पर महाराजा ने दिल्ली के रेज़िडेन्ट को नसीराबाद की छावनी से फ़ौज न भेजने को लिखा[1]।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११७-८। वीरविनोद, भाग २,

पूगल का गढ़ जीतकर महाराजा ने भाटी शार्दूलसिंह को दे दिया था। वि० सं० १८८७ मार्गशीर्ष वदि ३ (ई० स० १८३० ता० ३ नवंबर) को

भाद्रा के ठाकुर का पूगल पर आक्रमण

भाद्रा के ठाकुर प्रतापसिंह तथा लक्ष्मणसिंह ने सेना के साथ रात के समय अंग्रेज़ी इलाक़े से आकर सीढ़ी के सहारे गढ़ में प्रवेश करने का प्रयत्न किया, परन्तु समय पर सूचना मिल जाने से गढ़वालों ने उनका सामना किया। प्रतापसिंह के पांच आदमी काम आते ही शेष सब सीढ़ी वहीं छोड़कर भाग गये। महाराजा रत्नसिंह-द्वारा इसकी शिकायत दिल्ली के रेज़िडेन्ट के पास की जाने पर उसने इसका उचित प्रबन्ध करने का आश्वासन दिया[1]।

लगभग दो मास बाद चूरू में लुटेरे सरदारों का उपद्रव बढ़ने पर महाराजा ने सुराणा लक्ष्मीचन्द तथा खवास गुलाबसिंह को वहां का

कर्नल लॉकेट की सेवा में सरदारों को भेजना

प्रबन्ध करने के लिए भेजा। उन्हीं दिनों दिल्ली से इस आशय का खरीता आया कि कर्नल लॉकेट शेखावाटी के लुटेरे सरदारों का प्रबन्ध करने के लिए जा रहा है। तब महाराजा ने लक्ष्मीचन्द तथा गुलाबसिंह को उसकी सेवा में उपस्थित हो जाने की आज्ञा दी। शेखावाटी का समुचित प्रबन्ध कर कर्नल लॉकेट के लौटने पर उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों ने चूरू की ओर प्रस्थान किया[2]।

कुछ बीदावत सरदार अभी भी लूट-मार किया करते थे। उनका प्रबन्ध करने के लिए महाराजा ने मेहता नथमल को भेजा, जो बीदासर के

पृ० ४१० । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१ ।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११८ । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१ ।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११८ । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१ ।

विद्रोही सरदारों का दमन करने के विषय में अंग्रेज़ सरकार के पास से खरीता आना

रामसिंह को बीकानेर ले आया। कुछ दिन तो रामसिंह वहां रहा, परन्तु एक रोज़ अवसर पाकर वह रात्रि के समय वहां से निकल गया। तब खवास ज्ञानजी, मेहता श्यामदत्त तथा सुराणा लालचन्द सेना के साथ उसके पीछे भेजे गये। उनके चरला पहुंचने पर बीदासर के कानसिंह, हरीसिंह आदि ने दिन को तो उनका सामना किया, परन्तु रात होते ही वे सब शेखावाटी में भाग गये। वहां से उन्होंने शेखावतों, सलेधियों एवं लाड़खानियों की सहायता से बीकानेर के इलाक़े में बहुत लूट-खसोट मचाई तथा वहां का बहुत बिगाड़ किया। इस सम्बन्ध में अंग्रेज़-सरकार की ओर से ई० स० १८३१ के सितम्बर (वि० सं० १८८८ भाद्रपद) मास में लुटेरों का दमन करने के बारे में खरीता आया[1]।

बादशाह अकबर (दूसरा) के पास से माही-मरातिब आदि आना

जिस दिल्ली की बादशाहत का पहले समस्त भारतवर्ष में आतंक फैला हुआ था, अब उसी के अवसान के दिन थे, तो भी राजपूताने के राजाओं के साथ का उसका सम्बन्ध पूर्ववत् किसी प्रकार नाममात्र का बना हुआ था। वि० सं० १८८८ मार्गशीर्ष वदि ८ (ई० स० १८३१ ता० २७ नवम्बर) को बादशाह मुहम्मद अकबरशाह[2] (दूसरा) के यहां से जब राजा ज्वालाप्रसाद खिलअत आदि लेकर महाराजा की सेवा में उपस्थित हुआ तब क़िले के बाहर शामियाना खड़ा करवाकर दरबार किया गया, जिसमें महाराजा ने खिलअत ग्रहण की। इस ख़िलअत के साथ नक़्क़ारा, हाथी,

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११८-९। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१।

(२) शाहआलम (दूसरा) का पुत्र। यह वि० सं० १८६३ कार्तिक सुदि ९ (ई० स० १८०६ ता० १९ नवम्बर) को दिल्ली के तख़्त पर बैठा था तथा वि० सं० १८९४ आश्विन वदि अमावास्या (ई० स० १८३७ ता० २९ सितम्बर) को इसका देहांत हुआ। यह नाम-मात्र का ही बादशाह था।

घोड़े, माही-मरातिब, ढाल तलवार आदि तथा 'नरेन्द्र' का ख़िताब भी उसने ग्रहण किया। इस अवसर पर महाराजा ने मेहता हिन्दूमल को महाराव का ख़िताब दिया[१]।

विद्रोही ठाकुरों को क्षमा करना

उसी वर्ष डूंडलोद के शेखावत शिवसिंह तथा मंडावे के माधोसिंह के प्रार्थना करने पर, महाराजा रत्नसिंह ने महाजन के ठाकुर वैरिशाल, बीदासर के रामसिंह तथा चाहड़वास के संग्रामसिंह के अपराध क्षमा कर दिये और उनकी जागीरें उन्हें सौंप दी। इस अवसर पर उनसे क्रमशः साठ, पचास एवं चालीस हज़ार रुपये पेशकशी के ठहराये गये[२]।

महाराजा की हरद्वार-यात्रा

कुछ दिनों बाद महाराजा ने हरद्वार की यात्रा के लिए प्रस्थान किया। भाद्रा का ठाकुर प्रतापसिंह अपने पिछले उत्पात के कारण क़ैद किया जाकर हिसार में रक्खा गया था। हरद्वार से लौटते समय, कुछ सरदारों के अनुरोध करने पर महाराजा ने उसे मुक्त कर दिया[३]।

सरदारसिंह का देवलिया में विवाह

वि० सं० १८८९ फाल्गुन वदि ८ (ई० स० १८३३ ता० १२ फ़रवरी) को महाराजकुमार सरदारसिंह का विवाह देवलिया के कुंवर दीपसिंह सांवतसिंहोत की पुत्री प्रतापकुंवरी से हुआ[४]।

उन दिनों लोढ़सर का बीदावत रूपसिंह देश का बड़ा बिगाड़ करता था, जिससे जयपुर तथा सीकर की सेना ने उसपर आक्रमण किया और

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११९। वीरविनोद भाग २, पृ० ५१०-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८१।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५११। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८१।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२०-१। वीर विनोद; भाग २, पृ० ५११। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८१।

(४) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२२।

मीदावतों का देश में उपद्रव करना

उसके भाग जाने पर वहां की गढ़ी गिरा दी। तब रूपसिंह, ठट्ठावता तथा भोजोलाई के ठाकुरों एवं लाडखानियों आदि की सहायता से देश में और अधिक उपद्रव करने लगा। इसपर वि० सं० १८६० (ई० स० १८३३) में सुराणा लालचन्द उसके पीछे भेजा गया, जिससे मारवाड़ में लड़ाई होने पर गोपालपुरे का ठाकुर भारतसिंह भोपालसिंहोत एवं रिसालदार सिक्ख अनूपसिंह आदि मारे गये। फिर तो उन लुटेरों का उपद्रव यहां तक बढ़ा कि कई बार वे मेहसर, घड़सीसर, लूणकरणसर आदि अनेक गांवों की लाखों रुपयों की सम्पत्ति लूट ले गये और बहुतसे आदमियों को मार तथा घायल कर दरबार के सांडों के टोले भी पकड़ ले गये[1]।

प्रतापसिंह का पुनः लुटेरे सरदारों को आश्रय देना

उन्हीं दिनों कांधलोत विष्णुसिंह (विसनजी) वैरिशालोत ने फ़ौज एकत्र कर करणपुरा गांव लूटा और वहां के गढ़ पर अधिकार कर लिया। फिर मानसिंह वैरिशालोत, पृथ्वीसिंह, शृंगोत जुहारसिंह आदि ने मिलकर सीधमुख पर अधिकार कर लिया और वहां की प्रजा का बहुत धन लूटा। उधर अंग्रेज़ों के इलाक़े से भट्टी और जाट आदि एकत्र होकर भाद्रा के ठाकुर प्रतापसिंह के गांव छानी में आ रहे और फिर सब उपद्रवी मिलकर बीकानेर इलाक़े के प्रत्येक कोने में लूट-मार करने लगे। उन्होने बीकानेर राज्य के करणपुरा, लाखणवास, अजीतपुरा, थाय आदि सौ से ऊपर गांवों को बरबाद किया। इसी समय बिसाऊ का हम्मीरसिंह शेखावत रिणी के गांवों को लूट, गांघू आदि के मवेशी घेर ले गया तथा उसने देश में बड़ा बखेड़ा किया। इसपर बीकानेर से सुराणा हुकुमचन्द ने फ़ौज के साथ लुटेरे सरदारों पर चढ़ाई की। सीधमुख पर अधिकार करने के पश्चात् उसने छानी में पहुंच प्रतापसिंह के गढ़ को घेर लिया। कुछ दिनों तक युद्ध करने के बाद घेरे से तंग आकर प्रतापसिंह जीवनरक्षा का वचन ले गढ़ छोड़कर सकुटुम्ब

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२२। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८१-२।

देशणोक चला गया[1]।

कुंभाणे के ठाकुर लालसिंह का वैरिशाल से वैर होने के कारण उसने वैरिशाल को मार डाला। इस अपराध के कारण कुंभाणे की जागीर खालसा कर ली गई। तब वहां का ठाकुर विद्रोही होकर आस-पास के इलाक़ों में लूट-मार करने लगा[2]।

कुंभाणे का इलाक़ा खालसा करना

वि० सं० १८६१ (ई० स० १८३४) में जब महाराजा देशणोक में था उसके पास गवर्नर जेनरल के एजेंट कर्नल एलिस का इस आशय का एक खरीता आया कि सीमा-सम्बन्धी निर्णय के लिए आप मुझ से मिलें, परन्तु उस समय महाराजा ने मेहता हिन्दूमल को भेज दिया। ता० १६ दिसंबर (पौष वदि ३) का दूसरा खरीता पुनः मिलने पर महाराजा रतनगढ़ गया, जहां कर्नल एलिस से उसकी भेंट हुई। सीमा-संबंधी वार्तालाप होने पर यह निर्णय हुआ कि बीदावतों के पिछले अपराध क्षमा कर सीमा पर रक्खी जानेवाली शेखावाटी की सेना में उनके भी सौ सवार रक्खे जायँ और इस सेना का ख़र्चा २२००० रुपये वार्षिक बीकानेर राज्य दे। इस अवसर पर चाहड़वास का ठाकुर संग्रामसिंह रिसालदार, ठट्ठावता का बीदावत हरीसिंह नायब रिसालदार तथा भोजोलाई का बीदावत अन्नजी जमादार के पद पर नियुक्त हुए। यह सेना 'शेखावाटी ब्रिगेड' कहलाती थी[3]। अनन्तर बेणीवाल परगने के दड़बा आदि ४० गांवों को ग़ैरइन्साफ़ी से अंग्रेज़ी अमलदारी में मिला लेने के सम्बन्ध में कर्नल

कर्नल एलिस से मिलकर सीमाप्रान्त के प्रबन्ध का निर्णय करना

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२२-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५११। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८२।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८२।

(३) लेफ़्टिनेन्ट कर्नल डब्ल्यू० प्रायर; हिस्ट्री ऑव् दि थर्टीन्थ राजपूत्स (दि शेखावाटी ब्रिगेड); पृ० १०-११।

एल्फ़िस से सदर में रिपोर्ट करने का वचन ले महाराजा मार्ग में पड़नेवाले विद्रोही सरदारों को दंड देता हुआ बीकानेर लौट गया[1]।

उन्हीं दिनों सीकर इलाक़े का शेखावत डूंगरसिंह[2] सरहद पर रखी हुई अंग्रेज़ी सेना में से ऊंट तथा घोड़े पकड़ ले गया। कर्नल एल्विस के

शेखावत डूंगरसिंह का पता लगाने में सहायता देना

ताकीद करने पर महाराजा ने एक गांव पुरस्कार में देने का वचन देकर लोढसर के ठाकुर को उसका पता लगाने के लिए भेजा। बड़े प्रयत्न के पश्चात् उसने किशनगढ़ राज्य के गांव ढसूका में उसका पता लगाकर इसकी सूचना अंग्रेज़ अफ़सर को दे दी। इस कार्यवाही के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से ता० २७ मार्च ई० स० १८३५ (चैत्र वदि १३ वि० सं० १८९१) का धन्यवाद का खरीता महाराजा के पास पहुंचा[3]।

वि० सं० १८९२ फाल्गुण सुदि ६ (ई० स० १८३६ ता० २६ फ़रवरी) को अपने पूज्य पिता की स्मृति में देवीकुंड पर एक छत्री की प्रतिष्ठा

महाराजा की गया यात्रा तथा वहां राजपूतों से पुत्रिया न मारने की प्रतिज्ञा कराना

एवं अन्य पूर्वजों की छत्रियों का जीर्णोद्धार कराके महाराजा ने वि० सं० १८९३ कार्तिक सुदि १० (ई० स० १८३६ ता० १८ नवम्बर) को छः हज़ार साथियों एवं ज़नाने सहित गया-यात्रा के लिए प्रस्थान किया। इस अवसर पर उसके साथ एक अंग्रेज़ अफ़सर भी रहा। मथुरा, वृन्दावन, प्रयाग तथा काशी की यात्रा करता हुआ पौष सुदि १४ (ई० स० १८३७ ता० २० जनवरी) को महाराजा गया पहुंचा। वहां रहते समय उसने अपने सरदारों से पुत्रियों को न मारने की प्रतिज्ञा

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२३-४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८३।

(२) सीकर के राव किशनसिंह के एक पुत्र कीरतसिंह के पुत्र पद्मसिंह के वंशज मठोठ के जागीरदार हैं। पद्मसिंह का ही वंशज डूंगरसिंह अथवा डूंगजी था, जिसके भाइयों में से एक जवाहर (जवाहरसिंह) था।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२६।

कराई[1]।

गया-यात्रा से लौटते हुए जब महाराजा मिर्ज़ापुर में ठहरा हुआ था, रीवां[2] के स्वामी विश्वनाथसिंह के पास से राजा प्रतिपालसिंह ने आकर उससे रीवां चलने का अनुरोध किया। उसके बहुत आग्रह करने पर ज़नाने को मिर्ज़ापुर में छोड़कर महाराजा उसके साथ रीवां गया, जहां रहते समय उसके पास सरहद पर सुप्रबन्ध करने के विषय का कर्नल एल्विस का ख़रीता आया। अचानक रीवां में बीमारी फैल जाने से महाराजा मिर्ज़ापुर लौट गया, जहां विजयपुर का राजा जगत बहादुर-सिंह तथा मांडे का छत्रपालसिंह उसकी सेवा में उपस्थित हुए। उनके आग्रह करने पर महाराजा उनके यहां भी कुछ दिनों ठहरा। फिर तीर्थ-स्थानों में होता हुआ वह भरतपुर और अलवर के मार्ग से बीकानेर लौटा, जहां उसने अपने सरदारों को गया में की हुई प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया और कहा कि उसके विरुद्ध आचरण करनेवाले सरदार का ठिकाना राज्य की तरफ़ से ज़ब्त कर लिया जायगा[3]।

गया से लौटते समय महाराजा का कई राज्यों में जाना

उसी वर्ष बाबा ऊहड़ ने जोधपुर से मदद लाकर गांव माढ़िया लूट लिया। तब मंघरासर के ठाकुर हरनाथसिंह ने पीछाकर गांव घोडारण (मारवाड़) में लुटेरों से युद्ध किया, जिसमे कितने एक लुटेरे तो मारे गये और शेष भाग गये तथा उनका बहुतसा धन छीनकर वह (हरनाथसिंह) बीकानेर लौट गया। वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि ४ (ई० स० १८३७ ता० ६ अप्रेल)

बागी सरदारों पर सेना भेजना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२६-६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८२।

(२) दयालदास की ख्यात से पाया जाता है कि उस समय महाराजा के ज्येष्ठ पुत्र सरदारसिंह का रीवां में विवाह हो रहा था।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२६-३२। पाउलेट; गैज़ेटियर; ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८३।

को सीकर का बहुत बिगाड़ कर शेखावत जुहारसिंह आदि बीकानेर के लोढ़सर इलाक़े में आ बढ़े। इसपर ठाकुर हरनाथसिंह और सुराणा माणिकचन्द ने सेना के साथ जाकर उन्हें घेर लिया। इतने में ही सीकर की सेना भी आ पहुंची, जिसकी साजिश से जुहारसिंह, भीमसिंह, लोढ़सर का खुमाणसिंह आदि क़िला छोड़कर जोधपुर राज्य में चले गये। ठाकुर हरनाथसिंह ने वहां भी उनका पीछा किया, तब वे वहां से भी भाग गये[1]।

सीमासम्बन्धी निर्णय के लिए अंग्रेज़ अफसर का आना

इस घटना के कुछ दिनों बाद अंग्रेज़ों की तरफ़ से मि० थार्स्बी अंग्रेज़ सरकार और बीकानेर का सीमा-सम्बन्धी झगड़ा तय करने के लिए आया। महाराजा को उससे किसी लाभदायक निर्णय की आशा न थी तो भी उसने मेहता ज़ालिमचन्द को उसके पास भेज दिया। सिरसा आदि के सम्बन्ध में बातचीत तो हुई, परन्तु कोई नवीन फ़ैसला न हुआ[2]।

बागी सरदारों को दंड देना

उन दिनों चरला का बीदावत कान्हसिंह जयपुर तथा जोधपुर इलाक़ों से सहायता लाकर बीकानेर इलाक़े में बहुत लूट-मार किया करता था। सुराणा केसरीचन्द ने उसे सुजानगढ़ में गिरफ़्तार कर बीकानेर भिजवा दिया, जो बाद में नेतासर में रक्खा गया। इसके बाद ही ठाकुर हरनाथसिंह ने हरसोलाव के चांपावत अजीतसिंह, करेकडे के पूरणसिंह तथा नौडिये के बिरदसिंह को भी गिरफ़्तार किया, जिन्हें क़ैद की सज़ा दी गई। उधर लोढ़सर के ठाकुर खुमाणसिंह, रूपेली के बीदावत करणीसिंह, सीहोढ़ण के बीदावत करणा, ऊहड़ बाघा आदि ने जोधपुर इलाक़े में रहते समय

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२२। पाउलेट-कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' (पृ० ८३) में भी ठाकुरों के उपद्रव करने का उल्लेख मिलता है।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२२-३। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८३।

बीकानेर के गांव साधासर और जसरासर लूट लिये तथा वे कितने ही गांवों के ऊंट पकड़ कर ले गये। ये लुटेरे सरदार गांव भरड़िया में रहते थे और वहां का शिवनाथसिंह भी उनके शामिल था। पीछे से नागोर के हाकिम मोदी चम्पानाथ के लिखने पर ठाकुर हरनाथसिंह और सुराणा केसरीचन्द ने उन-पर चढ़ाई की। नागोर से मोदी चम्पानाथ भी अपने सवारों सहित आया। दो प्रहर तक तो लुटेरों ने लड़ाई की, परन्तु बाद में नागोर के हाकिम की साजिश से वे सब वहां से निकल गये। तब बीकानेर की सेना ने उनका पीछा किया। लुटेरों ने भागते-भागते उनका सामना किया, परन्तु इस अवसर पर उनके कई साथी मारे गये तथा जो बचे वे सीवा में चले गये। इसी समय कर्नल एल्विस का ता० ६ मई ई० स० १८३८ (वैशाख सुदि १२ वि० सं० १८९५) का खरीता बीकानेर पहुंचा कि मारवाड़ की सरहद के लुटेरों के प्रबन्ध के लिए सेना भेजो। इसपर सुराणा हुकुमचन्द आदि सेना के साथ भेजे गये। श्रावण सुदि २ (ई० स० १८३८ ता० ९ जुलाई) को मेजर फार्स्टर ने बीकानेर जाकर वहां के लुटेरों का प्रबन्ध किया। फिर वह भी जोधपुर गया, जहां बीकानेर की सेना के शामिल उसने दयालपुर, फणवाई, बरडवा, डुगोली आदि के लुटेरे जागीरदारों को सज़ा देकर उनकी गढ़ियां गिरा दीं। इसी बीच बीदावत हरिसिंह, अन्नजी, खुमाणसिंह, करणसिंह, जुहारसिंह, डूंगजी आदि ने बीकानेर के लक्ष्मीसर तथा कई दूसरे गांव लूट लिये। उनका उत्पात यहां तक बढ़ा कि वे गांवों तथा क़ाफ़िलों को लूटने के अतिरिक्त भले घरों की बहू-बेटियों को पकड़कर ले जाने लगे। तब सुराणा हुकुमचन्द ने उनपर आक्रमण कर उनकी गढ़ियां आदि नष्ट कर डालीं और उन्हें भगा दिया[1]।

महाराजा का उदयपुर जाना

वि० सं० १८९६ (ई० स० १८३९) में महाराजा पुष्कर होता हुआ नाथद्वारे गया, जहां महाराणा सरदारसिंह उससे मिलने गया। फिर महाराणा के आग्रह करने पर महाराजा कुछ दिनों तक उदयपुर में उसका मेहमान रहा, जहां अनेक

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १३३-४।

उत्सवों और शिकार आदि में उसने भाग लिया। वहां रहते समय ही पौष सुदि १३ (ई० स० १८४० ता० १७ जनवरी) को महाराणा की पुत्री महताबकुंवरी का विवाह युवराज सरदारसिंह के साथ हुआ। इस अवसर पर सिंढायच दयालदास भी महाराजा के साथ था, जिसे विवाह के उपलक्ष्य में बहुत कुछ पुरस्कार मिला। महाराजा के उदयपुर निवास के समय ही महाराणा का विवाह महाराजा की राजकुमारी के साथ स्थिर हुआ। इस अवसर पर महाराणा ने अपने राज्य के काम-काज के लिए महाराजा से महाराव हिंदूमल की सहायता चाही, जो महाराजा ने स्वीकार की। माघ वदि ४ (ता० २२ जनवरी) को उदयपुर से प्रस्थान कर उसी वर्ष फाल्गुन मास में महाराजा बीकानेर पहुंचा[1]।

खड्गसिंह के पास टीका भेजना

लाहौर के प्रसिद्ध महाराजा रणजीतसिंह का वि० सं० १८९६ (ई० स० १८३९) में देहांत हो जाने पर, उसका पुत्र खड्गसिंह गद्दी पर बैठा, तो उसके पिता के साथ की अपनी मित्रता के कारण महाराजा (रत्नसिंह) ने उसके पास व्यास वासुदेव के द्वारा हाथी, घोड़े, ज़ेवर आदि सामान टीके के तौर पर भेजा[2]।

महाराणा के साथ महाराजा की पुत्री का विवाह

वि० सं० १८९६ (ई० स० १८३९) में ही महाराणा सरदारसिंह ने गया यात्रा के लिए प्रस्थान किया। उस समय महाराजा की तरफ़ से सिंढायच दयालदास भी महाराणा के साथ गया। गया यात्रा से लौटने पर महाराणा बीकानेर गया और वि० सं० १८९७ आश्विन सुदि १० (ई० स०

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १३४-७। वीरविनोद, भाग २, पृ० २११। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८३।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १३७।

इससे स्पष्ट है कि पंजाब के राजाओं के साथ राजपूताने के राजाओं का परस्पर मित्रता का सम्बन्ध था।

१८४० ता० ६ अक्टोबर) को उसने महाराजा की पुत्री गुलाबकुंवरी से विवाह किया[1]।

बागी बख़्तावरसिंह आदि का पकड़ा जाना

ठहावता के बीदावत हरिसिंह तथा लाडखानी बख़्तावरसिंह आदि ने अभी तक उपद्रव करना नहीं छोड़ा था और वे जोधपुर के गांव कणवाई में रहते हुए पड़ोसी राज्यों में बहुत लूट-मार किया करते थे। उनमें से कई को दरबार के आदमियों ने पकड़कर क़ैद किया और थोड़े ही समय में उनके साथी बीदावत अन्नजी आदि भी क़ैद कर लिये गये[2]।

काबुल की लड़ाई में ऊंटों की सहायता देना तथा दिल्ली जाने पर इस सम्बंध में धन्यवाद मिलना

लॉर्ड ऑकलैंड के समय भारत की पश्चिमोत्तरी सीमा के अफ़ग़ानिस्तान में बखेड़ा खड़ा हुआ। अहमदशाह दुर्रानी के वंशज शाहशुजा को, जो वहां का स्वामी था, हटाकर उसके स्थान में उसके वज़ीर का वंशज दोस्तमुहम्मद वहां का स्वामी बना। पंजाब के शासक रणजीतसिंह ने उधर का पेशावर का इलाक़ा दबा लिया था। दोस्तमुहम्मद ने उसके ख़िलाफ़ अंग्रेज़ों से मदद मांगी, जो स्वीकार न हुई। उधर शाहशुजा ने रणजीतसिंह से सहायता चाही। जब दोस्तमुहम्मद ने फ़ारस और रूस के साथ बातचीत शुरू की तो अंग्रेज़ों, रणजीतसिंह और शाहशुजा के बीच एक सन्धि हुई, जिसके अनुसार शाहशुजा को अफ़ग़ानिस्तान का राज्य दिलाने का निश्चय किया गया। अनन्तर दोस्तमुहम्मद का फ़ारस और रूस के साथ सम्बन्ध टूट गया, पर लॉर्ड ऑकलैंड ने इसपर ध्यान न देकर अफ़ग़ानिस्तान में अंग्रेज़ी सेना भेज दी, जिसने कन्दहार और ग़ज़नी विजय कर लिये। वि० सं० १८९६ (ई० स० १८३९) में दोस्तमुहम्मद काबुल का परित्याग कर चला

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १३८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८३। वीरविनोद (भाग २, पृ० ५११) में आश्विन सुदि ६ दिया है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १४०।

गया, तब शाहशुजा वहां की गद्दी पर बैठाया गया। पीछे से दोस्तमुहम्मद के अंग्रेज़ों की शरण में जाने पर उसकी पेंशन नियत कर वह कलकत्ते भेज दिया गया। अफ़ग़ान शाहशुजा से प्रसन्न नहीं थे। अतएव अंग्रेज़ अधिकारियों के वहां रहने पर भी वे उपद्रव करने लगे। उनके नेता, दोस्तमुहम्मद के पुत्र, ने वहां रक्खे हुए अंग्रेज़ अधिकारी मैकनॉटन को मार डाला। ऐसी अवस्था में अंग्रेज़ सेना अफ़ग़ानों से सन्धि कर जब वापस लौटने लगी तो अफ़ग़ानों ने उनपर अचानक हमला कर दिया, जिससे एक को छोड़कर शेष सब सैनिक मारे गये। इस प्रकार लॉर्ड ऑकलैंड की हानिकारक नीति का परिणाम बुरा ही हुआ। वि० सं० १८९८ (ई० स० १८४१) में लार्ड एलिनबरा गवर्नर जेनरल होकर भारत में आया। उसने सबसे पहले अफ़ग़ानिस्तान के बखेड़े की तरफ़ ध्यान दिया। उसकी आज्ञानुसार जेनरल पोलक की अध्यक्षता में अंग्रेज़ सेना ने चढ़ाई कर अफ़ग़ानों को परास्त किया। शाहशुजा को अफ़ग़ानों ने मार डाला था, अतएव दोस्तमुहम्मद को अफ़ग़ानिस्तान लौटने की इजाज़त दे दी गई, जिसने वहां पहुंचकर काबुल की गद्दी पर पुनः अधिकार कर लिया। काबुल की इस चढ़ाई में अंग्रेज़ सरकार-द्वारा मंगवाये जाने पर महाराजा रत्नसिंह ने २०० ऊंट लड़ाई में भाग लेने के लिए भेजे।

वि० सं० १८९९ आश्विन सुदि १० (ई० स० १८४२ ता० १४ अक्टोबर) को महाराजा ने गवर्नर जेनरल से भेंट करने के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। बाय, सांखू, डूंडलोद आदि में पहुंचने पर वहां के ठाकुर उसकी सेवा में नज़र आदि लेकर उपस्थित हुए। दिल्ली पहुंचकर महाराजा ने गवर्नर जेनरल से मुलाक़ात की, जिसने उसका बड़ा सम्मान किया तथा काबुल की चढ़ाई में ऊंटों की सहायता देने के लिए उसे धन्यवाद दिया। वहां से फाल्गुन सुदि १३ (ई० स० १८४३ ता० १४ मार्च) को महाराजा बीकानेर लौटा[1]।

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १४२-५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८३।

रावजी के श्यामसिंह का भाई बख़्तावरसिंह अब तक बीकानेर के इलाक़े में लूट-मार किया करता था। उसे गिरफ़्तार करने के विषय का एक खरीता ता० ५ मार्च ई० सन् १८४३ (फाल्गुन सुदि ४ वि० सं० १८६६) का लेफ़्टिनेंट कर्नल सदरलैंड के पास से बीकानेर आया। महाराजा ने शाह लक्ष्मीचंद को उस लुटेरे का प्रबन्ध करने के लिए भेजा, जिसने जोधपुर जाकर कुछ लुटेरों को गिरफ़्तार किया। थोड़े दिन बाद ही दूसरा खरीता सदरलैंड के पास से इस आशय का आया कि बीदावत हरिसिंह (ठुकावता) बहुत से साथी एकत्र करके अलवर के इलाक़े में उपद्रव कर रहा है, उसको शीघ्र गिरफ़्तार किया जाय। इस कार्य के लिए भी महाराजा की ओर से शाह लक्ष्मीचंद ही नियुक्त किया गया, परन्तु जब कई मास बीत जाने पर भी वह उसको पकड़ने में समर्थ न हुआ तब अंग्रेज़ सरकार के ताकीद करने पर महाराजा ने बीदावत हरिसिंह की गिरफ़्तारी के सम्बन्ध में इनाम की सूचना निकाली[1]।

भागियों की गिरफ़्तारी के लिए अंग्रेज़ सरकार के पास से खरीता आना

वि० सं० १६०० (ई० स० १८४४) में अंग्रेज़ सरकार तथा बीकानेर राज्य के बीच भावलपुर तथा सिरसा के मार्ग में सरायें, कुएं तथा मीनारें बनवाने और राहदारी घटाने के सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी हुई। महाराजा ने अंग्रेज़ सरकार की इच्छानुसार कर में कमी की एवं मार्ग का समुचित प्रबन्ध कर इसकी सूचना गवर्नर जेनरल के पास भेज दी। पहले प्रति ऊंट आठ रुपया कर लगता था, वह घटाकर आठ आना कर दिया गया तथा सामान की प्रति बैलगाड़ी पर एक रुपया कर नियत हुआ। अन्य टट्टू, खच्चर, भैंसा, बैल आदि जानवरों पर लदकर जानेवाले सामान पर चार आना प्रति जानवर स्थिर हुआ। कर में कमी करने से राज्य को हानि तो बड़ी हुई, पर व्यापारियों को बहुत लाभ हुआ तथा अंग्रेज़ सरकार

भावलपुर तथा सिरसा के मार्ग में कुएं आदि बनवाना तथा कर में कमी करना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १४५-६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८३-४।

भी उसके इस कार्य से बहुत खुश हुई।[1]

राजपूत कन्याओं को न मारने की पुनः ताकीद करना

राजपूत सरदारों को अपनी लड़कियों के विवाह के समय दहेज आदि में बड़ा खर्च उठाना पड़ता था, जिससे वे क़र्ज़ के बोझ से दब जाया करते थे। इससे तंग आकर राजपूत बहुधा अपनी लड़कियों को मार डालते थे। इसकी रोक करने के लिए महाराजा ने वि० सं० १८९३ (ई० स० १८३७) में गया में ही अपने सरदारों से प्रतिज्ञा करा ली थी कि वे भविष्य में अपनी लड़कियों को न मारेंगे। वि० सं० १९०१ (ई० स० १८४४) में अंग्रेज़ सरकार की ओर से इस कुप्रथा को मिटाने के सम्बन्ध में खरीता पहुंचा। महाराजा ने उसके अनुसार इस विषय में ये नियम बनाकर राज्य में प्रचलित कराये कि सब सरदार अपनी-अपनी हैसियत के अनुसार विवाह में ख़र्चा करेंगे, जिस सरदार के पास भूमि न होगी वह विवाह में केवल सौ रुपये ख़र्च करेगा, जिसमें से त्याग के दस रुपये होंगे तथा चारण लोग न तो किसी के साथ त्याग के सम्बन्ध में झगड़ा करेंगे और न दूसरे इलाक़े में त्याग मांगने जायेंगे[2]।

वि० सं० १९०२ चैत्र सुदि १३ (ई० स० १८४५ ता० २० अप्रेल) को बीकानेर में हुकुमचन्द की कोटड़ी में बीदावत हरिसिंह पकड़ा गया।

बीदावत हरिसिंह और अन्नजी का पकड़ा जाना

उन्हीं दिनों भोजोलाई का अन्नजी भी सुजानगढ़ में पकड़ लिया गया तथा दोनों हनुमानगढ़ (भटनेर) के क़िले में क़ैद किये गये[3]।

बहुत दिनों पहले से ही भावलपुर के लोग बीकानेर की सीमा में

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १४७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८४।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १५०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८४।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १५०।

लूट-मार करते थे। अनूपगढ़ के हाकिम ने महाराजा से इसकी शिकायत भी की थी, परन्तु मेल होने के कारण उस समय उसने उनके विरुद्ध कुछ किया नहीं गया। वि० सं० १९०२ आश्विन वदि १३ (ई० स० १८४५ ता० २९ सितम्बर) को फिर भावलपुर के लोगों ने गांव लालगढ़ के कई मनुष्यों को मारकर वहां का माल-असबाब लूट लिया। महाराजा से इसकी शिकायत होने पर उसने अंग्रेज़ सरकार को इसकी सूचना दी। कार्तिक मास में ४०० भावलपुरियों ने गांव ततारसर में आकर वहां अपना धूलकोट निर्माण किया। तब दीपसिंह पंवार की अध्यक्षता में बीकानेर की फ़ौज ने जाकर उन्हें घेर लिया। फलस्वरूप भावलपुरियों को आत्मसमर्पण करना पड़ा, परन्तु इतने से ही उनका उत्पात बन्द न हुआ और वे उपद्रव करते ही रहे[1]।

भावलपुर के बाग़ियों का बीकानेर में उपद्रव

वि० सं० १९०२ मार्गशीर्ष वदि १२ (ई० स० १८४५ ता० २६ नवम्बर) को कप्तान जैक्सन भावलपुर एवं बीकानेर के बीच का सीमा-सम्बन्धी झगड़ा तय करने के लिए बीकानेर गया। वहां कुछ दिन ठहरकर वह सूरतगढ़ गया, जहां मि० कनिंगहाम भी उससे मिल गया। सीमा-सम्बन्धी निर्णय के समय बीकानेरवालों ने कहा कि हमारी सरहद दंदा तक है, लेकिन भावलपुरवाले कहते थे कि सोतर तक हमारी सरहद है। इस विषय का अनुसन्धान हो ही रहा था कि इतने में लाहौर की तरफ़ लड़ाई छिड़ जाने की सूचना मिली, जिसपर कनिंगहाम उसी समय लौट गया। अंग्रेज़ सरकार ने बीकानेर से सेना तथा तोपें आदि युद्ध-सामग्री मंगवाई थी, अतएव पौष वदि १० (ता० २४ दिसम्बर) को कप्तान जैक्सन हनुमानगढ़ (भटनेर) पहुंचा और वहां से बीकानेरी तोपें, ऊंट तथा सेना आदि साथ ले उसने मलोट की ओर प्रस्थान किया। फिर मुक्तसर पर अधिकार करने के पश्चात् यह सेना

सिक्खों के साथ की लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार की सहायता करना

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १२०-१।

तथा बाद में बीकानेर से आई हुई दो तोपें, एक गुब्बारा तथा सवार-सेना आसबवाला में ठहरी। इस सेना को सतलज पार करने का तो अवसर न आया, क्योंकि वि० सं० १९०३ चैत्र सुदि ३ (ई० स० १८४६ ता० ३० मार्च) को लाहौर के महाराजा एवं अंग्रेज़ सरकार के बीच सुलह हो गई, पर उधर के युद्ध में बीकानेर की सेना ने बड़ी वीरता बतलाई। अंत में लड़ाई में बड़ी तत्परता से कार्य करने के लिए अंग्रेज़ सरकार ने बीकानेर के सैनिक-सरदारों की बड़ी प्रशंसा की और उनके लिए खिलअतें भेजीं, जिसपर महाराजा ने सीधमुख के ठाकुर हठीसिंह, चाहड़वास के बीदावत बख्तावरसिंह, खारबारा के भाटी भूपालसिंह, दीपसिंह पंवार (जैतसीसर), केलां के भाटी सूलसिंह, जसाणे के शृंगोत बीका भोमसिंह, शृंगोत बीका लछमनसिंह (शृंगसर) तथा महाजन, रावतसर, बीदासर, बाय, सांखू, नीमा, राजपुरा, अजीतपुरा, भाद्रा, सारूंडा, हरासर, सांडवा, बीठणोक और कुंभाणा के प्रधानों तथा अन्य सैनिक अफ़सरों को, जो सेना में थे, आभूषण तथा सिरोपाव दिये। इस अवसर पर अंग्रेज़ सरकार की ओर से दो तोपें पूरे सरंजाम के साथ महाराजा को उसकी अमूल्य सेवाओं के बदले में भेंट की गईं[1]।

भावलपुर का सीमासम्बन्धी झगड़ा तय न होने के कारण अब भी उधर के लोगों का उपद्रव बीकानेर की सीमा में जारी था। बीकानेर

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १५१-४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८४-५।

सिक्खों के साथ की इस लड़ाई में सहायता पहुंचाने के लिए अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा, उसके सरदारों और सैनिकों की बहुत प्रशंसा की। इस सम्बन्ध में कई खरीते और पत्र राज्य में आये, जिनमें से फ़ॉरेन डिपार्टमेंट के मंत्री-द्वारा राजपूताने के एजेंट टु दि गवर्नर जेनरल के नाम लिखे हुए ता० २० अगस्त १८४७ ई० (श्रावण सुदि ६ वि० सं० १९०४) के एक पत्र (Despatch) में लिखा है—

'श्रीमान् गवर्नर जेनरल को यह जानकर अतीव सन्तोष हुआ कि बीकानेर के महाराजा ने अपने राज्य के समस्त साधन आपकी अधीनता में रखकर हार्दिक सहायता प्रदान की है। आपकी अधीनता में महाराजा की सेना-द्वारा प्रदर्शित बहादुरी और स्वामिभक्ति के कार्यों को श्रीमान् बड़ी प्रशंसा के योग्य समझते हैं।'

भावलपुर के बागियों का पुन उपद्रव

से उनका नियन्त्रण करने के लिए कुछ और सरदार लालगढ़ के थाने में नियुक्त किये गये, परन्तु भावलपुरियों ने १५०० पैदल सेना तथा कई तोपों के साथ ततारसर में आकर धूलकोट निर्माण करने का प्रयत्न जारी रक्खा[1]।

रावजी के डूंगरसिंह आदि बागी क़ैदकर अंग्रेज़ सरकार-द्वारा आगरे के जेलखाने में रक्खे गये थे। वि० सं० १९०४ (ई० स० १८४७) में मानसिंह आदि उक्त जेलखाने पर हमलाकर उन्हें निकाल ले गये। इस सम्बन्ध में सूचना आने पर महाराजा ने अपने सब जागीरदारों एवं विभिन्न परगनों के हाकिमों को आज्ञा दी कि डूंगरसिंह आदि तथा उनके भगानेवाले मानसिंह और उसके साथियों में से यदि कोई व्यक्ति बीकानेर इलाक़े में प्रवेश करे तो वह अविलम्ब गिरफ़्तार कर लिया जाय। ऐसा करनेवाले को राज्य की ओर से पुरस्कार दिये जाने तथा इसके विरुद्ध उनमें से किसी को भी आश्रय देनेवाले का पट्टा आदि ज़ब्त कर लिये जाने की सूचना भी दरबार की ओर से प्रकाशित हुई। उन्हीं दिनों लुटेरों की सहायता करने का झूठा दोषारोपण मेहता हिन्दूमल पर अख़बारों-द्वारा किया गया, जिसपर वह अपनी सफ़ाई देने के लिए शिमला में गवर्नर जेनरल की सेवा में उपस्थित हुआ[2]।

डूंगरसिंह की गिरफ्तारी करने का प्रबन्ध

जब अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से मि० फ़ास्टर डूंगरसिंह आदि को पकड़ने के लिए आया तो महाराजा ने उसकी सहायतार्थ शाह केसरीचन्द को उसके पास भेज दिया। डूंगरसिंह तथा जुहारसिंह आदि जेल से भागकर रामगढ़ गये, जहां के अग्रवालों से १५००० रुपये ठहराकर

जुहारसिंह आदि का पकड़ा जाना

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १९३।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १९४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८९।

जुहारसिंह अपने साथियों सहित बीकानेर गया। इसकी सूचना मिलते ही शाह केसरीचन्द ने उसका पीछा किया और पूगल तथा बरसलपुर की तरफ़ लुटेरों से झगड़ाकर उनमें से नौ को गिरफ़्तार कर लिया। रामगढ़ के अग्रवालों ने बीकानेर इलाक़े के अग्रवालों के नाम रुपयों की हुंडियां लिखकर लुटेरों को दी थीं। जब वे रुपये वसूलकर लौटने लगे तो बीकानेर के सैनिकों ने उन्हें पकड़कर रुपये छीन लिये। लुटेरों के मुखिये अब भी निर्भय विचरण करते थे। अवसर पाकर उन्होंने नसीराबाद की अंग्रेज़ों की छावनी के खज़ाने पर छापा मारा। तब अंग्रेज़ सरकार ने उनकी गिरफ़्तारी के लिए कप्तान शॉ को भेजा, जो बीकानेर जाकर महाराजा से मिला। महाराजा ने ठाकुर हरनाथसिंह (मंघरासर) एवं मेहता हरिसिंह को सेना सहित उसके साथ कर दिया। गांव बिगा में पहुंचने पर जब जुहारसिंह आदि के निकट होने की खबर मिली तो कप्तान शॉ ने बीकानेरी सेना के साथ उनपर आक्रमण किया। गांव घड़सीसर में लुटेरे ठहरे हुए थे, उन्हें चारों तरफ़ से घेरकर उनपर गोलियां चलाई गईं। अंत में ठाकुर हरनाथसिंह के समझाने से जुहारसिंह आदि ने आत्मसमर्पण कर दिया और वे सब गिरफ़्तार कर लिये गये[1]।

सिरसा में मुकुन्दसिंह का उपद्रव

सीकर का प्रधान मुकुन्दसिंह भी उन दिनों लूट-मार किया करता था, जिससे प्रजा को बड़ा कष्ट था। अख़बारों में इस सम्बन्ध में फिर प्रकाशित हुआ कि महाराजकुमार तथा बीकानेर दरबार उससे मिले हुए हैं। मेहता हिन्दूमल ने अधिकारियों के पास पत्र लिखकर इस झूठे दोषारोपण की शिकायत की और उनकी निर्दोषिता प्रमाणित की। पीछे से अंग्रेज़ सरकार-द्वारा अन्य लुटेरों को पकड़ने के सम्बन्ध में ताकीद के रुक्के और परवाने आने पर बीकानेर के सरदारों ने सीकर तथा जोधपुर के लुटेरों से लूटी हुई सम्पत्ति छीनने और उन्हें बहुत हानि

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२७-६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८२।

पहुंचाने में सहायता दी[1]।

महाराव हिन्दूमल मेहता की मृत्यु

उसी वर्ष (वि० सं० १६०४) में कर्नल सदरलैंड के आगमन के समय महाराजा के मना करने पर भी मेहता हिन्दूमल रुग्णावस्था में हाथी पर सवार होकर महाराजा के साथ उसकी पेशवाई को गया। लौटते समय महल के फाटक के पास पहुंचते-पहुंचते उसकी हालत अधिक ख़राब हो गई और वह बेहोश हो गया। फिर वह बड़ी सावधानी के साथ भीतर पहुंचाया गया, पर कुछ ही दिनों बाद उसका देहांत हो गया। अपने विनम्र स्वभाव एवं कार्यतत्परता के कारण वह महाराजा और अपने देशवासियों के साथ-साथ अंग्रेज़ अधिकारियों का भी बड़ा प्रिय बन गया था। कप्तान जैक्सन ने अपने वि० सं० १६०४ माघ सुदि ७ (ई० स० १८४८ ता० ११ फ़रवरी) के ख़रीते में उसकी असामयिक तथा दुःखद मृत्यु पर शोक प्रकट किया[2]।

दीवान मूलराज के बाग़ी होने पर अंग्रेज़ सरकार की सहायता करना

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) में जब सिक्खों से पहली बार अंग्रेज़ सरकार को लोहा लेना पड़ा था, उस समय भी बीकानेर के महाराजा ने उसे यथोचित सहायता पहुंचाई थी। लगभग दो वर्ष पश्चात् जब मुलतान का गवर्नर दीवान मूलराज[3] विद्रोह करने पर उतारू हो गया तो अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा को लिखा कि भावलपुर तथा मुलतान के मार्ग में थाने स्थापित कर दो, जिससे उधर से कोई मुलतान में न जा सके और मूलराज की जो संपत्ति मुलतान में रहनेवाले व्यापारियों के पास जमा हो वह सब ज़ब्त कर लो। महाराजा ने तदनुसार सारा

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १२६-६२। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८५।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १६२ और १६४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८६।

(३) यह अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से मुलतान का गवर्नर नियुक्त था। बाद में यह सरकार से विद्रोही हो गया और आख़िरकार मार डाला गया।

प्रबन्ध कर दिया, परन्तु तहक़ीक़ात करने पर मूलराज की कोई सम्पत्ति वहां के व्यापारियों के पास न पाई गई, जिसकी यथा-समय अंग्रेज़ सरकार को सूचना दे दी गई[1]।

मूलराज के विद्रोही होते ही सिक्खों ने दुबारा सिर उठाया, जिससे अंग्रेज़ सरकार को उनके विरुद्ध पुनः हथियार उठाना पड़ा। पूर्व की

दूसरे सिक्ख युद्ध में अंग्रेज सरकार की सहायता करना

भांति इसबार भी अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा को वि० सं० १६०५ आश्विन सुदि १५ (ई० स० १८४८ ता० १२ अक्टोबर) को बीकानेर से ऊंट फ़ीरोज़पुर भेजने के लिए लिखा। इसपर महाराजा ने उसी समय १०० ऊंट भेज दिये। फिर खरीता आने पर उसने सेना के लिए आटे आदि का अच्छा प्रबन्ध कर दिया। इन कार्यों के अतिरिक्त महाराजा ने मंगवाये जाने पर बाघसिंह के साथ ५५ सवार भेजे। फिर सरकार को ज़रूरत होने पर मीर मुरादअली आदि ४० गोलंदाज़ और कई तोपें एवं सवार फ़ीरोज़पुर भेजे गये। इन लोगों ने बहुत अच्छा काम किया, जिसकी प्रशंसा का खरीता सरकार की तरफ़ से दरबार में पहुंचा[2]।

वि० सं० १६०६ (ई० स० १८४६) में अंग्रेज़ अफ़सरों ने जाकर

बीकानेर, भावलपुर एवं जैसलमेर की सीमा निर्धारित होना

बीकानेर, भावलपुर तथा जैसलमेर की सीमा निर्धारित कर दी, जिससे उपर्युक्त तीनों राज्यों का प्रतिदिन का सीमा-सम्बन्धी झगड़ा समाप्त हो गया[3]।

वि० सं० १६०३ (ई० स० १८४६) में महाराजा ने अपने नाम से

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १६४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८६।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र १६५-६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८६।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १६६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८५-६।

राजरतनविहारी का मंदिर बनाना प्रारंभ किया था, जिसके पूर्ण होने पर

राजरतनविहारीजी के मंदिर की प्रतिष्ठा

वि० सं० १९०७ फाल्गुन सुदि १ (ई० स० १८५१ ता० ४ मार्च) को महाराजा ने अपने हाथ से उसकी प्रतिष्ठा की[1]।

महाराजा का एक विवाह उदयपुर में हुआ था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है। इसके अतिरिक्त उसकी देरावरी आदि तीन राणियों

विवाह तथा संतति

के उल्लेख भी ख्यात में मिलते हैं[2]। सरदारसिंह के अतिरिक्त उसके एक पुत्र शेरसिंह[3] था, जो निःसन्तान मर गया।

वि० सं० १९०८ श्रावण सुदि ११ (ई० स० १८५१ ता० ७ अगस्त)

महाराजा की मृत्यु

गुरुवार को महाराजा रत्नसिंह का बीकानेर में देहांत हो गया[4]।

महाराजा रत्नसिंह के समय अंग्रेज़ सरकार के साथ का बीकानेर राज्य का सम्बन्ध और सुदृढ़ हुआ। उसके समय में भी राज्य के कुछ

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १६८।

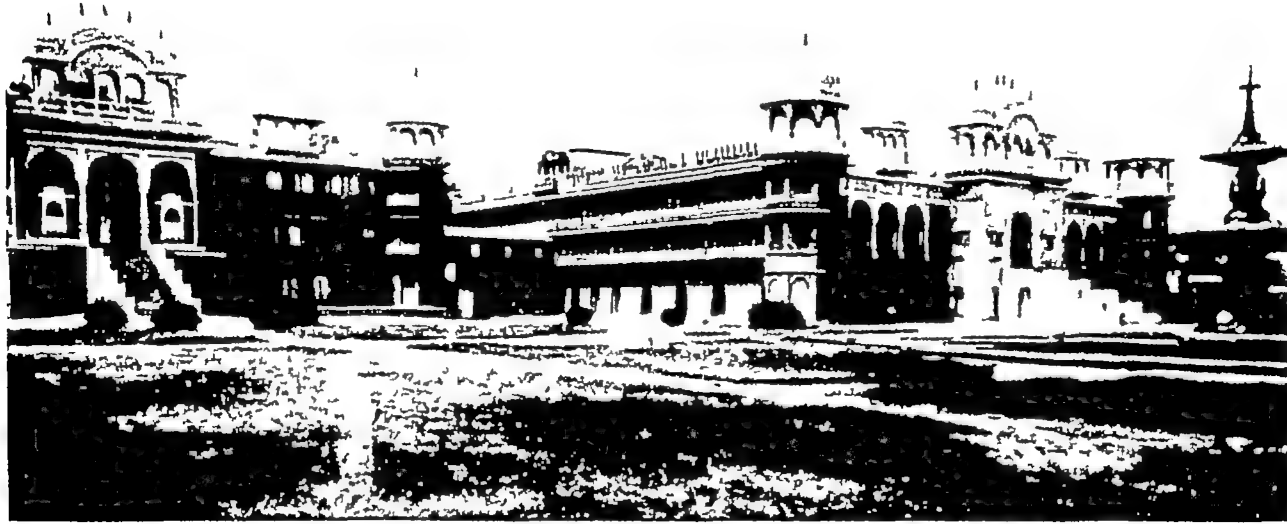
(२) वही; जि० २, पृ० १२२, १२७ और १३४।

(३) यह नाम पाउलेट के 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' के शेष संग्रह संख्या ५ के अन्तर्गत दिये हुए बीकानेर के राजाओं के वंशवृक्ष में मिलता है तथा महाराजा के एक और ख़वासवाल पुत्र का भी उसमें उल्लेख है।

(४) ......श्रीविक्रमादित्यराज्यात् सम्वत् १९०८ वर्षे शाके १७७३ प्रवर्तमाने महामंगलप्रदायके मासोत्तमेमासे श्रावणमासे शुभे शुक्लपक्षे श्रीपवित्राएकादश्यां (११) गुरुवासरे......श्रीमद्राजराजेश्वर-नरेन्द्रशिरोमणिश्रीमन्महाराजाधिराज श्री० १०८ श्रीरत्नसिहवर्मा वैकुंठ-परमधामप्राप्तः...... ।

(महाराजा रत्नसिंह के बीकानेर के मृत्यु स्मारक से)।

दयालदास की ख्यात (जि० २, पत्र १६९) तथा पाउलेट के 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' (पृ० ८६) में भी यही तिथि दी है।



रसिकशिरोमणिजी और राजरतनविहारीजी के मंदिर, वीकानेर

महाराजा रत्नसिंह का व्यक्तित्व

सरदार उपद्रवी रहे, जिनका उसने समुचित प्रबन्ध किया। समय पड़ने पर वह स्वयं भी सेना का संचालन किया करता था। वह वीर, वीरों का सम्मान करनेवाला, बुद्धिमान, श्रमणशील, विद्वानों का आश्रयदाता और बड़ा सुधारक था। उसकी प्रशंसा में लिखे हुए 'जसरत्नाकर[1]', 'रतनविलास[2]' और 'रतनरूपक[3]' अथवा 'रतनजसप्रकास' नामक काव्य-ग्रन्थ मिलते हैं।

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) की लाहौर के सिक्खों के साथ

(१) यह एक अज्ञातनामा लेखक का महाराजा रत्नसिंह की प्रशंसा में १८८ पत्रों का लिखा हुआ काव्य-ग्रन्थ है, जिसमें कवित्त, दोहे आदि छन्दों में कविता की गई है। इसमें बीकानेर के नरेशों की वंशावली के अतिरिक्त उनके समय में होनेवाली घटनाओं का भी उल्लेख है। वि० सं० १८८५ में गद्दी बैठने, वि० स० १८८८ में मुगल शासक के पास से उपहार आदि आने और वि० सं० १८६३ में उसकी गया-यात्रा करने का उल्लेख इसमें मिलता है। इस ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर दूसरे कवियों के गीत भी दिये हैं, जो मूल पुस्तक से अधिक प्राचीन हैं।

(टेसिटोरी, ए डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑव् बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मैन्युस्क्रिप्ट्स, सेक्शन २, पार्ट १, पृ० २५-८ बीकानेर)।

(२) बीठू भोमा-रचित इस काव्य-ग्रन्थ में महाराजा रत्नसिंह की गया यात्रा और कुंवर सरदारसिंह के विवाह का उल्लेख है। इस ग्रन्थ का प्रारम्भिक अंश नीचे लिखे अनुसार है—

मिसलत परघै मुसदीयां,
सचव मंत्र सिरदार।
रामचन्द्र जिम रतनसा
साझ सिरै दरवार॥ १॥······

(टेसिटोरी, ए डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑव् बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मैन्युस्क्रिप्ट्स; सेक्शन २, पार्ट १, पृ० ४६-५० बीकानेर)।

इस नाम का एक ग्रन्थ और भी मिला है, पर उसके लेखक का नाम अज्ञात है।

(वही; सेक्शन २, पार्ट १, पृ० ५१-२ बीकानेर)।

(३) कविया सागरदान करणीदानोत-रचित इस काव्य ग्रन्थ में भी महाराजा रत्नसिंह का प्रशंसात्मक वर्णन है। इसमें गढ़ और नगर का विशेष रूप से वर्णन है।

की अंग्रेज़ों की लड़ाई में जिन बीकानेरी सरदारों एवं सैनिकों ने बहादुरी दिखलाई थी, उन्हें उसने सिरोपाव और आभूषण आदि देकर सम्मानित किया। उसने हरद्वार, गया और नाथद्वारा की यात्रा की थी। वह राजपूतों में प्रचलित लड़कियों को मारने की प्रथा का कट्टर विरोधी था। गया में रहते समय उसने अपने सरदारों से इस कुप्रथा को बन्द कर देने की प्रतिज्ञा करवाई और पीछे से उस प्रतिज्ञा का उल्लंघन करनेवाले की जागीर ज़ब्त करवाने की आज्ञा निकलवाई। उसके राज्य-समय में मुग़ल-साम्राज्य की दशा बिगड़ जाने के कारण देश में सर्वत्र अशान्ति फैल गई। पिंडारियों और मरहटों के उपद्रवों के कारण आय के साधन नष्ट हो गये, जिससे कुछ सरदारों ने लूट-खसोट का धन्धा अख़्तियार कर लिया। महाराजा ने ऐसे सरदारों का सदा युक्ति से दमन किया। राज्य की प्रजा को बढ़े हुए करों के कारण सदा कष्ट रहता था, जिससे उसने उन करों में बहुत कमी की और यात्रियों की सुविधा के लिए अंग्रेज़ सरकार के अनुरोध करने पर भावलपुर और सिरसा के मार्ग में कुएं, मीनारें और सरायें बनवाईं। उसे इमारतें बनवाने का भी बड़ा शौक़ था। वह विष्णु का परमभक्त था। राजरतनविहारी के मन्दिर की प्रतिष्ठा उसी के समय में हुई थी। अपने स्वर्गीय पिता के प्रति उसकी असीम श्रद्धा थी। उसकी स्मारक छत्री निर्माण करने के अतिरिक्त उसने अपने पूर्वजों की छत्रियों का भी, जो टूट-फूट गई थीं, जीर्णोद्धार कराया।

मुग़ल-साम्राज्य की दशा उसके समय बहुत हीन हो गई थी और अंग्रेज़ों के बढ़ते हुए प्रभुत्व के आगे उनका प्रभाव क्षीण हो गया था। ऐसी अवस्था में भी तत्कालीन मुग़ल शासक अकबर (दूसरा) ने पुरानी परिपाटी के अनुसार महाराजा के पास माही मरातिब का सम्मान और ख़िल-अत आदि भेजकर दोनों घरानों की पुरानी मित्रता का परिचय दिया था।

(टेसिटोरी; ए डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑव् बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मैन्युस्क्रिप्ट्स; सेक्शन २, पार्ट १, पृ० ४१ बीकानेर)।

नवां अध्याय

महाराजा सरदारसिंह और महाराजा डूंगरसिंह

महाराजा सरदारसिंह

महाराजा सरदारसिंह का जन्म वि० सं० १८७५ भाद्रपद सुदि १४ (ई० स० १८१८ ता० १३ सितम्बर) को हुआ था[1] और पिता की मृत्यु के पश्चात् वि० सं० १६०८ भाद्रपद वदि ७ (ई० स० १८५१ ता० १६ अगस्त) को तेंतीस वर्ष की अवस्था में वह बीकानेर के सिंहासन पर बैठा[2]।

जन्म तथा गद्दीनशीनी

महाराजा रत्नसिंह ने अपने जीवन-काल में विवाह आदि कार्यों में होनेवाले विशेष खर्च को रोकने के लिए कुछ आज्ञायें जारी की थीं। महाराजा सरदारसिंह ने भी सिंहासनारूढ़ होने पर प्रजाहित के लिए कई क़ानून बनाये। महाजन लोग प्रायः ग़रीब प्रजा का रुपया लेकर खा जाते थे और पीछे से दिवाला निकाल देते थे। महाराजा ने इस सम्बन्ध में यह क़ानून बनाया कि दिवाला निकालने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को अपनी बहियें दरबार में पेश करनी होंगी ताकि उसकी मिल्कियत एवं लेन देन की जांच की जावे, उसका एक साल का खर्च निकालकर शेष रक़म उसके क़र्ज़दारों को दे दी जावे और जब तक वह क़र्ज़दारों को पूरा-पूरा

प्रजाहित के क़ानून बनाना

---

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ५१२।

(२) पाउलेट-कृत गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट (पृ० ८६) में गद्दी बैठने का समय ई० स० १८५२ (वि० सं० १६०६) दिया है जो ठीक नहीं है।

रुपया न चुका दे, उसे 'औसर' (मृत्यु-भोज) करने, रंगा हुआ पारचा काम में लाने एवं अपना घर छोड़कर अन्यत्र जाने का अधिकार न रहेगा। इसके अतिरिक्त महाजनों से जो रक़म 'वाछ' (एक प्रकार का कर) नाम से वसूल की जाती थी, वह महाराजा ने माफ़ कर दी। राज्य के अहलकारों में सामर्थ्य न होने पर भी दूसरों की देखा-देखी मृत्यु तथा विवाह आदि अवसरों पर फ़ज़ूल-खर्ची करने का रिवाज सा पड़ गया था। महाराजा ने यह क़ानून बना दिया कि मृत्यु-भोज में सिवाय 'लापसी'[1] के अन्य प्रकार का खाना न होगा। ब्याह-शादी अथवा नुकते (मृत्यु-भोज) के अवसर पर मीठा पक्वान्न आदि करने का लोगों को अधिकार रहेगा, पर उक्त अवसरों पर सिवाय बिरादरीवालों के और लोग सम्मिलित न होंगे और जो बाहरी मनुष्य इसके विपरीत शामिल होगा उसपर राज्य की ओर से जुर्माना होगा।

उन दिनों महाराजा की तरफ़ से महाराव हरिसिंह[2] अंग्रेज़ सरकार के पास रहता था। महाराजा ने अंग्रेज़ सरकार एवं बीकानेर राज्य के

मेहता छोगमल को अंग्रेज़ सरकार के पास भेजना

सीमासम्बन्धी झगड़े को तय करने के लिए मेहता छोगमल को मि० एल्मूर के पास भेजा, जहां से सफल होकर लौटने पर उसे पुरस्कार दिया गया।

चूरू का इलाक़ा पहले ही खालसा कर लिया गया था। वि० सं० १९११ माघ सुदि १३ (ई० स० १८५५ ता० ३० जनवरी) को ठाकुर

चूरू पर अधिकार करनेवालों पर सेना भेजना

ईश्वरीसिंह आदि चूरूवालों ने आक्रमण कर अपनी जागीर (चूरू) पर पुनः अधिकार कर लिया। मोतीसिंह, सालमसिंह, जवाहरसिंह आदि बणीरोत तथा गोपालसर, घन्टियालका, दलपतसर आदि के अन्य बहुत से सरदारों

(१) गेहूं के दलिये और गुड़ से बना हुआ राजपूताने का एक प्रकार का मीठा खाद्य पदार्थ।

(२) मेहता महाराव हिन्दूमल का पुत्र।

ने १७०० फ़ौज के साथ पहुंचकर यह प्रकट किया कि हमारी एक क़तार लुटेरों ने नष्ट कर डाली है। उनका बिसाऊवन्द में होना जानकर हम आये हैं, परन्तु वास्तव में यह उनका बहाना था, जिसमें चूरूवाले फंस गये और इस प्रकार बड़ी सरलता से क़िले में प्रवेश कर उन्होंने वहां के मनुष्यों पर आक्रमण किया और उन्हें परास्त कर क़िले पर अपना अधिकार कर लिया। जब इसकी सूचना सुजानगढ़ में राज्य के कर्मचारियों के पास पहुंची तो वहां से फ़ौजदार हुकमसिंह, पुरोहित प्रेमजी तथा ठाकुर हरनाथसिंह (मंघरासर) आदि ने सेना सहित चूरू जाकर विद्रोहियों को घेर लिया। विद्रोहियों ने उनका सामना किया, पर उनकी पराजय हुई और ईश्वरीसिंह मारा गया।

महाराजा का सती प्रथा और जीवित समाधि को रोकना

उन दिनों भारत में सतीप्रथा तथा जीवित समाधि लेने का बहुत प्रचार था। लार्ड विलियम वेंटिक के समय अंग्रेज़ सरकार का इस ओर ध्यान आकर्षित हुआ और उक्त गवर्नर जेनरल ने सती-प्रथा को बंद करने का क़ानून जारी किया, परन्तु राजपूताने में यह प्रथा बहुत समय तक जारी रही और वहां के राजा लोग सती-प्रथा को बन्द करने में अपने धर्म की हानि होना समझ उसको मिटाने की ओर प्रवृत्त न हुए। बीकानेर राज्य भी उस समय सती-प्रथा को धर्म का अङ्ग मानता था, इसलिए उस प्रथा को मिटाने में तत्पर न हुआ। तब अंग्रेज़ सरकार के राजपूताने के पोलिटिकल अफ़सरों ने उसका ख़ास तौर पर इस ओर ध्यान आकर्षित किया। इसपर महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १९११ (ई० स० १८५४) में अपने राज्य में नीचे लिखा इश्तिहार जारी कर सती प्रथा और जीवित समाधि-प्रथा बन्द करवा दी—

'सती होने को अंग्रेज़ सरकार आत्मघात और हत्या का अपराध समझती है, अतएव इस प्रथा को बन्द करने के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से बड़ी ताकीद है, अतएव इसकी रोक के लिए इश्तिहार जारी हुआ है, और कर्नल सर हेनरी लारेंस (ए० जी० जी०) ने सती होने पर उसको

न रोकनेवाले व सहायता देनेवाले को कठोर दण्ड (सज़ा) देने के लिए खरीता भेजा है। अतः सब उमरावों, सरदारों, जागीरदारों, अहलकारों, तहसीलदारों, ज़िलेदारों, थानेदारों, कोतवालों, भोमियों, साहूकारों, चौधरियों और प्रजा को श्री जी हज़ूर आज्ञा देते हैं कि सती होनेवाली स्त्री को इस तरह समझायें कि वह सती न हो सके और उसके घरवालों व संबंधियों आदि को कहा जावे कि वे इस कार्य में उसके सहायक न हों। स्वामी, साधु आदि जो जीवित समाधि लेते हैं, वह रसम भी बन्द की जाती है। अब कदाचित् सती होने व समाधि लेनेवालों को सरदार, जागीरदार, अहलकार, तहसीलदार, थानेदार, कोतवाल आदि राज्य के नौकर मना न करेंगे तो उनको नौकरी से पृथक् कर उनपर जुर्माना किया जावेगा एवं सहायता देनेवालों को अपराध के अनुसार क़ैद का कठोर दंड दिया जावेगा।'

महाराजा की हरद्वार यात्रा तथा अलवर में विवाह

उसी वर्ष चैत्र वदि ७ (ई० स० १८५५ ता० १० मार्च) को महाराजा ने हरद्वार की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में जीन्द में ठहरकर वह वि० सं० १९१२ वैशाख सुदि ११ (ता० २८ अप्रेल) को हरद्वार पहुंचा। वहां से लौटते समय जब वह रुड़की में ठहरा हुआ था तब अलवर से कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति विवाह का सन्देशा लेकर आये। इसपर अलवर जाकर वि० सं० १९१२ (प्रथम) आषाढ़ वदि १४ (ई० स० १८५५ ता० १३ जून) को महाराजा ने वहां के स्वामी विनयसिंह की पुत्री से विवाह किया[1]।

सिपाही विद्रोह का सूत्रपात

हिन्दुस्तान के गवर्नर जेनरल लॉर्ड डलहौज़ी[2] के समय यह क़ानून अमल में लाया गया कि पुत्र के न होनेपर कोई देशी राजा किसी को गोद नहीं ले सकता। इसी क़ानून के अनुसार उसने झांसी, सतारा, नागपुर, तंजोर आदि देशी राज्यों

(१) वीरविनोद, जि० २, प्रकरण अठारहवां।

(२) ई० स० १८१२ में इसका जन्म हुआ था। ई० स० १८४८ में भारत का गवर्नर जेनरल हुआ और ई० स० १८६० में इसका देहावसान हुआ।

को अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया। इसी प्रकार बरार और अवध भी अंग्रेज़ी राज्य में मिलाये गये। उसकी इस नीति का यह फल हुआ कि सारे भारत में असन्तोष फैल गया। असन्तोष फैल रहा था ऐसे में बंगाल में एक नई बन्दूक का, जिसके कारतूस के सिरे को दांत से काटना पड़ता था, प्रचार किया गया। इस बन्दूक के सम्बन्ध में ई० स० १८५७ के जनवरी (वि० सं० १९१३ माघ) में यह किंवदन्ती फैली कि इस कारतूस पर गाय और सूअर की चरबी लगी है। धीरे-धीरे भारत के प्रत्येक स्थान में फैलती हुई यह बात जब धर्म-भीरु भारतीय सैनिकों के कानों तक पहुंची, तब वे धर्मनाश की आशंका से विचलित होकर अंग्रेज़ सरकार के विरुद्ध हो गये। सबसे पहले कलकत्ते के पास दमदम की छावनी में विद्रोह के लक्षण प्रकट हुए। फिर शनैः शनैः बारकपुर, मेरठ, दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, बरेली, झांसी आदि के सैनिक भी बिगड़ उठे[1]।

सिपाही विद्रोह में अंग्रेज़ सरकार की सहायता करना

दिल्ली के क़त्लेआम का समाचार ता० १२ मई (वि० सं० १९१४ ज्येष्ठ वदि ३) को लाहौर पहुंचा। वहां भी सिपाहियों के विद्रोही होने की संभावना विद्यमान थी। फीरोज़पुर, मरदान, झेलम, स्यालकोट आदि स्थानों की पलटनों ने विद्रोह किया, परन्तु अंग्रेज़ों ने उनको दमन करने का तत्काल समुचित प्रबन्ध कर दिया[2]। उधर बीकानेर की सरहद के निकट हांसी में रहनेवाली दो पलटनों में से एक ता० १५ मई को जाकर विद्रोहियों से मिल गई। ता० २९ मई को हरियाना की पलटन भी विद्रोही हो गई, जिसने नगर में खूब लूट-मार करने के साथ ही वहां के तमाम ईसाइयों को मार डाला और फिर दिल्ली का मार्ग पकड़ा। दिल्ली के बादशाही घराने का मुहम्मद अज़ीमबेग नामक एक व्यक्ति हिसार में अंग्रेज़ों की सेवा में नियुक्त था। विद्रोह-जनित अव्यवस्था से लाभ उठा बादशाही अमलदारी की घोषणा कर वह वहां राज्य करने लगा और

(१) मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० १०७७।

(२) इम्पीरियल गैज़ेटियर ऑव् इंडिया; जि० २०, पृ० २७४-५।

अपने नीचे काम करनेवाले सिपाहियों तथा चपरासियों की सहायता से उसने क़ाफ़ी उत्पात मचाया। झज्झर और दादरी के नवाबों ने भी यही मार्ग ग्रहण किया तथा हांसी और सिरसा में रक्खी हुई सेनाएं भी विद्रोह पर उतारू हो गई। ऐसी परिस्थिति में बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह ने अपनी सेना सहित विद्रोह के स्थानों में पहुंचकर विद्रोहियों का दमन करने में अंग्रेज़ों को सहायता पहुंचाने एवं पीड़ित अंग्रेज़ कुटुम्बों का समुचित प्रबन्ध करने का निश्चय किया। उसका एक साथ सब स्थानों में स्वयं उपस्थित रहना असंभव था, अतएव वह स्वयं तो भाद्रा में रहा और अपनी तरफ़ से उसने डाक्टर कोलरिज को राजगढ़ में भेज दिया[1]। इस प्रकार महाराजा ने एक बड़ी सेना के साथ विद्रोहियों का दमन करने में अपनी सीमा के पास के इलाक़ों में बड़ा काम किया। राजपूताने के राजाओं में से केवल यही एक राजा स्वयं सिपाही-विद्रोह में अंग्रेजों के लिए लड़ने को गया था। शुतुर-सवारों के अतिरिक्त महाराजा की तीनों प्रकार की सेनाएं उसके साथ थीं, जिनमें कई तोपें, चार रिसाले, छः पैदल सेना की पलटनें तथा अन्य प्रमुख सरदारों की सेनाएं भी सम्मिलित थीं। केवल हांसी, हिसार और सिरसा में ही बीकानेर के १००० सवार, ५२६ शुतुरसवार और २३११ पैदल विद्रोह के दमन में अंग्रेजों को सहायता पहुंचा रहे थे। अन्य छोटे-मोटे स्थानों में विद्रोहियों से लड़नेवाली सेनाएं इससे भिन्न थीं। अतएव यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि सब मिलाकर उसकी कम से कम पांच हज़ार सेना ने सिपाही-विद्रोह के दमन में कार्यात्मक भाग लिया था, जिसमें कम से कम ४७[2] प्रमुख ठिकानों के बीका, बीदावत,

---

(१) मुंशी ज्वालासहाय; लॉयल राजपूताना, पृ० २६०-१।

(२) (१) भूकरका (२) सांखू (३) सीधमुख (४) जसाणा (५) वाय (६) नीमा (७) राजपुरा (८) कुंभाणा (९) दद्रेवा (१०) हरदेसर (११) बिरकाली (१२) अजीतपुरा (१३) मेघाणा (१४) कान्हसर (१५) तेहाणदेसर (१६) कुतार (१७) मेनसर (१८) बीदासर (१९) गोपालपुरा

कांधलोत, करमसोत, भाटी, पंवार आदि सरदार या उनके कुंवर अथवा प्रधान अपनी-अपनी सेना सहित शामिल थे। प्रधान अफ़सरों में नीचे लिखे व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय हैं—

(१) महाराव हरिसिंह मोहता
(२) फ़ौजदार ठाकुर हुकुमसिंह भाटी
(३) राव गुमानसिंह वैद
(४) कमांडेंट गुरुसहाय
(५) साह लक्ष्मीचन्द सुराणा
(६) साह लालचन्द सुराणा
(७) साह फ़तहचन्द सुराणा और
(८) पुरोहित चिमनराम

महाराजा के स्वयं उपस्थित रहने से उसके सैनिकों में अनवरत उत्साह का स्रोत बहता रहता था और उन्होंने बड़ी तत्परतापूर्वक विद्रोह के स्थानों में संकट के समय अंग्रेज़ों को सहायता पहुंचाई। हिसार में उपद्रव खड़ा होने पर जेनरल वान (Van) कोर्टलैंड के पहुंचने तक, तीन सप्ताह तक बीकानेर के १७०० सैनिकों ने उस नगर की रक्षा की। फिर ता० २१ जुलाई को हांसी में विद्रोहियों का उपद्रव बढ़ने पर महाराजा के एक हज़ार सैनिक मय दो तोपों के उस नगर की अंग्रेज़ी सेना की सहायतार्थ गये और उनमें से आधे सैनिकों ने तीन सप्ताह तक उस नगर की रक्षा की। हरियाना में छः बार बीकानेरी सेना को विद्रोहियों का सामना करना पड़ा और प्रत्येक बार उसे उनको भगाने में सफलता प्राप्त

---

(२०) सांडवा (२१) चाहड़वास (२२) हरासर (२३) लोहा (२४) खुडी (२५) कनवारी (२६) सोभासर (२७) पड़िहारा (२८) फाणुता (२९) सारोठिया (३०) कक्कू (३१) जोगलिया (३२) रावतसर (३३) मानकरासर (३४) जैतपुर (३५) जारिया (३६) सातून (३७) ल्होसणा (३८) कल्लासर (३९) धांधूसर (४०) रायसर (४१) घड़ियाला (४२) खारबारा (४३) जांगलू (४४) हाडलां (४५) जैतसीसर (४६) राणासर तथा (४७) नाहरसरा।

हुई। ता० १६ अगस्त को बीकानेरी सेना ने हज़ारीपुर के पास ३००० विद्रोहियों को मार भगाया। हज़ीमपुर को जलाने एवं जमालपुर को अधीन करने में बीकानेर का सारा रिसाला लेफ्टिनेन्ट माइल्डमे (Mildmay) के साथ था। इसके अतिरिक्त फाजिलका के पास भी महाराजा ने सैनिक सहायता भेजी थी तथा बाढ़ूल, मंगली आदि में भी उसकी सेनाएं और तोपें गई थीं[1]।

महाराजा के सैनिकों के वीरतापूर्ण कार्य

सिपाही-विद्रोह में अंग्रेज़ों की सहायतार्थ सेना भेजने आदि में महाराजा को बहुत धन व्यय करना पड़ा। इसके साथ ही उसे कितने ही प्रमुख सरदारों एवं साहसी सैनिकों से भी हाथ धोना पड़ा। शामपुरे के खेतसिंह का अभूतपूर्व साहसिक कार्य देखकर तो अंग्रेज़ अधिकारियों को भी चकित रह जाना पड़ा था। लेफ्टिनेंन्ट पियर्स की अध्यक्षता में जो थोड़े से बीकानेरी सैनिक बाढ़ूल लेने में लगे थे, उनमें वह भी मौजूद था और शत्रुओं की ओर से निरन्तर होनेवाली अग्निवर्षा की किंचित् परवाह न कर वह अकेला ही शहरपनाह पर चढ़ गया था। उपद्रव बढ़ने पर कुछ समय तक तोशाम की तहसील की बीकानेरी सेना की एक टुकड़ी ने रक्षा की। यद्यपि बाद में वहां के मुसलमान निवासियों के धोखे में फंस जाने के कारण फाटक पर नियुक्त बीकानेरी सैनिकों पर विद्रोही हावी हो गये तथापि तहसील के बीकानेरी सैनिकों ने तहसीलदार तथा थानेदार की रक्षा के निमित्त बड़ी बहादुरी के साथ उनका सामना किया, परन्तु अन्त में बहुसंख्यक विद्रोही सेना की ही विजय हुई। इस लड़ाई में बीकानेर के नीमा का ठाकुर मोहकमसिंह, कुंजळा का मिट्ठूसिंह और बिरकाली का खुमानसिंह मारे गये।

हांसी में अचानक ज्वर फैल जाने से बहुत से बीकानेरी सैनिक अकाल ही काल कवलित हो गये, जिनमें प्रधान मोतमिद साह लालचन्द,

(१) लेफ्टिनेन्ट ए० जी० एच० माइल्डमे का ता० २४ सितंबर ई० स० १८५७ का मुरासिला (despatch)।

और लक्ष्मीचन्द सुराणा भी थे[1]।

बीकानेर की तरफ़ के वीरगति प्राप्त करनेवाले सैनिकों की ठीक-ठीक संख्या का पता तो नहीं चलता, परन्तु इस सम्बन्ध में जेनरल लारेंस[2] अपने ता० २१ दिसम्बर सन् १८६० के भारत सरकार के मंत्री के नाम के सरकारी मुरासिले में लिखता है—'केवल हमारे लिए ही लड़ने के कारण बीकानेर के राजा के सम्बन्धी और सरदार बड़ी संख्या में मारे गये। सिपाही विद्रोह में लड़ने, घायल होने और मारे जानेवाले बीकानेरी सैनिकों में राजपूतों के सिवाय वहां के गूजर, जाट, ब्राह्मण, सिक्ख, मुसलमान आदि भी शामिल थे।'

अंग्रेज़ कुटुम्बों को अपने रक्षण में लेना

सिपाही विद्रोह में महाराजा ने केवल विद्रोहियों का दमन करने में अंग्रेज़ों की सहायता की ऐसा ही नहीं वरन् उसने खोज-खोज कर पीड़ित अंग्रेज़ कुटुम्बों का पता लगवाया और विद्रोह की समाप्ति तक उन्हें अपने राज्य में पहुंचाकर वहीं रक्खा। जेनरल लारेंस का कथन है—'अन्य राजाओं ने भी अंग्रेज़ कुटुम्बों को आश्रय और मदद दी, परन्तु विद्रोह के कारण भागे हुए अंग्रेज़ों का पता लगाने और उनकी रक्षा करने में जैसी सहायता बीकानेर के राजा ने की वैसी किसी दूसरे से न हुई[3]।' इस

(१) लेफ़्टिनेन्ट ए० जी० एच० माइल्डमे का ता० २४ सितंबर ई० स० १८५७ का मुरासिला (despatch)।

(२) इसका पूरा नाम सर जॉर्ज सेन्ट पैट्रिक लारेंस था। इसका जन्म ई० स० १८०४ में हुआ था। ई० स० १८५७ से १८६४ तक यह राजपूताने का एजेन्ट टू दि गवर्नर जेनरल रहा और भारतव्यापी सिपाही विद्रोह के दमन में इस प्रदेश में इसने बड़ा काम किया। ई० स० १८८४ (वि० सं० १९४०) में इसकी मृत्यु हुई।

(३) ता० २१ दिसम्बर ई० स० १८६० (वि० सं० १९१७ मार्गशीर्ष सुदि ६) का भारत सरकार के मंत्री के नाम का मुरासिला।

सम्बन्ध में लॉर्ड कैनिंग[1] ने महाराजा को लिखा था—'विद्रोह के कारण हिसार और सिरसा से भागकर जिन अंग्रेज़ों ने आपके राज्य में शरण ली उन्हें आपने कृपापूर्वक आश्रय दिया। आपके इस कार्य ने मैत्री-पूर्ण अनुग्रह का परिचय दिया है, जिससे हमें बड़ी प्रसन्नता हुई है।'

बीकानेर के प्राचीन राजमहलों में आश्रय एवं आतिथ्य पानेवाले अंग्रेज़ों में सुप्रसिद्ध कर्नल जेम्स स्किनर[2] के वंशजों का स्किनर कुटुम्ब भी था, जो ता० १५ जून को वहां पहुंचा था और विद्रोह की समाप्ति तक वहीं रहा। उक्त परिवार के नाम पर अब तक 'फ़र्स्ट स्किनर्स हॉर्स' नामक घुड़सवार सेना विद्यमान है[3]।

क़रीब दो वर्ष की अवधि में प्रभुत्वशाली अंग्रेज़ों ने भारतव्यापी विद्रोह का अंत कर दिया। विद्रोह के समय महाराजा ने अंग्रेज़ों को जो सहायता पहुंचाई उसका उल्लेख ऊपर किया जा-चुका है। ई० स० १८५९ ता० २१ जनवरी (वि० सं० १९१५ माघ वदि ३) को जब तांतिया टोपी[4], राव साहब और फीरोज़-

विद्रोह का अंत

(१) इसका पूरा नाम चार्ल्स जॉन कैनिङ्ग था। यह भारतवर्ष का गवर्नर जेनरल और पहला वाइसरॉय था। ई० स० १८१२ में इसका जन्म हुआ था और ई० स० १८५६ में यह भारत का गवर्नर जेनरल होकर आया था। ई० स० १८५८ में वाइस-रॉय बनाया गया और ई० स० १८६२ में इसकी मृत्यु हुई थी।

(२) कर्नल जेम्स स्किनर, सी० बी० का जन्म ई० स० १७७८ में हुआ था और ई० स० १८४२ ता० ४ दिसम्बर (वि० सं० १८९९ मार्गशीर्ष सुदि २) को हांसी में इसकी मृत्यु हुई। इसने बुंदेलखण्ड, मालपुरा आदि की लड़ाइयों में अभूतपूर्व वीरता का परिचय देकर अपनी कीर्ति सदा के लिए अमर कर दी। इसके विस्तृत हाल के लिए देखो जे० बेली फ़्रेज़र-कृत 'मिलिटरी मेमॉयर ऑव् लेफ़्टनेन्ट कर्नल जेम्स स्किनर'।

(३) मुंशी ज्वालासहाय; लॉयल राजपूताना; पृ० २११।

(४) पूना का एक मरहठा ब्राह्मण जो नाना फड़नवीस की सेवा में था और जिसने सिपाही विद्रोह में अपने अनुयायियों सहित प्रमुख भाग लिया था। विद्रोह की समाप्ति पर ई० स० १८५९ ता० ७ अप्रेल (वि० सं० १९१६ चैत्र सुदि ४) को पकड़ा जाकर उसी मास की १८ तारीख़ को यह फांसी पर लटका दिया गया था।

शाह[1] तथा उनके साथ के विद्रोहियों को सीकर में कर्नल होम्स ने हराया तो उनमें से ६०० विद्रोही भागकर बीकानेर चले गये, जहां से उन्होंने महाराजा की मारफ़त अंग्रेज़ों से क्षमा याचना कराई। अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा के अनुरोध को मानकर उनको उनके घर भिजवा देने की आज्ञा दी, पर खून का जुर्म साबित होनेवालों को तलब किये जाने पर भेजने का आदेश किया[2]। फिर विद्रोह में भाग लेनेवालों के लिए माफ़ी की सूचना प्रकाशित होने पर महाराजा ने बहुत से विद्रोहियों को अंग्रेज़ सरकार की अधीनता स्वीकार करने पर बाध्य किया।

अंग्रेज सरकार का महाराजा को टीबी परगने के ४१ गाव देना

फ्रेड्रिक कूपर अपनी पुस्तक 'दि क्राइसिस इन दि पंजाब फ्रॉम दि टेन्थ ऑव् मे अन्टिल दि फ़ाल ऑव् डेलही' की भूमिका में लिखता है—'पटियाला, जींद तथा बीकानेर के राजाओं की राजभक्ति और प्रतिष्ठा में विश्वास रखना कितना ठीक था यह इस पुस्तक के आगे के अंशों से स्पष्ट हो जायगा।' आगे चलकर उसी पुस्तक में वह फिर लिखता है—'पटियाला, बीकानेर एवं कपूरथला के महाराजाओं के असाधारण प्रलोभनमयी परिस्थिति में किये गये कार्य इतिहास में एशियाई प्रतिष्ठा के उत्कृष्ट उदाहरण रहेंगे। उन सभी राजाओं को अंग्रेज़ों से काल्पनिक अथवा वास्तविक शिकायतें अवश्य थीं, परन्तु उनकी महत्ता की पुष्टि में कहा जा सकता है कि इस आपत्ति के समय में उन्होंने उन्हें बढ़ाकर लाभ न उठाया।'

सिपाही विद्रोह में की गई महाराजा की अमूल्य सेवाओं की ओर

---

(१) यह शाह आलम (दूसरा) के प्रपौत्र मिर्ज़ा नज़ीम का पुत्र और दिल्ली के बादशाह अकबर शाह (दूसरा) का चचेरा भाई था। ई० स० १८५५ (वि० सं० १९१२) में यह मक्का चला गया था, पर विद्रोह के प्रारम्भ होने पर वहा से लौट आया और मण्डीश्वर के विद्रोहियों का मुखिया बन गया। विद्रोह का अन्त होने पर यह छद्मवेश में करबला पहुंच गया और वहां कई साल तक रहा।

(२) मुंशी ज्वालासहाय लॉयल राजपूताना, पृ० २६२।

अंग्रेज़ अधिकारियों का ध्यान प्रारम्भ से ही था। लेफ़्टिनेन्ट माइल्डमे ने अपने ता० २४ सितम्बर सन् १८५७ के मुरासिले के अन्त में लिखा था— 'हमारे मामले में महाराजा की सच्ची लगन एवं उत्साह वास्तव में इस योग्य हैं कि इसके लिए उनके पास धन्यवाद का खरीता भेजा जाय।' यही नहीं उसने महाराजा के सैनिकों की तत्परता के सम्बन्ध में भी लिखा था कि किसी भी प्रकार की आवश्यकता पड़ने पर मुझे एक भी अवसर ऐसा नहीं मिला जब कि बीकानेर के मोतमिदों की कार्य-तत्परता के विषय में दोषारोपण करने की गुंजाइश होती[1]। जेनरल लॉरेन्स ने भी इस सम्बन्ध में अपने भारत सरकार के मंत्री के नाम के पत्र में लिखा—'मैं समझता हूं कि महाराजा उस बड़े से बड़े पुरस्कार के योग्य हैं जो सरकार सबसे अधिक प्रशंसनीय इस राजपूत राज्य को दिये जाने की आज्ञा दे। यदि मैंने इस मामले को श्रीमान् (लाट साहब) के सम्मुख रखने में अपने कर्तव्य की सीमा का उल्लंघन किया हो तो सच्चे सहायक के प्रति न्याय बुद्धि एवं मेरा यह विश्वास कि मेरी (न्यायप्रिय) सरकार बीकानेर के राजा की अमूल्य सेवाएं खाली न जाने देगी, मेरे इस अनुरोध के कारण समझे जांय[2]।' स्वयं महाराणी विक्टोरिया ने महाराजा की सेवाओं की स्वीकृति करते हुए जो सन्देश उसके पास सर चार्ल्स वुड के द्वारा भिजवाया था, उसका आशय इस प्रकार है—'विद्रोह के समय महाराजा ने जिस राज-भक्ति और मैत्री का परिचय दिया, उसका महाराणी को पूरा पूरा ज्ञान है। इस अवसर पर महाराजा ने अंग्रेज़ी सेना तथा सरकार को जो सहायता पहुंचाई, उसकी वे हार्दिक प्रशंसा करती हैं। ऐसे समय में ही मित्रता के सच्चे गुणों की परीक्षा होती है। महाराजा तथा राजपूताने के अन्य प्राचीन राजघरानों ने विद्रोह के समय जिस दृढ़ मित्रता का परिचय दिया, वह महाराणी की सब से प्रिय यादगार रहेगी[3]।'

(१) ता० २४ सितम्बर ई० स० १८५७ का मुरासिला।

(२) ता० २१ दिसम्बर ई० स० १८६० का मुरासिला।

(३) ता० १२ दिसम्बर ई० स० १८५९ का खरीता।

इन्हीं अमूल्य सेवाओं के उपलक्ष्य में अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा को खिलअत तथा ता० ११ अप्रेल ई० स० १८६१ (चैत्र सुदि १ वि० सं० १६१८) की सनद के द्वारा सिरसा ज़िले के ४१ गांवों[1] का टीबी परगना (जिसके लिए पहले से बीकानेर ने दावा कर रक्खा था) दे दिया[2]।

महाराजा का सिक्के के लेख को बदलवाना

सिपाही विद्रोह के पूर्व बीकानेर राज्य के तमाम सोने और चांदी के सिक्कों पर बादशाह शाह आलम दूसरे का नाम और जुलूसी सन् रहते थे। विद्रोह का अन्त होने पर ई० स० १८५६ (वि० सं० १६१६) में जब भारत का शासन सूत्र श्रीमती क्वीन विक्टोरिया के हाथों में गया तो महाराजा ने अपने सोने और चांदी के सिक्कों पर से बादशाह का नाम निकालकर एक तरफ़ 'औरंग आराय हिन्द व इंग्लिस्तान क्वीन विक्टोरिया १८५६' और दूसरी तरफ़ 'ज़र्ब श्री बीकानेर १६१६' फ़ारसी लिपि में खुदवाया, जिनमें मुहर का लेख बहुत ही सुन्दर है।

---

(१) १—साबूरा २—मानक टीबी (नानक पट्टी) ३—काराखारा (खारा कुवा) ४—गोदयाखार ५—कामपुरा ६—सोलावाली ७—बासीहर ८—मलरखार ६—गलवाला १०—सहारन ११—कुलचंदर १२—सुरावाली १३—चंदूरवाली १४—पीर कमरिया (नीर कमरया) १५—पन्नीवाली उर्फ़ जगरानी (चगरानी) १६—कन्नानी (कनाली) १७—मगरानी (गलरावती) १८—मसानी १६—टीबी बरजीका (पट्टी बरजीका) २० रत्ताखारा २१ रत्तीखारा २२ किशनपुरा २३—सलेमगढ़ २४—घारोई (धारी) २५—सलवाला खुर्द २६ बैरवाला कलां २७ सलवाला कलां २८—तलवाड़ा कलां २६ जलालाबाद ३० मोहारवाला ३१—मसीतावाली (सीतावाली) ३२—रामसर ३३—दबली खुर्द (देहली खुर्द) ३४—रामनगर ३५—दबली कलां (देहली कला) ३६—मिर्ज़ावाली ३७—चाऊवाली (जाववाली) ३८—भूरांपुरा ३६—खैरवाली ४० शिवदानपुरा (शाखांपुरा) ४१—खन्दानिया (कदाहा)।

ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्स, जि० २, पृ० २६०-६१ (१६३२ ई० का संस्करण)। मुंशी ज्वालासहाय, वकाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६१५-१७।

(२) ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्स; जि० ३, पृ० २६०। सी० डब्ल्यू० वार्डिंग्टन, इण्डियन इण्डिया; पृ० ८५।

ऊपर लिखा जा चुका है कि लार्ड डलहौज़ी के समय पुत्र के अभाव में एक क़ानून द्वारा देशी नरेशों को गोद लेने की मनाई की गई थी और कई देशी राज्य अंग्रेज़ी साम्राज्य में मिला लिये गये थे। विद्रोह के कारणों में से वह भी एक था। जब सिपाही विद्रोह का अन्त हुआ और इंग्लैंड की सरकार ने भारतवर्ष का राज्य अपने अधिकार में ले लिया तब वह क़ानून अनुचित समझा जाकर रद्द कर दिया गया। ई० स० १८६२ ता० ११ मार्च (वि० सं० १९१८ फाल्गुन सुदि १०) को गवर्नर जेनरल लॉर्ड कैनिंग ने महाराजा के नाम गोद लेने की सनद भेजी, जिसका आशय यह है—

दत्तक लेने की सनद मिलना

"श्रीमती महाराणी विक्टोरिया की इच्छा है कि भारत के राजाओं तथा सरदारों का अपने-अपने राज्यों पर अधिकार तथा उनके वंश की जो प्रतिष्ठा एवं मान-मर्यादा है वह हमेशा बनी रहे। इसलिए उक्त इच्छा की पूर्ति के निमित्त मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि वास्तविक उत्तराधिकारी के अभाव में यदि आप या आपके राज्य के भावी शासक हिन्दू धर्मशास्त्र और अपनी वंश-प्रथा के अनुसार दत्तक लेंगे तो वह जायज़ समझा जायगा।

"आप यह निश्चय जानें कि जब तक आपका घराना सरकार का खैरख़्वाह रहेगा और उन अहदनामों, सनदों तथा इक़रारनामों का पालन करता रहेगा, जिनमें अंग्रेज़ सरकार के प्रति उसके कर्तव्य दर्ज हैं, तब तक आपके साथ इस इक़रार में कोई बात बाधक न होगी[1]।"

महाराजा के पिता के समय में ही आपस के लड़ाई-झगड़ों के कारण राज्य-कोष में धन की कमी पड़ गई थी। जब महाराजा ने राज्यकार्य अपने हाथ में लिया उस समय भी धन की बहुत कमी थी, जिससे राज्य के कार्य-कर्ताओं पर दबाव डाला गया तब वे प्रजा को कष्ट दे-देकर रुपये

टींवी आदि गावों के सम्बन्ध में जाच होना

(१) ट्रीटीज़ एंगेज़मेन्ट्स एण्ड सनद्स; जि० ३, पृ० ३९।

वसूल करने लगे। टीबी आदि ४१ गांव सरकार से मिल जाने पर वहां भी रुपयों की वसूली के लिए प्रजा पर अनुचित दबाव डाला जाने लगा। इस बात की शिकायत होने पर हिसार के कमिश्नर मि० नेस्मिथ ने आकर इस बात की जांच की, जिसमें यह स्पष्ट प्रमाणित हो गया कि ई० स० १८६१ और १८६७ के बीच राज्य के अहलकारों ने उक्त गांवों से उचित से अधिक रकम वसूल की है। इसपर ई० स० १८६८ (वि० सं० १६२५) में महाराजा को लिखा गया कि उक्त गांवों के साथ अंग्रेज़ सरकार के ई० स० १८५६ के किये हुए बीस साला बन्दोबस्त के विपरीत वह कोई आचरण न करे। ई० स० १८६६ में महाराजा ने उन गांवों के निवासियों को राहदारी के कर के अतिरिक्त अन्य करों से मुक्त करने, बीससाला बन्दोबस्त को स्थिर रखने तथा पिछले सात वर्षों के बीच जो हानि गांववालों की हुई है उसके बदले में आगे सात साल की अवधि बढ़ाने की अपनी इच्छा प्रकट की। पीछे से महाराजा ने इस आशय की सनदें गांववालों को दीं और उनसे भी इक़रारनामे लिखवा लिये[1]।

कुछ ठाकुरों का विरोधी होना

ई० स० १८६८ (वि० सं० १६२५) में कप्तान पाउलेट बीकानेर का पोलिटिकल एजेंट नियत होकर सुजानगढ़ में गया। उन्हीं दिनों ठाकुर अमरसिंह (महाजन), मेघसिंह (जसाणा), शिवसिंह (बाय), सम्पतसिंह (सीधमुख), मानसिंह (कानसर), लछमणसिंह (बिरकाली), गणपतसिंह (मेघाणा), अमरसिंह (हरदेसर), शक्तिसिंह (कनवारी), जैतसिंह (सांईसर) तथा सरूपसिंह (खारबारा) ने मिलकर महाराजा सरदारसिंह के विरुद्ध नीचे लिखी शिकायतें पेश कीं।

१—दरबार ने हमारे पट्टे के कुछ गांव ज़ब्त कर लिये।

२—हम से नज़राने के नाम पर अनुचित धन वसूल किया गया।

३—हमारे गांवों से कुछ भिन्न-भिन्न प्रकार के 'कर' लिये जाते हैं।

(१) ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्स, जि० ३, पृ० २७८।

उन दिनों राज्य का दीवान पंडित मनफूल था, दरबार ने उसकी तथा पाउलेट की सम्मति के अनुसार इस सम्बन्ध में यह निर्णय किया कि जो गांव महाराजा के सिंहासनारूढ़ होने से पहले से इन (सरदारों) के थे उनमें से जो-जो अब ज़ब्त कर लिये गये हैं वे बहाल कर दिये जांय; अन्य करों को मिलाकर सवारों की रेख पहले के अनुसार २०० रुपये प्रतिवर्ष प्रति घोड़ा जो नियत की गई है वह दस वर्ष तक जारी रहे। सरदार की मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारी से जो नज़राना लिया जाता था वह पूर्ववत स्थिर रहा। ठाकुर अमरसिंह (महाजन) को यह निर्णय पसन्द न हुआ, क्योंकि उसके तीन गांव महाराजा (सरदारसिंह) के समय से पहले के ज़ब्त थे और इस फ़ैसले के अनुसार वापस न मिल सकते थे, दूसरे उमराव होने से उसने घोड़ा रेख का मियादी पट्टा लेने से एक ठेकेदार की बराबर हो जाने के कारण अपना अपमान समझा। अतएव वह नाराज़ होकर लाडनूं (मारवाड़) चला गया[१]।

वि० सं० १९२५ (ई० स० १८६९) में अंग्रेज़ सरकार और महाराजा के बीच एक दूसरे के मुजरिमों के सम्बन्ध में निम्नलिखित शर्तों का अहदनामा हुआ[२]—

अंग्रेज सरकार के साथ आपस में मुजरिम सौंपने का अहदनामा होना

१—अंग्रेज़ी राज्य अथवा उसके बाहर का कोई आदमी यदि अंग्रेज़ी इलाक़े में कोई संगीन जुर्म करे और बीकानेर राज्य की सीमा के भीतर आश्रय ले, तो बीकानेर की सरकार उसे गिरफ़्तार करेगी और उसके तलब किये जाने पर प्रचलित नियमानुसार उसको अंग्रेज़ सरकार के सुपुर्द कर देगी।

२—कोई आदमी, जो बीकानेर की प्रजा हो, यदि बीकानेर राज्य की सीमा के भीतर कोई संगीन जुर्म करे और अंग्रेज़ी इलाक़े में शरण ले,

(१) मुंशी सोहनलाल; तवारीख़ बीकानेर; पृ० २२०-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ८८-९।

(२) एचिसन; ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्स; जि० ३, पृ० २९१-३।

तो उसके तलब किये जाने पर अंग्रेज़ सरकार उसे गिरफ़्तार करेगी और प्रचलित नियमानुसार उसे बीकानेर राज्य के हवाले करेगी।

३—कोई आदमी, जो बीकानेर की प्रजा न हो, यदि बीकानेर राज्य की सीमा के भीतर कोई संगीन जुर्म करके अंग्रेज़ी राज्य में शरण ले, तो अंग्रेज़ सरकार उसे गिरफ्तार करेगी और उसके मुकद्दमे की तहक़ीकात वह अदालत करेगी जिसे अंग्रेज़ सरकार हुक्म देगी। साधारण नियम के अनुसार ऐसे मुक़द्दमों की तहक़ीक़ात उस पोलिटिकल एजेंट की अदालत करेगी, जिसके अधिकार में उस समय बीकानेर राज्य की राजनैतिक देख-रेख का कार्य होगा।

४—किसी भी दशा में कोई सरकार किसी व्यक्ति को, जिसपर संगीन जुर्म लगाया गया हो, तब तक सुपुर्द करने के लिए बाध्य न होगी जब तक कि प्रचलित नियम के अनुसार वह सरकार, जिसके राज्य में अपराध किये जाने का अभियोग लगाया गया हो, या उसकी आज्ञा से कोई अपराधी को तलब न करे और जब तक जुर्म की ऐसी शहादत पेश न की जाय, जिसके द्वारा जिस राज्य में अभियुक्त मिले उसके नियमानुसार उसकी गिरफ्तारी जायज़ समझी जाय और यदि वही अपराध उसी राज्य में किया जाता तो वहां भी अभियुक्त दोषी सिद्ध होता।

५—नीचे लिखे हुए अपराध संगीन जुर्म समझे जायंगे—

१—क़त्ल।

२—क़त्ल करने का प्रयत्न।

३—उत्तेजक परिस्थितियों में किया गया दंडनीय मनुष्य-वध।

४—ठगी।

५—विष देना।

६—बलात्कार।

७—सख्त चोट पहुंचाना।

८—बच्चों की चोरी।

९—स्त्री विक्रय।

१०—डकैती।

११—लूट।

१२—सेंध लगाना।

१३—मवेशी की चोरी।

१४—घर जलाना।

१५—जालसाज़ी।

१६—जाली सिक्का बनाना या खोटा सिक्का चलाना।

१७—दंडनीय विश्वासघात।

१८—दंडनीय माल असबाब का हज़म करना।

१९—उपर्युक्त अपराधों में सहायता देना।

६—ऊपर लिखी हुई शर्तों के अनुसार मुजरिम को गिरफ़्तार करने, रोक रखने या सुपुर्द करने में जो खर्च लगेगा वह उसी सरकार को देना पड़ेगा जो अपराधी को तलब करे।

७—ऊपर लिखा हुआ अहदनामा तब तक जारी रहेगा जब तक अहदनामा करनेवाली दोनों सरकारों में से कोई उसके तोड़े जाने की अपनी इच्छा दूसरे पर प्रकट न करे।

८—इस (अहदनामे) में जो शर्तें दी गई हैं उनमें से किसी का भी असर ऐसे किसी अहदनामे पर न होगा जो दोनों पक्षों के बीच इससे पहले हो चुका है, सिवा किसी अहदनामे के उस अंश के जो इसके विरुद्ध हो।

यह अहदनामा ता० ३ फ़रवरी ई० स० १८६९ (फाल्गुन वदि ७ वि० सं० १९२५) को बीकानेर में हुआ।

(हस्ताक्षर) पर्सी डब्ल्यू० पाउलेट,
असिस्टेंट एजेन्ट गवर्नर जेनरल।

(हस्ताक्षर) आर० एच० कीटिंग,
गवर्नर जेनरल का एजेन्ट।

बीकानेर के महाराजा के
हस्ताक्षर और मुहर। (हस्ताक्षर) मेयो।

ता० १५ जून ई० स० १८६९ (ज्येष्ठ सुदि ६ वि० सं० १९२६) को शिमला में भारत के वाइसरॉय और गवर्नर जेनरल ने इस अहदनामे को स्वीकार किया।

(हस्ताक्षर) डब्ल्यू० एस० सेटनकर,
भारत सरकार का मंत्री, वैदेशिक विभाग।

राज्यप्रबन्ध के लिए कौन्सिल की स्थापना

यह ऊपर बतलाया जा चुका है कि महाराजा के राज्य-काल में रुपयों की बड़ी तंगी रहती थी। इसी से प्रायः अधीनस्थ जागीरदारों पर सख़्ती की जाती थी और उनके कार्यों में राज्य की ओर से हस्तक्षेप भी होता रहता था, जिससे तंग आकर ई० स० १८७१ (वि० सं० १९२८) में कई ठाकुर अंग्रेज़ी इलाक़े के सिरसा नगर चले गये[1]। तब कप्तान ब्रैकफ़र्ड इस सम्बन्ध में जांच करने तथा महाराजा और उसके सरदारों के बीच का मनोमालिन्य मिटाने के लिए भेजा गया। उसने वहां (बीकानेर) के अधिकारियों से सम्मति कर राज्य का सुप्रबन्ध करने के लिए एक कौन्सिल की स्थापना की, जिसमें दीवान पं० मनफूल, मानमल राखेचा, शाहमल कोचर व धनसुखदास कोठारी सदस्य चुने गये। साथ ही रियासत का खर्चा भी निर्धारित कर दिया गया, पर इससे कोई विशेष लाभ न हुआ और राज्य की स्थिति वैसी की वैसी बनी रही। कुछ ही समय बाद विरोध उत्पन्न हो जाने से ई० स० १८७२ के फ़रवरी में राखेचा मानमल क़ैद कर लिया गया, जिसपर ५०००० रुपये जुर्माना किया गया, परन्तु इसमें से कुल १७ हज़ार ही वसूल हुआ और एक मास बाद वह छोड़ दिया गया। उसके अतिरिक्त और भी कई मुत्सद्दी पकड़े गये। ऐसी दशा में मनफूल ने त्यागपत्र दे दिया, पर राज्य ने उसे स्वीकार

(१) ट्रीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० २७९।

न किया[1]।

महाराजा के केवल वीस वर्ष के राज्य-काल में अट्ठारह दीवान बदले गये। इसका प्रधान कारण, जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, राज्य में रुपये की कमी और राज्य का ऋण ग्रस्त होना था। जब कभी महाराजा की रुपये की मांग पूरी करने में दीवान असमर्थ होते तो उन्हें हटाकर उनके स्थान पर दूसरे दीवान की नियुक्ति की जाती थी। उन सब में रामलाल द्वारकानी (ई० स० १८५६ से १८६३=वि० सं० १९१३ से १९२० तक) ही अधिक दिनों तक टिक सका। इसका कारण यह था कि उदयपुरवाली महाराणी का कामदार होने से वह समय-समय पर उसकी सहायता करती थी। उक्त राणी के जीवन भर द्वारकानी का राज्य में काफ़ी प्रभुत्व रहा, पर उसके मरते ही वह विरोधियों के षड्यन्त्र का शिकार हो गया और उसे अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा। उसके बाद कई अन्य दीवान हुए, पर उनमें कोई सालभर, कोई आठ महीने और कोई-कोई तो केवल कुछ रोज़ तक ही उस पद पर रहे। रियासत की स्थिति अधिक ख़राब होने पर विलायत-हुसेन, जो सरकारी इलाक़े में मजिस्ट्रेट था, बुलाकर दीवान बनाया गया, परन्तु उसके समय में अकाल पड़ा। जब रुपयों की आवश्यकता पड़ने पर वह भी उसकी पूर्ति करने में असमर्थ रहा तो उसको हटाकर ई० स० १८६९ के अगस्त में फिर पंडित मनफूल दीवान बनाया गया। उसको सरकार से सी० एस० आई० का ख़िताब मिला था तथा उसने बड़ी योग्यतापूर्वक अपना कार्य निभाया था। उसके समय अंग्रेज़ अधिकारियों की सहायता से राज्य में कुछ सुधार करने का असफल प्रयत्न किया गया था, जिनका उल्लेख ऊपर आ चुका है[2]।

दीवानों की तबदीली

(१) ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्ज़ (जि० ३, पृ० २७९) में भी एक कौन्सिल की स्थापना किये जाने और उसके असफल होने का उल्लेख है।

(२) मुंशी सोहनलाल; तवारीख़ बीकानेर; पृ० २१८-९। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ८७।

विवाह तथा सन्तति

महाराजा के कई महाराणियां थीं, परन्तु संतान उनमें से किसी के भी नहीं हुई।

मृत्यु

वि० सं० १९२९ वैशाख सुदि ८ (ई० स० १८७२ ता० १६ मई) गुरुवार को महाराजा का स्वर्गवास हो गया[1]।

महाराजा सरदारसिंह का व्यक्तित्व

महाराजा सरदारसिंह वीर और बुद्धिमान शासक था। उसका हृदय बड़ा कोमल था। समाज में फैली हुई कुरीतियों की ओर उसका ध्यान विशेपरूप से गया था। विवाह और मौसर आदि के अवसरों पर ग़रीब लोग भी औरों की देखा-देखी फ़ज़ूलखर्ची करते थे, जिससे वे बुरी तरह ऋण-ग्रस्त होकर कष्ट पाते थे। अमीर महाजनों का यह हाल था कि निर्धन प्रजा का धन हस्तगत कर वे प्रायः दिवाला निकाल दिया करते थे। इससे उनका तो कुछ न बिगड़ता था, परन्तु ग़रीब प्रजा की दशा अधिक शोचनीय हो जाती थी। महाराजा ने क़ानून बनाकर लोगों को हैसियत के अनुसार खर्च करने और महाजनों को दिवाला न निकालने पर बाध्य किया। ऐसे क़ानून बन जाने से प्रजा को बड़ा लाभ हुआ। प्रजा की वास्तविक दशा का ज्ञान करने के लिए महाराजा स्वयं रियासत का दौरा करता था। उसने हरिद्वार की तीर्थयात्रा भी की थी।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में भारतव्यापी ग़दर का सूत्रपात हुआ। उस समय राजपूताने के राजाओं में एक महाराजा ही ऐसा था, जो स्वयं विद्रोह के स्थानों में अपने सरदारों सहित अंग्रेज़ों की सहायता

(१) ·········श्रीविक्रमादित्यराज्यात् सम्वत् १९२९ वर्षे शाके १७९४ प्रवर्तमाने············वैशाखमासे। शुभे शुक्लपक्षे अष्टम्यां गुरुवासरे········ राठोडवंशतिलकः श्रीमद्राजराजेश्वरनरेन्द्रशिरोमणि-श्रीमन्महाराजाधिराज श्री० १०८ श्रीसरदारसिंहजीवर्मा··········· वैकुंठपरमधामप्राप्तः··············।

(बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह के मृत्यु स्मारक से)।

के लिए गया था। उसने विद्रोहियों का दमन और उन्हें गिरफ़्तार करने के अतिरिक्त पीड़ित अंग्रेज़ कुटुम्बों को खोज-खोजकर अपने संरक्षण में लिया। अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा की वीरता और समयोचित सहायता की बड़ी प्रशंसा की थी।

राज्य के सुप्रबन्ध की ओर भी वह विशेषरूप से प्रयत्नशील रहा और उसके समय में राज्य-कौन्सिल की स्थापना भी हुई, परन्तु उससे विशेष लाभ न हुआ। महाराजा के समय में राज्य-कोष में धन की बहुत कमी रही, जिसका परिणाम यह हुआ कि उसके केवल बीस वर्ष के राज्यकाल में अट्ठारह दीवान बदले गये। जब भी कोई दीवान रुपयों की मांग पूरी करने में असमर्थ होता तो उसे निकालकर दूसरा दीवान नियुक्त किया जाता।

वह बड़ा धर्मशील था। उसने बीकानेर में रसिकशिरोमणि का मंदिर बनवाया और राजलवाड़ा गांव के स्थान में सरदारशहर बसाया, जो बीकानेर राज्य में तीसरे दर्जे का शहर है।

डूंगरसिंह

महाराजा सरदारसिंह की महाराणियों से कोई पुत्र नहीं हुआ था, अतएव अपने जीवनकाल में ही उक्त महाराजा ने अपने कुटुंब के दो बालकों को अपने पास रख लिया था[1]। उनमें से एक महाराज लालसिंह[2] का पुत्र डूंगरसिंह और

गद्दीनशीनी का बखेड़ा

(१) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, भाग २, पृ० २०।

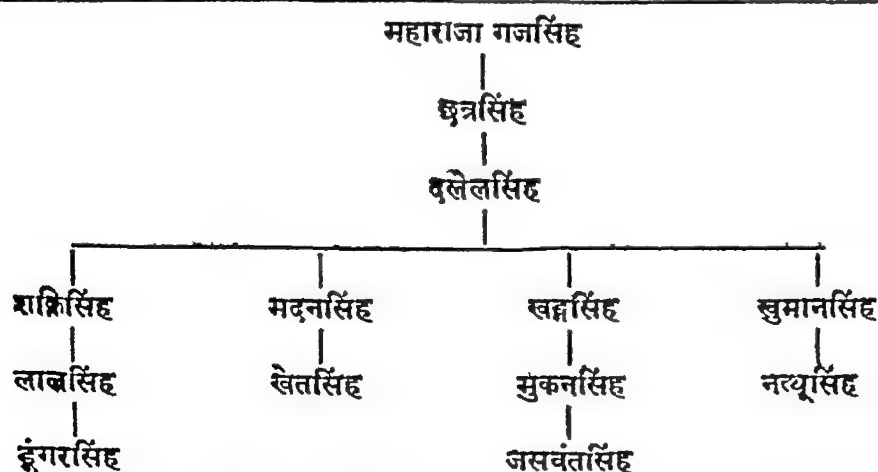
(२) महाराज लालसिंह, महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर छत्रसिंह का प्रपौत्र, दलेलसिंह का पौत्र और शक्तिसिंह का पुत्र था। मुकनसिंह, शक्तिसिंह के तीसरे भाई खड्गसिंह का पुत्र था, इस कारण लालसिंह की विद्यमानता में बीकानेर की राजगद्दी पर मुकनसिंह का हक़ नहीं पहुंचता था, जैसा कि निम्नलिखित वंशवृक्ष से स्पष्ट है—



महाराजा डूंगरसिंह

दूसरा महाराज मुकनसिंह का पुत्र जसवंतसिंह[1] था। इनमें से ज्येष्ठ शाखा में होने के कारण वास्तविक हकदार डूंगरसिंह था। जब कोई बात तय किये बिना ही महाराजा सरदारसिंह का देहांत हो गया, तब हक़दारी का विषय विवाद का मूल बन गया। महाराजा जोरावरसिंह की मृत्यु पर जैसी परिस्थिति थी, ठीक वैसी ही अब फिर उत्पन्न हो जाने से बीकानेर के मुत्सद्दियों को अच्छा अवसर हाथ लगा। सभी यह चाहते थे कि जिसके लिए हम उद्योग करें, वही व्यक्ति सिंहासनारूढ़ हो तो हमारा स्वार्थ सिद्ध हो। फलस्वरूप राज्य के सरदारों एवं अहलकारों के दो पृथक् दल बन गये। कुछ डूंगरसिंह को राज्य दिये जाने के पक्ष में थे और कुछ जसवंतसिंह को।

परलोकवासी महाराजा की महाराणियों में से महाराणी भटियाणी प्रथम विवाह की होने के कारण पटराणी थी, परन्तु महाराजा का प्रेम महाराणी पुंगलियाणी पर विशेष रूप से होने के कारण उसका सम्मान भटियाणी से अधिक था। महाराणी भटियाणी डूंगरसिंह के पक्ष में थी और दत्तक पुत्र ग्रहण करने का हक़ भी उसको ही था, किन्तु महाराव हरिसिंह आदि के अनुरोध करने पर भी उसने बिना पंडित मनफूल की अनुमति



(१) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र (भाग २, पृ० २०) में खड्गसिंह के पुत्र का नाम हरिसिंह दिया है, पर उसके हरिसिंह नाम का कोई पुत्र न था और वास्तव में यह मुकनसिंह का पुत्र जसवंतसिंह था।

और अंग्रेज़-सरकार की स्वीकृति के उस (डूंगरसिंह) को गद्दी का स्वामी घोषित करना उचित न समझा।

महाराजा के स्वर्गवास का समाचार सुजानगढ़ पहुंचने पर राजपूताने के एजेंट गवर्नर जेनरल का असिस्टेंट कप्तान बर्टन ई० स० १८७२ ता० १६ मई (वि० सं० १६२६ वैशाख सुदि ११) को वहां से चलकर ता० २२ मई को बीकानेर पहुंचा। इस अवसर पर जसवंतसिंह के पक्ष के लोगों ने महाराणी पुंगलियाणी को पटराणी प्रमाणित करने का प्रयत्न किया, परंतु कप्तान बर्टन सब बातों से जानकारी रखता था, अतएव यह प्रपंच सफल नहीं हुआ और दत्तक लेने का हक़ महाराणी भटियाणी का ही स्थिर रहा। फिर छोटी महाराणी पुंगलियाणी की ओर से गोद के चुनाव संबंधी बातचित में उसको भी सम्मिलित रखने का दावा किया गया, पर चुनाव में दोनों के बीच मतभेद होने और दत्तक लेने का हक़ ज्येष्ठ महाराणी को ही होने से उसकी यह बात भी अस्वीकार हुई तथा शासन-कार्य जब तक उत्तराधिकारी का निर्णय होकर उसे राज्याधिकार न सौंपा जावे, तब तक कप्तान बर्टन की अध्यक्षता में कौंसिल-द्वारा होना ही स्थिर रहा[1]।

इधर तो बीकानेर में उत्तराधिकारी के विषय में यह झगड़ा चल रहा था, उधर महाराजा की मृत्यु के पश्चात् पांच दिन बाद ही यह समाचार उदयपुर में महाराणा शंभुसिंह के पास पहुंचा। डूंगरसिंह, उक्त महाराणा के मामा[2] का पुत्र था और दोनों दावेदारों में उसका प्रथम हक़

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६२३-७।

(२) महाराज लालसिंह की बहिन नंदकुंवरी का विवाह वि० सं० १८६७ (ई० स० १८४०) में बागोर (मेवाड़) के महाराज शेरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र शार्दूलसिंह के साथ हुआ था, जिससे शंभुसिंह का जन्म हुआ। शार्दूलसिंह का, पिता की विद्यमानता में ही, महाराणा स्वरूपसिंह के समय बंदीगृह में देहांत हो गया, जिससे शंभुसिंह अपने पितामह शेरसिंह की मृत्यु होने पर बागोर का स्वामी हुआ। फिर महाराणा स्वरूपसिंह के पीछे शंभुसिंह बागोर से गोद आकर मेवाड़ का स्वामी हुआ। उपर्युक्त संबंध के कारण महाराज लालसिंह, महाराणा शंभुसिंह का मामा होता था।

था, इसलिए महाराणा ने सहीवाला अर्जुनसिंह के नाम, जो किसी अन्य कार्य के निमित्त आबू गया हुआ था, निम्नलिखित आशय का पत्र भेजा—

"बीकानेर का सारा हाल तुम्हें पन्नालाल[1] के रुक्के से ज्ञात होगा। तुम साहब (कर्नल ब्रुक) के पास जाकर मेरी ओर से निवेदन करना कि राज्य पर (मेरे) मामा का हक़ होता है, इसलिए उसका पुत्र ही गद्दीनशीन किया जाय। वैसे तो मुझे साहब का इतना भरोसा है, कि जो मैं कहूं वह हो जावे, फिर यह तो वास्तविक हक़दार है, जिससे इसके विपरीत नहीं होना चाहिये। मैं साहब का यह एहसान कभी न भूलूंगा। तुम साहब से सब बात समझाकर कहना, जिससे कार्य पूरा हो और दोनों राज्यों में तुम्हारी नामवरी हो। श्रावणादि वि० सं० १९२८ (चैत्रादि १९२९) वैशाख सुदि १३ (ई० स० १८७२ ता० २१ मई) मंगलवार[2]।"

उपर्युक्त पत्र पाने पर अर्जुनसिंह ने कर्नल ब्रुक को सब हाल से वाकिफ़ किया, तब उस(कर्नल ब्रुक)ने महाराणा की इच्छा और डूंगरसिंह के वास्तविक हक़दार होने से वाइसराय लॉर्ड नार्थब्रुक के पास इस मामले की रिपोर्ट कर दी, जिसके मंजूर होकर आने पर एजेंट गवर्नर जेनरल ने ता० २३ जुलाई (श्रावण सुदि ६) को कप्तान बर्टन के नाम पत्र भेज, डूंगरसिंह को गद्दीनशीन कराने की इत्तला दी।

महाराजा डूंगरसिंह का जन्म वि० सं० १९११ भाद्रपद वदि १४

---

(१) पन्नालाल ओसवाल जाति का बच्छावत मेहता था और महाराणा शंभुसिंह ने उसे महकमा ख़ास का सेक्रेटरी (प्रधान) नियत किया था (देखो मेरा 'राजपूताने का इतिहास'; जि० २, पृ० ११०९)।

(२) मेवाड़ में महाराणा से पट्टे परवानों आदि पर सही करानेवाला अफ़सर सहीवाला कहलाता है, जो कायस्थ-भटनागर हैं। उक्त सहीवाला ख़ानदान में अर्जुनसिंह उस समय महाराणा के होशियार और विश्वासपात्र कर्मचारियों में था। महाराजा डूंगरसिंह की गद्दीनशीनी के अवसर पर उस(अर्जुनसिंह)की सेवा से प्रसन्न होकर महाराणा शंभुसिंह ने उसको वि० सं० १९२९ (ई० स० १८७३) में दूणावेड़ा गांव दिया था।

(ई० स० १८५४ ता० २२ अगस्त) मंगलवार को हुआ था और वि० सं० १६२६ श्रावण सुदि ७ (ई० स० १८७२ ता० ११ अगस्त) को वह बीकानेर राज्य का स्वामी हुआ। गद्दीनशीनी के समय उसकी आयु १८ वर्ष की थी, किन्तु शासन-कार्य का अनुभव न होने के कारण राज्य का समस्त कार्य पूर्ववत् कप्तान बर्टन की अध्यक्षता में कौंसिल-द्वारा होता रहा। कौंसिल ने राज्य के ख़र्च आदि की सुव्यवस्था की तथा कार्यकर्त्ताओं की मनमानी को रोका। महाराजा को केवल हिंदी और उर्दू भाषा में शिक्षा मिली थी। गद्दीनशीनी के बाद उसकी शिक्षा के लिए योग्य शिक्षक रक्खे गये[1] एवं शासनकार्य के प्रत्येक विषय का उसको यथोचित ज्ञान करवाया गया, जिससे थोड़े ही समय में उसने अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली।

महाराजा का जन्म और गद्दीनशीनी

कौंसिल के सामने इस समय दो प्रधान कार्य थे, जिनका शीघ्र ही निवटारा करना आवश्यक था। एक तो दिवंगत महाराजा की महाराणियों के लिए जागीरें अलग करना और दूसरे चूरू, भाद्रा आदि के विरोधी ठाकुरों के लिए गुज़ारे का प्रबंध करना; पर इसमें बड़ी कठिनाई थी। महाराजा सरदारसिंह ने अपने जीवनकाल में बहुतसे गांव जागीर में दे दिये थे, जिससे खालसे के गांवों की संख्या थोड़ी रह गई थी। अतएव इस कार्य के लिए कौंसिल ने उन पट्टेदारों के गांव ज़ब्त कर लिए, जिन्होंने राज्य की कोई महत्त्वपूर्ण सेवाएं न की थीं और जिनको नये सिरे से जागीरें दी गई थीं। फिर वे गांव उपर्युक्त महाराणियों और ठाकुरों में वितरित कर दिये गये[2]।

कौंसिल-द्वारा जागीरों के झगड़े तय होना

इसी वर्ष के शीतकाल में राजपूताने के एजेंट गवर्नर जेनरल कर्नल जे० सी० ब्रुक ने बीकानेर में आकर एक बड़े दरबार में ई० स० १८७३

(१) ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० ६४४।

(२) वही, जि० ३, पृ० ६४२-४।

अंग्रेज़-सरकार की तरफ से महाराजा के लिए गद्दी-नशीनी की खिलअत आना

ता० २२ जनवरी (वि० सं० १६२६ माघ वदि ८) को अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से गद्दीनशीनी की खिलअत महाराजा को भेंट की और शासन-कार्य उसको सौंपकर राज्यकार्य पंडित मनफूल की राय से करने की सलाह दी[1]।

पंडित मनफूल का बीकानेर से पृथक् होना

वि० सं० १६३० मार्गशीर्ष सुदि १४ (ई० स० १८७३ ता० ३ दिसम्बर) को पंडित मनफूल[2] बहुत वीमार हो जाने के कारण त्यागपत्र देकर चला गया। वह राज्य का सच्चा शुभचिंतक और ईमानदार व्यक्ति था। उसके समय में वीकानेर राज्य में सरिश्ते की कार्यवाही मज़बूत हुई और शासन-कार्य में बहुत कुछ सुधार हुआ। इस सेवा के एवज़ में महाराजा ने उसको मूल्यवान् खिलअत व जागीर देकर सम्मानित किया तथा उसके स्थान में अपने पिता महाराज लालसिंह को कौंसिल का सभापति

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६४५।

(२) पंडित मनफूल ने ब्रिटिश इंडिया में वरसों तक भिन्न भिन्न पदों पर रहकर काम किया था, जिसकी बड़ी प्रशंसा हुई और क्रमशः वह अतिरिक्त आसिस्टेन्ट कमिश्नर के पद पर पहुंच गया था। अंग्रेज़-सरकार ने उसकी अच्छी योग्यता के कारण उसे सी० एस० आई० (Companion of the Star of India) की उपाधि से सम्मानित किया था। ई० स० १८६६ के अगस्त (वि० सं० १९२६ श्रावण) से बीकानेर में दीवान का पद ग्रहण कर उसने सुप्रबन्ध की नींव डाली और अन्धाधुन्धी को रोका एवं सदैव शांति रखने का प्रयत्न किया, जिससे महाराजा सरदारसिंह के समय रेखवृद्धि का मामला तय हो गया। परगना हनुमानगढ़ में उसने बंदोबस्त का तरीक़ा जारी किया, जो अंग्रेज़ अफसरों को बहुत पसंद आया। यदि स्वास्थ्य ख़राब होने से वह बीकानेर से न जाता और कुछ दिन अधिक ठहरता तो राज्य का बड़ा हित होता। बीकानेर छोड़ने के पीछे वह ई० स० १८७५ (वि० सं० १९३२) में अलवर के महाराजा मंगलसिंह का संरक्षक नियत हुआ और लगभग ३ वर्ष तक वहां रहा। फिर उक्त महाराजा तथा उसके बीच मतभेद होने से वह वहां से इस्तीफ़ा देकर चला गया।

नियत किया[1]। मानमल राखेचा और शाहमल कोचर पूर्ववत् कौंसिल के सदस्य रहे। जून महीने में मुंशी देवीसहाय को पृथक् कर उसके स्थान में मेहता जसवंतसिंह वैद कौंसिल का नवीन सदस्य नियत हुआ। ई० स० १८७३-७४ (वि० सं० १९३०-३१) में ठाकुरों तथा प्रजा की तरफ़ से राज्य के कार्यकर्त्ताओं के कुप्रबन्ध और अत्याचारों की एजेंट गवर्नर जेनरल के पास शिकायतें हुईं, जिनपर महाराजा ने पूरा-पूरा ध्यान दिया और न्यायोचित फ़ैसला किया। इससे कई अहलकारों को सज़ा हुई और न्याय होकर भविष्य के लिए कार्यकर्त्ताओं का जुल्म मिट गया[2]।

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जिल्द ३, पृ० ६४७।

महाराज लालसिंह का जन्म वि० स० १८८८ मार्गशीर्ष सुदि १२ (ई० स० १८३१ ता० १६ दिसंबर) को हुआ था। वह बुद्धिमान, उदार और विचारशील पुरुष था। कई वर्ष तक वह बीकानेर राज्य की कौंसिल का सभापति रहा और उसने महाराजा डूंगरसिंह को सदा उत्तम सलाह देकर अपना कर्तव्य पालन किया। अपने ज्येष्ठ पुत्र बीकानेर के स्वामी महाराजा डूंगरसिंह का केवल ३३ वर्ष की आयु में वि० सं० १९४४ (ई० स० १८८७) में परलोकवास हो जाने का उसके शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ा और उसी वर्ष एक मास के अनन्तर आश्विन वदि १४ (ता० १६ सितंबर) को ५६ वर्ष की अवस्था में उसका देहांत हो गया। पितृभक्त महाराजा डूंगरसिंह ने अपने जीवन-काल में बीकानेर से ३ मील दूर शिववाड़ी और वहां उसके नाम पर लालेश्वर का सुंदर शिवमंदिर बनवाकर वि० सं० १९३७ (ई० स० १८८०) में उसकी प्रतिष्ठा की थी। वर्त्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी ने राजधानी में करोड़ों रुपये की लागत का विशाल महल बनवाकर महाराज लालसिंह की स्मृति को चिरकाल तक जीवित रखने के लिए अपनी अनन्य पितृभक्ति-वश उसका नाम लालगढ़ रक्खा और उसकी सफ़ेद संगमर्मर की भव्य प्रतिमा बनवाकर वहां स्थापित की, जिसका उद्घाटन भारत के भूतपूर्व वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज ने ई० स० १९१५ ता० २४ नवंबर (वि० सं० १९७२ मार्गशीर्ष वदि ३) को किया था। महाराज लालसिंह के पीछे कोई संतान नहीं थी; क्योंकि उसके दोनों पुत्र क्रमशः बीकानेर के स्वामी हो चुके थे, इसलिए उसकी पत्नी की इच्छानुसार वर्त्तमान महाराजा साहब ने अपने छोटे महाराजकुमार विजयसिंह (स्वर्गवासी) को उसके यहां पर गोद दे दिया था।

(२) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० १४७।

पिछले कई वर्षों से भाद्रा और चूरू के ठाकुरों ने राज्य के विरोधी बनकर अपराधियों को प्रत्यक्ष रूप से अपने यहां शरण देना आरंभ कर दिया था। यही नहीं वे अवसर मिलते ही दिन-दहाड़े लोगों को लूट लेने से भी न चूकते थे। महाराजा के लिखने पर एजेंट गवर्नर जेनरल ने उन्हें ऐसे कामों से रोका और भविष्य के लिए उनसे मुचलके लिखवा लिये[1]।

महाराजा का विद्रोही सरदारों के उपद्रव को शांत करना

बीकानेर से १२० मील उत्तर में जोधासर में जसाणा के ठाकुर मेघसिंह और कानसर के ठाकुर मानसिंह के आदमियों के बीच पंद्रह बीघे ज़मीन के लिए झगड़ा हो गया और दोनों तरफ़ के कुछ आदमी मारे गये। महाराजा ने अनुसन्धान करके अपराधियों को क़ैद तथा जुरमाने की सज़ा दी एवं भविष्य के लिए उनसे मुचलके लिखवा लिये[2]।

जसाणा और कानसर के ठाकुरों के बीच झगड़ा होना

कुछ समय पूर्व से ही बीकानेर के कतिपय ठाकुरों ने राज्य के विरुद्ध तीन प्रकार के मुक़दमे दायर किये थे—

सरदारों के मुकदमों का फ़ैसला होना

(१)—कुछ ठिकानेदारों के दावे को राज्य ने इस कारण से कि उनके पट्टे पर पिछले २३ वर्ष से लगाकर १०० वर्ष तक उनका अधिकार नहीं रहा, अस्वीकार कर दिया है।

(२)—कुछ ठिकानेदारों के जिनके दावे को राज्य ने स्वीकार तो किया है, परन्तु उनके गांव दूसरे ठाकुरों के अधिकार में आ गये हैं और ई० स० १८६९-७० (वि० सं० १९२६-२७) के दस-साला बन्दोवस्त के अनुसार राज्य ने उस कब्ज़े को स्वीकार कर लिया है।

(३)—वे ठिकानेदार, जिनके खालसा गांवों के सम्बन्ध के दावों को राज्य ने स्वीकार तो किया है; परन्तु अब तक उनके गांव नहीं

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६६७।

(२) वही; जि० ३, पृ० ६६९-७०।

दिये गये हैं।

उपर्युक्त तीन प्रकार के मुक़द्दमों में पहली संख्या में दिये हुए मुक़द्दमों के संबंध में महाराजा ने यह निर्णय किया कि राज्य उन ठाकुरों के गुज़ारे का प्रबंध कर देगा, जिनकी जागीरें पिछले २३ वर्षों से लगाकर १०० वर्ष के बीच में ज़ब्त हुई हैं। दूसरी संख्या में दिये हुए मुक़द्दमों के लिए यह तय हुआ कि दस-साला बंदोबस्त में हस्तक्षेप करना अनुचित है। इस अवधि के समाप्त होने पर उनका विचार किया जायगा। तीसरी संख्या में दिये हुए मुक़द्दमों का फ़ैसला महाराजा ने इस तरह किया कि उनके गांव उनको देकर सनदें कर दीं[1]।

फिर भी ठाकुर उपर्युक्त निर्णय से प्रसन्न न हुए और आबू पर एजेंट गवर्नर जेनरल के पास नालिश करने के लिए गये। ई० स० १८७४ (वि० सं० १९३१ ज्येष्ठ) के मई मास में महाराजा ने ठाकुरों के मुक़द्दमों की जांच और फ़ैसला करने के लिए एक कमेटी स्थापित की। महाराज लालसिंह, ठाकुर खंगारसिंह (सांखू), ठाकुर नाथूसिंह (भूकरका), रावत मूलसिंह (जेतपुर), ठाकुर हम्मीरसिंह (गोपालपुरा), जसवंतसिंह वैद, मानमल राखेचा और शाहमल कोचर उसके सदस्य निर्वाचित किये गये। किन्तु महाजन के ठाकुर अमरसिंह तथा अन्य कई ठाकुरों ने उस कमेटी के सम्मुख अपना दावा उपस्थित करने में अपना अपमान समझा। अतएव उस (अमरसिंह) का फ़ैसला स्वयं महाराजा ने किया और दूसरे कई ठिकानेदारों के फ़ैसले भी उसी ने किये, जिससे उनको संतोष हो गया[2]। कमेटी द्वारा ८० मुक़द्दमों का फ़ैसला किया गया, जिससे बहुत कुछ शिकायतें मिट गईं, परन्तु सरदारों का विरोध-भाव दूर न हुआ।

वि० सं० १९३१ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १८७४ ता० २४ सितम्बर) को महाराजा ने असिस्टेन्ट एजेंट गवर्नर जेनरल तथा अन्य

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० ६७०।

(२) वही; जि० ३, पृ० ६७०-७१।

महाराजा का कर्नल लिविस पेली से मुलाक़ात करने सांभर जाना

सम्मानित सरदारों आदि के साथ सांभर (जयपुर राज्य) के लिए प्रस्थान किया, जहां पर उसने ता० ५ अक्टोबर (आश्विन वदि १०) को तत्कालीन एजेंट गवर्नर जेनरल कर्नल सर लिविस पेली (Sir Lewis Peley) से मुलाक़ात की। एजेंट गवर्नर जेनरल ने महाराजा का बड़ा सम्मान किया और कई अच्छी सलाहें दीं, जिनका महाराजा के जीवन पर उत्तम प्रभाव पड़ा[1]।

सांभर से बीकानेर को लौटता हुआ महाराजा, कुचामन (जोधपुर राज्य) पहुंचा, जहां के ठाकुर केसरीसिंह ने महाराजा की राजोचित मेहमानदारी की। महाराजा का विचार उस समय अपने राज्य में दौरा कर राज्यव्यवस्था देखने का था, परंतु इसी बीच उदयपुर के महाराणा शंभुसिंह के परलोकवास होने का समाचार सुनकर उस (महाराजा) ने अपने दौरे का विचार स्थगित कर दिया और राजधानी को लौट गया। उन्हीं दिनों अलवर का महाराव राजा शिवदानसिंह भी गुज़र गया, जिसका महाराजा को बड़ा खेद हुआ। कई दिनों तक इन दोनों राजाओं की असामयिक मृत्यु का महाराजा ने अपने यहां शोक रक्खा। कचहरियों में तातीलें की गईं। एक महीने तक बाज़ार की दुकानें बंद रहीं। शोक के दिनों में मद्य मांस की बिक्री के साथ ही मज़दूरों के कार्य भी रोक दिये गये। राज्य में वर्ष भर तक जलसे, विवाह और त्योहारों की रस्में भी बंद रक्खी गईं[2]।

ई० स० १८७५ (वि० सं० १९३२) के अक्टोबर मास में बीदासर के प्रतिष्ठित महाजनों ने वहां के ठाकुर और उसके कार्यकर्त्ता रामबख़्श के विरुद्ध यह शिकायत पेश की कि उन्होंने कतिपय कुओं से हम को पानी लेने की रोक कर दी है; हमारे धार्मिक कृत्यों में बाधा दी जाती है; ऊंट तथा

बीदासर के महाजनों की शिकायतों की जांच कराना

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० ६४८।
(२) वही, जि० ३, पृ० ६४८।

गाड़ियां बेगार में पकड़ी जाती हैं; लेन-देन की वसूली में हानि पहुंचाई जाती है; महसूल बढ़ा दिये गये हैं और हमें हर तरह से कष्ट पहुंचाया जाता है एवं लूटेरे लोगों को चोरी तथा लूट खसोट के लिए उद्यत किया जाता है। फिर उपर्युक्त शिकायतों के कारण महाजन लोग वहां का निवास परित्याग कर लाडनूं (जोधपुर राज्य) में चले गये। महाजनों का इस प्रकार तंग होकर बीकानेर राज्य को छोड़ देना महाराजा को बहुत ही अनुचित जान पड़ा और उसने उनकी शिकायतों की तहक़ीक़ात का हुक्म दिया, जिससे कई महाजन फिर आकर बस गये। इसी प्रकार भूकरका, सांखू और जैतपुर के ज़मींदारों ने भी वहां के ठाकुरों के विरुद्ध शिकायतें कीं, जिनकी महाराजा ने तहक़ीकात करवाकर उचित फ़ैसला किया। फ़लतः महाराजा के लगातार दबाव डालने पर सरदारों के पट्टे में बसनेवाली प्रजा पर ज़्यादतियों का होना बहुत कुछ कम हो गया और महाराजा ने सरदारों को भी अपने अपने ठिकानों में प्रजा के साथ दस-साला बन्दोबस्त, जैसा कि राज्य ने ई० स० १८६९ (वि० सं० १९२६) में सरदारों के साथ किया था, करने की आज्ञा दी। महाराजा की इन न्यायोचित आज्ञाओं का प्रभाव यह हुआ कि राज्य और सरदारों के बीच का बहुतसा मनमुटाव उस समय प्रायः एक दम नष्ट हो गया[1]।

महाराव हरिसिंह को कौंसिल का सदय बनाना

कौंसिल के एक सदस्य धनसुखदास कोठारी की ई० स० १८७२ ता० १३ अक्टोबर (वि० सं० १९२९ आश्विन सुदि १२) को मृत्यु हो गई थी, जिससे उसका स्थान रिक्त था। ई० स० १८७५ के दिसम्बर (वि० सं० १९३२) में महाराजा ने उक्त स्थान पर महाराव हरिसिंह (हिन्दूमल का पुत्र) को नियत किया[2]।

भूतपूर्व महाराजा सरदारसिंह का गया श्राद्ध करना महाराजा को अभीष्ट था, इसलिए उसी वर्ष के नवम्बर मास में उसने असिस्टेन्ट एजेंट

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० ६७२।

(२) वही; जि० ३, पृ० ६४६-९।

महाराजा का तीर्थयात्रा के लिए जाना

गवर्नर जेनरल तथा राज्य के सरदारों और मुत्सद्दियों के साथ तीर्थयात्रा के लिए प्रस्थान किया। सांभर से रेल-द्वारा दिल्ली, सहारनपुर और रुड़की होता हुआ वह हरिद्वार पहुंचा; जहां उसने विधिपूर्वक धार्मिक कृत्यों को पूरा किया। तदनन्तर मथुरा, हाथरस, प्रयाग और काशी होता हुआ वह गया पहुंचा, जहां उसने बड़ी श्रद्धा से महाराजा सरदारसिंह का श्राद्ध किया। फिर महाराजा वैद्यनाथ धाम गया और वहां से लौटकर काशी, अयोध्या, लखनऊ तथा कानपुर होता हुआ ई० स० १८७६ ता० २१ जनवरी (वि० सं० १९३२ माघ वदि १०) को वह आगरे पहुंचा जहां राजपूताना के एजेंट गवर्नर जेनरल ने रेल्वे स्टेशन पर आकर उसका स्वागत किया[१]।

महाराजा की यह यात्रा रेल-द्वारा हुई थी, जिससे सफ़र में तकलीफ़ नहीं हुई और समय का भी पूरा बचाव हुआ। इस यात्रा में जहां-जहां वह गया, उसकी बड़ी ख़ातिरदारी हुई। अंग्रेज़ी अमलदारी के समुन्नत शहर, बड़े-बड़े कारखाने, सुंदर इमारतें, गंगा, यमुना आदि नदियों के पुल, नल, बिजली और शहरों की सफ़ाई तथा पुलिस आदि का प्रबन्ध देखकर उसको बड़ा अनुभव एवं प्रसन्नता हुई। रुड़की का इंजीनियरिंग कॉलेज, सहारनपुर का सरकारी घोड़ों का अस्तबल और प्रयाग का शस्त्रागार देखकर तो वह प्रफुल्लित हो गया। अंग्रेज़ी इलाक़े में होनेवाली उन्नति का उसके हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा और रेल्वे-द्वारा होनेवाले लाभ भी उसको इसी समय जान पड़े एवं यहीं से उसको अपना राज्य समुन्नत करने की लगन पैदा हुई[२]।

उन्हीं दिनों श्रीमती क्वीन विक्टोरिया का ज्येष्ठ राजकुमार प्रिंस ऑव् वेल्स (स्वर्गीय सम्राट् एडवर्ड सप्तम) भारत भ्रमण को आया हुआ था और ता० २५ जनवरी को उक्त राजकुमार का आगमन

(१) मुंशी ज्वालासहाय, वक़ाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६५०-१।

(२) वही; जि० ३, पृ० ६५१।

आगरे में श्रीमान् प्रिंस ऑव् वेल्स से मुलाक़ात होना

आगरे में होनेवाला था। अतएव महाराजा ने राजकुमार की मुलाकात के लिए कुछ दिनों तक आगरे में अपना निवास रक्खा। ई० स० १८७६ ता० २५ जनवरी (वि० सं० १९३२ माघ वदि १४) को जब राजकुमार स्पेशल ट्रेन-द्वारा आगरे पहुंचा, तब महाराजा भी अंग्रेज़ अफ़सरों, राजा-महाराजाओं आदि के साथ राजकुमार के स्वागत में सम्मिलित हुआ। ता० २६ जनवरी (माघ वदि ३०) को महाराजा अपने सरदारों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों के साथ राजकुमार की मुलाक़ात के लिए, उसके निवास-स्थान पर गया, जहां राजकुमार ने उस (महाराजा) का उचित सम्मान किया। फिर दूसरे दिन माघ सुदि १ (ता० २७ जनवरी) को स्वयं राजकुमार ने महाराजा के निवास-स्थान पर आकर उससे मुलाक़ात की। इस अवसर पर महाराजा का संयुक्त प्रदेश के लेफ्टिनेंट-गवर्नर से भी मिलना हुआ और उसकी तरफ़ से जो राजकीय-भोज दिया गया, उसमें भी वह (महाराजा) सम्मिलित हुआ एवं भोज के समय होनेवाली रीतियों को देखकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। वहीं महाराजा की बूंदी के महाराव राजा रामसिंह और कृष्णगढ़ के महाराजा पृथ्वीसिंह आदि से, जो राजकुमार की मुलाक़ात के लिए आये हुए थे, मुलाकात हुई[1]।

इसी वर्ष गद्दी के दूसरे असफल हक़दार खड्गसिंह आदि ने कतिपय दुष्ट मनुष्यों की सम्मति से महाराजा को विष प्रयोग-द्वारा मरवा डालने का प्रयत्न किया, परन्तु ठीक समय पर रहस्योद्घाटन हो गया, जिससे सब षड्यन्त्रकारी पकड़ लिये गये और जांच के बाद उनको क़ैद की सज़ा दी गई।

महाराजा पर विष प्रयोग का प्रयत्न

इस अनुचित कार्य में महाजन के ठाकुर अमरसिंह का भी हाथ था, अतएव उसका पट्टा छीनकर उसके ज्येष्ठ पुत्र रामसिंह को दे दिया गया और वह (अमरसिंह) नज़रबन्द कर दिया गया[2]।

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना, जि० ३, पृ० ६४६-५१।
(२) वही, जि० ३, पृ० ६५२, ६७३।

ई० स० १८७६ ता० २२ दिसंबर (वि० सं० १९३२ पौष सुदि ६) को प्रस्थान कर महाराजा ई० स० १८७७ ता० २९ जनवरी (वि० सं० १९३३ माघ सुदि १५) को कच्छ की राजधानी भुज पहुंचा, जहां उसने ता० २ फ़रवरी (फाल्गुन वदि ५) को महाराव प्रागमल की पुत्री से विवाह किया। वहां से महाराजा द्वारिका की यात्रा को गया[1]।

कच्छ में महाराजा का विवाह होना

उसी वर्ष श्रीमती महाराणी विक्टोरिया के क़ैसरे हिन्द (Empress of India) की उपाधि धारण करने के उपलक्ष्य में हिन्दुस्तान के वाइसरॉय और गवर्नर जेनरल लॉर्ड लिटन ने ई० स० १८७७ ता० १ जनवरी (वि० सं० १९३३ माघ वदि २) को दिल्ली में एक बड़ा दरबार करना निश्चित किया और उसमें सम्मिलित होने के लिए सब राजा-महाराजाओं तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों के पास निमंत्रण भेजे गये। उन दिनों महाराजा का विवाह कच्छ में होनेवाला था, इसलिए दरबार के कुछ दिनों पूर्व ही वह कच्छ को रवाना हो गया, जिससे वह स्वयं इस दरबार में सम्मिलित नहीं हो सका। सरकार ने उसके लिए इस दरबार की स्मृति में एक झंडा भेजा, जिसको महाराजा ने बीकानेर में एक बड़ा दरबार कर ग्रहण किया।

दिल्ली दरबार के उपलक्ष्य में महाराजा के पास झंडा आना

कप्तान बर्टन ई० स० १८७१ से ७८ (वि० सं० १९२८-३५) तक बीकानेर राज्य का पोलिटिकल अफसर रहा। फिर उसकी बदली होने पर कप्तान मॉर्टली की वहां नियुक्ति हुई, जिसे शांतिप्रिय प्रजा पर कार्य-कर्त्ताओं-द्वारा ज़ुल्म होने का पता लगा। उसने महाराजा से इसकी शिकायत की। उन दिनों बीदावत दौलतसिंह, तंवर जीवराजसिंह, दारोगा काशीराम आदि महाराजा के सलाहकार थे। उनमें से कोई पुलिस का अधिकारी था तो कोई मंडी (कस्टम, चुंगी) का। अहलकार सब अपना-अपना गरोह बनाकर मतलब बनाते थे और प्रधान मंत्री महाराव हरिसिंह के प्रबन्ध में दख़ल देने से भी न

शासन सुधार का असफल प्रयत्न

(१) मुंशी ज्वालासहाय, वक़ाये राजपूताना; जि० ३, पृ० ६९३-४।

चूकते थे। इससे शासन-कार्य में अव्यवस्था हो जाती थी। महाराजा ने इस अव्यवस्था को मिटाना चाहा, पर शीघ्र ही सरदारों की रेख का एक नया बखेड़ा खड़ा हो गया, जिससे महाराजा को अपनी सारी शक्ति उधर लगानी पड़ी, जिसका वर्णन आगे किया जायगा। फलतः महाराजा उस समय शासन-सुधार में सफल न हो सका और वह अव्यवस्था बहुत समय तक बनी रही।

काबुल की दूसरी लड़ाई मे अंग्रेज सरकार की सहायता करना

ई० स० १८७८ (वि० सं० १९३५) में रूस के दूत के अफ़ग़ानिस्तान में पहुंचने पर वहां के अमीर (शेरअली) ने उसका बड़ा सत्कार किया। अफ़ग़ानिस्तान में रूस का प्रभाव बढ़ने की आशंका होने से भारत के वाइसरॉय लॉर्ड लिटन के आदेशानुसार सर नेविल चेम्बरलेन भी अली मसजिद में उपस्थित हुआ और उसने अफ़ग़ान सरकार से खैबर के दर्रे से गुज़रने की आज्ञा मांगी, ताकि वह काबुल के अमीर के पास जाकर इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के विचार उससे प्रकट करे, परन्तु उसे आज्ञा न दी गई, जिससे उसे पीछा लौट आना पड़ा। इस खुल्लम-खुल्ला इनकारी के फलस्वरूप युद्ध अवश्यंभावी हो गया। अफ़ग़ानों के साथ इससे पूर्व भी अंग्रेज़ सरकार की एक लड़ाई हो चुकी थी। अब ई० स०, १८७८ ता० २१ नवम्बर (वि० सं० १९३५ मार्गशीर्ष वदि १२) को उसकी पुनरावृत्ति हुई[1]। उस समय महाराजा ने ता० २६ नवम्बर (मार्गशीर्ष सुदि ३) को जो खरीता राजपूताने के एजेंट गवर्नर जेनरल मेजर ब्रेडफ़ोर्ड के नाम भेजा, उसमें अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से लड़ने के लिए अपनी सारी सेना उस युद्ध में भेजने की इच्छा प्रकट की। सेना की आवश्यकता न होने के कारण अंग्रेज़ सरकार ने इसके लिए तो इनकार कर दिया, परन्तु कुछ ऊंट उसे भेजने के लिए लिखा। महाराजा ने अविलंब प्रबंध करके ८०० ऊंट अंग्रेज़ों की सहायतार्थ भेज दिये[2]।

(१) स्मिथ, ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑव् इंडिया; पृ० ७४२।

(२) अर्सकिन, गैज़ेटियर ऑव् बीकानेर, पृ० ३२८।

बीकानेर राज्य में लूणकरणसर, छापर आदि मे नमक बनाने के कारखाने थे। ई० स० १८७९ (वि० सं० १९३६) में उन कारखानों में बनाये जानेवाले नमक का तौल निर्धारित करने और अपने यहां का नमक उक्त राज्य में खपाने के लिए अंग्रेज़ सरकार का महाराजा के साथ नीचे लिखी शर्तों का इक़रारनामा हुआ[1]—

अंग्रेज सरकार के साथ नमक का समझौता होना

पहली—महाराजा इक़रार करते हैं कि लूणकरण और छापर के नमक के कारखानों के अतिरिक्त राज्य के अन्य किसी स्थान में नमक न बनाया जायगा और ऐसे दूसरे सभी कारखाने यदि किसी का अस्तित्व होगा तो वे बन्द कर दिये जायंगे।

दूसरी—महाराजा इक़रार करते हैं कि शर्त एक में लिखे हुए दोनों कारखानों में नमक की कुल पैदावार एक वर्ष में ३०००० अंग्रेज़ी मन से अधिक न होगी और प्रत्येक की पैदावार का ब्यौरा प्रतिवर्ष अंग्रेज़ सरकार के पास पेश किया जायगा।

तीसरी—महाराजा ऐसे सभी नमक का, जो अंग्रेज़ सरकार-द्वारा कर लगाये हुए नमक से भिन्न है, अपने राज्य में आयात और निर्यात रोकने का इक़रार करते हैं।

चौथी—जिस नमक पर अंग्रेज़ सरकार कर ले चुकी है उसपर बीकानेर राज्य में किसी प्रकार की राहदारी न ली जायगी।

पांचवीं—श्रीमान् महाराजा अपने राज्य से अंग्रेज़ी अमलदारी में भांग, गांजा, शराब, अफ़ीम अथवा अन्य कोई नशीला पदार्थ या उनसे बनी हुई वस्तु का निर्यात रोकने का इक़रार करते हैं।

छठी—इस इक़रारनामे की शर्त १, २ और ३ को पूरी तरह से पालन करने, शर्त १ में लिखे हुए कारखानों की वृद्धि और ग़ैर क़ानूनी नमक का बनाना और उसका निर्यात रोकने में जो ख़र्चा श्रीमान् महाराजा लगेगा, उसके बदले में अंग्रेज़ सरकार उन्हें प्रतिवर्ष ६००० रुपया

(१) ट्रीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० २१३-५।

देने का इक़रार करती है।

सातवीं—महाराजा को प्रतिवर्ष फलोधी और डीडवाणा के नमक के कारखाने से अपने राज्य के लोगों के इस्तेमाल के लिए बीस हज़ार अंग्रेज़ी मन नमक, जिसका मूल्य आठ आने प्रति मन से अधिक न होगा, खरीदने की आज्ञा देने का अंग्रेज़ सरकार इक़रार करती है।

जहां तक संभव हो सकेगा नमक उपर्युक्त कारखानों से निम्न-लिखित परिमाण में दिया जायगा—

फलोधी से	... ...	१५००० मन।
डीडवाणा से	... ...	५००० मन।

इस प्रकार खरीदे हुए उन कारखानों से दिये जानेवाले नमक पर जो प्रचलित कर की दर होगी उसकी आधी ली जायगी।

आठवीं—यदि इस इक़रारनामे के होने तक बीकानेर राज्य में नमक का बड़ा संग्रह होना प्रमाणित होगा और यदि अंग्रेज़ सरकार की ऐसी अभिलाषा होगी तो महाराजा को ऐसे संग्रह को अपने अधिकार में कर लेना होगा। इस सम्बन्ध में या तो वह नमक के मालिकों को यह सुविधा देंगे कि वे उसे उचित मूल्य पर, जो महाराजा पोलिटिकल एजेंट के परामर्श से निर्धारित करें, अंग्रेज़ सरकार को दे दें, अथवा वे उस नमक के लिए उपर्युक्त एजेंट को कर चुका दें। यह कर दो रुपये आठ आने मन से अधिक न होगा और श्रीमान् वाइसरॉय उसे निर्धारित करेंगे। उपर्युक्त मालिकों के दूसरा मार्ग स्वीकार करने पर, उन्हें निर्धारित कर चुकाने पर नमक रखने का अधिकार रहेगा, अन्य अवस्था में नहीं।

नवीं—यह साबित होने की दशा में कि बीकानेर राज्य-द्वारा अंग्रेज़ सरकार की आमदनी की रक्षा के निमित्त किये गये इस इक़रारनामे की शर्तें पर्याप्त नहीं है अथवा उस दशा में जब कि अंग्रेज़ सरकार को सन्तोष जनक रूप से यह प्रमाणित हो जाय कि पहली शर्त में लिखे हुए नमक के कारखानों को रोकने, कम करने अथवा उनके बन्द हो जाने के कारण बीकानेर के लोगों के काम में आनेवाले नमक की मिक़दार इक़रार-

नामा होने के बाद बढ़ गई है यह इक़रारनामा पलटा जा सकेगा।

दसवीं—यह इक़रारनामा अंग्रेज़-सरकार-द्वारा निश्चित की हुई तारीख़ से कार्य में लाया जायगा।

यह इक़रारनामा ता० २४ जनवरी ई० स० १८७९ (फाल्गुन वदि ३० वि० सं० १९३५ को लिखा गया और ता० ८ मई को मंजूर हुआ।

सरदारों की रेख में वृद्धि होना

पहले पट्टेदार घुड़-सवार, ऊंट सवार और पैदलों से राज्य की सेवा करते थे; किन्तु महाराजा सरदारसिंह के समय घुड़-सवार, ऊंट-सवार तथा पैदल के एवज़ नकद रक़म लेना स्थिर हुआ। ई० स० १८६८ (वि० सं० १९२५) में सरदारों में से महाजन, सीधमुख, जसाणा और बाय के सरदारों ने वाइसरॉय तथा एजेंट गवर्नर जेनरल के यहां इस संबंध में शिकायत की तो कप्तान पाउलेट (एजेंट गवर्नर-जेनरल का असिस्टेंट) को इस विषय की जांच करने की आज्ञा हुई। फिर ई० स० १८६९ (वि० सं० १९२६) में महाराजा सरदारसिंह और ठाकुरों के बीच कप्तान पाउलेट तथा दीवान पं० मनफूल की विद्यमानता में समझौता हो गया। यह समझौता केवल दस वर्ष के लिए स्थिर हुआ और इसके बाद भविष्य में पंचायत-द्वारा रक़म बढ़ाना निश्चत हुआ।

उपर्युक्त व्यवस्था ई० स० १८७९ (वि० सं० १९३६) में समाप्त हुई, तो भी ई० स० १८८१ के अक्टोबर (वि० सं० १९३८ कार्तिक) मास तक उसमें कुछ भी फेर-फार न हुआ। फिर महाराजा ने इस विषय में ई० स० १८८१ ता० २६ अक्टोबर (वि० सं० १९३८ कार्तिक सुदि ४) के खरीते के द्वारा मेजर रॉबर्ट्स (एजेंट गवर्नर-जेनरल का असिस्टेंट) को सुजानगढ़ में सूचना दी कि मैं तब तक ई० स० १८६९ (वि० सं० १९२६) के प्रबंध पर क़ायम हूं, जब तक कि एक अंग्रेज़-अफसर राज्य की ज़मीन की हैसियत और लगान स्थिर न करे। उस (महाराजा) ने इस कार्य के लिए अंग्रेज़ सरकार से एक अंग्रेज़ अफ़सर भी मांगा। इस खरीते की एक प्रतिलिपि कर्नल-वाल्टर (स्थानापन्न एजेंट गवर्नर जेनरल) के पास भी भेजी गई, जिसने

उसके उत्तर में दरियाफ़्त किया—

(१) राज्य 'सेटिलमेंट ऑफ़िसर' को कितनी तनख़्वाह दे सकेगा?

(२) कितने समय तक उस ऑफ़िसर की आवश्यकता रहेगी?

(३) क्या ठाकुर अपने ठिकानों की पैमाइश कराना स्वीकार करेंगे?

मेजर रॉबर्ट्स ने महाराजा से दरियाफ़्त कर ई० स० १८८२ के जून (वि० सं० १९३९ आषाढ़) में एजेंट गवर्नर जेनरल को उत्तर दिया कि सब सरदारों को अपने ठिकानों की पैमाइश कराना स्वीकार है; किन्तु दरबार ने यह निश्चय किया है कि पहले एक देशी 'सर्वेयर' के द्वारा खालसे के हनुमानगढ़ ज़िले की पैमाइश कराई जावे। ई० स० १८८२ के जून (वि० सं० १९३९) में हनुमानगढ़ में यह कार्य आरंभ हुआ और अक्टोबर में ठाकुरों ने, जिनमें महाजन, बीदासर, भूकरका, रावतसर, सांखू, पूगल, बाय, सीधमुख, गोपालपुरा, सांडवा, जैतपुर, चाड़वास, अजीतपुरा आदि के बड़े-बड़े ठाकुर शामिल थे, यह दर्ख़्वास्त दी कि हमारे ठिकानों में पैमाइश न हो, क्योंकि हनुमानगढ़ में पैमाइश के समय वहां के लोगों को बड़ा कष्ट हुआ है। उन्होंने यह भी प्रार्थना की कि रेख के रुपये पहले के वर्षों की रेख की किताब और ज़मीन की पैदावार देखकर बढ़ाये जावें। यदि किसी को उज्र हो तो वह अपनी ज़मीन की पैमाइश करावे। अच्छा तो यह होगा कि पांच सरदार और मुसाहिब सम्मिलित होकर यह निश्चय करें कि हममें से प्रत्येक को क्या देना होगा। कुछ वादविवाद होने के पश्चात् महाजन, भूकरका, रावतसर, सीधमुख, जसाणा, बाय, सांखू, अजीतपुरा, जबरासर, जारिया, मैंदसर, पिरथीसर और खारबारा के ठाकुरों ने प्रसन्नता के साथ लिखित दस्तावेज़ के द्वारा स्वीकार किया कि इक्कीस वर्ष तक बढ़ाई हुई रेख हम देते रहेंगे। इसपर राज्य से सरिश्ते के अनुसार उपर्युक्त ठिकानेदारों को सनदें कर दी गई। फिर वे मेजर रॉबर्ट्स से मिले और उसके समक्ष उन्होंने स्वीकार किया कि हमें बढ़ाई हुई रक़म देना मंजूर है। दूसरे ताज़ीमी और छोटे ठाकुरों की रेख बढ़ाने के लिए एक पंचायत नियत हुई जिसमें चार बड़े-बड़े सरदार, ठाकुर रामसिंह (महाजन), रावत जोरावरसिंह

(रावतसर), ठाकुर नत्थूसिंह (भूकरका) और ठाकुर सुमेरसिंह (सांखू) सरदारों की तरफ़ से और चार अफ़सर राज्य की तरफ़ से नियत हुए। इस पंचायत ने दो मास तक काम किया और आगामी इकीस वर्ष तक प्रत्येक पट्टेदार को राज्य को रेख के कितने रुपये देने चाहियें यह निश्चय किया। पंचायत ने जो कुछ निश्चय किया, उसमें महाराजा ने कुछ भी हस्तक्षेप न कर उसे मंजूर कर लिया। इस पंचायत ने जिन २१२ ठिकानों में से २८ ताज़ीमी और १८४ छोटे ठाकुरों की रेखें नियत की, उनमें से १८० ठिकानेदार रेख बढ़ाई जाने के समय विद्यमान थे। ३२ पट्टेदार खास कारणों से उपस्थित न हो सके, जिनकी रक़म कमेटी ने निश्चितकर जब उन्हें सूचना दी तो उन्होंने कोई एतराज़ नहीं किया।

बीदावतों में दस ताज़ीमी और ६५ छोटे ठिकाने हैं। महाराजा सरदारसिंह के समय की भांति इस बार ताज़ीमी बीदावतों ने भी प्रत्येक को कितनी रक़म रेख की देनी चाहिये यह निश्चय कर लिया और महाराजा ने उस रक़म को कुछ कमी बेशी के साथ स्वीकार कर लिया। इस प्रकार राज्य और सरदारों के बीच रेख का मामला तय हो गया। नियमानुसार दरबार ने उनको सनदें भी दे दीं और उन्होंने स्वीकृति पत्र लिख दिये। बहुत से ठाकुरों ने, जिनमें महाजन और रावतसर के ठाकुर भी शामिल थे, अपनी रेख की पूरी रक़म जमा करवा दी तथा कितने एक ने आधी से अधिक रक़म भर दी। फिर पंचायत ने ई० स० १८८३ ता० ६ जनवरी (वि० सं० १९३९ पौष वदि १२) को अपना कार्य समाप्तकर उसकी कैफ़ियत मेजर रॉबर्ट्स के पास भेज दी।

ई० स० १८८३ के फ़रवरी (वि० सं० १९३९ फाल्गुन) के अन्त में कर्नल ब्रेडफोर्ड (एजेंट गवर्नर जेनरल) के बीकानेर जाने पर पंचायत में जो चार ठाकुर थे, वे उससे मिले। उन्होंने एजेंट गवर्नर जेनरल को सुझाया कि हमारी कार्यवाही उचित रूप से नहीं हुई है और हमारे हस्ताक्षर दबाव देकर कराये गये हैं। इसपर कर्नल ब्रेडफोर्ड ने इस सम्बन्ध में महाराजा से बातचीत की, तो महाराजा ने उत्तर दिया कि ठाकुरों के

हस्ताक्षर उचित रूप से बिना किसी दबाव के हुए हैं। उक्त कर्नल को महाराजा के इस उत्तर से संतोष हो गया और उसने इस मामले में हस्तक्षेप करना अनावश्यक समझा। तदनन्तर एजेंट गवर्नर जेनरल तो बीकानेर से लौट गया और महाराजा ने उन चारों सरदारों को अपने पास बुलवाया, परन्तु भूकरका के ठाकुर के अतिरिक्त अन्य तीनों सरदार महाराजा की आज्ञा पालन करने के बजाय देशणोक चले गये। वहां पर कुछ दूसरे ठाकुर भी उनसे जा मिले। देशणोक से वे लोग बीदासर, लाडनूं (मारवाड़) आदि की तरफ़ गये और उन्होंने बीकानेर में आने से इनकार कर दिया।

महाराजा ने आसकरण कोचर, ठाकुर दुलहसिंह और कविराजा भैंरूंदान आदि प्रतिष्ठित व्यक्तियों को भेजकर ठाकुरों को समझाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया, परन्तु इससे उनकी उत्तेजना घटने के स्थान में बढ़ती ही गई और उन्होंने अंग्रेज़-सरकार के पास शिकायत भेजना जारी रखा। इस प्रकार जब झगड़ा बढ़ता ही गया तो ई० स० १८८३ ता० ३० अगस्त (वि० सं० १९४० भाद्रपद वदि १३) को राज्य और ठाकुरों के बीच फ़ैसला कराने के लिए कप्तान टॉलबट की नियुक्ति हुई, जो पीछे से बीकानेर राज्य का पोलिटिकल एजेंट हो गया था। बीकानेर में पहुंचने पर कप्तान टॉलबट को महाराजा ने सारी परिस्थिति समझाई। फिर उसने देशणोक से विरोधी सरदारों को बुलवाकर समझाया, किन्तु उनका वही पुराना उज्र जारी रहा, जिससे कोई निर्णय न हो सका। यही नहीं, विरोधी सरदारों ने कप्तान टॉलबट से गुस्ताख़ी भी की और वे उक्त कप्तान के विरुद्ध होकर देशणोक को लौट गये। उस दिन इस विषम स्थिति पर महाराजा और कप्तान टॉलबट के बीच बड़ी देर तक वार्तालाप होता रहा। अंत में पुनः एक बार ठाकुरों को बुलवाकर समझाने की राय ही स्थिर रही। तदनुसार ठाकुर जीवराजसिंह तथा दुलहसिंह विरोधी ठाकुरों को लाने के लिए भेजे गये, परन्तु वे नहीं आये और उन्होंने राज्य के विरुद्ध आचरण करना ठान लिया।

देशणोक से विरोधी सरदार घूमते-फिरते बीदासर पहुंचे और वहां सलाह करने के उपरान्त अपने-अपने ठिकानों में जाकर सेना इकट्ठी करने लगे। उनमें से कुछ वाइसरॉय की सेवा में भी उपस्थित हुए, किन्तु बहुत समय से उन (ठाकुरों) का राजद्रोह करने का स्वभाव होने से वहां उनकी कोई भी बात नहीं सुनी गई। उधर महाजन में विरोधी सरदारों की पांच छः हज़ार सेना एकत्र हो गई और उन्होंने आवश्यकता के समय राज्य से मुक़ाबला करने का दृढ़ संकल्प कर लिया। इस अवस्था में राज्य सत्ता को स्थिर रखने के लिए सैन्य-द्वारा ठाकुरों की शक्ति क्षीण करने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय न रहा। निदान कप्तान टॉलबट की सम्मति के अनुसार महाराजा ने भाद्रपद सुदि १५ (ता० १६ सितम्बर) को ठाकुर हुकमसिंह (फ़ौजदार) तथा मेहता छत्रसिंह वेद की अध्यक्षता में राज्य की सेना महाजन पर रवाना की। इस सेना में पांच सौ सवार, एक हज़ार पैदल, एक शुतरनाल और दो तोपें थीं। महाजन के क़िले में उस समय वहां का ठाकुर रामसिंह तो नहीं था, परंतु उस (रामसिंह) के भाई वख़्तावरसिंह और भूपालसिंह, ठाकुर शिवनाथसिंह (जोगलिया) तथा अन्य निम्न श्रेणी के सरदार जमा थे। राज्य की सेना ने वहां पहुंचकर टीबों पर अपने मोरचे जमाये और उधर विरोधी सरदारों ने भी मोरचों को दृढ़ किया। इस समय विरोधी सरदारों को एक बार फिर समझाने का प्रयत्न किया गया। कई दिन तक समझौते की बात-चीत हुई और कप्तान टॉलबट ने भी सरदारों को बहुत कुछ लिखा, परंतु कोई परिणाम न निकला। राज्य की सेना दो मास तक महाजन पर घेरा डाले पड़ी रही, किन्तु लड़ाई नहीं हुई। तब अंग्रेज़ी इलाक़े में ठहरे हुए ठाकुर रामसिंह पर कप्तान टॉलबट ने बहुत दबाव डाला। इसपर उसने अपने भाइयों को क़िला ख़ाली कर राज्य को सौंपने के लिए लिख दिया। उस समय कप्तान टॉलबट भी महाजन पहुंच गया। निदान वख़्तावरसिंह, भूपालसिंह (महाजन का वर्तमान स्वामी) आदि महाजन का क़िला ख़ाली कर बीदासर के क़िले में चले गये, जहां अन्य सरदार एकत्रित थे। फलतः महाजन के क़िले पर

राज्य की सेना का अधिकार हो गया। अब बीदासर के क़िले से विरोधी सरदारों के एकत्रित बल को बिखेर देना आवश्यक समझा गया, परंतु वहां उनकी संख्या बहुत अधिक थी। अतएव कप्तान टॉलबट अंग्रेज़ी सैन्य लाने के लिए सुजानगढ़ को रवाना हुआ।

महाजन के क़िले पर अधिकार करने के पश्चात् राज्य की सेना तीन चार दिन तक वहां रही। बाद में केवल पैदल सेना की एक कंपनी हरिसिंह चौहान की अधीनता में वहां रक्खी गई और दो कंपनियां दीनदयाल तथा ज़ियाउद्दीन की अध्यक्षता में रावतसर एवं एक कंपनी जसाणा भेजी जाकर शेष सैन्य ने बीदासर की ओर प्रस्थान किया। मार्गशीर्ष वदि ११ (ता० २५ नवंबर) को राज्य की सेना ने बीदासर में पहुंच क़िले के चारों ओर मोर्चाबंदी कर ली। उस समय बीदासर के क़िले में ठाकुर रामसिंह (महाजन), रावत रणजीतसिंह (रावतसर), ठाकुर बहादुरसिंह बीदावत (बीदासर), ठाकुर मेघसिंह (जसाणा), ठाकुर हीरसिंह बीदावत (सांडवा), ठाकुर नाहरसिंह (सातूं), ठाकुर बीजराज (पृथ्वीसर) तथा अन्य कई सरदार अपनी-अपनी सेना सहित विद्यमान थे। राज्य की सेना पहुंचने के पूर्व ही सुजानगढ़ से कप्तान टॉलबट अंग्रेज़ी सेना के साथ बीदासर पहुंच गया था, परन्तु सरदारों के और उसके बीच कुछ कहा-सुनी हो गई, जिससे वह राज्य की सेना के आने के पहले ही बीदासर से अंग्रेज़ी सेना को लेकर पीछा सुजानगढ़ चला गया और पूरे समाचार की रिपोर्ट कर्नल ब्रेडफोर्ड के पास भेजकर उसने सरदारों को दबाने के लिए एक बड़ी सैन्य की आवश्यकता बतलाई।

बीदासर को राज्य की सेना दो महीने तक घेरे रही, परन्तु वहां भी कोई लड़ाई नहीं हुई। इसी बीच ठाकुर नाहरसिंह तथा बीजराज राज्य की सेना से आकर मिल गये। उधर कर्नल ब्रेडफोर्ड, कप्तान टॉलबट की रिपोर्ट पहुंचने पर अंग्रेज़ी सेना तथा तोपख़ाने के साथ सुजानगढ़ की तरफ़ आगे बढ़ा और स्वयं महाराजा ने भी बीकानेर से सुजानगढ़ को प्रयाण किया। जब विरोधी सरदारों ने इतनी तैयारियां देखीं तो वे भयभीत

हो गये और उन्होंने मार्ग में महाराजा से भेंट कर इस सम्बन्ध में वातें कीं; पर उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान न दिया गया। फिर वे सव सुजानगढ़ से दो कोस की दूरी पर एजेन्ट गवर्नर जेनरल की सेवा में उपस्थित हुए, पर विना कोई वात किये सवके सव गिरफ़्तार कर लिये गये। फिर जव क़िला ख़ाली करने के लिए उनसे कहा गया तो उन्होंने तुरंत उस आज्ञा का पालन किया जिससे राज्य का वीदासर के किले पर अधिकार हो गया। कुछ समय वाद सुजानगढ़ से सफ़र मैना की फ़ौज ने जाकर वि० सं० १६४० पौष सुदि १० (ई० स० १८८४ ता० ८ जनवरी) को वह किला उड़ा दिया। रावत रणजीतसिंह (रावतसर) और हीरसिंह (सांडवा) को महाराजा ने सिफ़ारिश करके छुड़ा लिया, क्योंकि वे दिल से राज्य के अहित चिंतक न थे और शेष सरदार देवली की छावनी में पांच वरस के लिए भेज दिये गये तथा उनकी जागीरें उनके उत्तराधिकारियों के नाम कर दी गई। जिस रेख के लिए यह वखेड़ा खड़ा हुआ था वह पहले से सवाई और ड्योढ़ी नियत हुई[1]।

राज्य में शासन सुधार

विरोधी सरदारों के दमन के उपरान्त राज्य में फैली हुई अव्यवस्था को दूर करने का प्रयत्न किया गया। कप्तान टॉलवट वीकानेर का स्थायी रूप से पोलिटिकल एजेन्ट नियुक्त हुआ। उसने राज्य के कार्यकर्त्ताओं की मनमानी की ओर महाराजा का ध्यान आकर्षित किया। उसी के परामर्शानुसार महाराजा ने धीरे-धीरे राज्य प्रवन्ध में वहुत सुधार किये, जिससे राजा और प्रजा दोनों का हित हुआ। एक प्रकार से राज्य का सारा कार्य दीवान ही के द्वारा संचालित होता है इसलिए कप्तान टॉलवट की सम्मति से महाराजा ने कच्छ के अमीमुहम्मद को दीवान वनाया और स्वार्थी अहलकारों को हटाकर उनकी जगहों पर वाहर से योग्य व्यक्ति वुलाकर रक्खे गये।

उस समय तक दीवानी या फ़ौजदारी मुकदमों के फ़ैसले के लिए तहसील ही एकमात्र अदालत थी। इससे प्रजा को न्याय प्राप्त करने में

(१) सोहनलाल, तवारीख़ वीकानेर; पृ० २२२-६।

बड़ी अड़चनें होती थीं। महाराजा ने प्रजा की सहूलियत के लिए अलग-अलग चार न्यायालय स्थापित कर दिये। मुकदमों की जांच के लिए क़ायदे बनाये गये और दंडनीय जुर्मों की एक सूची तैयार की गई। प्रारम्भ में ज़नाना पट्टे तथा दूसरे पट्टेदारों को दीवानी, फ़ौजदारी व माल के हक़ प्राप्त थे। नये प्रबन्ध में उनसे ये हक छीनकर प्रत्येक पट्टे के गांव निकटतम न्यायालय के अधीन कर दिये गये। ठगी, डकैती आदि की उचित व्यवस्था की गई और थानों का सुप्रबन्ध किया गया। थानेदारों की निगरानी के लिए गिरदावर मुक़र्रर किये गये।

वि० सं० १६४१ (ई० स० १८८४) में चुंगी के महकमे का उचित प्रबन्ध किया गया और उस सम्बन्ध में नये क़ायदे-क़ानून अमल में लाये गये[1]। उसी वर्ष बीकानेर में डाकखाना खोला गया तथा स्थान स्थान पर मदरसों और अस्पतालों की स्थापना हुई।

वि० सं० १६४२ (ई० स० १८८५) में खालसा गांवों की समुचित व्यवस्था का प्रबन्ध किया गया। भूमि की माप करके वहां के चौधरियों के साथ लगान की रक़म निश्चित हुई और जो अलग-अलग कर लगते थे उन्हें बन्द करके, किसानों आदि पर नक़द रक़म लगाई गई।

राज्य के सवारों तथा पैदलों का वेतन बहुत कम था, इससे जो सवार अथवा राज्य का कर्मचारी गांव में रकम वसूल करने जाता, वह वहां के निवासियो से मुफ्त भोजन वसूल करता था। इस प्रथा को रोकने के लिए ऐसे कर्मचारियों के वेतन बढ़ा दिये गये। पहले खुराक देने के बदले में ज़मींदार कुछ ज़मीन दबा लेते थे, अब ऐसा करना रोक दिया गया,

---

(१) चुंगी के नवीन प्रबंध के समय देशणोक के चारण इस कर को देने से इनकार करने लगे और देशणोक छोड़कर चले गये। तब महाराजा ने राणासर के ठाकुर और कविराजा भैरूंदान को उन्हें समझाने के लिए भेजा, जिसपर चारण लोग बीकानेर पहुंचे। फिर उन्होंने महाराजा की आज्ञा का पालन कर चुंगी देना स्वीकार कर लिया। इसपर महाराजा ने देशणोक के चारणों को छः हज़ार रुपये वार्षिक राज्य से मिलते रहने का हुक्म दिया, क्योंकि प्रारभ से ही ये लोग इस कर से मुक्त थे।

कुछ लोगों को राज्य की तरफ़ से अन्न और नक्द भी मिला करता था, वह बन्द करके उनका निश्चित वेतन नियत कर दिया गया।

वि० सं० १९४३ (ई० स० १८८६) में बीकानेर के क़िले में बिजली लगाई गई[1]।

फ़ज़ूल-खर्ची तथा राज्य के कर्मचारियों की मनमानी के कारण राज्य पर बहुत ऋण हो गया था, जिसका चुकाना बहुत आवश्यक था।

राज्य का ऋण चुकाना

इसलिए महाराजा ने एजेंट की सलाह से उक्त ऋण के सम्बन्ध में जांच करने के लिए एक कमेटी मुक़र्रर कर दी। इस कमेटी के सामने कुल ३९६३९८७ रुपये के दावे पेश हुए। कमेटी ने पूरी तौर से जांच करके उसमें से व्याज की बेजा बढ़ाई हुई रक़म घटाकर केवल ७०४७६६ रुपये कर्ज़ की वाजिब रक़म ठहराई। उसकी अदायगी के लिए यह तय हुआ कि रक़म कुछ किश्तों में चुकाई जाय अथवा यदि महाजन उसी समय लेना चाहें तो एक रुपया सैंकड़ा की कटौती कर उन्हें रुपये दे दिये जाय। महाजनों ने उसी समय रुपये लेना स्वीकार किया अतएव उपर्युक्त कटौती करके उनके रुपये चुका दिये गये। भविष्य के लिए आमदनी और खर्च का नकशा बनाकर ख़र्च करना निश्चित हुआ और राज्य में होनेवाले अनावश्यक ख़र्चे बन्द कर दिये गये[2]।

सरदारों तथा कुछ अन्य लोगों को ई० स० १८३९ (वि० सं० १८९६) से यह शिकायत थी कि हमारे कुछ गांव दरबार ने अकारण

ठाकुरों के ज़ब्त गावों का फ़ैसला होना

ज़ब्त करके खालसा कर लिये हैं। बीकानेर के पोलिटिकल एजेंट ने ऐसे मुक़दमों की निष्पक्ष जांच के लिए एक कमेटी बना दी। इस कमेटी ने कई मास परिश्रम करके ऐसे दावों की जांच की और उनका उचित फ़ैसला कर दिया। कुल १५५ दावों में से ११९ राज्य के पक्ष में हुए और शेष ३६ ठाकुरों के[3]।

(१) सोहनलाल, तवारीख़ बीकानेर, पृ० २२९।

(२) वही, पृ० २२८।

(३) वही; पृ० २२९।

महाराजा को इमारतें बनवाने का बहुत शौक़ था। उसने बीकानेर के क़िले के प्राकार का जीर्णोद्धार करवाया और सोहन बुर्ज, सुनहरी बुर्ज, चीनी बुर्ज तथा गणपतिनिवास, लालनिवास, सरदारनिवास, गंगानिवास, शक्तिनिवास आदि महल बनवाये। उसने देवीकुंड पर महाराज छत्रसिंह के नाम पर गिरिधर, दलेलसिंह के नाम पर बद्रीनारायण, शक्तिसिंह के नाम पर गोपाल, अपनी माता जुहारकुंवरी के नाम पर गणेश, विमाता प्रतापकुंवरी के नाम पर सूर्य और अपने ज्येष्ठ भ्राता गुलाबसिंह की स्मृति में गुलाबेश्वर का मंदिर बनवाया। इनके अतिरिक्त उसने हरिद्वार में गंगा, काशी में डूंगरेश्वर और द्वारिका में मुरलीमनोहर का मंदिर बनवाया। उपर्युक्त तीनों मंदिरों के बनवाने में महाराजा ने पच्चीस-पच्चीस हज़ार रुपये व्यय किये और प्रत्येक मंदिर के व्यय के लिए ७५००० रुपये के हिसाब से सवा दो लाख रुपये निकालकर अलग रख दिये और उसके सूद से इन मंदिरों का व्यय चलाने की व्यवस्था की। महाराजा डूंगरसिंह ने अपने पूर्वाधिकारी महाराजा सरदारसिंह की सुंदर छत्री बनवाई तथा अन्य स्मारक छत्रियों का जीर्णोद्धार करवाया। महाराजा ने अपने पिता लालसिंह के नाम पर शिवबाड़ी में लालेश्वर का सुंदर शिव-मंदिर तथा लक्ष्मीनारायण का मंदिर बनवाकर वि० सं० १९३७ (ई० स० १८८०) में उनकी प्रतिष्ठा की, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। उसने अपने नाम पर डूंगरगढ़ बसाया था।

महाराजा के बनवाये हुए महल और देवस्थान

वि० सं० १९४४ (ई० स० १८८७) में महाराजा बीमार हो गया। रोग अधिक बढ़ने पर दिल्ली से प्रसिद्ध हक़ीम महमूदखां इलाज के लिए बुलाया गया, पर कोई लाभ न हुआ। फिर महाराजा वायु परिवर्त्तन के लिए गजनेर गया, पर वहां पहुंचने पर उसकी तबीयत बहुत ख़राब हो गई, जिससे वहां से लौटना भी कठिन हो गया। महाराजा को यह आभास हो गया था कि इस बीमारी से मेरा बचना असंभव है, अतः उसने अपनी जीवित अवस्था में ही

महाराजा का परलोकवास

उसने महाराणियों तथा अन्य आत्मीय जनों के लिए पृथक् धन दिये जाने की वसीयत लिख दी। उसके कोई संतान न थी, इसलिए उसने अपने छोटे भाई गंगासिंह (वर्तमान महाराजा साहब) को अपना उत्तराधिकारी निर्धारित कर इस संबंध में एक खरीता अंग्रेज़-सरकार के पास भेज दिया। गजनेर से बीकानेर लौटने पर महाराजा की दशा दिन-दिन बिगड़ती गई और उसी वर्ष भाद्रपद वदि ३० (ई० स० १८८७ ता० १९ अगस्त) को उसका स्वर्गवास हो गया।

महाराजा का व्यक्तित्व

महाराजा डूंगरसिंह दृढ़-चित्त, साहसी, न्यायी, विचारशील, ईश्वर-भक्त और निरभिमानी शासक था। कर्त्तव्य-परायणता, सहानुभूति आदि उसके गुणों के कारण बीकानेर के इतिहास में उसका नाम चिरस्मरणीय रहेगा। राजपूती जीवन की आभा उसके शरीर में पूर्ण रूप से विद्यमान थी। अपने पूर्वजों के समान वह भी उदार था, परंतु उसे अच्छे और बुरे आदमियों की पहिचान भी पूरी थी। वह गुणग्राहक था और विद्वानों का आदर कर उनको संतुष्ट करता था। बीकानेर राज्य में जो शासन सुधार हुए हैं, उनका सूत्रपात उक्त महाराजा के समय में ही हुआ था। न्याय से उसको पूरा प्रेम था, इसलिए उसके समय में दीवानी, फ़ौजदारी, माल आदि के क़ानून जारी हुए, जिससे प्रजा को बड़ी सुविधा हो गई और मनमानी कार्य-वाही मिट गई। प्रजा के सुख-दुःख की वह पूरी ख़बर रखता और यथा-साध्य उनके दुःखों को मिटाने की चेष्टा करता था। उसके पंद्रह वर्ष के शासन-काल में राज्य-कार्य मे बड़ा परिवर्त्तन हुआ और राज्य-कार्य व्यवस्था-पूर्वक होने लगा। महाराजा स्वयं राज्य-कार्य में परिश्रम करता एवं उसका अंतिम निर्णय विचारपूर्ण होता था। उसकी गद्दीनशीनी के आरंभ में राज्य की आय केवल छः लाख रुपये वार्षिक थी, जो, बड़ी कठिनाइयां होने पर भी, उसके समय में बढ़कर तिगुनी हो गई। प्रजा से माल का हासिल नक़द रुपये में लेने की व्यवस्था बीकानेर राज्य में उसके समय में ही हुई। सरकारी सवार आदि प्रजा से जो खुराक आदि वसूल करते थे, उसका

लिया जाना उसने बंद किया। चोरी और डाकों को बन्द करने के लिए उसने पुलिस तथा गिराई के महकमे स्थापित किये। राजकीय मुलाज़िमों के वेतन में वृद्धि कर उसने उनकी आय के अनुचित साधन बंद कर दिये। सरदारों की रेख पहले पैदावार के हिसाब से ली जाती थी, परंतु वास्तविक आय से बहुत थोड़ी रक़म सरदार लोग राज्य को देते थे। इसलिए महाराजा ने उनकी पैदावार के सही अंदाज़ से रेख रक़म लेना चाहा, जिसको अधिकांश सरदारों ने स्वीकार कर लिया; किन्तु बीकानेर के कुछ सरदारों को, जो सदा से निरंकुश थे, यह बात अप्रिय हुई और उन्होंने उपद्रव खड़ा कर दिया। इसपर भी महाराजा ने उदार नीति से काम लिया और उनके बखेड़े को समझाकर तय करना चाहा, परन्तु उपद्रवी और कलह-प्रिय सरदारों ने महाराजा की आज्ञा का पालन न किया। तब वे अंत में बंदी कर लिये गये। तो भी क्षमाशील महाराजा ने रावतसर और सांडवा के ठाकुरों का अपराध क्षमाकर अपनी महत्ता का परिचय दिया। महाराजा को विद्या से बड़ा प्रेम था, अतएव उसके समय में राजधानी के स्कूल में पर्याप्त उन्नति की गई और गांवों में भी कितने ही स्थानों में पाठशालाएं खोली गईं, जिनमें निःशुल्क शिक्षा दी जाने लगी। उसके राज्य-काल में अस्पताल और शफ़ाखानों में भी वृद्धि हुई। वह अंग्रेज़-सरकार का सदा मित्र बना रहा। जब काबुल में सरकारी सेना भेजी गई, तो महाराजा ने भी वहां अपनी सेना भेजने की इच्छा प्रकट की, पर वह स्वीकार न होने पर आठ सौ ऊंट उक्त मुहिम के अवसर पर अंग्रेज़-सरकार के पास भेज उसने कर्त्तव्य-पालन किया। इससे अंग्रेज़-सरकार भी उसका बड़ा सम्मान करती थी। फलतः सरदारों के उपद्रव के समय अंग्रेज़-सरकार ने भी उसकी कार्यवाही उचित समझ सैनिक सहायता देकर उपद्रव को शांत किया। बीकानेर राज्य में रेल, नहरें आदि लाने की योजनाएं भी उक्त महाराजा के समय में ही बनीं। प्रजाहित के कामों में महाराजा की बड़ी रुचि थी। उसके समय में राज्य में डाक का आना-जाना आरंभ हुआ और आवागमन के मार्ग निरापद बनाये गये। कितने ही नवीन कुंए और सरायें यात्रियों के लिए बनवाई

गई। महाराजा को सामाजिक सुधारों से भी पूरा अनुराग था, परन्तु प्रजा की प्रवृत्ति रुढ़िवाद की ओर अधिक होने के कारण वह अपने विचारों को कार्य रूप में परिणित न कर सका। महाराजा सूरतसिंह, रत्नसिंह और सरदारसिंह के समय से ही राज्य ऋण-ग्रस्त और खज़ाना खाली था। उक्त महाराजा ने पुराना सब ऋण चुकाकर राज्य के वैभव को बढ़ाया। लाखों रुपये इमारतों, देवस्थानों, यात्रा तथा अन्य कार्यों में व्यय करने पर भी जब उसका परलोकवास हुआ, उस समय उसने पर्याप्त निजी धन छोड़ा था, जिससे राज्य को रेल्वे आदि के कार्य में बड़ी सहायता मिली। राजधानी बीकानेर में जल का बड़ा अभाव था, जिससे लोगों को कष्ट होता था, अतएव उसने अनूपसागर (चौतीना) नामक कुएं मे नल लगाने की योजना की। उसने रोहड़िया चारण विभूतिदान को तीन गांव, ताज़ीम और कविराजा का ख़िताब दिया।

महाराजा का क़द लम्बा, रंग गेहुंवा, चेहरा सुंदर और शरीर बलिष्ट था। वह निशाना लगाने में सिद्धहस्त और अश्वारोहण में निपुण था।

दसवां अध्याय

महाराजा सर गंगासिंहजी



श्रीमान् जेनरल महाराजाधिराज, राजराजेश्वर, नरेन्द्रशिरोमणि, महाराजा श्री सर गंगासिंहजी बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० सी० वी० ओ०, जी० बी० ई०, के० सी० बी०, ए० डी० सी० (श्रीमान् सम्राट् के), एल० एल० डी० (केम्ब्रिज, एडिनबरा और बनारस), डी० सी० एल० (ऑक्सफ़र्ड) का जन्म वि० सं० १९३७ आश्विन सुदि १० (ई० स० १८८० ता० १३ अक्टोबर) बुधवार को हुआ और अपने ज्येष्ठ भ्राता महाराजा डूंगरसिंह का स्वर्गवास होने पर वि० सं० १९४४ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १८८७ ता० ३१ अगस्त) बुधवार को ये बीकानेर के राज्य-सिंहासन पर बैठे।

जन्म तथा राज्याभिषेक

सिंहासनारूढ़ हुए महाराजा साहब को केवल सतरह दिन ही हुए थे कि इनके पिता महाराज लालसिंह का, जो राजा और प्रजा का पूर्ण हितैषी था, अपने ज्येष्ठ पुत्र (स्वर्गीय महाराजा) डूंगरसिंह की असामयिक मृत्यु के दारुण शोक से पीड़ित होकर ५६ वर्ष की आयु में परलोकवास हो गया। राज्य के हितचिंतकों पर भूतपूर्व महाराजा के देहांत का शोक तो छाया हुआ था ही, अब बालक महाराजा के अभिभावक एवं राज्य के कर्णधार के उठ जाने से चारों तरफ़ शोक के बादल छा गये, परन्तु उन्होंने धैर्य रखकर राज्य-कार्य में किसी प्रकार की त्रुटि न आने दी और शासन-कार्य सुचारु रूप से होता रहा।

महाराज लालसिंह का देहांत



श्रीमान् जेनरल महाराजाधिराज, राजराजेश्वर, नरेन्द्रशिरोमणि,
महाराजा श्री सर गंगासिंहजी बहादुर, जी सी एस आई,
जी सी आई ई, जी सी वी ओ, जी बी ई, के सी बी, ए डी सी,
एल एल डी, डी सी एल

शासक की छोटी आयु और प्रत्यक्ष अभिभावक के अभाव में राज्य-शासन में कई प्रकार की खराबियां उत्पन्न हो जाती हैं और अव्यवस्था बढ़ जाती है। राज्य के कार्य-कर्ता उचित तथा अनुचित रीति से अपना मतलब बनाने लगते हैं। बीकानेर राज्य में भी ऐसी ही परिस्थिति उत्पन्न हुई। अतएव शासन-कार्य रीजेंसी कौंसिल-द्वारा होना निश्चित होकर राज-कौंसिल, रीजेंसी कौंसिल के रूप में परिवर्तित कर दी गई और कर्नल थॉर्नटन उसका सभापति, दीवान अमीमुहम्मदखां उपसभापति तथा ठाकुर हीरसिंह (सांडवा), ठाकुर जगमालसिंह (बाय), मेहता मंगलचंद और कविराज भैरोंदान सदस्य नियत हुए। इनके अतिरिक्त मुंशी सोहनलाल सहकारी सदस्य नियत हुआ। इस समय राज्य की आय लगभग सोलह लाख रुपये वार्षिक थी।

राज कौंसिल का रीजेंसी कौंसिल के रूप में परिवर्तन होना

भूतपूर्व महाराजा के समय मुक़दमों की सुनवाई के लिए बीकानेर राज्य में चार न्यायालयों की स्थापना की गई थी, किंतु उनके फ़ैसलों की अपील सुनने के लिए कोई पृथक् अदालत न थी। इसलिए कप्तान थॉर्नटन ने प्रांतीय न्यायालयों की अपीलें सुनने के लिए आरंभ में ही बीकानेर में अपील कोर्ट की स्थापना की और पंडित कालिकाप्रसाद तथा हाफ़िज़ हमीदुल्ला इस कोर्ट के जज नियुक्त हुए।

अपील कोर्ट की स्थापना

उसी वर्ष कार्तिक वदि ४ (ता० ६ अक्टोबर) को कप्तान थॉर्नटन के छुट्टी लेकर विलायत जाने पर उसके स्थान में लेफ़्टेनेंट कर्नल लॉक की नियुक्ति हुई। उसने राज्य-प्रबन्ध अपने हाथ में लेते ही सर्वप्रथम स्वर्गवासी महाराजा के निजी धन-भंडार की जांच की, पर उसका कुछ भी ठीक हिसाब न मिल सका। इस मामले की रिपोर्ट एजेंट गवर्नर जेनरल के पास होने पर मार्गशीर्ष सुदि ९ (ता० २४ नवंबर) को कर्नल वाल्टर स्वयं बीकानेर गया। उसने उसके निजी ख़ज़ाने को खुलवाकर जो कुछ

परलोकवासी महाराजा के निजी धन का बटवारा होना

संपत्ति उसमें मिली वह उसकी वसीयत के अनुसार उसके सम्बन्धियों में बांट दी।

रीजेंसी-कौंसिल के सामने शासन-कार्य के अतिरिक्त बालक महाराजा की शिक्षा के प्रबंध का महत्वपूर्ण कार्य भी था। इसके लिए अजमेर के मेयो कालेज से पंडित रामचन्द्र दुबे को बुलवाकर उसे इनका शिक्षक नियुक्त किया गया। उसने अपना कार्य बड़ी योग्यता-पूर्वक किया।

रामचन्द्र दुबे का महाराजा का शिक्षक नियुक्त होना

गद्दीनशीनी के एक वर्ष पश्चात् उष्णकाल में महाराजा साहब आबू पहाड़ पर गये। उन दिनों जोधपुर के स्वामी महाराजा जसवंतसिंह (दूसरा) का महाराजकुमार सरदारसिंह भी वहीं पर था। महाराजा ने अपना कुछ समय वहां पर उसके साथ व्यतीत किया। वहां पर ही इन्हें मोतीझिरा (Typhoid) की भयङ्कर व्याधि हो गई। उस समय कर्नल वाल्टर (तत्कालीन एजेंट गवर्नर-जेनरल) ने महाराजा को अपने पास रेज़िडेंसी हाउस में रखकर मि० न्युमेंस और लॉरेंस नामक अनुभवी डाक्टरों से इनकी सावधानी के साथ चिकित्सा करवाई, जिससे शीघ्र ही इनका स्वास्थ्य ठीक हो गया।

महाराजा का आबू में रोगग्रस्त होना

इन्हीं दिनों रीजेंसी कौंसिल में कई परिवर्त्तन हुए। वि० सं० १९४५ आश्विन सुदि ७ (ई०.स० १८८८ ता० ११ अक्टोबर) को कुछ मास की बीमारी के बाद दीवान अमींमुहम्मदख़ां का देहांत हो गया। तब उसके स्थान में राय बहादुर सोढ़ी हुक्मसिंह मार्गशीर्ष सुदि १० (ता० १२ दिसंबर) को दीवान तथा रीजेंसी-कौंसिल का उपसभापति नियत किया गया। कौंसिल के दूसरे सदस्यों, ठाकुर जगमालसिंह आदि के स्थान पर भी अन्य अनुभवी व्यक्तियों की नियुक्ति हुई।

दीवान अमींमुहम्मदख़ा की मृत्यु पर सोढी हुक्मसिंह की नियुक्ति

वि० सं० १९४६ (ई० स० १८८९) में महाराजा साहब अजमेर के मेयो कॉलेज में शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजे गये। इस अवसर पर पंडित

महाराजा का मेयो कॉलेज, अजमेर, में दाखिल होना

रामचंद्र दुवे के वेतन में वृद्धि कर उसको पूर्ववत् महाराजा के साथ रक्खा गया। इससे महाराजा साहब के अध्ययन में विशेष लाभ हुआ।

जोधपुर का महाराजा जसवन्तसिंह (दूसरा) राजपूताना के नरेशों के अतिरिक्त बाहर के दूसरे नरेशों के साथ भी मित्रता का संबंध बढ़ाकर एकता स्थापित करने का पूर्ण अभिलाषी था और वह इसमें बहुत कुछ सफल भी हुआ था। वि० सं० १९४८ (ई० स० १८९२ के फ़रवरी) में उक्त महाराजा ने अपने महाराजकुमार सरदारसिंह का विवाह बूंदी के महाराव राजा रामसिंह की राजकुमारी से किया। उस समय उसने राजपूताना तथा मध्यभारत के नरेशों के अतिरिक्त भारत के कई मुख्य मुख्य नरेशों को भी अपने यहां निमंत्रित किया। महाराजा साहब भी जोधपुर जाकर विवाह-कार्य में सम्मिलित हुए, जहां उक्त महाराजा ने इनके साथ बड़े स्नेह का वर्ताव किया। इनके जोधपुर जाकर विवाह में सम्मिलित होने का परिणाम यह हुआ कि वि० सं० १९४९ (ई० स० १८९२) में महाराजा जसवंतसिंह भी बीकानेर गया।

महाराजा का जोधपुर और महाराजा जसवंतसिंह का बीकानेर जाना

कोटा के वर्त्तमान महाराव सर उम्मेदसिंहजी के आग्रह पर उसी वर्ष महाराजा साहब कोटा गये। कुछ दिनों तक इनका कोटे में रहना हुआ, जहां महाराव सर उम्मेदसिंहजी के सरल स्वभाव का इनपर बड़ा प्रभाव पड़ा।

महाराजा का कोटा जाना

वि० सं० १९५१ (ई० स० १८९४) तक इन्होंने मेयो कॉलेज में रहकर नियम-पूर्वक विद्योपार्जन किया। तदनन्तर वहां की पढ़ाई समाप्त कर ये बीकानेर लौटे और दीवान की सहायता से शासन-संबंधी भिन्न भिन्न विषयों का ज्ञान बढ़ाने लगे। उसी समय इन्होंने बड़ी लगन के साथ पैमाइश का कार्य भी सीख लिया। उस समय की इनकी शिक्षा में मि० इजर्टन (अब सर ब्रायन इजर्टन), के० सी० आई० ई० का बड़ा हाथ रहा,

शासन-संबंधी कार्यों का अनुभव प्राप्त करना

जो एक योग्य और विशेष अनुभवी अफ़सर था। उक्त अंग्रेज़ अफ़सर की शिक्षा का इनके जीवन पर उत्तम प्रभाव पड़ा। इन्हें शासन-कार्य का शीघ्र ही पर्याप्त अनुभव हो गया तथा प्रत्येक कार्य को ये परिश्रम-पूर्वक पूरा करने लगे। थोड़े समय में ही ये बलवान्, पूर्ण परिश्रमी और योग्यशासक बन गये। फलतः अब भी ये कठोर से कठोर परिश्रम से नहीं घबराते हैं।

महाराजा का जोधपुर जाना

जोधपुर का महाराजा जसवन्तसिंह, जोधपुर तथा बीकानेर की पारस्परिक एकता का अधिक दिनों तक लाभ न उठा सका। वि० सं० १९५२ (ई० स० १८९५) में उसका परलोकवास हो गया। इसका इनको बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि जसवन्तसिंह एकता का प्रेमी होने के साथ ही इनपर वात्सल्य प्रेम रखता था। यद्यपि ऐसे अवसरों पर स्वयं बीकानेर नरेश के जोधपुर और जोधपुर नरेश के बीकानेर जाने की प्रथा न थी, किंतु महाराजा ने यह दुःखद संवाद सुनते ही शोकसांत्वनार्थ तत्काल जोधपुर जाकर महाराजा सरदारसिंह को तसल्ली दी। इसका प्रभाव उसपर अच्छा पड़ा और वह सदा महाराजा को अपना परम हितैषी समझता रहा। यही नहीं कई गंभीर कारणों से जब महाराजा सरदारसिंह पचमढ़ी में भेज दिया गया, तब महाराजा साहब के उद्योग से ही उसको पुनः जोधपुर जाकर शासन-कार्य में योग देने की अनुमति मिली।

रीजेन्सी कौंसिल-द्वारा राज्य में किये गये सुधार

इनके योग्य-वयस्क होने तक कौंसिल ने शासन-कार्य योग्यता-पूर्वक संपादित किया और बीकानेर राज्य में अनेक लाभदायक सुधार किये, जिनका उल्लेख संक्षेप से यहां किया जाता है—

अपराधियों के लेन-देन का पड़ोसी राज्यों के साथ समझौता न होने से एक स्थान के अपराधी दूसरे स्थान में जाकर दंड से बच जाते थे, जिससे जान और माल का भय बना रहता था। वि० सं० १९४६ (ई० स० १८८९) में जोधपुर और वि० सं० १९४८ (ई० स० १८९१) में जैसलमेर राज्य के साथ आपस में अपराधियों को सौंपने के सम्बन्ध में बीकानेर

राज्य ने समझौता कर लिया। इसी प्रकार क्रमशः अन्य पड़ोसी राज्यों के साथ भी इस सम्बन्ध में ऐसी ही संधियां हुईं।

वि० सं० १९४६ (ई० स० १८८९) में अंग्रेज़ सरकार के साथ जोधपुर और बीकानेर राज्यों के सम्मिलित व्यय से रेल बनाने के सम्बन्ध में इक़रारनामा हुआ, जिसके अनुसार रेल बनाने का कार्य आरंभ होकर वि० सं० १९४८ मार्गशीर्ष (ई० स० १८९१ दिसम्बर) में सर्वप्रथम राजधानी बीकानेर मे रेल्वे का प्रादुर्भाव हुआ और उसी समय बीकानेर राज्य में तार का सिलसिला भी आरंभ हुआ। यात्रियों और माल के यातायात में दिन प्रतिदिन वृद्धि होने से वि० सं० १९५५ (ई० स० १८९८) में यह लाइन बीकानेर से आगे दुलमेरा तक बढ़ा दी गई।

इमारतें, सड़कें आदि बनाने का पहले कोई महकमा न था और न राज्य में इसके पूर्व कोई पक्की सड़क थी। इसलिए वि० सं० १९४८ (ई० स० १८९१) में इस कार्य के लिए 'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट' स्थापित हुआ।

वि० सं० १९५० (ई० स० १८९३) में ३० वर्ष के लिए बीकानेर की टकसाल से रुपये बनाना बन्द होकर अंग्रेज़ी टकसाल से महाराजा के नाम का चांदी का सिक्का—जिसकी एक तरफ़ अंग्रेज़ी सिक्कों के अनुसार सम्राज्ञी विक्टोरिया का चेहरा और नाम तथा दूसरी तरफ़ हिंदी और उर्दू में महाराजा गंगासिंह बहादुर, सन् तथा बीकानेर राज्य का नाम एवं मोर-छलें हैं—बनकर प्रचलित हुआ।

वि० सं० १९५१-५२ (ई० स० १८९४-९५) में भूमि का बन्दोबस्त होकर किसानों से लिया जानेवाला लगान निश्चित कर दिया गया। वि० सं० १९५३ (ई० स० १८९६) में राज्य में पलाना नामक गांव के पास कुआं खोदते समय कोयले की खान का पता लगा, जिससे वि० सं० १९५५ (ई० स० १८९८) में कोयला निकालने का काम शुरू हुआ। इस खान से निकलनेवाला कोयला निम्न श्रेणी का है और

प्रधानतया बिजली के कारखाने और पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट-द्वारा ईंटें और चूना बनाने के काम में लाया जाता है।

वि० सं० १९५३-५४ (ई० स० १८९६-९७) में घग्घर नदी से नहरें काटकर राज्य के कुछ स्थानों में जल पहुंचाने की व्यवस्था की गई, जिससे आबपाशी में वृद्धि हुई।

इनके अतिरिक्त रीजेंसी कौंसिल के शासन-काल में ब्रिटिश साम्राज्य की सहायता के लिए 'कैमल कोर' (ऊंटों का रिसाला) भर्ती किया गया, जो महाराजा साहब के नाम पर 'गंगा रिसाला' कहलाता है। वि० सं० १९४८ (ई० स० १८९१-९२) और वि० सं० १९५३ (ई० स० १८९६-९७) में बीकानेर राज्य में अल्पवृष्टि होने के कारण अकाल के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। उस समय कई उपयोगी कार्य आरंभ कर प्रजा की रक्षा का समुचित प्रबंध किया गया।

रीजेंसी कौंसिल के शासन-काल में राज्य की आय बीस लाख रुपये तक पहुंच गई और कई बड़े-बड़े कार्यों में लाखों रुपये व्यय होने पर भी राज्यकोष में तीस लाख रुपयों से अधिक बचत रही।

इस अवधि में महाराजा साहब ने भी शासन-सम्बन्धी कार्यों में निपुणता प्राप्त करली और वीर-कार्यों की तरफ़ इनकी रुचि बढ़ने लगी। सुयोग से अपनी वीरोचित इच्छा प्रदर्शित करने का अवसर भी इन्हें प्राप्त हुआ। अंग्रेज़ सरकार तथा चितराल के बीच ई० स० १८९५ (वि० सं० १९५२) में तथा सुदान में ई० स० १८९६ (वि० सं० १९५३) में युद्ध छिड़े। इन अवसरों पर इनकी आयु पन्द्रह-सोलह वर्ष की होने पर भी इन्होंने उपर्युक्त युद्धस्थलों में जाकर भाग लेने की इच्छा प्रकट की, परन्तु अंग्रेज़-सरकार ने ये युद्ध विशेष महत्त्व के न होने से उनमें इनका भाग लेना उचित न समझा और इनके साहस की प्रशंसा करते हुए धन्यवाद-पूर्वक उक्त प्रस्ताव को अस्वीकार किया।

ई० स० १८९६ के जनवरी (वि० सं० १९५२ माघ) मास में ये भारत में लाहौर, दिल्ली, आगरा, अमृतसर, कानपुर, लखनऊ, कलकत्ता,

महाराजा का पर्यटन के लिए जाना

दार्जिलिङ्ग आदि कई स्थानों को देखने के लिए गये। इस यात्रा में बृटिश-भारत में होनेवाली उन्नति तथा वहां के दर्शनीय स्थानों के अवलोकन से इन्हें बड़ा अनुभव प्राप्त हुआ। जब ये कलकत्ते पहुंचे तो वहां की मारवाड़ी जनता ने बड़े उत्साह से इनका अभिनन्दन किया। कलकत्ते में रहते समय इन्होंने भारत के तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड एल्गिन से भेंट की। तदनन्तर ये वहां से लौटकर बनारस पहुंचे, जहां इन्होंने दर्शनीय स्थानों का अवलोकन किया। उस समय बड़गंगा (Barganga) पर महाराजा बनारस की तरफ़ से इनके लिए आखेट का विशेष रूप से प्रबंध किया गया था।

लॉर्ड एल्गिन आदि का बीकानेर जाना

रेल के अभाव के कारण पहले किसी वाइसराय का बीकानेर जाना नहीं हुआ था। रेल खुल जाने से यात्रा का सुभीता हो गया। अतएव वि० सं० १९५३ मार्गशीर्ष वदि १ (ई० स० १८९६ ता० २१ नवंबर) को भारत के वाइसराय और गवर्नर जेनरल लॉर्ड एल्गिन का बीकानेर जाना हुआ। महाराजा के सत्कार, शिष्टाचार तथा वीरोचित गुणों और बीकानेर तथा गजनेर की सुन्दर छटा को देखकर वाइसराय को बड़ी प्रसन्नता हुई। इन्हीं दिनों मार्गशीर्ष वदि १३ (ता० २ दिसम्बर) को भारतवर्ष की सरकारी सेना का कमांडर-इन-चीफ़ (सेनाध्यक्ष) सर जॉर्ज व्हाइट बीकानेर गया और पौष वदि १३ (ई० स० १८९७ ता० १ जनवरी) को कोटे के महाराव सर उम्मेदसिंहजी भी बीकानेर पहुंचे, जहां कुछ दिनों तक उक्त महाराव का ठहरना हुआ।

महाराजा का प्रथम विवाह

वि० सं० १९५४ आषाढ़ सुदि ९ (ई० स० १८९७ ता० ८ जुलाई) को १७ वर्ष की आयु में महाराजा साहब का प्रथम विवाह प्रतापगढ़ (देवलिया) के स्वामी महारावत रघुनाथसिंह की राजकुमारी से हुआ, जिससे वि० सं० १९५५ के आषाढ़ (ई० स० १८९८) मास में आबू पर प्रथम महाराजकुमार

(रामसिंह) का जन्म हुआ, परन्तु वह केवल कुछ घड़ी जीवित रहकर परलोक सिधारा।

वि० सं० १९५४ (ई० स० १८९७) में इन्दौर के भूतपूर्व महाराजा शिवाजीराव होल्कर, वि० सं० १९५५ (ई० स० १८९८) में रीवां के महाराजा वेंकटरमणप्रसादसिंह, देवलिया प्रतापगढ़ के महारावत रघुनाथसिंह, जोधपुर के महाराजा सरदारसिंह और धौलपुर के महाराणा नौनिहालसिंह बीकानेर गये।

इन्दौर, रीवां, जोधपुर आदि के नरेशों का बीकानेर जाना

इसी वर्ष महाराजा साहब ने देवली की छावनी में कुछ समय तक रहकर वहां की रेजिमेन्ट में लेफ्टेनेन्ट कर्नल जे० डी० बेल की अध्यक्षता में सैनिक शिक्षा प्राप्त की। वहां से यथावकाश ये आखेट के लिए बूंदी, कोटा और प्रतापगढ़ भी गये।

महाराजा का सैनिक शिक्षा प्राप्त करना

वि० सं० १९५५ (ई० स० १८९८) में इनकी आयु १८ वर्ष की होने पर राजपूताना के एजेन्ट गवर्नर-जेनरल सर आर्थर मार्टिंडेल ने बीकानेर जाकर अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से इनको मार्गशीर्ष सुदि ३ (ता० १६ दिसंबर) को एक बड़े दरबार में बीकानेर राज्य का संपूर्ण अधिकार सौंप दिया। इस अवसर पर इन्होंने राज्य के उमरावों और सरदारों के पृथक् दरबार में अपनी भावी शासन-नीति निम्नलिखित शब्दों में प्रकट की—

महाराजा को राज्याधिकार मिलना

"आज मैं सर्वप्रथम जिस महत्त्वपूर्ण बात को कहना चाहता हूं, वह भूतकाल से सम्बन्ध रखती है। आप जानते हैं कि साढ़े ग्यारह वर्ष की नाबालिग़ी का समय दीर्घकाल होता है। दुर्भाग्यवश यदि लोगों को उचित मार्ग पर चलाते रहने के लिए उनपर सुदृढ़ शासन न हो तो बहुत संभव है कि ग़लत मार्ग पर चलते हुए वे आपस में झगड़ने लगें और प्रपंचकारी दल बनालें। यह जानकर मुझे दुःख है कि बीकानेर में भी ऐसा ही हुआ है।

"अजमेर के मेयो कॉलेज से लौटने पर मुझे बीकानेर में दो दल जान पड़े—एक सोढ़ी हुक्मसिंह का और दूसरा उसका विरोधी। आप इस सम्बन्ध में सब कुछ जानते हैं, इसलिए आपको इस बारे में कुछ भी कहना अनावश्यक है। मुझे यह बतलाते हुए दुःख है कि एक प्रकार से ये दल बीकानेर के नाश के कारण हैं। मिलकर कार्य करने से सब तरह का लाभ है और दलबंदी करके एक दूसरे को हानि पहुंचाने से राज्य की हानि होती है। मैं मेयो कॉलेज से आया, तभी से मेरी सदा यह इच्छा रही है कि ये दल टूट जायँ और सोढ़ी हुक्मसिंह के चले जाने से बहुत कुछ अन्तर हो गया है, किन्तु दुर्दैववश दलबंदी की कुछ भावना अब तक बनी हुई है। इस समय मेरी सब से बड़ी इच्छा यही है कि ये दलबन्दी के विचार एकदम नष्ट हो जायँ।

"मेरी नाबालिगी के काल में आप लोगों ने जो राजभक्ति दिखाई है, वह आपके योग्य ही है। जब राजा युवा हो जाय तब आपका राजभक्ति प्रकट करना कुछ बड़ी बात नहीं है, किंतु यह आपका कर्त्तव्य है, परन्तु जब राजा बालक हो और अधिकांश प्रजाजन उसके विरुद्ध हों उस समय राजभक्ति प्रकट करना वस्तुतः महत्वपूर्ण बात है। आप लोगों ने (मेरे मामले में) भी वैसा ही किया है और मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैं इसे सदा स्मरण रक्खूंगा।

"मैं आपको यह जतला देना चाहता हूं कि भविष्य में मैं जो कुछ कार्य करूंगा वह इसलिए किया जायगा कि मैं उसे योग्य और न्यायोचित मानता हूं, न कि कृपा-प्रदर्शन के योग्य। आपको यह आशा नहीं करनी चाहिये कि न्याय करते समय मैं किसी के प्रति कृपा प्रदर्शित करूंगा। कई सरदार और अफ़सर प्रतिदिन मेरी हाज़िरी में रहेंगे, किन्तु इससे आपको यह न जानना चाहिए कि मेरे साथ रहने से जो कुछ वे मुझसे अर्ज़ करें उसका मुझपर स्वभावतः प्रभाव पड़ेगा। उन (सरदारों या अफसरों) के द्वारा कोई सूचना भेजने से आपको कोई लाभ न होगा और जो लोग सूचनाएं भेजेंगे या लावेंगे उनपर मेरी सख्त नाराज़ी रहेगी, न

ज़नाने की मारफ़त आपका अर्ज़ कराना किसी प्रकार उपयोगी हो सकता है।

"आपको जो कुछ कहना हो सीधे मुझ से कहें। मैं उसपर पूरा ध्यान दूंगा और उसके लिए भरसक प्रयत्न करूंगा। सीधे मेरे पास आने से आपका और मेरा पर्याप्त समय तथा श्रम वचेगा। मुझे आशा है कि इससे रिश्वतखोरी वंद हो जायगी, क्योंकि आपको मालूम है कि मेरे पास के लोग किसी प्रकार अपने प्रभाव का उपयोग नहीं कर सकते और घूस देना आपका ही अपराध होगा। मैं यह सूचित करना चाहता हूं कि मैं घूसखोरी के वहुत विरुद्ध हूं और इसे रोक देना चाहता हूं। घूस देने और लेनेवाले का ईश्वर ही सहायक हो तो हो, क्योंकि मैं उनकी कोई सहायता न करूंगा।"

राज्याधिकार मिलने पर महाराजा साहव ने रीजेन्सी कौंसिल को पुनः राजकौंसिल का रूप देकर पूर्वनिर्दिष्ट शैली के अनुसार शासन-व्यवस्था स्थिर की और राज्य के सरदारों के सम्वन्ध के तमाम मामले, सेना, पुलिस, पब्लिक वर्क्स, चिकित्सा विभाग आदि का कार्य अपने हाथ में लिया।

महाराजा साहव के पहले विवाह का उल्लेख ऊपर आ गया है। वि० सं० १९५६ ज्येष्ठ वदि १ (ई० स० १८९९ ता० २६ मई) को भंवाद (अव सांवतसर) के ठाकुर सुलतानसिंह तंवर की पुत्री के साथ इनका दूसरा विवाह हुआ।

महाराजा का दूसरा विवाह

दक्षिणी अफ्रिका में ट्रान्सवाल एक मुख्य प्रदेश है, जहां वोरों की आवादी मुख्य है और थोड़ी संख्या में अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी भी रहते हैं। ई० स० १८७७ (वि० सं० १९३४) में ट्रान्सवाल के अंग्रेज़ी साम्राज्य में मिलाये जाने की घोषणा की गई, जो स्वतन्त्रता-प्रेमी वोरों को अच्छी न लगी। कुछ वर्षों वाद वोर जाति का क्रूगर वहां का प्रेसिडेन्ट निर्वाचित हुआ। इधर ट्रान्सवाल में सोने की खानों का पता लगने से वहां क्रमशः विदेशियों की संख्या वढ़ी, जिससे क्रूगर की आय वढ़ने लगी। ई० स० १८९९

महाराजा का वोर-युद्ध में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट करना

(वि० सं० १९५३) में, जब यूटलैंड निवासियों और क्रूगर में विरोध चल रहा था, डाक्टर जेमीसन और डाक्टर रोड्स ने अन्य खानों के अंग्रेज़ मालिकों से मिलकर जोहान्सबर्ग पर अधिकार करने का विचार किया। यह निश्चय हुआ कि यूटलैंड निवासी अपना आन्दोलन जारी रक्खेंगे और इस बखेड़े में जेमीसन जोहान्सबर्ग जा पहुंचेगा, पर डाक्टर जेमीसन और उसके साथियों का यह षड्यन्त्र सफल न हुआ। जैसा सोचा गया था उक्त डाक्टर को इस कार्य के लिए पर्याप्त व्यक्ति न मिले, पर लोगों के मना करने पर भी उसने निश्चित तिथि, ता० २९ दिसम्बर (वि० सं० १९५३ पौष वदि १०) को ट्रान्सवाल की ओर प्रस्थान किया। क्रूगर को इन सब बातों का ठीक समय पर पता लग गया, जिससे उसने सारा प्रबंध कर लिया। ट्रान्सवाल में प्रवेश करने के पूर्व ही डाक्टर जेमीसन बोरों-द्वारा घेरकर पकड़ लिया गया। अन्य कई सम्पत्तिशाली अंग्रेज़ भी पकड़े गये और उनपर मुक़दमा चलाकर उन्हें फांसी की सज़ा सुना दी गई, पर अंग्रेज़ सरकार के प्रार्थना करने पर क्रूगर ने दंड लेकर उन्हें मुक्त कर दिया। ई० स० १८९७ (वि० सं० १९५४) में यूटलैंड की २१००० अंग्रेज़ प्रजा ने एक सम्मिलित अर्ज़ी महाराणी (विक्टोरिया) के सम्मुख पेश की, जिसका फल यह हुआ कि ई० स० १८९८ (वि० सं० १९५५) में ब्लामफ़ान्टेन में एक कान्फ्रेन्स बुलाई गई। ता० ३१ मई (ज्येष्ठ सुदि ११) को सर आल्फ्रेड मिलनर और क्रूगर की ब्लामफ़ान्टेन में मुलाक़ात हुई, पर उसका कोई परिणाम न निकला। वास्तविक बात तो यह थी कि बोर लोगों ने बहुत पहले से ही दक्षिणी अफ्रिका में अपनी प्रधानता स्थापित करने के लिए अंग्रेज़ों से लोहा लेने का निश्चय कर लिया था। उन्हें युद्ध में लाभ ही लाभ दिखाई दे रहा था। प्रेसिडेन्ट क्रूगर की सरकार ने ई० स० १८९९ ता० २७ सितंबर (वि० सं० १९५६ आश्विन वदि ८) को एक अल्टीमेटम (अन्तिम सूचना) तैयार किया, जो कई कारणों से ता० ९ अक्टोबर (आश्विन सुदि ५) को प्रिटोरिया स्थित अंग्रेज़ों के एजेंट मि० कनिंघम ग्रीन के पास पेश हुआ। उसमें दी हुई शर्तें बड़ी कड़ी थीं और उनका जवाब केवल ४८ घन्टों

के भीतर मांगा गया था। अंग्रेज़ सरकार उन शर्तों को किसी भी दशा में स्वीकार नहीं कर सकती थी। फलतः दोनों ओर पूरी तैयारी हो चुकने के बाद ता० ११ अक्टोबर (आश्विन सुदि ७) को इतिहास-प्रसिद्ध बोर-युद्ध का सूत्रपात हुआ। इस अवसर पर महाराजा साहब ने इस युद्ध में सम्मिलित किये जाने की इच्छा प्रकट की, पर अंग्रेज़ सरकार ने उसे स्वीकार न किया।

वि० सं० १९५६ का भीषण अकाल

वि० सं० १९५६ (ई० स० १८९९-१९००) में बीकानेर राज्य में भीषण अकाल पड़ा। यह अकाल केवल बीकानेर में ही नहीं, प्रत्युत राजपूताना और भारत के कई अन्य विभागों में भी था। उस वर्ष राज्य में वर्षा का औसत ३॥ इंच रहा और राजधानी में तो केवल एक इंच चौदह सेंट ही वर्षा हुई, जिससे खेती नष्ट हो गई और ग़रीब प्रजा बड़े संकट में पड़ गई। अनुमान प्रतिशत २२ मनुष्य तो विदेश चले गये और शेष के निर्वाह के लिए राज्य की तरफ़ से सहायता के कार्य प्रारम्भ किये गये। सहायक कार्यों में राजधानी में शहरपनाह का काम बढ़ाया गया, गजनेर की झील खुदवाई गई, और ऐसे ही कई अन्य कार्य जगह-जगह छेड़े गये, जिनसे प्रतिशत ८० मनुष्यों का निर्वाह होने लगा। राजधानी बीकानेर में राज्य की तरफ़ से दो अन्नक्षेत्र तथा चुरू और राजगढ़ में सेठों की ओर से अन्नक्षेत्र खोले गये, जिनमें अशक्त और बीमारों को भोजन मिलने लगा। दुष्काल-पीड़ित परदानशीन स्त्रियों के लिए जगह-जगह छप्पर खड़े किये गये, जहां उनको भोजन मिलता रहा। राज्य ने इस अकाल के समय में जनता की सहायता में साढ़े आठ लाख से अधिक रुपये व्यय किये, पौने पांच लाख रुपये माल हासिल के माफ़ कर दिये तथा जनता के लिए बिना किसी महसूल के बाहर से ग़ल्ला मंगवाकर सस्ते भाव से बेचने की व्यवस्था की। उस समय व्यापारी वर्ग ने नाज का भाव तीन सेर तक पहुंचा दिया था। राज्य की तरफ़ से बाहिर से अन्न मंगवाने का प्रभाव यह पड़ा कि फिर ग़ल्ले का भाव एक रुपये का आठ सेर से नीचे न गिरा।

इस समय गांवों में गल्ला पहुंचाने में रेल्वे की सहायता बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई। जहां-जहां रेल नहीं थी, वहां गल्ला पहुंचाने के लिए महाराजा साहब ने अपना गंगारिसाला (कैमल कोर) नियत कर दिया, जिससे अधिकांश गांवों में बराबर अन्नादि पहुंचता रहा।

बीकानेर राज्य में जल की प्रचुरता न होने से साधारण वर्षा के अवसर पर भी जल का कष्ट होता था। फिर ऐसे समय तो जल का कष्ट होना स्वाभाविक ही था, परन्तु महाराजा साहब ने इस अकाल के समय स्थान-स्थान पर जल सुलभता से मिलने की व्यवस्था कर दी। पशुओं की जीव रक्षा के लिए भी राज्य ने घास मंगवाकर गोदाम लगवा दिये, पर दैवी कोप से फिर भी बहुत से पशु मर गये, जिससे राज्य को बड़ी क्षति हुई। वर्ष की समाप्ति के अन्त में राज्य ने ८४३०० रुपये काश्तकारों को बीज और बैलों आदि के लिए देकर कृषि कर्म का आरम्भ करवाया। इतना होने पर भी कितने ही व्यक्ति गांवों को छोड़कर अन्यत्र चले गये। उन्हीं दिनों विशूचिका की भयङ्कर व्याधि ने बड़े वेग से आक्रमण कर सहस्रों चिराग़ गुल कर दिये। उस समय का दृश्य बड़ा ही हृदयविदारक था, एक दो दस्त और वमन होते ही लोग छटपटाकर प्राण दे देते थे। अब भी इस रोमांचकारी घटना के स्मरण मात्र से लोगों के दिल दहल जाते हैं। अकाल और इस दैवी आपत्ति से उस वर्ष राज्य की, ई० स० १८९१ (वि० सं० १९४७) की जनसंख्या की अपेक्षा, लगभग एक तिहाई आबादी कम हो गई।

उपर्युक्त अकाल के समय महाराजा साहब ने अपना अधिकांश समय अकाल-पीड़ितों के कष्टों को निवारण करने में लगाया। ये स्वयं राज्य में घूम-घूम कर सहायता के कार्यों को देखते और संकटापन्न व्यक्तियों को सहायता देकर उनके प्राण बचाते थे। इन्होंने उस समय जिस तत्परता से इस संकट का सामना किया उसकी बड़ी प्रशंसा हुई। भारत सरकार ने अकाल के समय महाराजा साहब-द्वारा होनेवाले प्रजा-हितैषी कार्यों से प्रसन्न होकर इन्हें प्रथम श्रेणी का कैसरे-हिन्द स्वर्ण पदक

भेंट किया। तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड कर्ज़न ने ई० स० १६०२ (वि० सं० १६५६) में अपनी बीकानेर यात्रा के समय राजकीय भोज के अवसर पर अपनी वक्तृता में महाराजा साहब के गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा—"ई० स० १८६६-१६०० के अकाल के महान् संकट के समय महाराजा ने अथक उत्साह और अत्यन्त कुशलता-पूर्वक सारा कार्य सम्पादन किया था।" हैज़े की बीमारी के दिनों में महाराजा स्वयं बीमारों के पास जाकर उनका निरीक्षण करते थे, जिससे ये स्वयं भी इस व्याधि से ग्रसित हो गये, परन्तु योग्य चिकित्सा से इन्होंने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त कर ली।

महाराजा को मेजर का पद मिलना

वि० सं० १६५७ (ई० स० १६००) में श्रीमती महाराणी विक्टोरिया की सालगिरह के अवसर पर महाराजा साहब भारतीय सेना (सेकंड लांसर्स) में मेजर (ऑनरेरी) नियत किये गये।

चीन के बॉक्सर युद्ध का सूत्रपात

उसी वर्ष चीन में एक नया आन्दोलन खड़ा हुआ, जो इतिहास में बाक्सर आंदोलन के नाम से विख्यात है। इसकी उत्पत्ति के मूल कारण तो अज्ञात हैं, परन्तु कुछ दिनों पूर्व से ही जापान की पिछली लड़ाई और चीन के राजघराने में पारस्परिक कलह होने के कारण लोगों में असन्तोष फैलना शुरू हुआ और बॉक्सर दल का ज़ोर बढ़ा। शक्ति बढ़ते ही इस दल ने चीन में रहनेवाले ईसाइयों पर अत्याचार करना आरम्भ किया एवं अन्य ईसाइयों के प्रति भी उनके भाव बुरे होते गये। मई मास में उन्होंने चीन के कितने ही ईसाइयों के गांव नष्ट कर दिये और आसपास के ईसाइयों की हत्या की। कुछ दिनों बाद पेकिंग (Peking) से चालीस मील दूर युंगचिंग (Yung Ching) नामक स्थान में दो अंग्रेज़ पादरी मार डाले गये। देश के कई भागों में बॉक्सर दल के लोगों का ज़ोर बढ़ा हुआ था और वे स्थान-स्थान पर रेल की पटरियां उखाड़कर स्टेशनों को नष्ट कर देते थे, जिससे प्रत्येक जगह उनका आतङ्क छाया हुआ था। जून

मास में उक्त दल के कुछ लोगों ने एक जापानी अधिकारी की हत्या करदी और रात्रि के समय बहुत से विदेशियों के घर जलाकर उनका सामान लूट लिया तथा कितने ही चीनी ईसाइयों को भी मार डाला। इस घटना के कई दिन पूर्व से ही पेकिंग का बाहरी दुनियां के साथ का सम्बन्ध रेल की पटरियां उखाड़ डालने एवं पुल तोड़ देने से नष्ट हो गया था। परिस्थिति की गम्भीरता का अनुभव करते हुए संसार के सभी शक्तिशाली राज्य, पीचीली (Pi Chili) की खाड़ी में जल और स्थल सेनाएं शीघ्रातिशीघ्र भेजने लगे। एडमिरल सीमूर की अध्यक्षता में इङ्गलैंड, रूस, फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली, अमेरिका और जापान की दो हज़ार सम्मिलित सेना पेकिंग के साथ पुनः रेल्वे का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए गई, किन्तु उसे बुरी तरह पराजित होकर लौटना पड़ा। इसी बीच चीनियों ने टिन्टसिन (Tientsin) की विदेशी बस्ती पर आक्रमण किया। वहां के क़िलों पर विदेशियों ने अधिकार करने में सफलता तो प्राप्त की, परन्तु इससे वहां की परिस्थिति में कोई सुधार न हुआ। इसी समय उक्त विदेशी राज्यों से सहायता के लिए अधिक सेनाएं आ गई। इस लड़ाई में भाग लेने के लिए तीन फ़ौज की टुकड़ियां भारतवर्ष से भी भेजी गई।

चीन-युद्ध में महाराजा का ससैन्य सम्मिलित होना

अंग्रेज़ सरकार को चीन में सेना भेजने की आवश्यकता पड़ने पर महाराजा साहब ने भारत सरकार के पास पत्र भेजकर गंगारिसाले सहित स्वयं इस युद्ध में जाने की अभिलाषा प्रकट की। श्रीमती सम्राज्ञी विक्टोरिया-द्वारा इनकी इच्छा स्वीकार होने पर उसकी मंजूरी ई० स० १६०० ता० १० अगस्त (वि० सं० १६५७ श्रावण सुदि १५) को रेज़िडेंट की मारफ़त इनके पास आ गई। तब इन्होंने बड़े उत्साह के साथ अपनी सेना सहित चीन की ओर प्रस्थान किया। इस अवसर पर प्राइवेट सेक्रेटरी मेजर आर० डी० कूपर, कुंवर पृथ्वीराजसिंह तंवर (दाउदसर) और धायभाई सालिगराम भी इनके साथ थे। चीन पहुंचने पर इनकी

सेना ने लेफ़्टेनेंट जेनरल सर आलफ़्रेड के साथ रहकर वहां की लड़ाइयों में भाग लिया। पिटांग के क़िले की विजय तथा पोर्टिंगफ़ू की चढ़ाई में इस सेना ने वीरतापूर्वक शत्रु का सामना किया। कुछ दिनों बाद जब अन्य राज्यों की चीन के साथ संधि स्थापित हो गई, तब महाराजा साहब ने दिसम्बर मास में बीकानेर के लिए प्रस्थान किया। कलकत्ते पहुंचने पर भारत सरकार की तरफ़ से इनका सार्वजनिक रूप से स्वागत किया गया। इनके लौट आने पर भी इनकी सेना बराबर अंग्रेज़ों के साथ रहकर कार्य करती रही और उसने कई बार जापानियों तथा अमरिकन लोगों के साथ रहकर लड़ाई में वीरता बतलाई।

बीकानेरी सेना की भारत सरकार-द्वारा प्रशंसा

बीकानेर की सेना के चीन से लौटने पर वि० सं० १६५८ आषाढ़ सुदि ५ (ई० स० १६०१ ता० २१ जून) को भारत के वाइसराय लॉर्ड कर्ज़न ने निम्नलिखित आशय का तार महाराजा साहब के पास भेजा—"चीन से आपके इम्पीरियल सर्विस ट्रूप्स के सकुशल लौटने पर मैं आपको बधाई देता हूं। मुझे ज्ञात हुआ है कि चीन में उक्त सेना ने नामवरी से कार्य करके आपकी और आपके राज्य की प्रतिष्ठा को बढ़ाया है"।

मेजर जेनरल जे० टी० कमिन्स, डी० एस० ओ० ने भी प्रशंसा-सूचक शब्दों में ही गंगारिसाले की वीरता और कार्य-तत्परता का उल्लेख किया था।

महाराजा को के. सी. आई. ई. का ख़िताब मिलना

भारतीय नरेशों में से केवल महाराजा सर गंगासिंहजी ही चीन युद्ध में स्वयं सम्मिलित हुए थे। बड़ी तत्परता के साथ उक्त युद्ध में भाग लेने के कारण इनकी बड़ी ख्याति हुई और ये सम्राज्ञी की ओर से के० सी० आई० ई० (नाइट कमान्डर ऑव् दि इंडियन एम्पायर) की पदवी तथा चाइना वार मेडल से विभूषित किये गये। जेनरल सर आलफ़्रेड गसेली ने भी इस युद्ध की स्मृति-स्वरूप शत्रुओं से छिनी हुई एक तोप इनको भेंट की।

श्रीमती सम्राज्ञी विक्टोरिया का वि० सं० १६५७ माघ सुदि २ (ई० स० १६०१ ता० २२ जनवरी) को लन्दन में स्वर्गवास हो गया। यह शोक-जनक समाचार वीकानेर पहुंचने पर राज्य में कई दिवस तक शोक मनाया गया। महाराजा साहव ने राज-परिवार से सहानुभूति प्रकट करते हुए नव सम्राट् (एडवर्ड सप्तम) के प्रति उच्च भावनाएं प्रकट कीं और स्वर्गीय महाराणी की स्मृति को चिर-जीवित रखने के लिए राजधानी में विक्टोरिया मेमोरियल क्लव वनवाया, जो वीकानेर की सुन्दर इमारतों में से एक है।

विक्टोरिया मेमोरियल क्लव की स्थापना

वि० सं० १६५८ कार्तिक सुदि १२ (ई० स० १६०१ ता० २३ नवंवर) को भारतीय सेना का कमांडर-इन-चीफ़ जेनरल सर पावर पामर वीकानेर गया। वीकानेरी सेना के प्रदर्शन के समय महाराजा साहव की स्फूर्ति को देखकर वह वड़ा प्रसन्न हुआ।

जेनरल सर पावर पामर का वीकानेर जाना

वि० सं० १६५६ के वैशाख (ई० स० १६०२ मई) मास में ये वूंदी और वहां से लौटकर आवू गये, जहां इन्हें सम्राट् एडवर्ड (सप्तम भूतपूर्व) के राज्याभिषेकोत्सव में सम्मिलित होने का निमन्त्रण प्राप्त हुआ। समयाभाव के कारण महाराजा साहव वहां से सीधे वम्बई चले गये और ता० ३१ मई (ज्येष्ठ वदि ६) को जहाज़ से रवाना होकर ता० १५ जून (ज्येष्ठ सुदि १०) को लन्दन पहुंचे और उत्सव में सम्मिलित हुए। इस अवसर पर श्रीमान् प्रिंस ऑव् वेल्स (परलोकवासी सम्राट् जॉर्ज पंचम) ने इन्हें अपना ए० डी० सी० नियुक्तकर सम्मानित किया। आषाढ़ वदि ५ (ता० २६ जून) को सम्राट् ने इन्हें राज्याभिषेक का पदक (Coronation medal) प्रदान किया। इसी अवसर पर इन्हें चीन युद्ध का पदक भी दिया गया।

महाराजा का लन्दन जाना

उत्सव समाप्त होने पर इन्होंने वहां से प्रस्थान किया और ता० ३१ अगस्त (भाद्रपद वदि १३) को ये वीकानेर लौटे।

विलायत से लौटकर आने के एक सप्ताह बाद ई० स० १६०२ ता० ७ सितंबर (वि० सं० १६५६ भाद्रपद सुदि ५) रविवार को महाराणी राणावत के गर्भ से महाराजकुमार शार्दूलसिंह का जन्म हुआ। इस शुभ संवाद से सर्वत्र आनंद छा गया। महाराजा साहब ने इस अवसर पर उदारतापूर्वक सहस्रों रुपये दान एवं उपहार आदि में व्यय किये और राज्य में कई दिन तक बड़ी खुशी मनाई गई।

महाराजकुमार शार्दूलसिंह का जन्म

उसी वर्ष मार्गशीर्ष वदि १० (ता० २४ नवंबर) को भारत के वॉइसराय और गवर्नर-जेनरल लॉर्ड कर्ज़न का बीकानेर में आगमन हुआ। महाराजा ने राज्योचित रीति से उसका स्वागत किया। इस अवसर पर उक्त वाइसराय के द्वारा कर्ज़न बाग़ तथा विक्टोरिया मेमोरियल क्लब का उद्घाटन हुआ और लेडी कर्ज़न-द्वारा ज़नाना अस्पताल की नींव रखवाई गई।

लॉर्ड कर्ज़न का बीकानेर जाना

इसके कुछ ही दिनों बाद सम्राट् एडवर्ड सप्तम के सिंहासनारूढ़ होने के उपलक्ष्य में भारतवर्ष की प्राचीन राजधानी दिल्ली नगर में विशाल दरबार हुआ, जिसमें सम्मिलित होने का निमंत्रण मिलने पर महाराजा साहब भी दिल्ली पहुंचे। सम्राट् की ओर से उनका छोटा भाई ड्यूक ऑव् कनॉट सन्देश लेकर भारत में आया। फिर लॉर्ड कर्ज़न और ड्यूक ऑव् कनॉट दिल्ली पहुंचे। उनके स्वागत के समय उपस्थित भारतीय राजा-महाराजाओं में महाराजा साहब भी थे। ई० स० १६०३ ता० १ जनवरी (वि० सं० १६५६ पौष सुदि प्रथम ३) को महाराजा साहब वृहत् दरबार में सम्मिलित हुए। इस अवसर पर इनकी भारत के कितने ही प्रमुख नरेशों से मुलाक़ातें हुईं। फिर ये वहां से लौटकर बीकानेर पहुंचे। उसके तीन सप्ताह के पीछे ई० स० १६०३ ता० २८ जनवरी (वि० सं० १६५६ माघ वदि ३०) को जर्मनी का शाहज़ादा ग्रांड ड्यूक आव् हेसी

महाराजा का दिल्ली दरबार में जाना

और ता० १४ फ़रवरी (फाल्गुन वदि ३) को ड्यूक ऑव् कनॉट बीकानेर पहुंचे।

सोमालीलैंड के युद्ध का सूत्रपात

अंग्रेज़ी सोमालीलैंड (British Somaliland) के अधिकारियों और हैब्र सुलेमान ओगडेन जाति (Habr Suleiman Ogaden Tribe) के मुहम्मद-बिन-अब्दुल्ला (Mohammad-bin-Abdullah)—जो पागल मुल्ला के नाम से विख्यात था—के बीच वि० सं० १६५६ (ई० स० १८६६) में बखेड़ा खड़ा हो गया, जिसको मिटाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया गया पर उसमें सफलता नहीं मिली और झगड़ा बढ़ता ही गया। मुहम्मद-बिन-अब्दुल्ला का अपने देशवासियों पर बड़ा प्रभाव था, जिसका पहले तो उसने उचित उपयोग किया, किंतु बाद में जब उसके अनुयायियों की संख्या बहुत बढ़ गई तो उसने बुराव (Burao) पर अधिकार करके अपने को महदी (मसीहा, उद्धारक) घोषित कर दिया। फिर उसने पड़ोसी जातियों पर आतङ्क जमाना आरम्भ किया। इसपर मुल्ला (मुहम्मद) के विरोधियों ने अंग्रेज़ों की शरण ली। वि० सं० १६५८ (ई० स० १६०१) में अंग्रेज़ों ने उसका विजित स्थान (बुराव) उससे छीन लिया, परन्तु इसका परिणाम उलटा हुआ। उसने पड़ोसी जातियों और अंग्रेज़ों पर आक्रमण करना तथा उन्हें तंग करना जारी रक्खा। वि० सं० १६५६ आश्विन सुदि ५ (ई० स० १६०२ ता० ६ अक्टोबर) को एरिगो (Erigo) नामक एक सघन झाड़ीवाले प्रदेश से जाती हुई अंग्रेज़ी सेना को उसके सैनिकों ने घेर लिया। इस लड़ाई में अंग्रेज़ी सेना के लगभग ०० आदमी मारे गये, किंतु अन्त में उसने मुल्ला को भगा देने में सफलता प्राप्त की। मुल्ला अपने अनुयायियों सहित गलादी (Galadi) में, जहां पानी बहुत मिलता था, चला गया। तब इटालियन सोमालीलैंड के पूर्वी किनारे से ओब्बिया (Obbia) के मार्ग से उसपर आक्रमण करने का निश्चय किया गया। ब्रिगेडियर-जेनरल डबल्यू० एच० मैनिंग (W. H. Manning) के सेनापतित्व में हिन्दुस्तानी एवं अफ्रिकन सेनाएं मुल्ला के विरुद्ध रवाना की गईं, पर उससे भी विशेष लाभ न हुआ और मुल्ला को अंग्रेज़ी सेना की

कई टुकड़ियों को हराने में कुछ समय के लिए सफलता मिल गई। फिर वह (मुल्ला) उत्तर में नोगल (Nogal) ज़िले में जा रहा।

सोमालीलैंड के इस युद्ध में भारतवर्ष से और भी सेना भेजने की आवश्यकता प्रतीत होने पर महाराजा साहब ने अपनी सेना के भी भारतीय सेना के साथ सम्मिलित किये जाने की अंग्रेज़ सरकार से इच्छा प्रकट की, जो स्वीकृत होने पर वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०३ जनवरी) में गंगारिसाले के २१६ सैनिक और २५० ऊंट इस युद्ध में भेजे गये। महाराजा साहब की अभिलाषा स्वयं इस युद्ध में भाग लेने की थी और इन्होंने भारत सरकार के पास कई वार इस संबंध में पत्रव्यवहार भी किया, परंतु उस समय इनका वहां जाना स्वीकार नहीं किया गया। कुछ दिनों बाद अधिक सेना की आवश्यकता पड़ने पर वि० सं० १९६० के कार्तिक (ई० स० १९०३ अक्टोबर) मास में ५० सैनिक तथा १५० ऊंट सोमालीलैंड में और भेजे गये। भारतवर्ष से भेजी गई केवल यही एक ऊंट सेना होने के कारण और साथ ही इसके लिए अनुकूल जलवायु वहां प्राप्त होने से लड़ने के अतिरिक्त रास्ता खोजने, मरुभूमि में जल तलाश करने, पत्र लाने तथा लेजाने आदि के कार्यों में भी इससे बड़ी सहायता प्राप्त हुई।

सोमालीलैंड की लड़ाई में महाराजा का सैनिक सहायता देना

गंगारिसाले की शत्रुसेना से दो बड़ी लड़ाइयों में मुठभेड़ हुई। मेजर गफ़ (Gough) की अध्यक्षता में जो सेना बोहोट्ल (Bohotle) से धारातोल (Dharatol) गई थी, उसमें भी गंगारिसाले के सैनिक विद्यमान थे। वि० सं० १९६० वैशाख वदि ११ (ई० स० १९०३ ता० २३ अप्रेल) को इस सेना का शत्रु दल से मुक़ाबला हुआ, परंतु सफलता न मिली। अक्टोबर मास में नये सिरे से चढ़ाई का प्रबंध किया गया। वि० सं० १९६० माघ वदि ८ (ई० स० १९०४ ता० १० जनवरी) को जीद्बाली (Jidbali) तथा धारातोल (Dharatol) में बड़ी लड़ाइयां हुईं। उनमें भी गंगारिसाले के सैनिक थे और इस सम्मिलित सैन्य ने बहुतसे शत्रुओं को मौत के घाट उतारा। आख़िरकार पूरी तरह पराजित

होकर मुल्ला अंग्रेज़ों के रक्षित स्थान से भागकर मिजर्टिन (Mijertin) के लोगों की शरण में जा रहा।

सोमालीलैंड के उपर्युक्त युद्ध में गंगा रिसाले के वीर सैनिकों ने प्रत्येक बार वीरता प्रदर्शित की, जिसकी अंग्रेज़ अफ़सरों-द्वारा बहुत प्रशंसा हुई। सर चार्ल्स इजर्टन (सोमालीलैंड फ़ील्ड फ़ोर्स का जेनरल ऑफ़िसर तथा कमांडिंग फ़ील्ड मार्शल) ने गंगा रिसाले की वीरता का वर्णन करते हुए लिखा—"सोमालीलैंड मे इस सेना ने लगातार अट्ठारह महीनों तक काम किया और जुलाई ई० स० १९०३ (वि० सं० १९६० श्रावण) से, जब से मैं फ़ील्ड फ़ोर्स का सेनाध्यक्ष नियुक्त हुआ हूं, इसने फ़ील्ड फ़ोर्स की समस्त लड़ाइयों में प्रमुख भाग लेकर अबतक की उपार्जित अपनी प्रतिष्ठा को ही बढ़ाया है। मैंने अपने पिछले मुरासिलों में उल्लेखनीय कार्य करनेवाले व्यक्तियों का नामोल्लेख कर दिया है। मेरा विश्वास है कि इस सेना-द्वारा प्रदर्शित वीरता तथा समय-समय पर आवश्यकतानुसार अधिक सेना भेजने में महाराजा साहब-द्वारा होनेवाली तत्परता के सम्बन्ध की सूचना उनको दे दी जायगी।"

गंगा रिसाले के वीर सैनिकों का सम्मान

गंगा रिसाले के युद्धक्षेत्र से लौटने पर तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड कर्ज़न ने वि० सं० १९६१ आषाढ़ वदि ११ (ई० स० १९०४ ता० ९ जुलाई) को महाराजा साहब के पास तार भेजा, जिसका आशय नीचे लिखे अनुसार है—

"इम्पीरियल सर्विस कैमल कोर के सोमालीलैंड से, जहां उसने बहुत बड़े संकट के अवसरों पर भी साहस और वीरता का परिचय दिया है, लौट आने पर मैं आपको बधाई देता हूं। उसने केवल सम्राट् की सेवा ही नहीं की है, किन्तु अपने राजा और राज्य की प्रतिष्ठा भी बढ़ाई है। मुझे भरोसा है कि सब अफ़सर और सैनिक सकुशल होंगे।"

इस युद्ध में की गई उत्तम सेवा के उपलक्ष्य में भारत सरकार ने बीकानेर से गंगा रिसाले के साथ जानेवाले मेजर जेनरल डबल्यू० जी० वॉकर (W. G. Walkar) को विक्टोरिया क्रॉस पदक और सूबेदार किशनसिंह को इंडियन ऑर्डर ऑव् मेरिट का पदक प्रदान कर सम्मानित किया।

ग्वालियर तथा मैसूर के महाराजाओं का बीकानेर जाना

वि० सं० १९६० मार्गशीर्ष वदि ५ (ई० स० १९०३ ता० ९ नवम्बर) को ग्वालियर के भूतपूर्व महाराजा सर माधवराव सिंधिया तथा वि० सं० १९६१ वैशाख वदि ७ (ई० स० १९०४ ता० ७ अप्रेल) को मैसूर के वर्तमान महाराजा सर कृष्णराज का बीकानेर में आगमन हुआ। महाराजा साहब ने अपने प्रतिष्ठित मेहमानों का बड़े प्रेम से स्वागत किया, जिससे इन राज्यों के बीच मित्रता का दृढ़ संबंध स्थापित हुआ।

महाराजा को के. सी. एस. आई की उपाधि मिलना

ई० स० १९०४ के जून (वि० सं० १९६१) मास में महाराजा साहब आबू गये। वहाँ राजपूताना के एजेंट गवर्नर जेनरल सर आर्थर मार्टिंडल ने सम्राट् के जन्म-दिन के उपलक्ष्य में होनेवाले दरबार में सम्राट् की ओर से इन्हें के० सी० एस० आई० (नाइट कमांडर ऑव् दि स्टार ऑव् इंडिया) के खिताब से विभूषित किया।

महाराजा का अंग्रेज़ सरकार के साथ गावों का परिवर्तन करना

मुग़ल बादशाहों-द्वारा बीकानेर के नरेशों को जागीर में दिये हुए कई गांव दक्षिण में भी थे, जिनमें से कुछ गावों पर बीकानेर राज्य का अधिकार बराबर चला आता था। वि० सं० १९६२ (ई० स० १९०५) में भारत सरकार ने औरंगाबाद की छावनी बढ़ाने का निश्चय कर उन गांवों पर अपना अधिकार करना चाहा। उपर्युक्त गांव बीकानेर से बहुत दूर होने के कारण शासन-कार्य चलाने में राज्य को कठिनाइयां होती थीं। इसलिए महाराजा साहब ने करणपुरा, पदमपुरा और केसरीसिंहपुरा नामक तीनों गांव भारत सरकार को सौंप दिये। तब भारत सरकार ने

इन गावों के बदले में पंजाब के हिसार ज़िले का बावलवास गांव (जिस पर बीकानेर राज्य का पैतृक स्वत्व चला आता था) संपूर्ण अधिकारों से तथा रत्ताखेड़ा नाम का नया गांव और पच्चीस हज़ार रुपये बीकानेर राज्य को दिये।

उपद्रवी जागीरदारों का प्रबन्ध करना

राज्य के सरदारों के साथ महाराजा का उचित बरताव था, तो भी स्वार्थी लोगों के बहकाने में आकर वि० सं० १९६२ (ई० स० १९०५) में कुछ सरदार उपद्रवी हो गये, जिसकी सूचना मिलते ही महाराजा साहब ने वस्तुस्थिति की जांच करना आवश्यक समझा। इसपर सरदारों ने भी एक सम्मिलित आवेदन पत्र-द्वारा अपनी शिकायतें महाराजा साहब के सम्मुख पेश कीं। उसपर विचार हो ही रहा था कि उपद्रवी सरदारों ने झगड़े को बढ़ा देना चाहा। तब महाराजा साहब ने कई छोटे-बड़े सरदारों के, जो वस्तुतः उपद्रवकारी न थे, अपराध क्षमा कर दिये। फिर उपद्रवी सरदारों के मुखिया बीदासर के ठाकुर हुकमसिंह, गोपालपुरा के ठाकुर रामसिंह तथा अजीतपुरा के ठाकुर भैरूंसिंह के अपराधों की जांच और फ़ैसले के लिए एक कमेटी नियत कर दी, जिसमें महाराज भैरवसिंह और प्रथम श्रेणी के दो सरदार ठाकुर हरिसिंह (महाजन) तथा ठाकुर कान्हसिंह (भूकरका) आदि रक्खे गये। इस कमेटी ने पूरी जांचकर उपर्युक्त सरदारों के अपराधी होने का फैसला दिया। अंत में वे महाराजा साहब की आज्ञानुसार बीकानेर के क़िले में नज़रकैद कर दिये गये, जिससे सरदारों का उपद्रव मिट गया और फिर कभी किसी को उपद्रव करने का साहस न हुआ।

प्रिंस ऑव् वेल्स का बीकानेर में आगमन

वि० सं० १९६२ (ई० स० १९०५) में भारत-भ्रमण के निमित्त प्रिन्स ऑव् वेल्स (परलोकवासी सम्राट् पंचम जॉर्ज) का प्रिंसेस मेरी के साथ आगमन हुआ। उदयपुर और जयपुर होते हुए मार्गशीर्ष वदि १३ (ता० २४ नवम्बर) को वे दोनों बीकानेर पहुंचे। महाराजा साहब ने उनका

बड़े समारोह के साथ स्वागत किया। इस अवसर पर महाराजा ने राजकुमार की बीकानेर यात्रा को चिरस्मरणीय बनाने के लिए 'प्रिन्स जॉर्ज मेमोरियल हॉल' का निर्माण करना निश्चय कर उसका शिलान्यास प्रिन्स के हाथ से करवाया, जो बीकानेर की दर्शनीय वस्तुओं में से है[1]। ता० २७ (मार्गशीर्ष सुदि १) तक प्रिन्स ऑव् वेल्स महाराजा साहब का मेहमान रहा; फिर वह गजनेर गया, जहां शिकार आदि आमोद-प्रमोद का प्रबंध था। वहां से बीकानेर लौटने पर लालगढ़ महल में उसने अपने हाथ से सोमालीलैंड में वीरता का परिचय देनेवाले गंगा रिसाले के नौ अफ़सरों को पदक प्रदान किये। बीकानेर से विदा होते समय उसने अपने ता० २७ नवम्बर के पत्र में महाराजा साहब को लिखा था—

मेरे प्रिय मित्र,

बीकानेर से विदा होते समय मैं पुनः कहना चाहता हूं कि आपके स्नेहपूर्ण संसर्ग और कृपापूर्ण मेहमानदारी में मैं और प्रिन्सेस बहुत प्रसन्न रहे। हम दोनों को बीकानेर छोड़ने का खेद है।

मैं आपको विश्वास दिला देना चाहता हूं कि भारतवर्ष की उन आनंददायक स्मृतियों में, जो मैं और प्रिन्सेस यहां से अपने साथ ले जावेंगे, कोई भी उतनी प्रिय न होगी, जितनी कि बीकानेर-निवास और आपकी मैत्री की स्मृतियां, जो अब सुदृढ़ हो गई हैं।

आपका सच्चा मित्र,

जॉर्ज० पी०

---

(१) प्रिन्स जॉर्ज मेमोरियल हॉल में कुछ वर्षों तक बीकानेर राज्य की व्यवस्थापक सभा के अधिवेशन हुए। फिर व्यवस्थापक सभा के लिए नवीन भवन निर्माण होने पर यहां पर पब्लिक लाइब्रेरी का रखना निश्चित हुआ। तदनन्तर सम्राट् पञ्चम जॉर्ज की रजत जुबिली की स्मृति में उक्त प्रिन्स जॉर्ज मेमोरियल हॉल की इमारत में वृद्धि होकर वहां पर पुस्तकालय (Library) स्थापित किया गया है। इस सुन्दर इमारत के बनवाने में राज्य का लगभग डेढ़ लाख रुपया व्यय हुआ।

इसके दूसरे वर्ष वि० सं० १९६३ मार्गशीर्ष सुदि ४ (ई०स० १९०६ ता० १९ नवंबर) को भारत के वाइसराय और गवर्नर जेनरल लॉर्ड मिन्टो का बीकानेर राज्य के हनुमानगढ़ क़स्बे में आगमन हुआ। ता० २१ को वह बीकानेर पहुंचा। महाराजा साहब ने राज्योचित रीति से उक्त वाइसराय का स्वागत किया। ता० २४ (मार्गशीर्ष सुदि ९) को राजकीय भोज हुआ, जिसमें वाइसराय ने इनकी शासन नीति की सराहना करते हुए इनके उदार व्यवहार की प्रशंसा की।

लॉर्ड मिंटो का बीकानेर जाना

इनकी उत्तम शासन-प्रणाली और कर्तव्य परायणता के उपलक्ष्य में ई० स० १९०७ ता० १ जनवरी (वि० सं० १९६३ माघ वदि २) को नवीन वर्ष के उपाधि-वितरण के अवसर पर सम्राट् एडवर्ड सप्तम-द्वारा इनको जी० सी० आई० ई० (नाइट ग्रैंड कमांडर ऑव् दि इंडियन एम्पायर) की उपाधि मिली। फ़रवरी मास में लॉर्ड मिन्टो का आगरे में आगमन होनेवाला था। इसलिए उक्त लॉर्ड द्वारा निमंत्रित किये जाने पर ये आगरा गये, जहां वाइसराय लॉर्ड मिंटो ने इन्हें जी० सी० आई० ई० के पदक से विभूषित किया। तदनन्तर मार्च महीने में ये धौलपुर गये।

महाराजा को जी. सी. आई. ई का ख़िताब मिलना

राज्य-कार्य में सतत परिश्रम करते रहने के कारण महाराजा का स्वास्थ्य कुछ-कुछ गिरने लगा था। अतएव वि० सं० १९६४ के वैशाख (ई० स० १९०७ मई) मास में इन्होंने महाराजकुमार शार्दूलसिंह सहित स्वास्थ्य-सुधार के लिए यूरोप की यात्रा की। लंदन पहुंचने पर इनका सम्राट् एडवर्ड सप्तम (परलोकवासी) और सम्राज्ञी अलेक्ज़ेन्ड्रा से मिलना हुआ। उन दिनों वहां पर डेन्मार्क का बादशाह फ्रेड्रिक (आठवां) भी उपस्थित था। उसके सम्मान में सम्राट् की तरफ से बृहत् भोज हुआ, जिसमें महाराजा साहब भी निमंत्रित किये गये। इंग्लैंड में रहते समय इनकी प्रिंस ऑव् वेल्स, तत्कालीन भारत-सचिव लॉर्ड मॉर्ले आदि

महाराजा की यूरोप यात्रा

प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मुलाक़ात हुई। वहां से रवाना होकर ये जर्मनी गये, जहां इनके मित्र 'ग्रांड ड्यूक ऑव् हेसी' ने इनका बड़ा आदर-सम्मान किया। तदनन्तर ये वहां से लौटकर ता० ११ अक्टोबर (आश्विन सुदि ३) को बीकानेर पहुंचे।

महाराजा का गया-यात्रा के लिए जाना

निरन्तर राज्य की उन्नति में दत्तचित्त रहने पर भी महाराजा साहब ने लौकिक व्यवहारों और धार्मिक विचारों के पालन में अन्तर नहीं आने दिया। कुल परंपरागत हिन्दू धर्म और उसकी संस्कृति पर पूर्ण विश्वास होने से महाराजा ने गया श्राद्ध कर पितृऋण से मुक्त होने का निश्चय किया। तदनुसार ई० स० १६०८ (वि० सं० १६६४) के आरंभ में ये गया-यात्रा के लिए रवाना हुए जहां दो सप्ताह तक ठहरकर इन्होंने विधिपूर्वक श्राद्ध आदि धार्मिक कृत्यों को पूरा किया।

महाराजा का तीसरा विवाह

इनके दो विवाह इससे पूर्व हुए थे, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। उनमें से महाराणी राणावत का वि० सं० १६६३ भाद्रपद वदि ३० (ई० स० १६०६ ता० १६ अगस्त) को देहांत हो गया। वि० सं० १६६५ वैशाख सुदि ३ (ई० स० १६०८ ता० ३ मई) को इन्होंने अपना तीसरा विवाह बीकमकोर (मारवाड़ इलाक़ा) के ताज़ीमी ठाकुर बहादुरसिंह भाटी की पुत्री से किया, जिससे वि० सं० १६६६ चैत्र सुदि ८ (ई० स० १६०६ ता० २६ मार्च) को महाराजकुमार विजयसिंह (स्वर्गवासी) का जन्म हुआ।

महाराजा का लेफ़्टेनेंट कर्नल नियत होना

वि० सं० १६६५ (ई० स० १६०६) में नवीन वर्ष के उपाधि-वितरण के अवसर पर सम्राट् एडवर्ड सप्तम ने इनको अंग्रेज़ी सेना का सम्माननीय लेफ़्टेनेंट कर्नल (सेकिंड लांसर्स में) नियत किया।

उसी वर्ष कपूरथला के वर्तमान महाराजा सर जगजीतबहादुरसिंह का बीकानेर में आगमन हुआ। इन्होंने उक्त महाराजा का उचित

महाराजा कपूरथला का बीकानेर और महाराजा का कपूरथला जाना

सम्मान किया। ई० स० १९१० के जनवरी (वि० सं० १९६६ पौष) मास में महाराजा साहब कलकत्ता गये। वहां से लौटने के बाद ये कपूरथला गये, जहां के महाराजा ने इनका राज्योचित सम्मान किया।

ई० स० १९१० ता० ६ मई (वि० सं० १९६७ वैशाख वदि १२) को लंदन नगर में सम्राट् एडवर्ड सप्तम का परलोकवास हो गया। इस

महाराजा का सम्राट् पञ्चम जॉर्ज का ए. डी. सी. नियत होना

समाचार के बीकानेर में पहुंचने पर महाराजा साहब ने बड़ा शोक मनाया। तीन दिन तक राज्य के सब दफ़्तर और बाज़ार बंद रहे। एडवर्ड (सप्तम) के पीछे जॉर्ज (पञ्चम) सम्राट् हुआ। उसी वर्ष जून महीने में नव सम्राट् ने अपनी वर्ष गांठ के अवसर पर महाराजा साहब को अंग्रेज़ी सेना का कर्नल और अपना ए० डी० सी० बनाया।

अंग्रेज़ सरकार के साथ बीकानेर राज्य का संधि-सम्बन्ध होने के पीछे भी शेखावाटी आदि के राजपूतों का उपद्रव रहने से सुजानगढ़

बीकानेर की पोलिटिकल एजेन्सी के कार्य में परिवर्तन होना

क़स्बे में एक अंग्रेज़ अफ़सर रहता था और पीछे से पोलिटिकल एजेंट का काम भी उसके सुपुर्द हो गया था। महाराजा डूंगरसिंह की गद्दीनशीनी के बाद वह अंग्रेज़ अफ़सर राजधानी बीकानेर में रहने लगा, जो बीकानेर राज्य का पोलिटिकल एजेंट कहलाता था। ई० स० १९०२ (वि० सं० १९५९) से महाराजा साहब ने शासन-कार्य नवीन शैली से आरंभ किया, जो सफल हुआ, जिससे अंग्रेज़ सरकार ने बीकानेर में पृथक् पोलिटिकल एजेन्ट रखने की आवश्यकता न समझकर वि० सं० १९६७ (ई० स० १९१०) में बीकानेर राज्य के पोलिटिकल एजेन्ट का पद तोड़ दिया और पश्चिमी राजपूताना की रेज़िडेन्सी से इस राज्य का सम्बन्ध रखा। फिर ई० स० १९१९ (वि० सं० १९७६) में आबू-स्थित राजपूताना के रेज़िडेंट (एजेन्ट टू दि गवर्नर जेनरल) से खतो किताबत का सम्बन्ध रखा गया, जिससे अंग्रेज़ सरकार के साथ होनेवाले पत्र-व्यवहार में बहुत

सुविधा हो गई।

वि० सं० १९६८ (ई० स० १९११) में लंदन में सम्राट् जॉर्ज पंचम का राज्याभिषेकोत्सव मनाया गया, जिसमें सम्मिलित होने के लिए निमंत्रण मिलने पर महाराजा साहब अपने महाराजकुमार और कतिपय सरदारों सहित ता० ६ मई (वैशाख सुदि ८) को रवाना होकर ता० २२ मई (ज्येष्ठ वदि ९) को लन्दन पहुंचे और राज्याभिषेकोत्सव सम्बन्धी कार्यों में सम्मिलित हुए। इनकी नीतिनिपुणता और शासन-कुशलता से प्रभावित होकर इस यात्रा के समय केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी ने इन्हें एल० एल० डी० (डॉक्टर ऑव् लॉ) की डिग्री से सम्मानित किया। दो महीने तक लंदन में रहकर ये बीकानेर लौटे।

महाराजा का सम्राट् जॉर्ज पंचम के राज्याभिषेकोत्सव में सम्मिलित होना

उसी वर्ष दिसंबर मास में सम्राट् का भारत में आकर यहां की प्रसिद्ध और प्राचीन राजधानी दिल्ली में राज्याभिषेक के उपलक्ष्य में दरबार करने का कार्यक्रम था, जिसमें उपस्थित होने के लिए भारत के देशी नरेशों तथा अन्य प्रतिष्ठित पुरुषों के पास निमंत्रण भेजे गये। उस समय भारत में बङ्गविच्छेद-नीति से असंतोष फैल रहा था, किन्तु तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज की उदार नीति से सफलता हुई। उक्त वाइसराय ने महाराजा साहब को दरबार कमेटी का सदस्य नियत किया। इन्होंने इस उत्सव को सफल बनाने में पूरा भाग लिया, जिससे दरबार के प्रबन्ध का कार्य सानंद सम्पन्न हुआ। ता० ७ दिसम्बर (पौष वदि २) को सम्राट् और सम्राज्ञी का दिल्ली में आगमन होने पर महाराजा साहब भी अन्य नरेशों के साथ उनके स्वागत में सम्मिलित हुए। उसी दिन ये राजदम्पति से मुलाक़ात के लिए उनके शिविर में गये। फिर सम्राट् के प्रतिनिधि वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज ने इनके कैम्प में जाकर सम्राट् की ओर से इनसे मुलाक़ात की। ता० १२ दिसंबर (पौष वदि ७) को विशाल दरबार हुआ, जिसमें महाराजा साहब भी सम्मिलित हुए। इस दरबार के उपलक्ष्य में

सम्राट् जॉर्ज पंचम का भारत में दरबार

सम्राट् ने इनको जी० सी० एस० आई० (ग्रांड कमान्डर ऑव् दि स्टार ऑव् इण्डिया) के सम्मान से विभूषित किया।

महाराजा साहब को राज्याधिकार मिलने के चार वर्ष पीछे तक राज्य-प्रबंध में कोई विशेष परिवर्तन न हुआ और रीजेंसी कौंसिल के दिनों में जिस प्रकार कार्य होता था उसी शैली से होता रहा। ई० स० १६०२ (वि० सं० १९५९) में महाराजा साहब को इंग्लैंड-यात्रा के समय वहां की शासन-प्रणाली को देखने का अवसर मिला। इन्होंने वहां से लौटते ही शासन-सुधार का सूत्रपात किया। शासन प्रणाली में जो जो परिवर्तन हुए, उनका संक्षेप से यहां वर्णन किया जाता है—

शासन-प्रणाली में परिवर्तन होना

शासन चलाने का कार्य कौंसिल-द्वारा होने पर भी मुख्य-मुख्य कार्य प्रधान की आज्ञानुसार होते थे, जिससे खराबियां होना अवश्यंभावी था। प्रधान अपनी सर्वोच्च सत्ता के बल पर प्रतिकूल मत होने पर भी स्वेच्छाचार का प्रयोग करता, जिससे दलबंदी हो जाती थी। इस बुराई को मिटाने के लिए महाराजा ने प्रधान का पद तोड़कर महकमा खास स्थापित किया और उसका कार्य छः विभागों में वितीर्ण कर प्रत्येक विभाग का अलग-अलग सेक्रेटरी नियत किया। जहां तक हो सका इन्होंने इस कार्य को चलाने के लिए ईमानदार और योग्य व्यक्तियों को चुना। इन पदों की नियुक्ति के समय किसी जाति विशेष का ध्यान न रखकर योग्यता को ही प्रथम स्थान दिया गया। इस अवसर पर ये राजपूत सरदारों को नहीं भूले और उन्हें भी उनकी योग्यतानुसार पद दिये गये। अब कौंसिल का कार्य केवल सलाह देना ही रह गया। इस परिवर्तन से शासन की सर्वोच्च सत्ता महाराजा साहब के ही हाथ में रही। ई० स० १९१० (वि० सं० १९६७) में उपर्युक्त विभाग महकमा खास के अंतर्गत कौंसिल के मेंबरों के अधिकार में कर दिये गये।

ई० स० १९०९ (वि० सं० १९६६) में ज़मीन की नवीन पैमाइश होकर पैदावार के अनुसार लगान का दर निश्चित हुआ।

जुडीशियल (न्याय विभाग के) कार्य के लिए केवल अपील कोर्ट ही सर्वोच्च अदालत थी। ई० स० १९१० (वि० सं० १९६७) में महाराजा साहब ने चीफ़ कोर्ट की स्थापना की और योग्य तथा अनुभवी व्यक्तियों को जज के पद पर नियत किया, जिससे प्रजा की न्याय-संबंधी कठिनाइयां किसी प्रकार मिट गईं।

शासन-व्यवस्था को चलाने के लिए बीकानेर राज्य में क़ानूनों का निर्माण बहुत कम हुआ था। इसलिए क़ानूनों का निर्माण कर इन्होंने फ़ौजदारी, स्टांप, आबकारी, सायर (चुंगी) आदि के क़ानून अपने राज्य में जारी किये।

राज्य के हिसाबी काम में बहुत कुछ सुधार होकर माल के महकमे की बड़ी उन्नति हुई, जिससे आय में समुचित वृद्धि हुई।

कृषि-कर्म के लिए काश्तकारों को सहूलियतें देने तथा नहरें लाकर कृषिकर्म बढ़ाने की योजनाएं हुईं। कई नवीन कुएं खुदवाये गये। कई जगह बांध बंधवाकर वर्षा का पानी रोका गया, जिससे पशुपालन और कृषिकर्म में बड़ा सहारा मिला। रीजेंसी कौंसिल के अंतिम पांच वर्षों में जहां बीकानेर राज्य में खालसे में केवल १४७५३८ बीघा ज़मीन प्रतिवर्ष काश्त होने का औसत था, वहां महाराजा साहब को राज्याधिकार मिलने के बाद ई० स० १९१२ (वि० सं० १९६९) तक ४५०४९५ बीघा ज़मीन प्रतिवर्ष काश्त होने का औसत हुआ।

सेना और पुलिस विभाग का संगठन होकर उनको आधुनिक ढंग में ढाला गया। पुलिस के उत्तम प्रबंध से वारदातों का भय कम हो गया। सैन्य के सुसंगठन का परिणाम यह हुआ कि उसने यूरोप आदि देशों में जाकर युद्धों में वीरता प्रदर्शित की, जिससे बीकानेर राज्य की बड़ी ख्याति हुई।

व्यापार की वृद्धि के लिए जगह-जगह मंडियां खोली गईं, जिससे व्यापार में वृद्धि होकर आबादी बढ़ने लगी। कई गांव नये बसे, जिससे पड़त ज़मीन उठने लगी। राज्य के उत्तरी खालसा-विभाग में ज़मीन का

मौरूसी हक़ काश्तकारों का माना गया, जिससे उनकी कृषिकार्य की तरफ़ प्रवृत्ति बढ़ने लगी।

शिक्षा का विस्तार होकर राजधानी बीकानेर में बालक और बालिकाओं के लिए कई नवीन स्कूल खोले गये तथा गांवों में भी लगभग ३० नये स्कूल खुले।

राजधानी बीकानेर में अस्पताल की उन्नति हुई और इलाकों में आवश्यकतानुसार ख़ास-ख़ास क़स्बों में डिस्पेंसरियां तथा बड़े स्थानों में अस्पताल खोले गये, जिससे इन कार्यों का व्यय ई० स० १६१२ (वि० सं० १६६६) तक पहले से तिगुना होने लगा।

राज्य की रेल्वे लाइन की लंबाई ई० स० १८६८ (वि० सं० १६५५) के पूर्व केवल ४८ मील ही थी। ई० स० १६०२ (वि० सं० १६५६) में बीकानेर से भटिंडा तक लगभग २०२ मील की लाइन खुल गई। फिर ई० स० १६११ ता० ८ जुलाई (वि० सं० १६६८ आषाढ़ सुदि १२) को बीकानेर से सुजानगढ़ तक हिसार सेक्शन के लिए लगभग १३६ मील का टुकड़ा और बढ़ाया गया। ई० स० १६१२ के नवंबर (वि० सं० १६६६ कार्तिक) मास में बीकानेर से रतनगढ़ तक ८५ मील की लाइन फिर खोल दी गई, जिससे आवागमन की अनुकूलता होने से आबादी भी बढ़ी। डाक, तार, टेलीफ़ोन, बिजली और पानी के नल आदि के कामों में भी वृद्धि हुई।

जन साधारण के उपयोग के लिए मार्ग ठीक किये गये। राजधानी में सड़कें बढ़ाई गईं तथा कोड़मदेसर, गजनेर और कोलायतजी तक पक्की सड़कें बना दी गईं।

कर्ज़न बाग, विक्टोरिया मेमोरियल क्लब, प्रिंस जॉर्ज मेमोरियल हॉल, वाल्टर नोबल्स हाईस्कूल, एडवर्ड रोड आदि महत्वपूर्ण कार्य भी इन्हीं दस वर्षों में किये गये, जिनसे नगर की सुंदरता में वृद्धि हुई।

बड़े-बड़े क़स्बों में म्यूनीसिपैलिटियां स्थापित की गईं, जिनसे वहां स्वच्छता रहने लगी और छूत के रोग, चेचक आदि को भी टीके-द्वारा

रोकने की व्यवस्था की गई।

कई प्राचीन स्थानों का जीर्णोद्धार होकर देवस्थानों का सुधार हुआ एवं कई अनुचित कर उठा दिये गये।

राजपूतों में विद्याप्रचार का कार्य किया गया और बहुविवाह, टीका आदि कुरीतियों को मिटाने की चेष्टा की गई।

असहाय व्यक्तियों एवं विधवाओं आदि के भरण-पोषण का प्रबंध किया गया। राजधानी के दुर्ग में कई नवीन भवन तथा दूसरे इलाक़ों में भी कई सुंदर इमारतें बनवाई गईं।

उपर्युक्त कार्यों से स्पष्ट है कि महाराजा साहब ने दस वर्ष के स्वल्प समय में अपने राज्य की बहुत कुछ उन्नति की, जिससे राज्य की आय में वृद्धि होकर लगभग ५३ लाख रुपये की वार्षिक आय होने लगी।

रजतजयन्ती का मनाया जाना

वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में महाराजा साहब को सिंहासनारूढ़ हुए पच्चीस वर्ष हो गये। यह बीकानेर की प्रजा के लिए बड़ा ही शुभ अवसर था। अतः बीकानेर राज्य की प्रजा ने रजतजयन्ती महोत्सव बड़े समारोहपूर्वक मनाना निश्चय किया। महाराजा की स्वीकृति होने पर ता० २० सितम्बर (भाद्रपद सुदि प्रथम १०) शुक्रवार से यह उत्सव आरंभ हुआ और कई दिनों तक राज्य में भोजों और जलसों की धूमधाम रही। ता० २४ सितम्बर (भाद्रपद सुदि १३) को दरबार होने पर रेज़िडेन्ट कर्नल विंढम ने महाराजा साहब को २५ वर्ष तक योग्यता-पूर्वक शासन करने के लिए बधाई दी।

इस शुभ अवसर पर महाराजा साहब ने डूंगर मेमोरियल कॉलेज के नये भवन का उद्‌घाटन किया, जो राज्य में बालकों को अंग्रेज़ी की उच्च शिक्षा प्रदान करने का एक ही कालेज है। साथ ही विद्यार्थियों की रुचि पढ़ने की ओर लगाने के लिए इन्होंने बहुत सी छात्रवृत्तियां राज्यकोष से दी जाने की घोषणा की। बालिकाओं के लिए भी विद्यालय बनवाकर इन्होंने उन्हें छात्रवृत्तियां देना निर्धारित किया। पर्दे में रहनेवाली

स्त्रियों के शिक्षण के लिए विशेष रूप से स्त्री शिक्षिकाएं नियुक्त करने का आदेश किया गया। इसके अतिरिक्त राजधानी में एक ज़नाना अस्पताल खोलने के लिए मंजूरी दी गई तथा बड़े अस्पताल के लिए "एक्सरे" आदि यंत्र मंगवाये गये।

ग़रीबों और योग्य व्यक्तियों को दान देने के साथ ही महाराजा साहब ने प्रजाहित को ध्यान में रखते हुए, प्रजा को अपने झगड़ों का निपटारा स्वयं करने के लिए पंचायतें खोलने तथा प्रजा प्रतिनिधि-सभा (People's Representative Assembly) बनाने की घोषणा की। कचहरियों की भाषा हिंदी कर दी गई तथा अन्न पर के आयात तथा निर्यात कर उठा दिये गये। व्यापारियों की सुविधा के लिए ज़कात के दर में परिवर्त्तन किया गया। राजवी सरदारों की परवरिश के लिए प्रबंध किया गया तथा ताज़ीमी सरदारों के लिए कितनी ही रियायतें की गईं। काश्तकारों का बहुत कुछ पिछला क़र्ज़ा माफ़ कर दिया गया और फ़ौज के लोगों के वेतन आदि में भी वृद्धि की गई।

इसके अतिरिक्त इन्होंने महाराज भैरूंसिंह को 'बहादुर' (ज़ाती), ठाकुर हरिसिंह (महाजन) तथा ठाकुर जीवराजसिंह तंवर (रिड़ी) को 'राजा' (ज़ाती) और ठाकुर कान्हसिंह (भूकरका) को 'राव' (ज़ाती) के ख़िताब दिये। कुंवर गुलाबसिंह (राजासर, असिस्टेंट प्राइवेट सेक्रेटरी) तथा ठाकुर भूरसिंह (रायसर) को ताज़ीम और जागीरें प्रदान की गईं। ठाकुर शार्दूलसिंह (बगसेऊ), मेजर ठाकुर गोपसिंह (मालासर), कैप्टेन ठाकुर बख़्तावरसिंह (समन्दसर) आदि की पहले की जागीरों में वृद्धि की गई। कुछ सरदारों की प्रतिष्ठा में वृद्धि कर ताज़ीम, पैर में स्वर्णाभूषण, नक़्क़ारा, निशान का सम्मान दिया गया। कार्यकुशल राज्याधिकारियों आदि को भी उनकी योग्यतानुसार सिरोपाव, प्रमाणपत्र आदि दिये गये।

उसी वर्ष नवम्बर (मार्गशीर्ष) मास में भारत के वाइसराय और

गवर्नर-जेनरल लॉर्ड हार्डिंज का राजपूताने का दौरा करते हुए बीकानेर जाना हुआ। इस अवसर पर ता० २६ (मार्गशीर्ष वदि २) को वाइसराय ने पब्लिक गार्डन का उद्घाटन किया, जो बीकानेर की प्रजा के मनोरंजन के लिए सुंदर स्थान है। ता० ३० (मार्गशीर्ष वदि ६) को राजकीय भोज हुआ, जिसमें वाइसराय ने महाराजा साहब के शासन-सुधार आदि की प्रशंसा करते हुए इनकी उदारता की सराहना की।

लॉर्ड हार्डिंज का बीकानेर जाना

बीकानेर राज्य और अंग्रेज़ सरकार के बीच वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में महाराजा डूंगरसिंह के समय नमक बनाने के सम्बन्ध में एक इक़रारनामा हुआ था, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। अब उक्त इक़रारनामे में परिवर्त्तन की आवश्यकता जान पड़ी। निदान वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में नीचे लिखा नया इक़रारनामा हुआ—

नमक का नया इक़रारनामा होना

शर्त पहली

श्रीमान् महाराजा साहब अपने राज्य में नमक का बनना अथवा जमा होना बन्द करने अथवा रोकने का इकरार करते हैं।

शर्त दूसरी

श्रीमान् महाराजा साहब अंग्रेज़ सरकार-द्वारा कर लगाये हुए नमक के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के भी नमक का अपने राज्य में आयात बन्द करने अथवा रोकने का इक़रार करते हैं। अंग्रेज़ सरकार भी शर्त सातवीं तथा तीसरी में उल्लिखित नमक के अतिरिक्त अन्य नमक का श्रीमान् महाराजा साहब के राज्य में प्रवेश बन्द करने अथवा रोकने का इक़रार करती है। साथ ही श्रीमान् महाराजा साहब अपने राज्य से नमक का निर्यात बन्द करने अथवा रोकने का इक़रार करते हैं।

शर्त तीसरी

श्रीमान् महाराजा साहब किसी भी सरकारी नमक के कारखाने के नमक को वहां के अधिकारी-द्वारा दिये हुए रवन्ने की शर्तों के अनुसार

अपने राज्य से जाने देने का इक़रार करते हैं।

शर्त चौथी

वीकानेर राज्य की सीमा में नमक पर किसी प्रकार का भी कर न लिया जायगा।

शर्त पांचवीं

श्रीमान् महाराजा साहव अपने राज्य से भांग, गांजा, शराव, अफ़ीम, कोकीन तथा इनसे वने हुए मादक द्रव्यों का अंग्रेज़ी अमलदारी में भेजा जाना वन्द करने अथवा रोकने का इक़रार करते हैं।

शर्त छठी

ऊपर आई हुई पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी तथा पांचवीं शर्तों का पूरा-पूरा पालन कराने में श्रीमान् महाराजा साहव का जो खर्चा लगेगा उसके एवज़ में अंग्रेज़ सरकार उन्हें ६००० रुपये वार्षिक देने का इक़रार करती है।

शर्त सातवीं

वीकानेर राज्य के निवासियों के व्यवहार के लिए जितने भी नमक की आवश्यकता होगी वह अंग्रेज़ सरकार डीडवाणा, पचपद्रा तथा सांभर के नमक के कारखानों से देने का इक़रार करती है। ऐसे नमक पर उसके भेजे जाते समय वह कर लगाया जायगा जो उस समय वृटिश भारत में प्रचलित होगा। वीकानेर राज्य के इस्तेमाल के लिए दिये हुए समस्त नमक का हिसाव रक्खा जायगा, जिसकी एक नक़ल निर्धारित समय पर श्रीमान् महाराजा साहव को भी दी जायगी। उपर्युक्त नमक पर वार्षिक ७६००० मन तक जो कर लिया जायगा उसका आधा अंग्रेज़ सरकार श्रीमान् महाराजा साहव को देगी।

शर्त आठवीं

अंग्रेज़ सरकार की आमदनी सुरक्षित रखने के लिए तैयार किये गये इस इक़रारनामे के अपूर्ण होने की दशा में अथवा उस दशा में जव अंग्रेज़ सरकार को सन्तोषपूर्ण रीति से यह प्रमाणित हो जाय कि

बीकानेर राज्य के मनुष्यों अथवा पशुओं की संख्या में वृद्धि होने अथवा श्रीमान् महाराजा साहब की शक्ति से परे अन्य कारणों से शर्त सातवीं में दिया हुआ ७६००० मन नमक बीकानेर राज्य के निवासियों की साधारण आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं है अथवा नमक पर से भविष्य में कर हटाये जाने की दशा में इस इक़रारनामे की शर्तों में परिवर्त्तन हो सकेगा।

शर्त नवीं

यह इक़रारनामा ता० १ जनवरी ई० स० १९१३ (वि० सं० १९६९ पौष वदि ९) से अमल में लाया जायगा।

शर्त दसवीं

ता० २४ जनवरी ई० स० १८७९ (वि० सं० १९३५ माघ सुदि २) को बीकानेर के महाराजा तथा अंग्रेज़ सरकार के बीच किया हुआ नमक का इक़रारनामा आज से रद्द किया जाता है।

(हस्ताक्षर) ई० जी० कॉल्विन

राजपूताने का एजेन्ट गवर्नर जेनरल।

(हस्ताक्षर) भैरूंसिंह

उपप्रधान; राजसभा, बीकानेर।

(हस्ताक्षर) सादूलसिंह।

रेवेन्यू मेम्बर, बीकानेर राज्य।

(हस्ताक्षर) हार्डिंज ऑव् पेंसहर्स्ट।

भारत का वाइसराय तथा गवर्नर जेनरल।

यह इक़रारनामा ता० २४ जुलाई ई० स० १९१३ (वि० सं० १९७० श्रावण वदि ६) को शिमला की कौंसिल में भारत के गवर्नर जेनरल-द्वारा मंजूर किया गया।

(हस्ताक्षर) ए० एच० मैक्मेहॉन

भारत सरकार के वैदेशिक विभाग का मंत्री।

प्रजा को शासन-संबंधी कार्यों में योग देने के लिए महाराजा साहब ने अपनी रजत जयंती के अवसर पर पीपल्स रिप्रेज़ेन्टेटिव असेम्ब्ली स्थापित करने की घोषणा की थी। तदनुसार वि० सं० १९७० कार्तिक सुदि १२ (ई० स० १९१३ ता० १० नवंबर) को उपर्युक्त असेम्ब्ली की स्थापना हो गई और उसमें जनता के चुने हुए प्रतिनिधि भी लिये जाने लगे।

प्रजा-प्रतिनिधि सभा की स्थापना

जर्मन-सम्राट् विलियम कैसर (द्वितीय) के राजत्व-काल में जर्मनी अपनी जल, स्थल एवं हवाई शक्ति बढ़ाने में सरगर्मी के साथ लगा हुआ था। इसका कारण कैसर की महान् जर्मन-साम्राज्य स्थापित करने की आकांक्षा ही थी। जर्मनी का व्यापार अन्य देशों में बढ़ा चढ़ा था। प्रायः हर एक देश में जर्मनी का माल बहुतायत से बिकता था। उसका यह व्यापारिक आधिपत्य तथा सैनिक महत्वाकांक्षा प्रत्येक यूरोपीय राष्ट्र को खटक रही थी। ऊपर से तो सभी राष्ट्रों के साथ उसका मेल था, पर भीतर ही भीतर सब उससे अप्रसन्न थे। तात्पर्य यह कि यूरोप में सर्वत्र बारूद बिछी हुई थी और युद्ध के आविर्भाव के लिए केवल एक आग की चिनगारी की आवश्यकता थी। ऐसा अवसर भी शीघ्र ही उपस्थित हो गया। केवल एकदेशीय घटना के बहाने ही संसार के सभी बड़े-बड़े राष्ट्र अपनी रक्त-पिपासा बुझाने के लिए एक या दूसरे पक्ष के खिलाफ़ युद्ध के मैदान में उतर पड़े।

विश्वव्यापी महायुद्ध का सूत्रपात

वि० सं० १९७१ के आषाढ (ई० स० १९१४ जून) मास में आस्ट्रिया के बोस्निया (Bosnia) इलाक़े के मुख्य नगर सेराजेवो (Serajevo) से गुज़रते समय आस्ट्रिया-हंगरी (Austria and Hungary) के ज्येष्ठ राजकुमार आर्च ड्यूक फ्रान्ज़ फ़र्डिनेंड (Archduke Frans Ferdinand) तथा उसकी पत्नी की हत्या किये जाने का समाचार प्रकाशित होते ही सब राष्ट्र इस घटना से चौंक उठे। हत्या तो हुई थी आस्ट्रिया की भूमि पर, परन्तु हत्याकारी के सार्वियन जाति का होने के कारण आस्ट्रिया की सरकार ने सरबिया (Serbia) की

सरकार से हत्या के सम्बन्ध में निष्पक्ष जांच करने और हत्याकारियों तथा उस साज़िश में भाग लेनेवाले लोगों को दंड देने के लिए जो कमेटी बने उसमें अपने प्रतिनिधि भी रक्खे जाने की मांग पेश की। इसके अस्वीकार होते ही उसने सर्विया के विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी। संभव था कि यह युद्ध इन्हीं दो देशों के बीच होता, परन्तु इसी बीच रूस के आस्ट्रिया के ख़िलाफ़ तलवार उठाने का पता पाकर जर्मनी को भी आस्ट्रिया का मित्र राष्ट्र होने के कारण उस (आस्ट्रिया) की सहायता के लिए युद्ध में उतरना पड़ा। उस (जर्मनी) ने रूस के पास युद्ध की तैयारियां बन्द करने के लिए १२ घंटे की अवधि रखकर अंतिम सूचना भेजी, जिसके अस्वीकार किये जाने पर श्रावण सुदि १० (ता० १ अगस्त) को उसने रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इंग्लैंड को जर्मनी ने इसके पूर्व ही तटस्थ रहने के लिए लिखा था, परन्तु किसी एक का पक्षपाती न होने पर भी फ़ान्स की तरफ़ विशेष झुकाव होने से उसके लिखने की उपेक्षा की गई। फ़ान्स और रूस की आपस में मित्रता थी। युद्ध आरंभ होते ही जर्मनी ने फ्रान्स के आक्रमणों से अपने आपको सुरक्षित रखने के लिए बेल्जियम को अपने अधीन करना बहुत आवश्यक समझा। एतदर्थ उसने वि० सं० १९२४ (ई० स० १८६७) की लंदन की संधि की अवहेलना कर बेल्जियम के भीतर घुसना शुरू किया। यह एक ऐसी घटना हुई, जिससे बाध्य होकर इंग्लैंड को भी जर्मनी के विरुद्ध हथियार उठाने पड़े। पहले तो अंग्रेज़ सरकार ने जर्मनी को इस कार्य से रोकने का प्रयत्न किया, पर जब उसने उस ओर ध्यान न दिया तो ता० ४ अगस्त (श्रावण सुदि १४) को उसकी तरफ़ से भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी गई।

अंग्रेज़ों के युद्ध में सम्मिलित होने की संभावना देख महाराजा साहब ने एक तार ई० स० १९१४ ता० ३ अगस्त (श्रावण सुदि १२) को सम्राट् पञ्चम जॉर्ज की सेवा में भेजकर साम्राज्य के लिए अपनी सेना के साथ इस युद्ध में उपस्थित होने की इच्छा प्रकट की और इसी सम्बन्ध में

महाराजा का महायुद्ध में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट करना

इन्होंने एक तार भारत के वाइसराय और गवर्नर-जेनरल लॉर्ड हार्डिंज के पास भी भेजा। सम्राट् ने उत्तर में लिखा—"आपने मेरे लिए युद्ध में सम्मिलित होने की अभिलाषा प्रकट करते हुए जो संदेश भेजा, उसके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। सैनिक चढ़ाई के विषय में अब तक कुछ निर्णय नहीं हुआ है, परन्तु ऐसा अवसर उपस्थित होने पर आप की इच्छाओं की अवहेलना न की जायगी।"

जब बेल्जियम में जर्मनी की सेनाओं ने पहुंचकर घमासान युद्ध आरम्भ कर दिया तो बेल्जियम की रक्षा के लिए अंग्रेज़-सेना ने प्रस्थान किया। उस समय भारतीय सेना को भी युद्धक्षेत्र में बुलवाने की आवश्यकता जान पड़ी। फलतः यह सूचना बीकानेर में भी पहुंची। महाराजा तो युद्ध में जाने के लिए पहले से ही तैयार थे, अतएव इस सूचना के पहुंचने पर इन्होंने ता० २६, २७ और २८ अगस्त (भाद्रपद सुदि ६, ७ और ८) को अपनी सेनाएं युद्धक्षेत्र के लिए रवाना कीं और शीघ्र ही इन्होंने भी युद्ध-क्षेत्र में जाने के लिए प्रस्थान किया। इन सेनाओं में गंगा रिसाले के साथ शार्दूल लाइट इन्फैन्ट्री के सैनिक भी शामिल थे, जो मेजर कुंवर जीवराज-सिंह बीदावत (लाखणसर, अब मेजर-जेनरल राजा जीवराजसिंह, सी० बी० ई०, सरदार बहादुर, सांडवा) कमांडिंग अफ़सर की अध्यक्षता में मिश्र (Egypt) तथा पैलेस्टाइन (Palestine) में नियुक्त किये गये। मिश्र में पहुंचने के बाद से ही बीकानेर से आई हुई इस ऊंट सेना की बड़ी मांग रहने लगी। युद्ध के प्रारंभिक दिनों में लगभग १०१ मील लंबी स्वेज़ नहर (Suez Canal) की रक्षा में लगी हुई कोई भी सेना गंगा रिसाले के सैनिकों के बिना पर्याप्त नहीं समझी जाती थी और बीकानेर के सैनिक पूर्व में पैलेस्टाइन से लगाकर पश्चिम में सोलम (Sollum) तथा दक्षिण में खारगा (Kharga) तक फैले हुए थे। बीकानेर की इस सेना के ज़िम्मे प्रधानतया शत्रुदल का पता लगाने एवं तुर्की सेना की चढ़ाइयों के मार्गों को खोज निकालने का काम था।

वि० सं० १९७१ मार्गशीर्ष सुदि ३ (ई० स० १९१४ ता० २० नवंबर)

को जब गंगा रिसाले के बीस सैनिक कन्टारा (Kantara) से २० मील पूर्व बिर-एल-नस (Bir-el-Nuss) में गश्त लगा रहे थे, तब दो सौ बदूनी (बद्दू Bedouins) धोखा देने के लिए सफ़ेद-झंडा (शान्ति का चिह्न) दिखाकर उनके पास तक पहुंच गये और उन्हें घेर लिया। ऐसी भीषण परिस्थिति में भी बीकानेर के उन इने-गिने सैनिकों ने साहस न छोड़ा और वे शत्रु पर टूट पड़े। बीस और दो सौ का मुक़ाबला ही क्या था; थोड़ी ही देर में बीकानेर के १३ सैनिक खेत रहे, तीन घायल हुए और केवल चार जीवित बचे। 'आफ़िशियल हिस्ट्री ऑव् दि ग्रेट वार, मिलिटरी ऑपरेशन्स इन इजिप्ट ऐंड पैलेस्टाइन' नामक ग्रंथ की पहली जिल्द में उपर्युक्त बीकानेर के सैनिकों के बड़ी वीरता के साथ आत्मोत्सर्ग करने का उल्लेख है।

महायुद्ध में किये गये बीकानेर के सैनिकों के वीरोचित कार्य

बीकानेर की सेना का तुर्की सेना के साथ यह पहला मुक़ाबला था। इस लड़ाई में अभूतपूर्व साहस एवं कष्ट-सहिष्णुता का परिचय देनेवाले दो बीकानेरी सैनिकों के नाम उल्लेखनीय हैं। करीमखां सिपाही लड़ता हुआ शत्रुओं के कुछ सैनिकों-द्वारा बन्दी कर लिया गया था और वे उसे अपने साथ ले जा रहे थे, परन्तु मार्ग में अपने एक अफ़सर की सलाह के अनुसार उन्होंने उसे मारने का निश्चय किया तथा उसकी गर्दन पर तलवार के घाव कर उसे मुर्दा समझ अपनी छावनी का मार्ग लिया। वह सैनिक चोट से केवल बेहोश हो गया था। होश आने पर वह अपने हाथों से अपनी अधकटी गर्दन को संभाले हुए कन्टारा (२० मील) तक चला गया। इसी प्रकार फैयाज़अलीखां को भी शत्रु मुर्दा समझकर छोड़ गये थे। होश आने पर वह भी बिर-एल-नस होता हुआ कन्टारा जा पहुंचा। पीछे से उन दोनों सैनिकों को महाराजा साहब ने उचित पुरस्कार देकर उनकी पद-वृद्धि की।

वि० सं० १९७१ के माघ तथा फाल्गुन (ई० स० १९१५ जनवरी और फ़रवरी) महीनों में तुर्की सेना के जमालपाशा (Djemal Pasha) की अध्यक्षता में अग्रसर होने पर, गंगा रिसाले के सैनिकों की कई बार उससे

मुठभेड़ हुई और उसके परास्त होकर भागने पर उन्हों(गंगा रिसाले के सैनिकों)ने बहुत दूर तक उनका पीछा किया।

बीकानेर की सेना की तत्परता और कर्तव्य-परायणता का अंग्रेज़ी सेना पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसकी निःस्वार्थ सेवा अंग्रेज़ सरकार के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध हुई और शत्रु-सेना उधर आगे न बढ़ सकी। वि० सं० १९७३ (ई० स० १९१६) में स्वेज़ नहर के पूर्वी भाग में स्वरक्षा का प्रबंध करने के उपरांत जब उत्तरी भाग से सिनाय (Sinai) होकर पैलेस्टाइन की ओर अंग्रेज़ी सेना अग्रसर हुई, उस समय उसके साथ गंगा रिसाले के सैनिक भी थे और उन्होंने कई लड़ाइयों में भाग लिया। दुइदार (Dueidar), कतिया (Quatia), रीगम (Rigum) और गफ़-गफ (Gif-Guffa) की लड़ाइयों में वे विद्यमान थे, जिनमें उन्होंने प्रशंसनीय कार्य किया। उसी वर्ष जुलाई मास में रोमानी (Romani)-स्थित अंग्रेज़ी सेना पर तुर्कों की चढ़ाई की आशंका होने पर बीकानेर की सेना ने बीर-एल-अब्द (Bir-el-Abd) और सलमाना (Salmana) तक की लड़ाइयों में उनका मुक़ाबला किया। यह सेना मिश्र की पश्चिमी सीमा पर लड़ी। ई० स० १९१८ (वि० सं० १९७४) के प्रारंभ में गंगा रिसाले के सैनिकों का केन्द्र अमरिया (Amria) के समुद्र तट पर उधर के रक्षकों की सहायता के लिए नियत किया गया, तब से उनका कार्य और भी कठिन हो गया। वहां पर रहते समय उन्होंने जहाज़ के साथ डूबनेवाले कितने ही लोगों की प्राणरक्षा की और उन्हें सुरक्षित स्थान में पहुंचाया। इनमें स्पेन के पेवर्टो नामक जहाज़ के यात्रियों में स्पेन का एलची और उसकी स्त्री भी थी।

बीकानेर से युद्धक्षेत्र में और सेना का भेजा जाना

महाराजा साहब ने वि० सं० १९७१ भाद्रपद वदि ३ (ई० स० १९१४ ता० ९ अगस्त) को भेजे हुए अपने खरीते में तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज से बीकानेर राज्य से युद्ध में भाग लेने के लिए २५००० सैनिकों को भर्ती करने की अनुमति मांगी थी, जो उस समय इन्हें न मिली। महाराजा

साहब के स्वयं युद्धक्षेत्र में चले जाने के बाद भी, राज्य में तीन हज़ार सैनिक प्रस्तुत रक्खे गये थे, ताकि आवश्यकता के समय अविलम्ब सेना भेजी जा सके। समय-समय पर आवश्यकतानुसार बीकानेर से और भी सेनाएं युद्ध में भाग लेने के लिए भेजी गईं। ई० स० १६१५ के फ़रवरी (वि० सं० १६७१ के फाल्गुन) मास में १८१ ऊंट तथा १७५ सैनिक फिर भेजे गये। उसी वर्ष अगस्त (वि० सं० १६७२ श्रावण) मास में २० सैनिक और रवाना किये गये। ई० स० १६१६ के जनवरी (वि० सं० १६७२ पौष) मास में २०० ऊंट भेजे गये तथा उसी वर्ष अंग्रेज़ सरकार तथा मिश्र की पल्टनों के अफ़सरों-द्वारा मंगवाई जाने पर नवम्बर (वि० सं० १६७३ मार्गशीर्ष) मास में बीकानेर से ऊंट सेना की तीन टुकड़ियां और भेजी गईं। इनके अतिरिक्त ई० स० १६१८ के मार्च (वि० सं० १६७४ फाल्गुन) महीने में बीकानेर से और सेना मिश्र में भेजी गई। इस प्रकार मिश्र के युद्धस्थल में बीकानेर के १००० से अधिक सैनिक और १२५४ ऊंट पहुंच गये थे।

महाराजा साहब की इच्छा अपनी सेना के साथ रहकर ही युद्ध में लड़ने की थी, पर अंग्रेज़ सरकार ने इनकी नियुक्ति फ्रांस में कर दी। युद्ध आरंभ होने के थोड़े दिनों बाद ही इन्होंने बीकानेर से प्रस्थान किया, परन्तु दो सप्ताह से अधिक इन्हें करांची में रुक जाना पड़ा, क्योंकि उन दिनों प्रसिद्ध जर्मन जहाज़ 'एमडेन' (Emden) के कहीं निकट ही होने की सूचना के कारण भारतीय सेना को लेजानेवाले जहाज़ों का आना-जाना बन्द था।

महाराजा का स्वयं रणक्षेत्र में रहना

फलतः महाराजा साहब अक्टोबर मास में फ्रांस के पश्चिमी युद्धस्थल पर पहुंचे। ई० स० १६१४ के दिसंबर (वि० सं० १६७१ पौष) मास में जब सम्राट् पञ्चम जॉर्ज रणक्षेत्र में अपनी सेना का निरीक्षण करने गया, उस समय महाराजा भी ए० डी० सी० की हैसियत से उसके साथ थे। फ्रांस के युद्धक्षेत्र में कुछ दिनों तक तो ये "मेरठ डिविज़न" नामक सरकारी सेना के साथ रहकर युद्ध करते रहे, परंतु

पीछे से सम्राट् ने इन्हें पश्चिमी रणक्षेत्र की अंग्रेज़ी सेना के कमांडर-इन-चीफ़ फ़ील्ड मार्शल सर जॉन फ्रेंच के साथ नियुक्त कर दिया। इसी बीच राजकुमारी चांदकुमारी के रोगग्रस्त होने का समाचार महाराजा साहब को प्राप्त हुआ। तब इन्होंने बाध्य होकर फ्रांस के रणक्षेत्र से लौटकर मिश्र में गंगा रिसाले की सैनिक कार्यवाहियों को अवलोकन करते हुए बीकानेर लौटने का विचार किया। फलतः लेफ़्टेनेन्ट-जेनरल सर जॉन मैक्सवेल कमांडर-इन-चीफ़ के साथ इनकी नियुक्ति होकर ये मिश्र में गये, किन्तु सैद बन्दर (Port Said) पहुंचने पर वि० सं० १९७१ माघ सुदि १३ (ई० स० १९१५ ता० २९ जनवरी) को जब इन्हें यह ज्ञात हुआ कि तुर्की सेना नहर की ओर आक्रमण करने के लिए बढ़ रही है तो कैरो (Cairo) के केन्द्र पर उपस्थित होने के बजाय उपर्युक्त जेनरल की सलाह के अनुसार इस्माइलिया फ़ेरी पोस्ट में अपनी सेना के अध्यक्ष बनकर ये तुर्की सेना का मुक़ाबला करने चले गये। कतीब-एल-खेल (Katib-el-khel) के पास की बृहद् शत्रु-सेना के साथ की लड़ाई में इन्होंने स्वयं अपनी सेना का संचालन कर शत्रु के कितने ही सैनिकों को अपनी बन्दूक का निशाना बनाया। कई दिनों की लड़ाई के बाद जब ई० स० १९१५ ता० ४ फ़रवरी (वि० सं० १९७१ फाल्गुन बदि ५) को विपक्षियों की फ़ौज भागी तो गंगा रिसाले ने महाराजा साहब की अध्यक्षता में बड़ी दूर तक उसका पीछा किया। उसी दिन कतीब-एल-खेल पर सवार-सेना की चढ़ाई होने पर महाराजा साहब भी मेजर-जेनरल सर वाट्सन (Arthur Watson) के साथ रहे।

महाराजा का युद्ध-क्षेत्र से लौटना

मिश्र के रणक्षेत्र से लौटकर महाराजा साहब अप्रेल (वि० सं० १९७२ प्रथम वैशाख) मास में बीकानेर पहुंच गये। वहां (बीकानेर में) रहते हुए इन्होंने योग्य और अनुभवी वैद्यों तथा डाक्टरों-द्वारा राजकुमारी का बहुत कुछ इलाज करवाया, परंतु वह रोगमुक्त न हुई और वि० सं० १९७२ श्रावण बदि ५ (ई० स० १९१५ ता० ३१ जुलाई) को उसका

स्वर्गवास हो गया। इसके बाद महाराजा साहब भी स्वयं बीमार पड़ गये। स्वास्थ्य सुधार होने पर इन्होंने पुनः रणक्षेत्र में जाने की अनुमति चाही, परन्तु वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज ने परिस्थिति को देखते हुए इनका भारतवर्ष में ही रहना हितकर समझा और युद्धक्षेत्र में जाने की अनुमति न दी।

महाराजा-द्वारा युद्ध में दी गई अन्य सहायता

युद्ध जारी रहते समय आवश्यकता पड़ने पर भारत सरकार ने बीकानेर से कुछ ऊंट और मंगवाये, जिसपर तुरंत प्रबंधकर ११३४ सामान ढोनेवाले ऊंट भेजे गये। बीकानेर घोड़ों का केन्द्र नहीं है तथापि मांग होने पर ८८ घोड़े और सामान ढोनेवाले टट्टू भी भारतीय सेना के लिए प्रस्तुत किये गये। इनके अतिरिक्त राज्य के अधिकारियों ने जोधपुर की सरकार के शामिल होकर जोधपुर-बीकानेर रेल्वे के कारखाने को गोला-बारूद तैयार करने के काम के लिए परिवर्तित कर दिया तथा रेल्वे बोर्ड के लिखने पर एक एंजिन, अट्ठारह डिब्बे और दो बोगियां राज्य की तरफ़ से मेसोपोटामिया (Mesopotamia) में भाग लेने के लिए भेजीं। भारतीय सेना के घायलों को 'शार्दूल मिलिटरी हास्पिटल' में जगह देने के बारे में भी कई बार लिखा गया, पर इसकी आवश्यकता उपस्थित न हुई। गोला-बारूद बनाने के काम के लिए १२६६ मन बबूल की छाल अंग्रेज़ सरकार को राज्य की ओर से दी गई। युद्ध की प्रारंभिक अवस्था में राज्य की कई मोटरें आरमर्ड कारों में परिवर्तित करने तथा अंग्रेज़ी सेना के लिए तम्बू राज्य की तरफ़ से भिजवाने के लिए भी बीकानेर राज्य ने भारत सरकार को लिखा था।

महाराजा का फिर इंग्लैंड जाना

वि० सं० १९७३ के फाल्गुन (ई० स० १९१७ के फ़रवरी) मास में विलायत की सरकार-द्वारा निमंत्रित किये जाने पर वहां होनेवाली इम्पीरियल वार केबिनेट और इम्पीरियल वार कान्फरेंस में भाग लेने के लिए ता० १२ फ़रवरी (फाल्गुण वदि ५) को महाराजा साहब ने प्रस्थान किया। मार्ग में कुछ दिनों तक मिश्र में अपने गंगारिसाले के साथ रहने

के उपरान्त इंग्लैंड पहुंचकर इन्होंने मार्च से मई तक उपर्युक्त दोनों समितियों के कार्यों में पूरी तरह से भाग लिया। वहां रहते समय इन्होंने कितने ही सार्वजनिक कार्यों में भी भाग लिया तथा उसी अवसर पर एडिनबरा विश्वविद्यालय (Edinburgh University) ने इन्हें माननीय (Honorary) एल० एल० डी० की उपाधि से सम्मानित किया।

यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि उसी वर्ष के अगस्त (वि० सं० १६७४ प्रथम भाद्रपद) मास में 'हाउस ऑव् कॉमन्स' में भूतपूर्व भारत-मन्त्री मि० मांटेगू-द्वारा की जानेवाली अंग्रेज़ों की भारतीय-नीति-सम्बन्धी घोषणा में इन(महाराजा साहब)का कम हाथ न था। इस विषय में ई० स० १६१७ ता० १ जुलाई (वि० सं० १६७४ आषाढ सुदि ११) के तार में वाइसराय लॉर्ड चेम्सफ़ोर्ड ने इन्हें लिखा—"आपने अपना कार्य प्रामाणिकता के साथ अच्छी तरह से पूरा किया है।" उसी वर्ष नवम्बर (कार्तिक) मास में दिल्ली में होनेवाली 'नरेंद्र-सभा' (Princes Conference) के उद्घाटन के अवसर पर भी उक्त वाइसराय ने इनके कार्यों की सराहना की।

भारत में रहते समय भी महाराजा साहब युद्ध के कार्यों से विमुख न हुए और अंग्रेज़ सरकार को हर प्रकार से सहायता देते रहे। प्लेग और इन्फ़्लुएन्ज़ा जैसी भयङ्कर व्याधियां राज्य में फैल जाने पर भी महाराजा साहब ने लगभग ढाई हज़ार रंगरूट बीकानेर राज्य से भेजे। वि० सं० १६७५ वैशाख वदि १ (ई० स० १६१८ ता० २७ अप्रेल) को दिल्ली में युद्ध-संबंधी मंत्रणा के लिए 'वार कान्फ़रेंस' हुई, जिसमें भाग लेने के लिए वाइसराय का पत्र पहुंचने पर इन्होंने उक्त कान्फ़रेंस में सम्मिलित होकर उसमें भाग लिया, जिसकी ता० ६ मई (वैशाख वदि ११) के पत्र में लॉर्ड चेम्सफ़ोर्ड ने बड़ी प्रशंसा की।

महाराजा का दिल्ली जाना

उसी वर्ष के जून (ज्येष्ठ) महीने में पुनः लंदन नगर में 'इंपीरियल वार केबिनेट तथा कान्फरेन्स' होनेवाली थी, जिसमें भारतीय नरेशों के

प्रतिनिधि की हैसियत से सम्मिलित होने के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से इनके नाम निमन्त्रण पहुँचा, परन्तु राज्य-सम्बन्धी कई आवश्यक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण ये उस निमन्त्रण को स्वीकार न कर सके।

महायुद्ध की गतिविधि

युद्ध का प्रारंभिक इतिहास जर्मनी की विजय-गाथाओं से परिपूर्ण है। वि० सं० १९७१-७२ (ई० स० १९१४-१५) के बीच बेल्जियम और फ्रांस के कुछ भागों पर जर्मनी का अधिकार हो गया, परन्तु वि० सं० १९७१ (ई० स० १९१४) की मार्ने (Marne) की लड़ाई में फ्रांस की शक्ति चूर्ण करने में समर्थ न होकर उसने रूस की ओर दृष्टि फेरी। हिन्डेनबर्ग (Hindenburg) तथा मैकेन्सेन (Mackensen) की अध्यक्षता में रूस पर के आक्रमणों में लगातार जर्मनी को सफलता मिलती गई। थोड़े समय में ही रूस के कितने एक भाग पर उसका अधिकार हो गया, परन्तु उन्हीं दिनों वहां (रूस में) गृहकलह मच गया, जिससे बाध्य होकर उस(रूस)को युद्ध से विलग होना पड़ा। इसी अवधि में जर्मनी के विरोधियों की संख्या बढ़ गई। क्रमशः जापान, इटली, रूमानिया और अमेरिका ने भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। यूनान (Greece), स्याम, चीन, ब्रेज़ील (Brazil) तथा मध्यवर्ती और दक्षिणी अमेरिका के अन्य राज्य भी ई० स० १९१७ तक उसके विरोधी हो गये। टर्की और बल्गेरिया ने भी जर्मनी का साथ दिया, पर इतने बड़े-बड़े राज्यों के एक तरफ़ हो जाने से वे अपनी हानि करने के अतिरिक्त और कुछ न कर सके। यह कहा जा सकता है कि अमेरिका के युद्ध में भाग लेने और धन-जन की सहायता देने के कारण ही युद्ध का इतिहास पलट गया। जर्मनी को अभी तक विजय की आशा बनी हुई थी। रूस की शक्ति विनष्ट करने के बाद वह पश्चिम की ओर मुड़ा और उसने 'मार्ने' नामक स्थान पर पुनः मोरचा जमाया। प्रारम्भ में उसे सफलता मिली और उसके सैनिक पेरिस से ४० कोस दूरी पर जा पहुंचे। ठीक इसी समय अमेरिका से सहायता पहुंच जाने के कारण जर्मनी को पुनः विफल-मनोरथ होकर पीछे हटना पड़ा। धीरे-धीरे वर्दून (Verdun), रीम्स

(Rheims), वाइप्रेस (Ypress) आदि विजित स्थान उसके हाथ से निकल गये। ई० स० १६१८ के सितम्बर (वि०सं० १६७५ भाद्रपद) मास में हिन्डेनबर्ग का मोर्चा भी मित्र राष्ट्रों के प्रयत्न से नष्ट हो गया। अक्टोबर (आश्विन) मास में जर्मनी को बेल्जियम का किनारा छोड़ देना पड़ा और कितने ही जीते हुए स्थान भी खाली कर देने पड़े। चार वर्षों के लंबे युद्ध के कारण बलगेरिया और टर्की की शक्ति क्षीण हो गई थी, अतएव उन्होंने युद्ध से विमुख होने में ही भलाई समझी।

असंख्य धन-जन युद्ध में होम देने पर भी जब जर्मनी की मनोकामना सफल न हुई तो वहां के निवासियों की मनोवृत्ति भी बदलने लगी, क्योंकि वे युद्ध के महान् बोझ से दबे हुए होने के कारण जीवन-निर्वाह के साधारण साधन जुटाने में भी असमर्थ थे। उस समय वहां भयानक क्रांति की संभावना थी। यह देख साम्राज्य-लोलुप सम्राट् कैसर प्राणों के भय से जर्मनी का सिंहासन त्यागकर हॉलैंड में जा रहा। ऐसी परिस्थिति में जर्मनी के लिए भी केवल संधि का मार्ग ही रह गया।

महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों की विजय

ऊपर बतलाया जा चुका है कि जिस युद्ध का प्रारंभ ई० स० १६१४ (वि० सं० १६७१) में हुआ था, वह ई० स० १६१८ (वि० सं० १६७५) तक बराबर चलता रहा। इस युद्ध में सब राष्ट्रों की धन और जन की महान् क्षति हुई, जिससे वे अप्रत्यक्ष रूप से युद्ध बंद होने की ही कामना करते थे, परन्तु सर्वप्रथम युद्ध बंद करने का प्रस्ताव करे कौन? क्योंकि जो प्रथम प्रस्ताव करता वही पराजित राष्ट्र माना जाता। ई० स० १६१७ (वि० सं० १६७३-७४) तक किसी भी राष्ट्र को अपनी हेटी दिखलाना स्वीकृत न था, किन्तु जब जर्मनी ने अधिकांश राष्ट्रों को शत्रु बना लिया और सहायता का प्रत्येक मार्ग बन्द हो गया तब उसको चारों तरफ़ निराशा दीख पड़ने लगी। उसके साथी आस्ट्रिया-हंगरी, टर्की और बल्गेरिया पहले ही शक्तिहीन हो गये थे एवं वहां क्रांति का सूत्रपात हो गया था। इसी समय मित्र राष्ट्रों का बल बढ़ने लगा और उन्होंने जर्मनी

प्रतिनिधि की हैसियत से सम्मिलित होने के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से इनके नाम निमन्त्रण पहुँचा, परन्तु राज्य-सम्बन्धी कई आवश्यक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण ये उस निमन्त्रण को स्वीकार न कर सके।

युद्ध का प्रारंभिक इतिहास जर्मनी की विजय-गाथाओं से परिपूर्ण है। वि० सं० १९७१-७२ (ई० स० १९१४-१५) के बीच बेल्जियम और फ्रांस के कुछ भागों पर जर्मनी का अधिकार हो गया, परन्तु वि० सं० १९७१ (ई० स० १९१४) की मार्ने (Marne) की लड़ाई में फ्रांस की शक्ति चूर्ण करने में समर्थ न होकर उसने रूस की ओर दृष्टि फेरी। हिन्डेनबर्ग (Hindenburg) तथा मैकेन्सेन (Mackensen) की अध्यक्षता में रूस पर के आक्रमणों में लगातार जर्मनी को सफलता मिलती गई। थोड़े समय में ही रूस के कितने एक भाग पर उसका अधिकार हो गया, परन्तु उन्हीं दिनों वहां (रूस में) गृहकलह मच गया, जिससे बाध्य होकर उस (रूस) को युद्ध से विलग होना पड़ा। इसी अवधि में जर्मनी के विरोधियों की संख्या बढ़ गई। क्रमशः जापान, इटली, रूमानिया और अमेरिका ने भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। यूनान (Greece), स्याम, चीन, ब्रेज़ील (Brazil) तथा मध्यवर्ती और दक्षिणी अमेरिका के अन्य राज्य भी ई० स० १९१७ तक उसके विरोधी हो गये। टर्की और बल्गेरिया ने भी जर्मनी का साथ दिया, पर इतने बड़े-बड़े राज्यों के एक तरफ़ हो जाने से वे अपनी हानि करने के अतिरिक्त और कुछ न कर सके। यह कहा जा सकता है कि अमेरिका के युद्ध में भाग लेने और धन-जन की सहायता देने के कारण ही युद्ध का इतिहास पलट गया। जर्मनी को अभी तक विजय की आशा बनी हुई थी। रूस की शक्ति विनष्ट करने के बाद वह पश्चिम की ओर मुड़ा और उसने 'मार्ने' नामक स्थान पर पुनः मोरचा जमाया। प्रारम्भ में उसे सफलता मिली और उसके सैनिक पेरिस से ४० कोस दूरी पर जा पहुंचे। ठीक इसी समय अमेरिका से सहायता पहुंच जाने के कारण जर्मनी को पुनः विफल-मनोरथ होकर पीछे हटना पड़ा। धीरे-धीरे वर्दून (Verdun), रीम्स

महायुद्ध की गतिविधि

(Rheims), वाइप्रेस (Ypress) आदि विजित स्थान उसके हाथ से निकल गये। ई० स० १९१८ के सितम्बर (वि०सं० १९७५ भाद्रपद) मास में हिन्डेनवर्ग का मोर्चा भी मित्र राष्ट्रों के प्रयत्न से नष्ट हो गया। अक्टोबर (आश्विन) मास में जर्मनी को वेल्जियम का किनारा छोड़ देना पड़ा और कितने ही जीते हुए स्थान भी खाली कर देने पड़े। चार वर्षों के लंबे युद्ध के कारण वलगेरिया और टर्की की शक्ति क्षीण हो गई थी, अतएव उन्होंने युद्ध से विमुख होने में ही भलाई समझी।

असंख्य धन-जन युद्ध में होम देने पर भी जब जर्मनी की मनोकामना सफल न हुई तो वहां के निवासियों की मनोवृत्ति भी बदलने लगी, क्योंकि वे युद्ध के महान् बोझ से दवे हुए होने के कारण जीवन-निर्वाह के साधारण साधन जुटाने में भी असमर्थ थे। उस समय वहां भयानक क्रांति की संभावना थी। यह देख साम्राज्य-लोलुप सम्राट् कैसर प्राणों के भय से जर्मनी का सिंहासन त्यागकर हॉलैंड में जा रहा। ऐसी परिस्थिति में जर्मनी के लिए भी केवल संधि का मार्ग ही रह गया।

महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों की विजय

ऊपर वतलाया जा चुका है कि जिस युद्ध का प्रारंभ ई० स० १९१४ (वि० सं० १९७१) में हुआ था, वह ई० स० १९१८ (वि० सं० १९७५) तक वरावर चलता रहा। इस युद्ध में सब राष्ट्रों की धन और जन की महान् क्षति हुई, जिससे वे अप्रत्यक्ष रूप से युद्ध वंद होने की ही कामना करते थे, परन्तु सर्वप्रथम युद्ध वंद करने का प्रस्ताव करे कौन? क्योंकि जो प्रथम प्रस्ताव करता वही पराजित राष्ट्र माना जाता। ई० स० १९१७ (वि० सं० १९७३-७४) तक किसी भी राष्ट्र को अपनी हेटी दिखलाना स्वीकृत न था, किन्तु जब जर्मनी ने अधिकांश राष्ट्रों को शत्रु बना लिया और सहायता का प्रत्येक मार्ग वन्द हो गया तब उसको चारों तरफ़ निराशा दीख पड़ने लगी। उसके साथी आस्ट्रिया-हंगरी, टर्की और बल्गेरिया पहले ही शक्तिहीन हो गये थे एवं वहां क्राति का सूत्रपात हो गया था। इसी समय मित्र राष्ट्रों का वल बढ़ने लगा और उन्होंने जर्मनी

को चारों तरफ़ से दबाकर पीछे हटने पर बाध्य किया। जब वहां भी गृह-कलह मचने की संभावना दीख पड़ने लगी तो विवश होकर जर्मनी की तरफ़ से अमेरिका के तत्कालीन प्रेसीडेंट विल्सन (President Wilson)-द्वारा संधि का प्रथम संदेश भेजा गया। मित्र राष्ट्र भी इस विनाशकारी युद्ध को रोकने के पक्ष में थे, इसलिए ज्योंही यह सन्देश उनके पास पहुंचा, उन्होंने आवश्यक परामर्श करने के पश्चात् संधि की शर्तें स्थिर कीं। उनकी सूचना दिये जाने पर शत्रु-राष्ट्रों ने भी उसे स्वीकार कर युद्ध स्थगित करना ही कल्याणकारी समझा। फलस्वरूप ता० ११ नवंबर (वि० सं० १९७५ कार्तिक सुदि ८) को युद्ध में भाग लेनेवाले राष्ट्रों ने अपने हथियार डाल दिये। निस्सन्देह जब तक संसार में इतिहास का अस्तित्व रहेगा, यह दिवस स्मरणीय रहेगा।

उपर्युक्त ता० ११ नवंबर को जो युद्ध बन्द किया गया, वह केवल दो सप्ताह के लिए ही था। इसी बीच फ्रांस की राजधानी पेरिस नगर में यूरोपीय राष्ट्रों के बड़े-बड़े नेताओं ने एकत्रित होकर विचार-विनिमय किया और ता० २७ नवम्बर (मार्गशीर्ष वदि ६) को अस्थायी रूप से संधि होकर वर्सेलिज़ (Verseilles) नगर (फ्रांस) में स्थायी रूप से संधि की शर्तों का निर्णय करना निश्चित हुआ।

इस यूरोपीय महायुद्ध में भारत ने अंग्रेज़ सरकार को धन और जन से पूर्ण रूप से सहायता दी थी, अतएव निश्चय हुआ कि भारत की ओर से भी प्रतिनिधियों को संधि-सम्मेलन में भाग लेने का अवसर दिया जावे। ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने भारतीय नरेशों में से महाराजा साहब तथा सर सत्येंद्रप्रसन्न सिनहा[1] को प्रतिनिधि बनाकर भेजना निश्चित किया।

महाराजा का संधि-सम्मेलन में जाना

इस निर्णय की सूचना इंग्लैंड से आने पर वाइसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड ने ई० स० १९१८ ता० १५ नवम्बर (वि० सं० १९७५ कार्तिक

(१) यह पीछे से लॉर्ड एस० पी० सिनहा के नाम से प्रसिद्ध होकर विहार का गवर्नर बना दिया गया था।

सुदि १२) को तार-द्वारा इनको लिखा—"ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री का आग्रह है कि आप बहुत शीघ्र इंग्लैंड को रवाना हों। इस यात्रा के लिए छिंदवाड़ा बोट का विशेष रूप से प्रबंध किया गया है, जो ता० २३ (मार्गशीर्ष वदि ६) को बम्बई से प्रस्थान करेगा और सर सिनहा उसी दिन इस बोट से यात्रा करेंगे। यदि सम्भव हो तो इस यात्रा के पूर्व आप मुझसे दिल्ली आकर मिलें।"

वाइसराय का उपर्युक्त तार पाकर इन्होंने भी शीघ्रातिशीघ्र इंग्लैंड-यात्रा की तैयारी कर ली और वाइसराय आदि से समयोचित परामर्श पाने के पश्चात् ये ता० २० को बीकानेर से प्रस्थान कर अपने स्टाफ़ के साथ बम्बई पहुंचे और वहां से डफ़रिन जहाज़-द्वारा इंग्लैंड को रवाना होकर यथासमय लन्दन पहुंचे। फिर वहां सम्राट् की तरफ़ से महाराजा साहब को, इनके भारत का प्रतिनिधि निर्वाचित किये जाने की, ई० स० १६१६ ता० १ जनवरी (वि० सं० १६७५ पौष वदि १४) को सनद प्राप्त हुई।

तदनन्तर इन्होंने संधि-सम्मेलन के प्रत्येक अधिवेशन में पूर्ण रूप से भाग लेकर अपने उत्तरदायित्व का यथोचित रूप से पालन किया। कई महीनों तक विभिन्न राष्ट्रों के पारस्परिक विचार-विमर्ष के बाद अन्त में ई० स० १६१६ ता० २८ जून (वि० सं० १६७६ आषाढ सुदि १) को वर्सेलिज़ का सन्धि-पत्र लिखा गया। उसमें भारतीय प्रतिनिधि और ब्रिटिश साम्राज्य के साझेदार की हैसियत से महाराजा साहब के भी हस्ताक्षर हुए।

इस यूरोप-प्रवास के समय ता० २५ जून (आषाढ वदि १२) को ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी ने डी० सी० एल० (डॉक्टर ऑव् सिविल लॉ) की उपाधि से इन्हें सम्मानित किया।

सात मास तक संधि-सम्बन्धी कार्यों में भाग लेने के पश्चात् ये ता० १६ जुलाई (वि० सं० १६७६ श्रावण वदि ७) को बीकानेर पहुंचे। प्रधान मन्त्री राइट ऑनरेबल् डी० लायड जॉर्ज (Right Honourable

D. Lloyd George) ने इनके इंग्लैंड से प्रस्थान करते समय इन्हें अपने ता० २८ जून के पत्र में लिखा था—

"अब आपके भारत-गमन के समय मैं आपको हमारा निमन्त्रण स्वीकार कर यहां आने और हमारे सन्धि-सम्बन्धी कार्यों में भाग लेने के लिए धन्यवाद देता हूं।............आपने भारत साम्राज्य के हितों का पूरा-पूरा ध्यान रखा है और आप यह जानकर सन्तोष से विदा हो सकते हैं कि आपके कार्यों की आपके साथ काम करनेवालों ने बहुत प्रशंसा की है।............।"

इसी प्रकार भारत-मन्त्री राइट ऑनरेबल् एड्विन मांटेगू (Right Honourable Edwin Montagu) ने भी अपने ता० २५ जून (आषाढ वदि १२) के पत्र में इनके कार्यों की प्रशंसा की थी। भारत में लौटने पर वाइसराय लॉर्ड चेम्सफ़ोर्ड ने ता० ६ अगस्त (श्रावण सुदि १३) के पत्र में इस महान् कार्य में योग्यतापूर्वक भाग लेने के लिए महाराजा साहब को बधाई दी और अन्य अवसरों पर भी प्रशंसायुक्त वाक्यों में युद्ध तथा संधि के समय किये गये इनके कार्यों का उल्लेख किया। ई० स० १९१९ के नवंबर (वि० सं० १९७६ मार्गशीर्ष) मास में दिल्ली में "नरेंद्र-सभा" का अधिवेशन हुआ। उस समय ग्वालियर के भूतपूर्व महाराजा माधवराव सिंधिया ने भी वाइसराय को सम्बोधन करते हुए महाराजा साहब-द्वारा संधि-सम्मेलन में होनेवाले साम्राज्य-हितकारी कार्यों की सराहना की।

साम्राज्य की सहायतार्थ पहले भी बीकानेर के नरेशों ने यथा-अवसर अंग्रेज़ सरकार को सेना आदि से सहायता दी थी, जिसका वर्णन प्रसङ्गानुसार ऊपर हो चुका है, पर इस युद्ध में बीकानेर की ओर से महाराजा की सेना और स्वयं इन्होंने भाग लेकर जो सहायता दी वह बड़ी महत्वपूर्ण गिनी गई। युद्ध सम्बन्धी कान्फ़रेंसों, सन्धि-सभा आदि में महाराजा ने योग देकर ब्रिटिश सरकार का हितसाधन किया। राज्य-परिवार के अतिरिक्त प्रधान मन्त्री, भारत मन्त्री, भारत के वाइसराय, पार्लियामेंट के माननीय सदस्यों, युद्ध के अफ़सरों तथा भारत में रहनेवाले

कई पोलिटिकल अफ़सरों ने महाराजा साहब की बड़ी प्रशंसा की। ई० स० १९२१ (वि० सं० १९७८) में जब प्रिंस ऑव् वेल्स (सम्राट् एडवर्ड अष्टम) का बीकानेर में आगमन हुआ, तब ता० २ दिसंबर (वि० सं० १९७८ मार्गशीर्ष सुदि ३) को राजकीय भोज के अवसर पर उक्त प्रिंस ने महाराजा साहब-द्वारा होनेवाली सहायता की जो प्रशंसा की वह नीचे लिखे अनुसार है—

'इस बात का विश्वास दिलाना अनावश्यक है कि मैं अपनी बीकानेर-यात्रा की तरफ़ कई कारणों से बड़ी उत्सुकता के साथ देखता रहा हूं। प्रथम तो मैं आप के देश में आकर आपके साथ की अपनी निजी मित्रता को सुदृढ़ बनाना चाहता था और दूसरे मैं राठोड़-राज्य की इस राजधानी को स्वयं देखना और इसके बारे में यह जानना चाहता था कि आखिर इस रेतीले प्रदेश में वह कौनसा जादू है, जिसके बल पर मेरे वंशवालों के प्रति राज्य-भक्ति का पौधा यहां "तज" वृत्त के समान हरा रहता है और दूसरे राज्यों के साथ सेवा-भाव में अग्रिम रहने के लिए पारस्परिक होड़ की वृद्धि कराता है।

'बीकानेर राज्य और यहां के शासकों-द्वारा की गई सेवाएं इतनी विख्यात हैं कि मेरा उनकी प्रशंसा करना अनावश्यक है।

'समय अनेक वस्तुओं का नाश कर देता है, लेकिन वह सन्धि, जिसके-द्वारा हमारा तथा बीकानेर राज्य का मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हुआ, अब सौ वर्ष से अधिक पुरानी हो गई है। उसके-द्वारा जो मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हुआ वह समय की अवहेलना करता है तथा पूर्ण शक्ति-प्राप्त नौजवानों की "नाड़ी" के समान जीवित है। ईश्वर को धन्यवाद है कि वर्षों पहले जिन सूत्रों ने हमें बांधा था वे ढीले पड़ने के स्थान में और भी दृढ़ हुए हैं।

'आपके पूर्व भी अंग्रेज़ सरकार को आपके राज्य की राज-भक्ति का पर्याप्त प्रमाण मिल चुका है। अफ़ग़ानों और सिक्खों के साथ की लड़ाइयों में की गई सहायता तथा ग़दर के समय महाराजा सरदारसिंह-द्वारा वीरता-

पूर्वक संरक्षण में लिये गये अंग्रेज़ व्यक्तियों एवं हांसी हिसार में विद्रोहियों के विरुद्ध उसकी दी हुई सहायता से यह स्पष्ट हो गया है कि राज्य संधि की शर्तों को कितना अधिक महत्व देता है।

'आपने सिंहासनारूढ़ होने के बाद कोई भी ऐसा अवसर न जाने देकर यह साबित कर दिया है कि अंग्रेज़ सरकार आपकी परम्परागत राज-भक्ति तथा साम्राज्य एवं सम्राट् के प्रति आपकी निजी मैत्री पर पूरा-पूरा भरोसा कर सकती है। आपके ऊंटों के रिसाले ने चीन और सोमालीलैंड में प्रशंसा के योग्य कार्य किया। पीछे से तीन टुकड़ियों-द्वारा और संगठित होकर उसने महायुद्ध में भाग लिया और राजपूतों की परंपरागत वीरता और स्वामि-भक्ति को बनाये रक्खा।

'आपकी वक्तृता और स्वयं आज शाम के मेरे निरीक्षण ने मेरे मन में उन दिनों की मधुर स्मृति जागृत कर दी है, जब हमारे संसर्ग में यह रिसाला युद्ध के समय स्वेज़ नहर पर पूर्वी साम्राज्य के मार्ग का रक्षण कर रहा था।

'आपने स्वयं चीन युद्ध तथा महायुद्ध में तीन महाद्वीपों में कार्य किया। केवल वाइसराय की प्रार्थना के कारण, जो कई महत्वपूर्ण विषयों पर भारत में ही आपकी सहायता के इच्छुक थे, आप युद्ध के अन्त तक हमारा साथ देने से वंचित रहे।

'यह कहना व्यर्थ है कि युद्ध के समय आपकी हर प्रकार की उदारतापूर्ण सहायता ने यह प्रमाणित कर दिया है कि आपका बीकानेर राज्य के सब साधन सम्राट् को अर्पण कर देना केवल निर्मूल कथन न था।

'वार केबिनेट में किये गये आपके कार्य तो इतिहास का एक अंग ही हैं। यह आपकी प्रशंसनीय सेवाओं के अनुरूप ही हुआ कि इतने बड़े त्याग-द्वारा पाई गई विजय के बाद के सन्धिपत्र पर आप भी हस्ताक्षर करने के लिए चुने गये।

'यह सचमुच मेरे लिए बड़े आनंद का विषय है कि आज रात्रि

को मैं स्वयं इन अथक सेवाओं एवं राज्य-भक्ति के लिए आपको बधाई देने के लिए उपस्थित हूं।

'हम लोग इस समय ऐसी परिस्थिति से गुज़र रहे हैं, जब पुनर्निर्माण का प्रश्न स्वभावतया ही उतना जटिल और खतरनाक प्रतीत होगा, जितना कि वह युद्ध, जिसमें से हम अभी सफलता के साथ निकले हैं। ऐसे अवसर पर मुझे यह सोचकर खुशी है कि हम आपकी सहायता पर निर्भर रह सकते हैं और आपकी शासन-संबंधी योग्यता और नीति कुशलता पर पूरा-पूरा विश्वास कर सकते हैं।"

संधि स्थापित होने तथा मिश्र और पैलेस्टाइन का कार्य समाप्त होने पर लगभग ४½ वर्षों के बाद वि० सं० १९७५ माघ वदि १३ (ई० स० १९१९ ता० २९ जनवरी) को बीकानेर की सेना स्वदेश लौटी। इस अवसर पर भारत के सेनाध्यक्ष जेनरल सर चार्ल्स मनरो (Sir Charles Munro) ने ता० ३० को लिखा—"आपके इम्पीरियल सर्विस ट्रुप्स के युद्ध से लौटने पर मैं उसका हार्दिक स्वागत करता हूं और साथ ही आपको तथा आपकी वीर सेना को युद्ध के समय साम्राज्य की सेवा करने के उपलक्ष्य में बधाई देता हूं।" महायुद्ध में बीकानेर की ऊंट सेना के ४७ व्यक्ति काम आये तथा इसके अतिरिक्त १५० बीकानेरी सैनिकों ने भारतीय सेना के साथ रहकर लड़ते हुए वीरगति पाई।

बीकानेर की सेना का युद्ध-क्षेत्र से लौटना

इस लड़ाई में सब मिलाकर बीकानेर राज्य का एक करोड़ रुपया व्यय हुआ, जिसमें सेना भेजने के खर्च आदि के साथ अंग्रेज़ सरकार को क़र्ज़ तथा चंदे में दी गई रक़में भी शामिल हैं। स्वयं महाराजा साहब ने ३१९७००० रुपये निजी कोष से तथा अन्य राजघराने के लोगों ने ४१०२० रुपये दिये।

महायुद्ध में दी गई आर्थिक सहायता

महाराजा साहब की युद्ध के समय की गई सेवाओं की अंग्रेज़ सरकार ने बड़ी प्रशंसा की। वि० सं० १९७४ फाल्गुन वदि १४ (ई० स० १९१८

महायुद्ध की सहायता की प्रशंसा

ता० ११ मार्च) को लॉर्ड चेम्सफ़र्ड ने तार-द्वारा इन्हें सूचित किया—"मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि हर समय और प्रधानतया महायुद्ध में की गई आपकी महान् सेवाओं की मैंने और सम्राट् की सरकार ने बड़ी प्रशंसा की है। आपने स्वयं युद्ध में सम्मिलित होकर तथा अपने 'इम्पीरियल सर्विस ट्रूप्स' को भेजकर बीकानेर के इतिहास में एक और गौरवपूर्ण पृष्ठ जोड़ दिया है।"

इजिप्शियन एक्सपिडिशनरी फ़ोर्स (Egyptian Expeditionary Force) के सेनाध्यक्ष सर आर्चिबाल्ड मरे (Sir Archibald Murray) ने वि० सं० १६७३ भाद्रपद वदि २ (ई० स० १६१६ ता० १५ अगस्त) के तार में लिखा—"मुझे इस बात को सूचित करते हुए परम हर्ष है कि आपकी ऊंट सेना की दो टुकड़ियां हाल की सभी लड़ाइयों में शामिल रहीं और इस बीच उन्होंने अमूल्य सेवाएं कीं। मैं इतना अच्छा कार्य करने के लिए उनकी बहुत प्रशंसा करता हूं।"

इसी प्रकार फ़्रांस में लड़नेवाली इंडियन आर्मी कोर (Indian Army Corps) के सेनानायक जेनरल सर जेम्स विलकॉक्स (General Sir James Willcocks) ने महाराजा साहब के नाम के अपने पत्रों में बड़ी ओजपूर्ण शब्दावली में इनकी वीरता के कार्यों का वर्णन किया है। इनके अतिरिक्त कई अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों ने भी प्रशंसात्मक शब्दों में ही बीकानेर राज्य की सेवाओं का उल्लेख किया है।

यूरोप और मिश्र देश में महायुद्ध के समय बड़ी वीरता दिखलाने के संबंध में लार्ड फ्रेन्च (Lord French) और लेफ़्टेनेन्ट जेनरल सर जॉन मैक्सवेल (Lieutenant General Sir John Maxwell) ने अपने खरीतों में बड़े गौरव के साथ महाराजा साहब का नामोल्लेख किया है। इन अमूल्य सेवाओं के बदले में सम्राट् ने वि० सं० १६७४ के पौष (ई० स० १६१८ जनवरी) मास में इन्हें के० सी० बी० (नाइट कमांडर ऑव् दि बाथ) का ख़िताब, ई० स० १६१४ का स्टार (Star) और अंग्रेज़ी युद्ध तथा विजय के पदक

महाराजा के सम्मान में वृद्धि होना

(British War and Victory Medals) प्रदान किये । उसी वर्ष के अगस्त मास में मिश्र के सुलतान ने इन्हें ग्रैन्ड कॉर्डन ऑव् दी ऑर्डर ऑव् दि नाइल (Grand Cordon of the Order of the Nile) के सम्मान से विभूषित किया। इसके अतिरिक्त महायुद्ध में किये गये अन्य कार्यों के लिए ई० स० १६१६ ता० १ जनवरी (वि० सं० १६७५ पौष वदि १४) को सम्राट् ने इन्हें जी० सी० वी० ओ० (नाइट ग्रैन्ड क्रॉस ऑव् दी रॉयल विक्टोरियन ऑर्डर) की और दो वर्ष बाद ई० स० १६२१ (वि० सं० १६७७) में जी० बी० ई० (Grand Cross of the British Empire) की उपाधियां दीं। ई० स० १६१८ (वि० सं० १६७४) में महाराजा साहब की सलामी की तोपों में दो तोपों की वृद्धि होकर ज़ाती सलामी की तोपें १६ नियत की गईं तथा ई० स० १६२१ (वि० सं० १६७७) में राज्य के अन्तर्गत इनकी सलामी की तोपें स्थायी रूप से १६ स्थिर हुईं।

अंग्रेज सरकार-द्वारा अन्य उपहार मिलना

युद्ध के समाप्त होने पर शत्रुओं से छीने हुये दो हवाई जहाज़, दो तुर्की बन्दूकें, सात मशीनगनें, इक्यानवे राइफ़िलें, कुछ तलवारें तथा पिस्तौलें आदि युद्ध के स्मृति-स्वरूप बीकानेर राज्य को अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से भेंट की गईं।

गंगा रिसाले आदि के अफ़सरों को ख़िताब मिलना

गंगा रिसाले के अफ़सरों और सैनिकों को भी इस अवसर पर अंग्रेज़ सरकार ने विस्मरण नहीं किया। निम्नलिखित व्यक्तियों को महायुद्ध के समय वीरता दिखलाने के लिए ख़िताब, सम्मान तथा पदक आदि मिले—

(१) सी० आई० ई० (कम्पेनियन ऑव् दी ऑर्डर ऑव् दी इंडियन एम्पायर)—लेफ़्टेनेंट कर्नल ए० के० रॉलिन्स, डी० एस० ओ०, सीनियर स्पेशल सर्विस आफ़िसर, गंगा रिसाला।

(२) सी० बी० ई० (कमान्डर ऑव् दी बृटिश एम्पायर)—लेफ़्टेनेंट कर्नल ए० के० रॉलिन्स तथा लेफ़्टेनेंट कर्नल कुँवर जीवराजसिंह[1],

(१) अब मेजर जेनरल राजा जीवराजसिंह, सांडवा।

कमांडेंट गंगा रिसाला।

(३) डी० एस० ओ० (कम्पेनियन ऑव् दी डिस्टिंग्विश्ड सर्विस ऑर्डर)—केप्टेन (अब मेजर) ए० जे० एच० चोप, स्पेशल सर्विस आफ़िसर, गंगा रिसाला।

(४) ओ० बी० ई० (आफ़िसर ऑव् दि ऑर्डर ऑव् दि बृटिश एम्पायर)—मेजर जे० जी० रे, स्पेशल सर्विस आफ़िसर, गंगा रिसाला।

(५) ऑर्डर ऑव् बृटिश इण्डिया, प्रथम श्रेणी, सरदार बहादुर के खिताब सहित—लेफ़्टेनेंट कर्नल कुंवर जीवराजसिंह; लेफ़्टेनेंट कर्नल ठाकुर मोतीसिंह, कमांडेंट, गंगा रिसाला तथा मेजर गुरुबख़्शसिंह, एसिस्टेंट कमांडेंट, सादूल लाइट इन्फ़ैन्ट्री।

(६) ऑर्डर ऑव् बृटिश इंडिया, द्वितीय श्रेणी, बहादुर के खिताब सहित—लेफ़्टेनेंट कर्नल कुंवर जीवराजसिंह; लेफ़्टेनेंट कर्नल ठाकुर मोतीसिंह; भूतपूर्व मेजर ठाकुर शिवनाथसिंह, एसिस्टेंट कमांडेंट; मेजर ठाकुर किशनसिंह, एसिस्टेंट कमांडेंट तथा कैप्टेन जैदेवसिंह, एडजुटेंट।

(७) इंडियन ऑर्डर ऑव् मेरिट, द्वितीय श्रेणी—जमादार भूरसिंह बीदावत तथा लैंसनायक अलीख़ां।

(८) इंडियन डिस्टिंग्विश्ड सर्विस पदक—मेजर ठाकुर मोतीसिंह; कप्तान ठाकुर बालूसिंह, लेफ़्टेनेंट चन्दनसिंह; सूबेदार जौहरीसिंह; जमादार सादूलसिंह, जमादार भूरसिंह शेखावत; ऑनरेरी जमादार ख़्वाजाबख़्श; सवार फ़ैज़अलीख़ां, नायक सुगनसिंह; सवार बलवंतसिंह तथा सवार धीरसिंह।

(९) इंडियन मेरिटोरियस सर्विस पदक—हवल्दार मेजर अब्दुलरहमान ख़ां; हवल्दार मेजर तोतासिंह; नायक इलाहीबख़्श, सवार मंगलसिंह तथा हवलदार कल्याणराय।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित व्यक्तियों को विदेशी सम्मान प्राप्त हुए—

(१) ऑर्डर ऑव् दि सर्बियन व्हाइट ईगल—लेफ़्टेनेंट कर्नल कुंवर जीवराजसिंह।

(२) कॉर्डन ऑव् दि ऑर्डर ऑव् दि नाइल, चतुर्थ श्रेणी—कैप्टेन ए० जे० एच० चोप।

(३) रशियन ऑर्डर ऑव् दि क्रॉस ऑव् सेंट जॉर्ज, चतुर्थ श्रेणी—सवार छोगसिंह।

(४) सर्बियन सुवर्ण पदक—नायक जस्सूसिंह, सवार लालसिंह तथा सवार गफ़ूरमुहम्मद।

(५) सर्बियन रजत पदक—सवार हुक्मसिंह।

यूरोपीय महायुद्ध-सम्बन्धी कार्यों में पांच वर्ष तक महाराजा साहब ने योग दिया एवं सेना आदि की राज्य से सहायता दी गई, जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। इस बीच में इनके-द्वारा राज्य में जो-जो मुख्य कार्य हुए, एवं जिन-जिन प्रतिष्ठित व्यक्तियों का बीकानेर में आगमन हुआ, उनका उल्लेख नीचे किया जाता है—

महायुद्ध के समय राज्य में होनेवाली अन्य घटनाएं

वि० सं० १९७० (ई० स० १९१३) में भारत का वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज पुनः बीकानेर गया।

अपनी अगाध पितृभक्ति के कारण महाराजा साहब ने अपने पिता महाराज लालसिंह की स्मृति में पहले ही राजधानी में लाखों रुपये की लागत से विशाल एवं सुन्दर महल, उद्यान आदि बनवाकर उसका नाम लालगढ़ रक्खा था। वहां अब इन्होंने उक्त महाराज की सफ़ेद संगमर्मर की सुन्दर प्रतिमा स्थापित की, जिसका उद्घाटन वि० सं० १९७२ मार्गशीर्ष वदि ३ (ई० स० १९१५ ता० २४ नवंबर) को लॉर्ड हार्डिंज-द्वारा हुआ। उस अवसर पर उसने इनकी अपूर्व पितृभक्ति का वर्णन करते हुए इनके सफल शासन की प्रशंसा की।

भारत में हिन्दुओं का बाहुल्य होने पर भी इस देश में हिन्दुओं के जातीय विश्वविद्यालय का अभाव था। यह बात धर्मप्राण महामना पंडित मदनमोहन मालवीय को निरन्तर खटकती थी। अतएव उन्होंने भारत के विद्या के प्रसिद्ध केन्द्र काशी में हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापित करने का

संकल्प किया। अपने विचार को कार्यरूप में परिणत करने के लिए उन्होंने भारत के कई प्रमुख नरेशों का सहयोग प्राप्तकर धन-संग्रह करना आरंभ किया। देश और जाति-हितकारी कार्यों से महाराजा साहब को प्रारंभ से ही अनुराग था, इसलिए इन्होंने इस महत् कार्य में यथोचित सहायता दी और इस विद्यालय के लिए नियमित वार्षिक सहायता भी स्थिर कर दी। वि० सं० १९७२ माघ सुदि १ (ई० स० १९१६ ता० ४ फ़रवरी) शुक्रवार को वाइसराय लॉर्ड हार्डिज के द्वारा 'हिन्दू विश्वविद्यालय' का शिला-न्यास हुआ। निमंत्रित होने पर अन्य भारतीय नरेशों के साथ-साथ ये भी उस उत्सव में सम्मिलत हुए। उस समय इनका वाइसराय के अतिरिक्त काश्मीर, जोधपुर, कोटा, किशनगढ़, झालावाड़, डूंगरपुर, अलवर, दतिया, नाभा के नरेशों एवं महाराजा सर प्रतापसिंह आदि से मिलना हुआ। महाराजा साहब प्रारम्भ से ही इस विश्वविद्यालय के संरक्षक हैं। पीछे से ये इसके चांसलर निर्वाचित हुए और अब तक उस पद पर नियुक्त हैं। ई० स० १९२७ ता० ९ दिसंबर (वि० सं० १९८४ पौष वदि १) को उक्त विश्वविद्यालय ने इनको एल० एल० डी० (डॉक्टर ऑव् लॉ) की उपाधि देकर सम्मानित किया है।

इनके शासनकाल में थोड़े ही समय में राज्य में ४७० मील लंबी रेल्वे लाइन हो गई। इससे राज्य और प्रजा को पूरा लाभ हुआ। बीकानेर जैसे बड़े राज्य के लिए यह लाइन अपर्याप्त थी, इससे इन्होंने वि० सं० १९७२ के फाल्गुन (ई० स० १९१६ मार्च) मास में रतनगढ़ से सरदार-शहर तक रेल की एक शाखा लगभग २८ मील लम्बी और जारी कर दी।

बीकानेर राज्य में जो शासन-सुधार होकर सुख-शांति का विस्तार हुआ तथा आर्थिक उन्नतियां हुई, उसकी नींव स्वर्गवासी महाराजा डूंगरसिंह के द्वारा दी गई थी। अतएव वहां के निवासियों ने उक्त महाराजा के गुणों से प्रेरित होकर उसकी चिरस्थायी स्मृति स्थापित करना अपना परम कर्तव्य समझा। निदान उन्होंने सार्वजनिक रूप से धन एकत्रित कर राजधानी में क़िले के मुख्य द्वार करणपोल के सामने गंगानिवास पब्लिक

पार्क के किनारे उसकी प्रस्तर-प्रतिमा शिखरबंद छत्री में संगमरमर की प्रशस्त वेदी पर स्थापित करना निश्चय किया। प्रतिमा के बनने पर वि० सं० १९७३ आश्विन सुदि ९ (ई० स० १९१६ ता० ५ अक्टोबर) को इसका उद्घाटन हुआ। प्रजा के निवेदन करने पर यह कार्य महाराजा साहब ने अपने हाथ से किया।

शासन-प्रणाली को अधिक लोकप्रिय बनाने के लिए वि० सं० १९७४ के द्वितीय भाद्रपद (ई० स० १९१७ सितंबर) मास में महाराजा साहब ने 'प्रजाप्रतिनिधि सभा' का कार्य विस्तीर्ण कर उसे 'व्यवस्थापक सभा' (Legislative Assembly) का रूप दिया और उसके सदस्यों की संख्या में भी वृद्धि कर दी, जिससे प्रजा के अधिकार बढ़ गये।

महाराजकुमार को शासनाधिकार देना

वि० सं० १९७७ (ई० स० १९२०) में महाराजकुमार शार्दूलसिंह की आयु १९ वर्ष की हो गई। महाराजा साहब ने उसको मेयो कालेज, अजमेर तथा यूरोप के विद्यालयों में न भेजकर आर्य संस्कृति की रक्षा के लिए कुशल और योग्य अध्यापकों-द्वारा अपनी देख-रेख में बीकानेर में ही शिक्षा दिलवाई। साथ ही उसे राजपूतों के योग्य सैनिक शिक्षा भी दी गई। फलतः महाराजकुमार ने शिक्षासंबंधी यथेष्ट ज्ञान प्राप्तकर अपने को उदार और होनहार सिद्ध किया। फिर उसको राज्य के प्रत्येक विभाग में काम सीखने का अवसर दिया गया, जिससे शासन-सम्बन्धी कार्यों का उसे आवश्यक ज्ञान हो गया। वि० सं० १९७५ (ई० स० १९१८) में जब महाराजा साहब संधि-सभा में भाग लेने के लिए यूरोप गये, तब महाराजकुमार को भी अनुभव-वृद्धि के लिए अपने साथ ले गये।

उन दिनों महाराजा साहब को शासन कार्य के अतिरिक्त अन्य साम्राज्य-हित के कार्यों में बड़ा श्रम करना पड़ता था, जिससे इनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा था। अतएव स्वास्थ्य-सुधार की कामना से इन्होंने महाराजकुमार को मुख्य मंत्री और कौंसिल के सभापति के अधिकार देना निश्चित कर लिया। निदान ता० ९ सितम्बर

(वि० सं० १९७७ भाद्रपद वदि १२) को बीकानेर में एक दरबार कर इन्होंने महाराजकुमार को मुख्य मंत्री और कौंसिल का सभापति निर्वाचित करने की घोषणा की। इस अवसर पर इन्होंने अपने विस्तृत भाषण में महाराजकुमार को संबोधन करते हुए मुख्यतः नीचे लिखी वातें कहीं, जो वड़ी ही महत्त्वपूर्ण और राजकुमारों के मनन करने योग्य हैं—

'.........यदि मुझे अपना उपदेश एक वाक्य में कहना पड़े तो मैं तुमसे अथवा किसी भी ऐसे व्यक्ति से, जिसे शासक होना है, यही कहूंगा कि ईश्वर, सम्राट्, राज्य, प्रजा तथा स्वयं अपने प्रति सच्चे रहो।

'एक अच्छे हिन्दू और सच्चे राजपूत राजकुमार से मेरा यह कहना व्यर्थ ही है कि इस लोक में सच्चे आनन्द तथा परलोक में वास्तविक लाभ की प्राप्ति उस व्यक्ति को नहीं हो सकती, जिसे ईश्वर का भय नहीं है अथवा जो सत्याचरणयुक्त जीवन नहीं व्यतीत करता।

'वर्तमान समय में अधिकांश युवकों में यह प्रथा सी है कि वे अपने धर्म तथा गुरुजनों में ज़रा भी श्रद्धा नहीं रखते, पर मुझे इस बात की खुशी है कि तुम्हें ऐसी भावनाओं के दुष्परिणाम का पूरा-पूरा ज्ञान है। सत्याचरण के विषय में व्याख्यान देने की आवश्यकता नहीं। लेकिन कोई भी ऐसा व्यक्ति, जिसे ईश्वर अथवा उस धर्म में—जिसमें वह पैदा हुआ और जो इतनी पीढ़ियों तक उसके पूर्वजों के लिए अच्छा था—विश्वास नहीं है अथवा जिसके मन में अपने माता-पिता तथा गुरुजनों के प्रति, चाहे वे किसी जाति और धर्म के क्यों न हों, श्रद्धा नहीं है, अपने जीवन का उद्देश्य पूरा नहीं कर सकता।

'साथ ही यह देखना प्रत्येक शासक का फ़र्ज़ है कि उसके राज्य में सब धर्मों और जातियों को समान तथा निष्पक्ष क़ानूनी संरक्षण मिलता है या नहीं एवं अन्य धर्मावलम्बी लोगों को असुविधाएं तो नहीं होतीं। बीकानेर राज्य का इतिहास धार्मिक असहिष्णुता के भावों से सर्वथा मुक्त रहा है और यहां हिन्दू तथा मुसलमान सदा प्रेमपूर्वक रहते आये हैं। तुम्हारा ध्येय भी यही होना चाहिये कि धार्मिक विषयों में सब के साथ

समान रूप से स्वतंत्रता के सिद्धांत का पालन हो, पर इसके साथ-साथ इस बात की भी सावधानी रहनी चाहिये कि धर्म की ओट में किसी ऐसे आन्दोलन का प्रादुर्भाव न हो, जो प्रजा की शांति के लिए ख़तरनाक सिद्ध हो।

'अब मैं एक दूसरे महत्त्वपूर्ण विषय पर आता हूं। किसी भी शासक का सर्वोच्च ध्येय और आकांक्षा सदैव यही रहती है कि वह अपने पुत्र अथवा उत्तराधिकारी को अपने राज्य की "इज़्ज़त" तथा शासक के नाते अपने सम्मान और हकों को अक्षुण्ण रूप से सौंप दे। कोई भी शासक, जो अपनी असावधानी अथवा अन्य किसी कारणवश इनमें कमी करता है, अपने पूर्वजों और वंश के नाम पर धब्बा लगाता है। ....

'ऐसे ही तुम अपने सरदारों की इज़्ज़त एवं हक़ों तथा प्रजा के हक़ों की भी उसी भांति रक्षा करने का प्रयत्न करना, जिस भांति कि तुम अपने हितों की रक्षा करोगे, क्योंकि उनकी इज़्ज़त की रक्षा से हमारी इज़्ज़त एवं शक्ति बनी रहेगी और हमारी प्रजा तथा सरदार हमारे राज्य के लिए कमज़ोरी का बाइस न होकर उसकी शक्ति का चिन्ह होंगे। ......

'तुम्हारा ध्यान अपने राज्य के उन सेठ-साहूकारों की ओर आकर्पित करना, जिन्होंने अपनी व्यापार-कुशलता से इस राज्य का नाम भारतके एक कोने से दूसरे कोने तक ऊंचा कर रक्खा है, अनावश्यक है। यह ध्यान रखना कि वे संतुष्ट रहें और उनकी जायज़ आकांक्षाओं को तुम्हारी तरफ़ से सहानुभूतिपूर्ण सहायता प्राप्त हो। ......

'तुम्हारे जैसे उच्च स्थान-प्राप्त व्यक्ति से क्या-क्या आशाएं रक्खी जाती हैं, इसको भी विस्मरण नहीं करना। साथ ही यह भी मत भूलना कि तुम्हारे में राजपूतों की परंपरागत न्याय, उदारता, वीरता, साहस, आखेट-प्रियता आदि की भावनाएं, जो राठोड़ों के प्रधान गुण हैं, सम्मिलित हैं।

'मित्र के प्रति सत्याचरण का अभाव न केवल भद्रता के विरुद्ध है, बल्कि वह निम्नकोटि की एहसानफ़रामोशी होने के साथ-साथ राजनीति के ख़िलाफ़ है। कोई भी मित्र, चाहे वह कितना ही सच्चा क्यों न हो, यह नहीं

चाहता कि जिस कार्य की पूर्ति के लिए वह साधन बनाया गया था, उसकी पूर्ति हो जाने पर वह दूर फेंक दिया जाय। इसका तात्कालिक परिणाम तो बुरा है ही, साथ ही इसका असर दूसरे लोगों पर बड़ा हानिकारक पड़ने की संभावना रहती है।

'शासन-नीति के संबंध में मुझे यह कहना है, 'कि मैं कार्यों और शक्ति के विभाजन में बड़ा विश्वास रखता हूं।...... अतएव योग्य और विश्वासपात्र व्यक्तियों का निर्वाचन कर उनकी वास्तविक योग्यता और राज्यभक्ति का प्रमाण पा लेने और यह जान लेने पर कि वे सच्चे मन से राज्य के कार्यों में भाग ले रहे हैं, उनको शक्तिभर जायज़ सहायता एवं संरक्षण देना तथा उनके कार्यों में दिलचस्पी लेकर उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिये। ऐसे कार्यकर्ताओं के कार्यों में उनका साथ दो और निर्भय होकर उनके योग्य कार्यों के बदले में उन्हें उपयुक्त अवसरों पर पुरस्कृत करो। साथ ही राज्य के अफ़सरों को भी यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि सरकार कोई उदार संस्था नहीं है और उसमें अयोग्य, दुर्बल, ग़ैरज़िम्मेवार, कुचरित्र, कार्येच्छा तथा दिलचस्पी से रहित व्यक्तियों के लिए गुंजाइश नहीं है।

'यदि शासन-नीति अंकगणित अथवा विज्ञान की भांति निश्चित नियमों पर अवलम्बित होती, तो राजनीति की पहाड़ जैसी ग़लतियों से बचाव होना आसान था। ऐसा न होने के कारण एक समय जो कार्य-शैली अच्छी होती है वही दूसरे अवसर पर बुरी सिद्ध हो सकती है, लेकिन फिर भी इस क्रियात्मक संसार में क्या ठीक है और क्या ग़लत इसकी निश्चित माप विद्यमान है। इसलिए थोथे आत्माभिमान की भावना से प्रभावित होकर किसी भी अन्यायी अथवा बेईमान अफ़सर के विरुद्ध कार्रवाई करने में कभी संकोच नहीं करना चाहिये। सच्ची बात तो यह है कि राज्य का सम्मान इस बात से अधिक घटता है कि भले-बुरे का विचार किये बिना ही राज्य के हर किसी कर्मचारी को हर समय सहायता दी जाय। ऐसे सब अवसरों पर सहानुभूति, दृढ़ता, साहस और न्याय-भावना से प्रेरित होकर ही कार्य करना आवश्यक है।

'इस राज्य में शिक्षा में काफ़ी उन्नति हो रही है और मुझे संतोष है कि बीकानेर के निवासी अपनी मातृभूमि की सेवा करने को विशेष रूप से उत्सुक हैं, लेकिन फिर भी अभी हमारी सरकार को बहुत समय तक बड़े तथा छोटे दोनों प्रकार के ओहदों के लिए बाहर के लोगों की सेवा की ज़रूरत पड़ेगी। "बीकानेर बीकानेरियों के लिए है" इस सिद्धान्त का मुझ से कट्टर माननेवाला और उसपर कार्य करनेवाला दूसरा व्यक्ति न होगा; लेकिन यदि अपने राज्य के सम्मान और शासन के सुचारु संचालन के लिए अपनी प्रजा में योग्य व्यक्ति न मिलता हो तो बाहर से किसी भी योग्य भारतीय अथवा विदेशी व्यक्ति को चुनने में किसी प्रकार का संकोच न करना चाहिये।

'इस विषय पर मैं एक बात और कह देना चाहता हूं। हम शासन के हर विभाग अथवा किसी भी एक विभाग के विशारद नहीं हो सकते। यह भी आवश्यक नहीं कि किसी एक विभाग का अधिक से अधिक ज्ञान होना ही सबसे बड़ी अच्छाई हो। शासक के लिए सबसे ज़रूरी यह है कि उसे व्यक्तियों के स्वभाव का ज्ञान हो। भारत के महान् शासक अकबर (जो कहा जाता है कि अपना नाम तक नहीं लिख सकता था) और पंजाब के स्वामी महाराजा रणजीतसिंह (जो भी कुछ पढ़ा लिखा न था) ने अपना नाम रोशन किया, उसका कारण यही था कि वे मनुष्य-स्वभाव के अच्छे ज्ञाता थे। इसलिए अच्छे व्यक्ति चुनना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि ऐसे व्यक्ति चुने जायें, जो नौकरियों के लिए सर्वथा उपयुक्त हों। आवश्यकता पड़ने पर कार्य-पटु व्यक्तियों को सलाह मशविरे के लिए बुलाया जा सकता है। स्मरण रक्खो कि तुम्हारे अफ़सर शासन-यंत्र के कल-पूर्जे हैं और उनके भले बुरे होने के अनुसार ही शासन-प्रबंध की प्रशंसा अथवा बुराई होगी। उनके सामने स्वयं उच्च आदर्श रखकर उनका धरातल ऊंचा रक्खो और ध्यान रक्खो कि वे अपना कार्य ठीक-ठीक ही नहीं बल्कि पूरे उत्साह के साथ—मशीन की तरह नहीं, बल्कि मनुष्यों की तरह, राजा और प्रजा की भलाई को दृष्टि में रखते हुए—कर रहे हैं।

'साथ ही ऐसा प्रवन्ध करना जिससे तुम्हारे शासन के किसी भी विभाग में फ़ज़ूलख़र्ची न हो। हिसाव और जांच की ग़लती के कारण राजकीय धन का दुरुपयोग भी नहीं होना चाहिये। फ़ज़ूलख़र्ची रोकने का यह अर्थ नहीं है कि वचत पर कड़ी से कड़ी नज़र रक्खी जाय। "अर्थ विभाग" का सिद्धांत—"राज्य की रक्षा, सम्मान और इज़्ज़त के अनुरूप वचत"—होना चाहिये। किसी भी ऐसे कर के संबंध में, जो न्यायतः लिया जा सकता है अथवा जो परिस्थितवश लगाना आवश्यक हो जाता है, यह देख लेना लाज़िमी है कि वह असमान तो नहीं है और उसका बोझा लोगों पर अधिक तो नहीं पड़ता।

'शिक्षा की वृद्धि तथा अस्पतालों-द्वारा जनता को सहायता पहुंचाने की ओर मेरा विशेष ध्यान रहा है और प्रारम्भ से ही मैंने इस वात पर ज़ोर दिया है कि इन प्रशंसनीय कार्यों में उदारतापूर्वक सहायता दी जाय। मुझे यक़ीन है कि इन दोनों विभागों की तरफ़ तुम्हारी भी निजी दिलचस्पी रहेगी और इन्हें समुचित सहायता मिलती रहेगी। जब तक यहां के निवासियों के स्वास्थ्य की तरफ़ ध्यान न दिया जायगा वे कमज़ोर वने रहेंगे और जब तक उन्हें ठीक रूप से शिक्षा न दी जायगी वे राज्य की सेवा के योग्य न होंगे। वस्तुतः ये दोनों वातें ही राज्य की उन्नति एवं शक्ति के लिए आवश्यक हैं।

'पश्चिमी संस्थाओं की अच्छी वातों का वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार अनुकरण करना अच्छा मानते हुए भी मैं कहूंगा कि अपनी प्रणाली की उत्तमता अथवा स्थानीय परिस्थितियों एवं भावनाओं के अनुसार उसमें जो कुछ उचित है उसको शीघ्रता में त्याग देना अथवा बुरा कहना ठीक नहीं। वृटिश भारत में जो क़ानून-कायदे अच्छे हैं और समय की कसौटी पर कसे जा चुके हैं उनसे पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सकता है, लेकिन शासक अथवा उसकी सरकार को कभी अपनी प्रजा के विपरीत नहीं जाना चाहिये। प्रत्येक पश्चिमी वात अथवा वृटिश भारत में प्रचलित कायदे-कानूनों का अंधानुकरण लोगों को तकलीफ़ और असन्तोष

पहुंचाने के साथ ही शासक को संकट में डाल देगा। हमारा ध्येय बृटिश भारत के प्रान्तों की शैली पर राज्यों का निर्माण करना नहीं है, बल्कि परंपरागत भावनाओं तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार भारतीय शासन-पद्धति-द्वारा उनका शासन करना है।

'हमारा यह कर्तव्य होना चाहिये कि हम देखें कि शासन ज़ाती होने पर भी एक सत्तात्मक नहीं है और शासक तथा शासित का संबंध घनिष्ठ है। हमें शीघ्रता अथवा असावधानी से कोई ऐसा कार्य न करना चाहिये, जिससे इस संबंध में ढीलापन अथवा ख़राबी पैदा हो। अपने शासन को सुदृढ़ बनाने में हमें उसे कठोर एवं निर्जीव बनाने की ग़लती नहीं करनी चाहिये। दृढ़ता उत्पन्न करना वांछनीय है, पर यदि वह स्वामिभक्ति, सामूहिक सहानुभूति तथा सुभावना की बलि देकर प्राप्त होती हो तो नहीं।

'शासन के प्रत्येक विभाग की परीक्षा का एक ही सरल उपाय है, और वह यह देखना कि उससे साधारण जनता के सुख और समृद्धि में वृद्धि होती है अथवा नहीं? इसके अतिरिक्त और सभी बातें गौण हैं। इस संबंध में मुझे जेनरल गॉर्डन के नीचे लिखे शब्द, याद आते हैं, जो उसने अपने एक मित्र को लिखे थे—"लोगों पर शासन करने का एक ही मार्ग है, जो अनन्त-सत्य है। उनके भीतर प्रवेश करो। उनकी भावनाओं को समझने की चेष्टा करो। यही शासन का रहस्य है।"

'हमेशा उदारता व्यवहार में लाओ। पिछले उदाहरणों से प्रेरित होकर राजनैतिक और शासन संबंधी सुधारों का आविर्भाव करने में संकोच न करो। पहले खूब सोच-विचार कर लो और फिर उदारतापूर्वक दो तथा ठीक अवसर पर दो, क्योंकि जो शीघ्र देता है वह दूना देता है। स्वार्थ-साधन की भावना का परित्याग कर थोड़े लोगों और ख़ास कार्यों के लिए नहीं बल्कि अधिकांश लोगों की भलाई के लिए कार्य करो।......

'सब को खुश कर सकना असंभव है। कहावत है कि जो लोक-प्रिय बनना चाहता है वह शासन नहीं कर सकता। फलतः जहां न्यायोचित कार्य में किसी प्रकार के भय-प्रदर्शन से विचलित नहीं होना चाहिये वहां अप्रिय

तथा अनावश्यक जुल्म के कार्यों में भी सहयोग नहीं देना चाहिये। राज्य और प्रजा को बद-अमनी, क्रांति और नाश से बचाने के लिए जो साधन आवश्यक हो जावें, उन्हें भी न्यायपूर्ण और उदार बनाना आवश्यक है।...

'किसी भी राज्य के शासक का मार्ग एकदम कंटकविहीन नहीं है। उसका कर्तव्य है कि वह तन-मन से, दिन रात, अपने स्वास्थ्य की ज़रा भी परवा न करता हुआ राज्य और प्रजा की सेवा करे और उन्हें अपने जीवन का सबसे अच्छा समय प्रदान करे। जैसा कि एक महान् पुरुष ने कहा है—"शासक अपने राज्य का सबसे पहला सेवक और सबसे पहला हाकिम होता है।"

'वर्तमान समय में बहुधा असंतुष्ट और अज्ञान व्यक्ति शासक का मज़ाक उड़ाते हुए देखे जाते हैं, पर जिन्हें शासक के कार्यों और चिन्ताओं का ही पता नहीं है, वे भला उसकी ज़िम्मेवारियों का क्या अनुमान कर सकते हैं। इतनी सब ज़िम्मेवारी और चिन्ताओं के रहते हुए शासक के लिए इससे बढ़कर दिलचस्प दूसरा कार्य नहीं हो सकता कि वह सब अवसरों पर प्रकट तथा अप्रकट रूप से अपने राज्य तथा जनता की सुख-समृद्धि के लिए सहायता करता रहे।

'इस संबंध में मेरा कहना है कि अच्छे कार्य करने के लिए आवश्यक अवसर की प्रतीक्षा न करो, बल्कि उसके लिए साधारण से साधारण परिस्थिति का पूरा पूरा उपयोग करो।......

'कभी-कभी तुम्हारे पास कार्य का आधिक्य हो जायगा, परन्तु इससे शंकित अथवा विचलित होने की ज़रूरत नहीं। एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार सदा कार्य करना और चाहे कितने ही व्यस्त क्यों न हो, सीमित समय के भीतर अथवा किसी ख़ास अवसर पर किये जानेवाले कार्य को पहले करना। किसी ने ठीक कहा है कि किसी कार्य के लिए भी समय मिलना कठिन है, पर समय की आवश्यकता होने पर समय निकालना चाहिये। जैसा कि बेकन्सफ़ील्ड ने कहा है—"बड़े आदमियों को समय का नहीं बल्कि अवसर का विचार करना चाहिये। समय का विचार

करना कमज़ोर और परेशान आत्मा का सूचक है।"……

'अपने सलाहकारों की प्रेरणा से किसी अनुचित मामले का पक्ष न ग्रहण करना और कभी अपनी ग़लती स्वीकार करने से भयभीत न होना, क्योंकि ग़लती प्रत्येक व्यक्ति से, चाहे वह कितना ही मेधावी और बड़ा क्यों न हो, होती है। ग़लती करना मानव का स्वभाव है और केवल वे शख़्स, जिन्होंने कभी कोई महान् कार्य हाथ में लिया ही नहीं, यह कह सकते हैं कि हमसे कभी ग़लती नहीं हुई। इसी प्रकार नई बातों के उदय होने अथवा खूब सोच-विचार कर लेने के बाद, अपने विचार बदलने में भी संकोच न करना, क्योंकि मन में यह जानते हुए भी कि तुम ग़लती पर हो अपने पूर्व विचार पर अड़े रहना बड़प्पन और शक्ति का सूचक नहीं, बल्कि कमज़ोरी और हठधर्मी का चिन्ह है।……

'मेरा अपना विचार तो यह है कि ऐसे मामलों में, जिनमें तुम ठीक कार्य कर रहे हो, यदि प्रारम्भ में नहीं तो आगे चलकर तुम्हें अवश्य सफलता मिलेगी; लेकिन जो भी हो सदा स्पष्ट और शुद्ध-हृदय बने रहना।

'अन्त में मेरा यह कहना है कि कितना भी बुरा और असन्तोषपूर्ण क्यों न प्रतीत हो, पर आवश्यकता के अनुसार अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन करने में किसी प्रकार की देरी अथवा संकोच नहीं करना।……'

महाराजकुमार ने योग्यतापूर्वक साढ़े चार वर्ष तक बीकानेर राज्य के मुख्य मंत्री और कौंसिल के सभापति के दायित्वपूर्ण पद का प्रत्येक कार्य लगन तथा परिश्रम के साथ पूरा किया, एवं वह बड़ा ही लोकप्रिय हो गया; पर महाराजा साहब का प्रवास यूरोप में होने से इस अवसर पर स्वार्थी लोगों ने, जिनका राज्य से संबंध था, उस (महाराजकुमार) की सरलता का अनुचित लाभ उठाने की इच्छा से पिता-पुत्र के बीच भेद उत्पन्न करने के लिए षड्यंत्र रचना आरंभ किया। बीकानेर के चार सिरायत सरदारों में से रावतसर का रावत मानसिंह अपने को अन्य सिरायत सरदारों से उच्च बतलाकर महाजन ठिकाने से (जो १९ पीढ़ी से सिरायत सरदारों का प्रमुख ठिकाना माना जाता है) ऊपर होने का दावा

करने लगा। समुचित रूप से इसकी तहक़ीकात होने पर उस(मानसिंह)-का दावा निराधार पाया गया। तब महाराजा साहब ने उसके दावे को ख़ारिज कर दिया। इससे वह असंतुष्ट होकर महाराजा साहब-द्वारा होने-वाली कृपाओं (शिक्षा, उच्च पद पर नियुक्ति आदि) को विस्मरण कर कृतघ्नता करने पर तैयार हो गया और महाराजकुमार को बहकाने लगा कि आपके प्राण संकट में है। जादू, टोना आदि से आपके प्राण लेने की राज-महलों में चेष्टाएं हो रही हैं। इसके सुबूत में उसने दो जाली पत्र भी बनवा-कर महाराजकुमार को दिखलाये। महाराजकुमार उस समय नवयुवक था, तो भी उसने इनपर विश्वास न किया और ये सब बातें अपने पिता (महाराजा साहब) से प्रकट कर दीं। इसपर इन्होंने पत्रों की वास्तविकता की जांच के लिए एक कमीशन नियत किया। फलतः उपर्युक्त पत्र जाली प्रमाणित हुए और रावत मानसिंह इस भयंकर कार्य का अपराधी पाया जाकर बीकानेर के दुर्ग में नज़रबंद कर दिया गया।

स्वार्थी लोगों के ऐसे नीचतापूर्ण कार्यों से घृणा होकर महाराज-कुमार को प्रधान मंत्री और कौंसिल के सभापति पद के कार्य से भी अनिच्छा हो गई। उसने कई बार महाराजा साहब से प्रार्थना की कि खुद-ग़र्ज़ लोग वैमनस्य उत्पन्न कराते हैं। मैं सदैव आज्ञाकारी हूं। बिना किसी पद पर रहे, हर प्रकार से कार्य-भार बंटाने और जो कार्य सौंपा जाय उसे करने को तैयार हूं। अन्त में इन्होंने उसके इस आग्रह को स्वीकार कर राज्य-कार्य पुनः पूर्व-निर्दिष्ट शैली के अनुसार चलाना आरंभ किया।

लॉर्ड चेम्सफ़र्ड का बीकानेर जाना

भारत का वाइसराय लॉर्ड चेम्सफ़र्ड भारत में आने के बाद युद्ध के कार्यों में व्यस्त रहने के कारण, बीकानेर न जा सका था। वि० सं० १९७७ (ई० स० १९२०) में उसका कार्य-काल समाप्त हो रहा था, अतः वह उसी वर्ष के नवम्बर महीने में बीकानेर पहुंचा। ता० २९ (मार्गशीर्ष वदि ४) को वहां उसके सम्मान में राजकीय भोज हुआ। उस अवसर पर उसने अपने

भाषण में महाराजा साहब के शासन, युद्धसम्बन्धी कार्यों, संधिसभा में भाग लेने आदि की बहुत प्रशंसा की।

मांटेगू-चेम्सफ़र्ड सुधारों को भारत में कार्य रूप में लाने के लिए सम्राट् जॉर्ज पञ्चम ने अपने चाचा ड्यूक ऑव् कनाट को वि० सं० १९७७ (ई० स० १९२१) में भारतवर्ष में भेजा। तदनुसार ड्यूक महोदय ने राजधानी दिल्ली में आकर मांटेगू-चेम्सफ़र्ड शासन सुधारों को कार्यान्वित किया और ता० ८ फ़रवरी (माघ सुदि प्रथम १) को दिल्ली के क़िले में मुग़ल बादशाहों के बनाये हुए "दरबार आम" नामक हॉल में उपस्थित होकर दरबार किया और भारतीय नरेशों को साम्राज्य का भागीदार बनाने के लिए नरेन्द्र-मंडल की स्थापना की। इस अवसर पर निमंत्रण प्राप्त होने पर महाराजा साहब भी दिल्ली गये, जहां ये उक्त मंडल के चांसलर बनाये गये।

महाराजा साहब का नरेन्द्र-मंडल का चांसलर नियत होना

वि० सं० १९७८ आश्विन सुदि १० (ई० स० १९२१ ता० ११ अक्टोबर) को महाराजा साहब ने अपने जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में होनेवाले दरबार में ज़मींदारों के हितसाधन के लिए ज़मींदार-परामर्शिणी सभा स्थापित करने की आज्ञा प्रदान की और इस सभा-द्वारा चुने हुए तीन प्रतिनिधियों के व्यवस्थापक सभा में रक्खे जाने की स्वीकृति भी दी, जिससे ज़मींदारों की शिकायतें बहुधा दूर हो गईं।

ज़मींदार-परामर्शिणी सभा की स्थापना

उसी वर्ष दिसम्बर मास में श्रीमान् प्रिन्स ऑव् वेल्स (भूतपूर्व सम्राट् एडवर्ड अष्टम) का बीकानेर में आगमन हुआ। महाराजा साहब ने उसका स्वागत किया। ता० २ दिसम्बर (मार्गशीर्ष सुदि ३) को लालगढ़ महल में राजकीय भोज हुआ। उस अवसर पर श्रीमान् प्रिन्स ने बीकानेर के नरेशों की ओर से साम्राज्य की समय-समय पर होनेवाली सहायताओं का उल्लेख करते हुए यूरोपीय महायुद्ध, संधि-सभा,

प्रिन्स ऑव् वेल्स और लॉर्ड रीडिंग का बीकानेर जाना

आदि में इनके भाग लेने की बड़ी प्रशंसा की। इसके कुछ ही दिनों बाद जनवरी ई० स० १९२२ (वि० सं० १९७८ पौष सुदि) के प्रथम सप्ताह में भारत का वाइसराय और गवर्नर जेनरल लॉर्ड रीडिंग बीकानेर गया। ता० २ जनवरी (पौष सुदि ४) को उक्त वाइसराय के सम्मान में राजकीय भोज हुआ। उस समय उसने अपने भाषण में इनके-द्वारा होनेवाली साम्राज्य-हितकारी सेवाओं, युद्ध के समय दी गई सहायता एवं बीकानेर में होनेवाली उन्नति का वर्णन किया।

महाराजकुमार शार्दूलसिंह का विवाह

वि० सं० १९७९ वैशाख वदि ७ (ई० स० १९२२ ता० १८ अप्रेल) को महाराजा साहब के ज्येष्ठ महाराजकुमार शार्दूलसिंह का विवाह रीवां नरेश वेंकटरमणसिंह की राजकुमारी (महाराजा सर गुलाबसिंहजी की बहिन) के साथ हुआ। इस अवसर पर भारत के कितने ही राजा-महाराजा तथा उच्चाधिकारी बीकानेर में उपस्थित हुए। महाराजा साहब अपने कितने ही प्रतिष्ठित महमानों के साथ रीवां पहुंचे, तो वहां के नवयुवक महाराजा सर गुलाबसिंहजी ने उनका स्वागत किया। वि० सं० १९८० वैशाख सुदि ५ (ई० स० १९२३ ता० २१ अप्रेल) को उक्त कुंवरानी से सुशीलकुंवरी का जन्म हुआ।

हाई कोर्ट की स्थापना

राज्य के न्यायालयों का कार्य और उनकी अपीलों की सुनवाई भली प्रकार से हो सके, इसके लिए पूर्व-स्थापित चीफ़ कोर्ट को वि० सं० १९७९ वैशाख सुदि ६ (ई० स० १९२२ ता० ३ मई) को हाई कोर्ट में परिणत किया गया, जिसका कार्य सुचारु-रूप से संचालन करने के लिए एक चीफ़ जज और दो सब जज नियुक्त किये गये।

वि० सं० १९८१ वैशाख वदि २ (ई० स० १९२४ ता० २१ अप्रेल) को महाराजा साहब के पौत्र (युवराज शार्दूलसिंह के पुत्र) भंवर[1] करणीसिंह

(१) राजपूताने में साधारणतया पौत्र को भंवर और पौत्री को भंवरबाई अथवा भंवरी कहते हैं।

कुंवर करणीसिंह का जन्म

का जन्म हुआ। महाराजा साहब ने इस अवसर पर बड़ी उदारता प्रकट की।

उसी वर्ष सितंबर मास में 'लीग ऑव् नेशन्स' का अधिवेशन जिनेवा में होनेवाला था। अतएव वाइसराय और भारतमंत्री का निमंत्रण पाने पर

महाराजा साहब का लीग ऑव् नेशन्स में सम्मिलित होना

महाराजा साहब उक्त लीग की बैठकों में भारत के राजा और महाराजाओं के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए। वहां पर इनके-द्वारा होनेवाले कार्यों के सम्बन्ध में वाइसराय लॉर्ड रीडिंग ने अपने ता० ८ अक्टोबर (आश्विन सुदि ११) के तार में इन्हें लिखा—"आपकी जिनेवा मे दी हुई प्रभावशाली वक्तृता के लिए मैं आपको हृदय से बधाई देता हूं। असेम्बली की बैठकों में भारत की ओर से किये गये आपके श्रम के लिए मैं आपका अतीव अनुगृहीत हूं। साथ ही अपनी वैयक्तिक सुविधाओं का ध्यान छोड़ भारत से बाहर जाकर भारत का प्रतिनिधित्व स्वीकार करने के लिए भी मैं आपका अत्यन्त कृतज्ञ हूं।"

अब तक बीकानेर राज्य में चलनेवाली रेल्वे का प्रबंध जोधपुर-बीकानेर राज्यों की शामलात में होता था। इसमें कुछ कठिनाइयां होती

बीकानेर राज्य की रेल्वे का प्रबंध पृथक् होना

थीं, अतएव महाराजा साहब ने बीकानेर राज्य में चलनेवाली रेल्वे का प्रबन्ध पृथक् रूप से करने की योजना बनाकर ई० स० १९२४ ता० १ नवंबर (वि० सं० १९८१ कार्तिक सुदि ५) से उसे जोधपुर स्टेट रेल्वे से अलग कर लिया। प्रबंध के सुभीते के लिए बीकानेर में एक विशाल रेल्वे का दफ़्तर बनाया जाकर भिन्न-भिन्न विभाग स्थापित कर दिये गये, जिससे आय-व्यय के हिसाब की जांच-पड़ताल भी वहीं होने लगी। इस प्रबन्ध से बीकानेर राज्य के कई शिक्षित लोगों को रोज़गार मिलने लगा और व्यय में भी किफ़ायत होने लगी। फिर ई० स० १९२५ ता० १८ मार्च (वि० सं० १९८१ चैत्र वदि ८) को इन्होंने बीकानेर में रेल्वे के कारखाने की नींव रक्खी, जो बाईस लाख से अधिक रुपये की लागत से तैयार

होकर बीकानेर राज्य के कितने ही लोगों के निर्वाह का अच्छा साधन बन गया है।

बीकानेर राज्य मरुभूमि होने के कारण वहां वर्षा का औसत अधिक नहीं है। कुएं थोड़े और गहरे होने से खरीफ़ के अतिरिक्त रबी की फ़सल उत्पन्न नहीं होती, जिससे अकाल के समय प्रजा को बड़ी कठिनाइयां होती हैं। अतः महाराजा साहब ने अपने राज्य में कृषि-कार्य बढ़ाने के लिए सतलज नदी से एक नहर लाने का विचार कर अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी आरंभ की। अंत में पंजाब के फ़ीरोज़पुर नगर से बीकानेर राज्य में सतलज नदी से नहर लाने की अंग्रेज़ सरकार ने स्वीकृति दी, जिसका अंतिम पत्रव्यवहार ई० स० १९२० ता० ४ सितंबर (वि० सं० १९७७ भाद्रपद वदि ६) को होकर नहर लाना स्थिर हो गया।

गंग नहर लाने की योजना

इस नहर का कार्य बड़ा ही व्ययसाध्य था। इसे लाने में बीकानेर राज्य का पौने तीन करोड़ रुपया व्यय होने का अनुमान किया गया, जिसकी प्राप्ति का साधन नहर के आस-पास की ज़मीन की बिक्री का मूल्य और नज़राने की रक़म थी, जिसका अनुमान लगभग छः करोड़ रुपये का किया गया। इसके अतिरिक्त इस नहर के लाने से राज्य को वार्षिक बत्तीस लाख रुपये तो केवल आबपाशी से, बीस लाख रुपये सूद से तथा रेल्वे, सायर, स्टांप आदि मिलाकर पचहत्तर लाख रुपये प्रति वर्ष आय बढ़ाने का अनुमान किया गया। फलतः बीकानेर राज्य के उत्तरी भूभाग की पैमाइश आदि होकर नकशे और तखमीना बनने के बाद ई० स० १९२५ ता० ५ दिसंबर (वि० सं० १९८२ पौष वदि ५) को बीकानेर राज्य की सीमा में नहर लाने का शिलान्यास स्वयं महाराजा साहब ने अपने हाथों से किया। यह नहर गंग नहर के नाम से प्रख्यात हुई। इस नहर के समीपवर्ती भूभाग में दूर-दूर तक कृषि-कर्म आरंभ हुआ जिससे उधर की आबादी दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है और श्रीगंगानगर आदि कई बड़ी-बड़ी व्यापारिक मंडियां भी बस गई हैं।

महाराजा साहब ई० स० १६१६ से १६२० (वि० सं० १६७३-१६७७) तक नरेन्द्र सभा के मुख्य मन्त्री रहे। ई० स० १६२१ (वि० सं० १६७७) में भारत में मांटेगू-चेम्सफ़र्ड सुधारों का आरंभ होकर नरेन्द्र-मंडल (Chamber of Princes) की स्थापना की गई। इस अवसर पर महाराजा साहब उसके चान्सलर (Chancellor) निर्वाचित किये गये। इस महत्वपूर्ण पद पर ये लगातार पांच वर्ष तक रहे। फिर राज्य-कार्य की अधिकता से इन्होंने नरेन्द्र-मंडल के चुनाव में खड़ा होना बंद कर दिया। इन्होंने नरेन्द्रमंडल का चान्सलर रहते समय बड़े परिश्रम से कार्य किया, जिसकी वाइसराय लॉर्ड चेम्सफ़र्ड, रीडिंग और इर्विन ने समय-समय पर बड़ी प्रशंसा की। वि० सं० १६८१ के मार्गशीर्ष (ई० स० १६२४ नवम्बर) मास में नरेन्द्र-मंडल के अधिवेशन के समय ता० १७ नवम्बर (मार्गशीर्ष वदि ६) को वाइसराय लॉर्ड रीडिंग ने अपने भाषण में इनके कार्यों की प्रशंसा करते हुए कहा—"पूर्ण सफलता के साथ हाथ में लिए हुए काम को संपादन करने के लिए हम महाराजा साहब को बधाई देते हैं।"

भारत के देशी नरेशों-द्वारा महाराजा साहब का सम्मान

ई० स० १६२६ (वि० सं० १६८२-८३) के चुनाव के समय महाराजा साहब ने अधिकांश नरेशों के आग्रह करने पर भी चान्सलर पद के उम्मेदवार होने की इच्छा प्रकट न की, तब उन्होंने इन्हें डाइनिङ्ग टेबल पर सजाने की पचहत्तर हज़ार रुपये के मूल्य की सोने चांदी की तश्तरियां और कप भेंट किये।

वि० सं० १६८२ पौष वदि ११ (ई० स० १६२५ ता० ११ दिसंबर) को महाराजकुमार शार्दूलसिंह के द्वितीय पुत्र अमरसिंह का जन्म हुआ। इस शुभ अवसर पर महाराजा साहब ने अपनी स्वाभाविक उदारता से सहस्रों रुपये व्यय किये। कई दिनों तक प्रजा ने इनके पौत्र उत्पन्न होने की खुशी मनाई।

महाराजा के दूसरे पौत्र अमरसिंह का जन्म

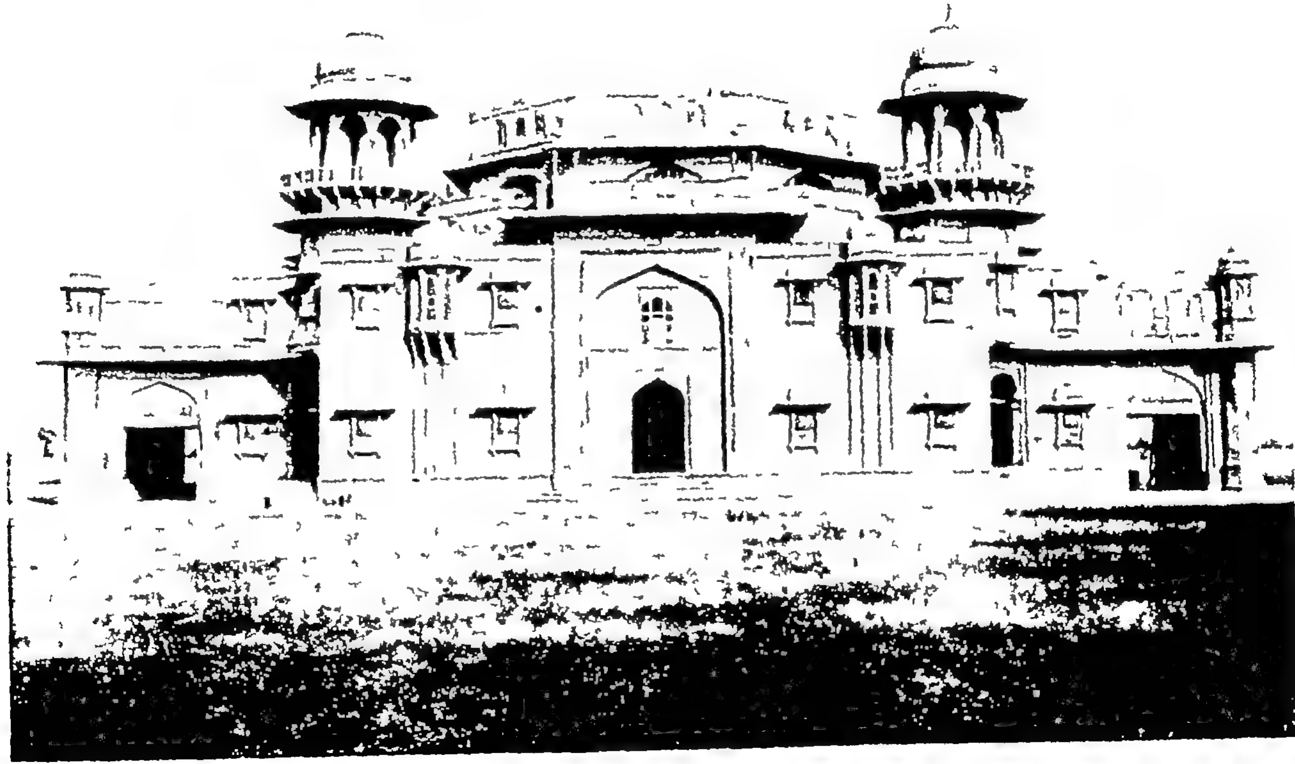
महाराजा साहब ने शासनाधिकार मिलने के पीछे स्वयं राज-कार्य बहुत परिश्रमपूर्वक चलाया, परन्तु दिन-दिन शासन कार्य बढ़ता गया, जिससे वि० सं० १६८३ (ई० स० १६२७ जनवरी) में बड़ोदा राज्य का भूतपूर्व दीवान सर मनुभाई मेहता, नाइट, सी० एस० आई०, एम० ए०, एल-एल० बी०, बीकानेर राज्य का चीफ़ कौंसिलर तथा प्रधान मंत्री नियत किया गया। फलस्वरूप उस समय से राज्य कौंसिल केवल परामर्श देनेवाली और क़ानूनी संस्था रह गई।

सर मनुभाई मेहता का प्रधान मंत्री नियत होना

उन्हीं दिनों जनवरी मास के अंतिम सप्ताह में भारत का वाइसराय और गवर्नर जेनरल लॉर्ड इर्विन बीकानेर पहुंचा। ता० २६ जनवरी (वि० सं० १६८३ माघ वदि ११) को उसके आगमन के उपलक्ष्य में लालगढ़ में भोज हुआ। उस समय वाइसराय ने अपनी वक्तृता में बीकानेर-यात्रा आनंदपूर्वक होने एवं महाराजा साहब के सामयिक कार्यों का उल्लेख करते हुए इनके उत्तम शासन तथा यूरोपीय महायुद्ध, संधि कान्फ़रेन्स तथा नरेन्द्र-मंडल में होनेवाले कार्यों की बहुत सराहना की। फिर वह गजनेर गया, जहां की सुन्दर झील और प्राकृतिक शोभा को देखकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसे आबपाशी के कार्यों में अत्यन्त अनुराग था। बीकानेर जैसे निर्जल प्रदेश में महाराजा-द्वारा असाधारण उन्नति एवं आबपाशी के साधन बढ़ाये जाने से उसको बड़ी प्रसन्नता हुई। फलतः महाराजा और उक्त वाइसराय में प्रगाढ़ मैत्री हो गई और इसके पीछे भी वह कई बार बीकानेर गया। शासन सुधार आदि गंभीर विषयों में उसको महाराजा की उचित सलाहें बड़ी लाभकारी प्रतीत हुई।

वाइसराय लॉर्ड इर्विन का बीकानेर जाना

(१) महाराजा साहब और लॉर्ड इर्विन के बीच मित्रता का अच्छा सम्बन्ध रहा। उसकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए इन्होंने लगभग तीन लाख रुपये की लागत से बीकानेर में नवीन असेंबली भवन बनवाकर उसका नाम 'इर्विन लेजिस्लेटिव असेंबली हॉल' रक्खा है।



इर्विन असेंब्ली हॉल, बीकानेर

गंग नहर के निर्माण का महत्वपूर्ण कार्य वि० सं० १६८४ (ई० स० १६२७) में पूरा हो गया। अतएव महाराजा साहब ने उक्त नहर का

गङ्ग नहर का उद्घाटन

अक्टोबर मास में उद्घाटन करना निश्चय किया। निमंत्रित किये जाने पर भारत के कई राजा-महाराजा भी इस उत्सव में सम्मिलित हुए। कार्तिक सुदि १ (ता० २६ अक्टोबर) को लॉर्ड इर्विन-द्वारा उक्त नहर का उद्घाटन हुआ। इस शुभ अवसर पर महामना पंडित मदनमोहन मालवीय भी उपस्थित थे और वरुण-पूजा आदि धार्मिक कृत्य उनकी सम्मति के अनुसार हुए।

वि० सं० १६८६ (ई० स० १६२६) में पूर्व नियुक्त ज़मींदारों के "एडवाइज़री बोर्ड" की संख्या एक से बढ़ाकर दो कर दी गई। एक सदर

द्वितीय जमींदार एडवाइजरी बोर्ड की स्थापना

डिविज़न और दूसरा गंगानगर डिविज़न के लिए। पहले में सदस्यों की संख्या २० रक्खी गई और दूसरे में १५।

महाराजा साहब की महाराजकुमारी शिवकुमारी का सम्बन्ध कोटे के महाराव सर उम्मेदसिंहजी के महाराजकुमार भीमसिंह से होना निश्चय

महाराजकुमारी का विवाह

हुआ था। तदनुसार वि० सं० १६८७ वैशाख सुदि २ (ई० स० १६३० ता० ३० अप्रेल) को इन्होंने महाराजकुमारी का विवाह उक्त महाराजकुमार के साथ किया। इस शुभ अवसर पर राजपूताना और मध्य भारत के कितने ही प्रतिष्ठित नरेश भी सम्मिलित हुए थे।

निमंत्रित किये जाने पर लीग ऑव् नेशन्स की बैठकों में सम्मिलित होने के लिए ई० स० १६३० के सितंबर (वि० सं० १६८७ आश्विन) मास में

महाराजा का यूरोप जाना

महाराजा साहब पुनः यूरोप गये। वहां इन्होंने भारत की ओर से जानेवाले प्रतिनिधियों के प्रधान की हैसियत से लीग के अधिवेशनों में तथा लंदन में अक्टोबर में होनेवाली इम्पीरियल कान्फरेन्स में भाग लिया।

लॉर्ड कर्ज़न की वङ्ग-विच्छेद नीति से ब्रिटिश भारत में तीव्र असन्तोष उत्पन्न होकर ई० स० १६०५ (वि० सं० १६६२) से ही अंग्रेज़ी शासन के विरुद्ध क्रांति का जन्म हो गया था और यत्र-तत्र भयानक षड्यंत्र हो रहे थे। लोगों का दुस्साहस यहां तक बढ़ गया था कि उन्होंने लॉर्ड हार्डिंज पर बम-प्रहार भी किया, किंतु अधिकांश भारतवासी उनके इन उत्तेजनात्मक कार्यों को ठीक न समझते थे। लॉर्ड मिंटो के समय शासन-कार्य में परिवर्तन होकर मिंटो-मॉर्ले सुधारों का सूत्रपात हुआ, परंतु उससे यह आग न बुझ सकी। ई० स० १६११ (वि० सं० १६६८) में सम्राट् जॉर्ज पञ्चम ने भारत में आकर दिल्ली में राज्याभिषेकोत्सव का बृहद् दरबार किया। उसमें लॉर्ड कर्ज़न की वङ्ग-विच्छेद नीति को अग्राह्य कर दिया गया, जिसका भारतीय प्रजा पर कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा, परंतु शांति स्थापित न हो सकी। ई० स० १६१४ (वि० सं० १६७१) में यूरोप में महायुद्ध छिड़ गया। उस समय भारतीय प्रजा ने शासन-शैली से संतुष्ट न होने पर भी ब्रिटिश सरकार का साथ दिया। इसका प्रभाव अंग्रेज़ अधिकारियों पर अच्छा पड़ा। फल यह हुआ कि तत्कालीन भारतमंत्री मि० मांटेगू ने ई० स० १६१७ (वि० सं० १६७४) में भारत में शीघ्र ही उत्तरदायित्वपूर्ण शासन-प्रणाली स्थापित करने की घोषणा की। तदनुसार मांटेगू-चेम्सफ़र्ड शासन-सुधारों का मसविदा तैयार होकर १० वर्ष के लिए ई० स० १६२१ (वि० सं० १६७७) में वह कार्य-रूप में परिणत किया गया। भारतीय जनता ने उन सुधारों को भी अपर्याप्त बतलाकर उनका पूरा विरोध किया। उन्होंने असहयोग आंदोलन आरंभ कर सरकार के विरुद्ध बहुत बड़ा प्रदर्शन किया, किंतु उस(सरकार)ने अपना रुख नहीं पलटा। उन दिनों भारत की प्रमुख राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस ने अपनी गति को बढ़ाकर अपना ध्येय पूर्ण स्वराज्य बतलाया तथा देश में बहुत बड़ी जागृति उत्पन्न कर दी, तब ब्रिटिश मंत्री-मंडल ने भारतीयों की मांगों पर विचार करने के लिए ई० स० १६२८ (वि० सं० १६८४) में साइमन कमीशन की नियुक्ति की। भारतीय

महाराजा का गोलमेज सभा में सम्मिलित होना

नरेशों को भी अंग्रेज़ सरकार के प्रति कई शिकायतें थीं तथा सरकार भी उनके शासन में सुधार चाहती थी। अतः जांच के लिए बटलर कमेटी की स्थापना हुई, जिसने भारत के बड़े-बड़े राज्यों में भ्रमण कर मंत्रियों आदि से परामर्श करने के पश्चात् ई० स० १९२९ (वि० सं० १९८६) के अप्रेल मास में अपनी रिपोर्ट उपस्थित की। ई० स० १९३० (वि० सं० १९८६) में ब्रिटिश भारत में सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रादुर्भाव हुआ, जो लगभग १½ वर्ष तक चलता रहा। इससे अंग्रेज़ अधिकारियों की मनोवृत्ति तो न बदली, पर उन्हें भारतीय समस्याओं को सुलझाने की आवश्यकता अवश्य जान पड़ी।

निदान ई० स० १९३० (वि० सं० १९८७) के नवम्बर मास में इंग्लैंड की राजधानी लन्दन नगर में भारत की मांगों पर विचार करने के लिए 'गोल मेज़ सभा' (Round Table Conference) का होना स्थिर हुआ। उक्त सभा में भारतीय नरेशों के प्रतिनिधि के रूप में महाराजा साहब भी निमंत्रित किये गये। फलतः जिनेवा में होनेवाली लीग ऑव् नेशन्स का कार्य समाप्त होने पर ये लन्दन पहुंचकर 'गोल मेज़ सभा' में सम्मिलित हुए और ता० १२ नवम्बर ई० स० १९३० से ता० २० जनवरी ई० स० १९३१ (वि० सं० १९८७ मार्गशीर्ष वदि ६ से माघ सुदि २) तक होनेवाली प्रायः सभी बैठकों में भाग लेकर इन्होंने देशी राज्यों और ब्रिटिश सरकार के बीच पारस्परिक संबंध कैसा होना चाहिये, इस विषय पर समुचित प्रकाश डाला तथा भारतीय प्रजा के हित की समस्याओं पर भी निर्भयतापूर्वक अपने विचार प्रकट किये। इनके विचारों का कॉन्फ़रेन्स के सदस्यों पर अच्छा प्रभाव पड़ा और भारत-मंत्री मि० वेजवुड बेन (Mr. Wedgwood Benn) तथा प्रधान मंत्री मि० रामज़े मेकडोनल्ड (Mr. Ramsay MacDonald) ने अपने ता० २१ जनवरी के पत्रों में और लॉर्ड सन्की (Lord Sankey, Lord Chancellor) तथा भारत के वाइसराय लॉर्ड इर्विन ने अपने-अपने भाषणों में इनके संबंध में बड़े उच्च भाव प्रदर्शित किये। उसी वर्ष ये अंग्रेज़ी सेना के

लेफ़्टेनेन्ट-जेनरल (आनरेरी) नियुक्त किये गये।

गोल मेज़ सभा के प्रथम अधिवेशन में भारत में होनेवाले नवीन शासन सुधारों के संबंध में प्रारंभिक बात-चीत हुई, जिससे यहां की परिस्थिति स्पष्ट हो गई। अब भावी शासन-सुधारों के संबंध में कोई निश्चयात्मक मार्ग खोज निकालना ही अवशिष्ट रह गया। इसलिए वि० सं० १९८८ (ई० स० १९३१) में लन्दन में दूसरी बार गोल मेज़ सभा का अधिवेशन करना निश्चय हुआ और महाराजा साहब भी देशी राज्यों के प्रतिनिधि रूप में निमंत्रित किये गये। इसपर ये लन्दन पहुंचकर उक्त कान्फ़रेंस (गोल मेज़ सभा) में सम्मिलित हुए तथा ता० २३ अक्टोबर (आश्विन सुदि १२) तक इन्होंने 'फ़ेडरल स्ट्रक्चर-सब कमेटी' (Federal Structure Sub-Committee) के साथ कार्य किया। इसके पश्चात् स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण इनको भारत में लौट आना पड़ा। भारत में संघ शासन (Federation) स्थापित होने की अस्पष्ट रूप-रेखा ई० स० १९१८ (वि० सं० १९७५) में बीकानेर में होनेवाली नरेन्द्रों और मंत्रियों की सभा में खींची जा चुकी थी, उसकी इस समय पुष्टि की गई एवं भारतीय भावनाओं को ध्यान में रखते हुए सम्राट्, साम्राज्य तथा भारतीय नरेशों के हित-साधन में इन्होंने कसर न आने दी।

दूसरी गोल मेज परिषद्

उसी वर्ष शीतकाल में बीकानेर में एक महान् दुःखद घटना हुई। महाराजा साहब के द्वितीय महाराजकुमार विजयसिंह का वि० सं० १९८८ माघ सुदि ५ (ई० स० १९३२ ता० ११ फ़रवरी) को उसके ही हाथ से सहसा अकस्मात् बंदूक चल जाने से परलोकवास हो गया। इनको इस प्रतिभाशाली नवयुवक महाराजकुमार की असामयिक मृत्यु का दारुण दुःख हुआ, क्योंकि वह बड़ा पितृ-भक्त था। अपने पिता के सदृश ही उसमें सारे गुण विद्यमान थे एवं वह सदा इनके साथ रहकर साम्राज्य-संबंधी कार्यों में बड़ी रुचि के साथ इनका हाथ बंटाता था।

महाराजकुमार विजयसिंह का परलोकवास

ई० स० १९३३ (वि० सं० १९८९) के आरंभ में बड़ोदा के महाराजा सर सयाजीराव बहादुर (स्वर्गीय) का बीकानेर में आगमन हुआ।

बड़ोदा के महाराजा का बीकानेर जाना

महाराजा साहब ने अपने प्रतिष्ठित मेहमान का राज्योचित रीति से स्वागत किया। भारत के देशी राज्यों में बड़ोदा उन्नत राज्य माना जाता है, जो उक्त महाराजा की शासन-कुशलता और नीतिमत्ता का फल है। इतनी थोड़ी अवधि में ही बीकानेर की ऐसी अभूतपूर्व उन्नति देख महाराजा गायकवाड़ को बड़ी प्रसन्नता हुई और वे महाराजा साहब के प्रेमपूर्ण व्यवहार से बड़े प्रसन्न हुए।

प्रधान मंत्री सर मनुभाई मेहता को इस समय भारत के भावी शासन-विधान-सम्बन्धी प्रस्तावित कार्यों में योग देना पड़ता था, अतएव महाराजा साहब ने ई० स० १९३२ (वि० सं० १९८९) में मेजर राव बहादुर रामप्रसाद की नियुक्ति की और उसको अपना मुख्य सलाहकार नियत किया; पर वह एक साल से अधिक न रहा। फिर ई० स० १९३४ (वि० सं० १९९०) में सर मनुभाई मेहता के पृथक् होने पर उपर्युक्त प्रधान मंत्री के स्थान पर महाराजा ने अपने निकट सम्बन्धी महाराज सर भैरूंसिंह बहादुर को; जो पहले प्रधान के पद पर रह चुका था, प्रधान मंत्री बनाया। तदन्तर उसके त्यागपत्र देने पर राव बहादुर ठाकुर शार्दूलसिंह सी० आई० ई० (बगसेऊ) उक्त पद पर नियत हुआ, पर वह भी स्थानापन्न ही रहा।

सर मनुभाई का प्रधान मंत्री के पद से पृथक् होना

वि० सं० १९९० के फाल्गुन (ई० स० १९३४ फ़रवरी) मास में भारत के वाइसराय लॉर्ड विलिंग्डन का बीकानेर जाना हुआ। महाराजा साहब-द्वारा बीकानेर राज्य की असाधारण उन्नति होकर राज्य-शासन में महत्त्वपूर्ण सुधार हुए थे; इसलिए प्रजावर्ग की तरफ से कृतज्ञता प्रकट करने के लिए इनकी घोड़े पर बैठी हुई कांसे की बृहदाकार प्रतिमा बनवाकर गङ्गानिवास

लॉर्ड विलिंग्टन का बीकानेर जाना

पब्लिक गार्डन में स्थापित की गई, जिसका उक्त वाइसराय ने पुनः ई० स० १९३४ के नवंबर (वि० सं० १९९१ कार्तिक) मास में बीकानेर जाकर उद्घाटन किया। इस अवसर पर उसने निम्नलिखित भाषण दिया—

'मेरे लिए इससे बढ़कर प्रसन्नता की कोई बात नहीं हो सकती थी कि मैं आपकी राज-भक्त प्रजा के साथ इस उत्सव में, जिसके लिए आज हम सब एकत्र हुए हैं, प्रधान भाग लेकर उनके शासक के प्रति अपने प्रेम और प्रशंसापूर्ण उद्गारों को प्रकट करूं तथा इस स्मृति का, जो प्रजा के लिए की गई आपकी अथक सेवाओं की भविष्य में याद दिलाती रहेगी, उद्घाटन करूं।

'मुझे तो ऐसा भान होता है कि यह मूर्ति, जिसका मैं थोड़े समय में ही उद्घाटन करूंगा, सदा एक ऐसे शासक की याद दिलाती रहेगी, जिसने अपने अथक जनसेवा के कार्यों-द्वारा बीकानेर के राजघराने का नाम जगत् में प्रसिद्ध कर दिया है। बृटिश साम्राज्य की महायुद्ध तथा सन्धि-सम्मेलन में की गई इनकी सेवाओं, इम्पीरियल कान्फ़रेंस, लीग ऑव् नेशन्स एवं भारत में फ़ेडरेशन (संघ-शासन) स्थापित करने के कार्यों में किये गये इनके परिश्रम की याद सदा बनी रहेगी। इस विषय में मुझे एक लेटिन कहावत याद आती है—

"यदि तुम महान् कार्य की स्मृति देखना चाहते हो तो अपने चारों तरफ़ निगाह करो।"

'अतएव इस ढकी हुई मूर्ति से अपनी दृष्टि हटाकर हम एक व्यक्ति के किये गये कार्यों के चिन्हों पर डालें, जो चतुर्दिक् वर्तमान हैं।

'हमें चारों ओर भव्य भवन और उद्यान दिखाई देंगे, जो कला और सुविधा को दृष्टि में रखकर बनाये गये हैं। हमारी नज़र सुव्यवस्थित सड़कों, राजधानी में फैली हुई बिजली, पारिवारिक, व्यावसायिक तथा आर्थिक कितने ही महत्वपूर्ण कार्यों; अस्पतालों, स्कूलों, सरकारी दफ़्तरों; भव्य महलों और स्वच्छ बंगलों पर पड़ेगी।

'और आगे बढ़ने पर हम भूमि पर प्रकृति की कठोरता को कोमल-

करने के चिन्ह देखेंगे। सुदूर उत्तर-स्थित नहरों का प्रबंध, ऊजड़ भूखंड में कृषि होने और अनुपजाऊ भूमि से मरुभूमि के लोगों के लिए समृद्धि उत्पन्न करने के एक शासक के सफल उद्योग का सूचक है। अब आप अपनी दृष्टि सामने खड़े हुए क़िले की तरफ़ डालें। उसके भीतर निवास करनेवाली आत्मा निश्चय यह जानती है कि महाराजा सर गंगासिंह ने अपने पूर्वजों तथा उनके प्राचीन गौरव के साथ विश्वासघात नहीं किया है और न उसके परम्परागत सौन्दर्य का वर्तमान परिस्थिति में अपमान हुआ है। इस किले के निर्माण में जो व्यय हुआ है वह व्यर्थ नहीं गया है। श्रीमान्, ऐसी आपकी कीर्ति है।'

सम्राट् जार्ज पञ्चम को राज्य करते हुए ई० स० १९३५ के मई (वि० सं० १९९२ वैशाख) मास में २५ वर्ष हो गये, इसलिए उसी वर्ष ता० ६ मई (वैशाख सुदि ४) को लन्दन में रजत जयन्ती महोत्सव मनाने का आयोजन हुआ। निमन्त्रण आने पर महाराजा साहब ने अप्रेल मास में इंग्लैंड जाकर जयन्ती के महोत्सव में भाग लिया।

सम्राट् की रजत जयन्ती

उन्हीं दिनों बड़ोदा के महाराजा सर सयाजीराव बहादुर को शासन करते हुए ६० वर्ष हो गये। उक्त महाराजा के शासनकाल में बड़ोदा राज्य में शासन-सुधार होकर वह उन्नत राज्य माना गया। इसलिए वहां पर इसके उपलक्ष्य में ई० स० १९३६ (वि० सं० १९९२) में प्रजा की तरफ़ से हीरक जयन्ती महोत्सव (Diamond jubilee) मनाना निश्चय होकर उक्त अवसर पर महाराजा गायकवाड़ की सुन्दर प्रतिमा (Statue) का उद्घाटन करना स्थिर हुआ। महाराजा गायकवाड़ जैसे उन्नत विचारशील और लोकप्रिय नरेश की प्रतिमा का उद्घाटन ऐसे ही व्यक्ति द्वारा होना उचित था, जो गायकवाड़ के समान ही उदार विचारयुक्त हो। इसके लिए महाराजा साहब ही उपयुक्त पात्र समझे गये। फलतः वहां के लोगों का पूर्ण आग्रह होने पर

महाराजा साहब का बड़ोदे जाना

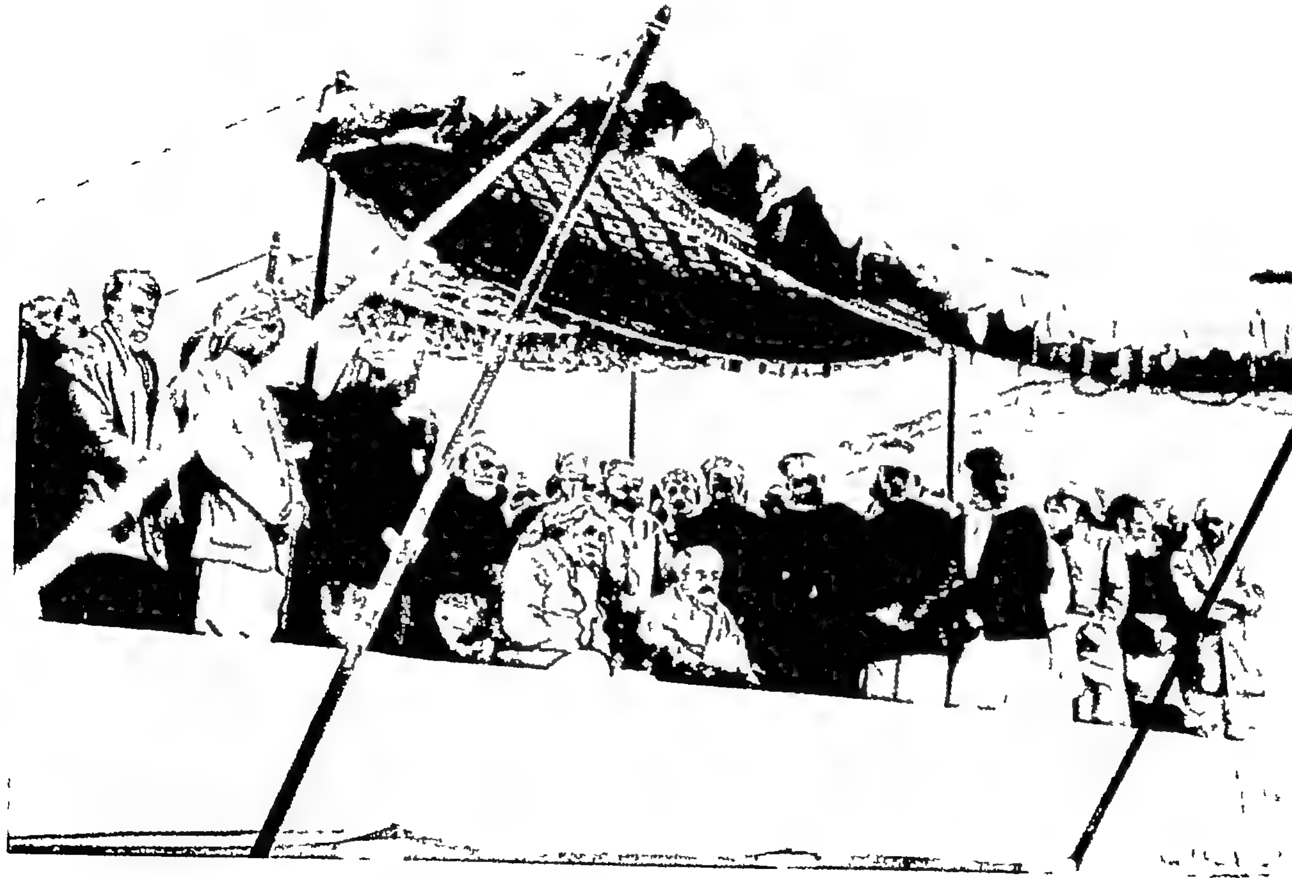
महाराजा साहब बड़ोदा पहुंचे, जहां इनका बड़ा सम्मान किया गया और इन्होंने नियत समय पर महाराजा गायकवाड़ की सुन्दर प्रतिमा का उद्घाटन किया।

ई० स० १६३६ ता० २० जनवरी (वि० सं० १६६२ माघ वदि ११) को सम्राट् जार्ज पञ्चम का परलोकवास हो गया। तब युवराज प्रिंस ऑव् वेल्स एडवर्ड अष्टम के नाम से राज्यासीन हुए, परन्तु एक वर्ष भी समाप्त न होने पाया था कि उसके मिसेज़ सिम्पसन नामक अमेरिकन महिला से विवाह करने के विचार पर इंग्लैंड में विरोध होने की आशंका हुई, जिसपर स्वदेशप्रेमी एडवर्ड अष्टम ने देश की हित-कामनार्थ सम्राट्-पद का परित्याग कर दिया। तब से वह ड्यूक ऑव् विंडसर कहलाने लगा। फिर उसके स्थान पर प्रिन्स एलबर्ट जॉर्ज, जॉर्ज छठे के नाम से सम्राट् हुए, जो उसके छोटे भाई हैं। ई० स० १६३७ ता० १० मई (वि० सं० १६६४ वैशाख वदि ३०) को सम्राट् जार्ज छठे का लन्दन नगर में राज्याभिषेकोत्सव मनाना निश्चित हुआ, जिसका निमन्त्रण मिलने पर महाराजा साहब भी लन्दन जाकर इस उत्सव में सम्मिलित हुए।

सम्राट् जार्ज छठे का राज्याभिषेकोत्सव

उदयपुर के भूतपूर्व महाराणा फ़तहसिंह की इनको अपने यहां निमन्त्रित करने की तीव्र इच्छा रही, परन्तु आवश्यक कार्यों से अवकाश न मिलने के कारण इनका उक्त महाराणा के राज्य-काल में उदयपुर जाना न हो सका। वर्तमान महाराणा साहब सर भूपालसिंहजी ने राज्यारूढ़ होने पर इनको उदयपुर में निमंत्रित किया, जिसपर ई० स० १६३७ के फ़रवरी (वि० सं० १६६३ माघ) मास में ये उदयपुर गये। महाराणा ने राजधानी से दो मील दूर रेल्वे स्टेशन पर इनका स्वागत किया और इन्हें शंभुनिवास महल में ठहराया तथा दोनों तरफ़ से समानता से सरिश्ते की मुलाक़ातें हुईं। चार दिन तक महाराणा के मेहमान रहकर इन्होंने वहां के दर्शनीय स्थानों को देखा। इस अवसर पर हाथियों की लड़ाई का भी प्रबंध था।

महाराजा का उदयपुर जाना



महाराजा सर गंगासिंहजी तथा महाराणा सर भूपालसिंहजी
[उदयपुर की हाथियों की लडाई के समय का दरीखाना]

इसके एक मास पश्चात् उदयपुर के महाराणा का बीकानेर जाना हुआ। राजपूताने में उदयपुर राज्य ऐतिहासिक दृष्टि से समस्त राजपूत-राज्यों में बड़ा महत्त्व रखता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए महाराजा साहब ने महाराणा का पूर्ण सम्मान किया। नियमानुसार इन्होंने बीकानेर रेल्वे स्टेशन पर उनकी अगवानी कर उन्हें लालगढ़ राज-महल में ठहराया तथा दोनों तरफ़ से समानता से सरिश्ते की मुलाक़ातें हुईं। इस अवसर पर कोटा के महाराव सर उम्मेदसिंहजी का भी बीकानेर जाना हुआ। इन तीनों नरेशों में परस्पर कई मुलाक़ातें हुईं। फिर ता० १२ मार्च (फाल्गुन वदि ३०) को इन्होंने अपने छोटे महाराजकुमार विजयसिंह की स्मृति में बनवाये हुए प्रिन्स विजयसिंह मेमोरियल जेनरल हास्पिटल का उद्घाटन महाराणा साहब के हाथ से करवाया।

महाराणा साहब का बीकानेर जाना

वि० सं० १९९४ के भाद्रपद (ई० स० १९३७ सितम्बर) मास में महाराजा साहब को सिंहासनारूढ़ हुए पूरे पचास वर्ष समाप्त हो गये। राज्य और प्रजा के लिए यह अवसर बड़ा ही शुभ था, क्योंकि इतनी अवधि तक बीकानेर राज्य के सिंहासन पर अब तक किसी नृपति ने शासन नहीं किया था। इस लम्बे समय में इनके हाथ से प्रजा-हित के अनेक कार्य हुए थे, अतएव प्रजा ने इनकी स्वर्ण जयन्ती महोत्सव मनाना निश्चय किया और एक वर्ष पूर्व से ही इसकी तैयारी होने लगी। राज्य ने भी इसमें भाग लिया। इसके लिए नागरिकों, राजकर्मचारियों और सरदारों आदि की एक कमेटी बनी, जिसने सार्वजनिक रूप से चंदा जमा करना तय किया। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चय हुआ कि इस शुभ महोत्सव के उपलक्ष्य में रोशनी का उत्तम प्रबंध किया जावे एवं महाराजा साहब के नगर-प्रवेश के दिवस तोरण, स्तंभ, बंदनवार, झंडियां, महराब, दरवाज़े आदि बनाकर उनको स्वागत-सूचक तथा मंगलवाची सुन्दर वाक्यों से अलंकृत किया जावे।

महाराजा की स्वर्ण जयन्ती

ज्यों-ज्यो उत्सव का समय निकट आने लगा, त्यों-त्यों प्रजा का

उत्साह भी बढ़ने लगा। इस वर्ष प्रारंभ में तो अच्छी वर्षा हो गई पर पीछे से वर्षा में ढील हो जाने से अकाल की संभावना दीख पड़ी, जिससे लोग कुछ चिंतित हो गये। ऐसे में ईश्वर-कृपा से ठीक समय पर वर्षा हो गई, जिससे इस उत्सव को आनंदपूर्ण बनाने में प्रजा ने किसी भांति की कसर न रखी। अमीर और ग़रीब सबने इस उत्सव को चिरस्मरणीय बनाने के लिए द्रव्य आदि देकर महाराजा के प्रति अपनी राज-भक्ति प्रकट की। कलकत्ता, बम्बई आदि नगरों में रहनेवाली बीकानेर की प्रजा ने जब यह संवाद सुना तो उसने भी मुक्त हस्त से द्रव्य देकर इस कार्य को आगे बढ़ाया। राज-मार्ग भांति-भांति से सुसज्जित कर जगह-जगह भव्य दरवाज़ों का निर्माण हुआ और उनपर मंगल कामनायुक्त वाक्य लगाये गये।

यह जयन्ती महोत्सव चार विभागों में विभक्त किया गया। प्रथम विभाग धार्मिक-कृत्य सम्बन्धी था। द्वितीय विभाग में दरबार, नज़र, न्योछावर, राजकीय भोज और महाराजा साहब की तरफ़ से इस अवसर पर होनेवाली उदार घोषणाएं प्रकाशित होने का कार्यक्रम था। तृतीय विभाग में भारत के वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगो के बीकानेर जाने, हाथियों का जुलूस निकालने तथा चतुर्थ विभाग में विविध नरेशों एवं गण्यमान्य व्यक्तियों को बीकानेर में निमंत्रित करने का आयोजन किया गया।

जयन्ती-संबंधी प्रथम विभाग का कार्य भाद्रपद सुदि द्वितीय ६ (ता० ११ सितंबर) शनिवार से आरंभ हुआ। महाराजा साहब प्रातःकाल ६$\frac{?}{8}$ बजे लालगढ़ के निर्दिष्ट स्थान में पधारे, जहां पंडितों का बृहत् समूह एकत्रित था। पंडित देवीप्रसाद शास्त्री ने स्वनिर्मित गंगासिंह-कल्पद्रुम में लिखित पद्धति के अनुसार गणेश-पूजन आदि प्रारंभिक कार्य महाराजा साहब के हाथ से करवाये। तदनन्तर इन्होंने राजगुरु पंडित कामेश्वर शर्मा को इन धार्मिक कृत्यों को सविधि संपूर्ण करने का अधिकारी वरण कर विधिपूर्वक उसका पूजन किया। फिर भाद्रपद सुदि १२ (ता० १७) शुक्रवार तक निरन्तर यज्ञ कार्य होता रहा। उस दिन रात्रि में अधिवासन, जागरण एवं रोशनी की गई।

इस बीच महाराजा साहब ने भाद्रपद सुदि ६ (ता० ११ सितंबर) को देशणोक जाकर भाद्रपद सुदि ७ (ता० १२ सितंबर) को करणीजी का पूजन किया। वहां से लौटकर भाद्रपद सुदि ११ (ता० १६ सितंबर) तक इन्होंने पाबूजी, रामदेवजी, हनुमानजी, क़िले के हरमंदिर, देवीद्वारा, नागणेची, शिवबाड़ी, कोड़मदेसर, गजनेर तथा कोटरा के भैरूंजी के मंदिरों में जाकर भेंट-पूजा की। भाद्रपद सुदि ६ (ता० १४ सितंबर) मंगलवार को सायंकाल के समय लालगढ़ में बीकानेरी सेना के अफ़सरों को बृहत् भोज दिया गया।

तुलादान का मुहूर्त भाद्रपद सुदि १२ (ता० १७ सितंबर) शुक्रवार को था। उस दिन ये श्वेत पोशाक धारणकर प्रातःकाल ८ बजे लालगढ़ की यज्ञशाला में पहुंचे, जहां स्वर्ण आदि की तुलाओं का बृहत् आयोजन किया गया था। आरंभ में गणेश-पूजन, स्वस्तिवाचन और नवग्रहों आदि का पूजन-अर्चन हुआ। फिर वेद मंत्रों के साथ इन्होंने स्वयं यज्ञ की पूर्णाहुति की। तत्पश्चात् ब्राह्मणों-द्वारा अभिमंत्रित जल से इन्होंने स्नान किया। अनन्तर अभिषेक हो जाने पर ये वस्त्राभूषण और ढाल-तलवार धारणकर तुला-स्थान में पहुंचे। दिग्बंधन, तुलापूजन आदि कार्य शास्त्रोक्त विधि से संपादन कर सवा नौ बजे ये उस तुला के—जो इस अवसर के लिए प्राचीन विधि के अनुसार बनाई गई थी—एक पलड़े में, जिसमें गद्दी-तकिया आदि रक्खे हुए थे, आरूढ़ हुए। तुला के दूसरे पलड़े में इनके वज़न से भी अधिक मात्रा में तीन लाख रुपये के मूल्य का लगभग आठ हजार छः सौ तोला स्वर्ण चढ़ा। इन्होंने दूसरा सोने-चांदी का मिश्रित तुलादान किया। इस अवसर पर महाराणीजी ने भी रजत-तुलादान किया। उस दिन सायंकाल को गंगानिवास कचहरी में पुलिस तथा अन्य सरकारी मुलाज़िमों को भोज दिया गया।

महाराजा साहब का स्वर्ण और रजत तुलाएं करना

भाद्रपद सुदि १३ (ता० १८ सितम्बर) शनिवार को इनके राज्याभिषेकोत्सव का मुख्य दिन था। उस दिन सूर्योदय के समय राज्य

स्वर्ण-जयन्ती के प्रथम विभाग के अन्य कार्य

के तोपख़ानों से चारों ओर १०१ तोपें चलीं। सात बजे बंदीगृह से १०६ क़ैदी छोड़े गये। नगर-स्थित लक्ष्मीनारायणजी के दर्शनार्थ जाने का उसी दिन कार्यक्रम था; अतएव साढ़े सात बजे महाराजा साहब लक्ष्मीनारायणजी के दर्शन को गये। इस अवसर पर राजमार्ग झंडियों, ध्वजा-पताकाओं, तोरणों, बन्दनवारों आदि से भली प्रकार सुसज्जित किया गया था। प्रजा की तरफ़ से स्थान-स्थान पर चौराहों और राजमार्ग के बीचोबीच कितनी ही जगह सुन्दर कामवाले दरवाज़े बनाये गये थे। दो दरवाज़ों पर चांदी और सोने का बड़ा मनोहर काम था। एक दरवाज़ा लोहारों की ओर से लोहे का बनाया गया था। वह भी कला की दृष्टि से उत्तम था। प्रत्येक दुकान और मकान पर जयन्ती के सम्बन्ध के मंगल-सूचक दोहे और हिंदी तथा अंग्रेज़ी में सुन्दर वाक्य लिखे गये थे। तात्पर्य यह कि इस अवसर पर नागरिकों ने नगर को मनोयोग-पूर्वक सजाकर कला-प्रियता एवं राजभक्ति का परिचय दिया।

महाराजा साहब की हाथी की सवारी का जलूस क़िले से आरंभ होकर गंगानिवास पब्लिक पार्क के सामने से होता हुआ नगर के कोट दरवाज़े में होकर लक्ष्मीनारायणजी के मंदिर पर पहुंचा। राजमार्ग के दोनों ओर खड़े नर-नारियों के झुंड "जय-ध्वनि" कर रहे थे। साथ ही ऊंची-ऊंची अट्टालिकाओं से भी लोग इनपर पुष्प वर्षा कर रहे थे। लगभग ११ बजे जलूस समाप्त होने पर ये क़िले में दाख़िल हुए।

दिन के ११ बजे नगर के ग़रीबों को राज्य की ओर से भोजन कराया गया। उसी दिन मुख्य-मुख्य गांवों में भी ग़रीबों को भोजन कराने का प्रबन्ध था। वैसे तो ता० १५ सितंबर से ही नगर आदि में इस उत्सव के उपलक्ष्य में रोशनी होने लगी थी, परन्तु रोशनी का मुख्य दिवस ता० १८ ही था। इसलिए सांयकाल के समय ७ बजे नगर, राजमहल, सरकारी इमारतों, गंगानिवास, पब्लिक् पार्क आदि में बिजली

की बड़ी सुन्दर रोशनी हुई, जिसका दृश्य बड़ा ही मनोमोहक था। गंगानिवास पब्लिक पार्क में पानी के फ़व्वारों पर जो रोशनी की गई थी, वह अद्भुत थी और लोग उसे देखकर चकित रह जाते थे। वहीं से विद्युत-द्वारा धारावाहिक रूप से जल की चद्दरों के गिरने का दृश्य भी बड़ा मनोहर था। उसी समय विक्टोरिया मेमोरियल क्लब के विशाल मैदान में आतिशबाज़ी छूटने का भी प्रबन्ध था। सायंकाल को राज-महल के नौकरों आदि को लालगढ़ मे भोज दिया गया तथा महाराजा साहब के निजी स्टाफ़ और गृह-विभाग के अफ़सरों को भी भोज दिया गया।

भाद्रपद सुदि १४ (ता० १९ सितंबर) रविवार को लालगढ़ में रात्रि के ९ बजे राजकीय भोज का आयोजन हुआ। दूसरे दिन भाद्रपद सुदि १५ (ता० २० सितंबर) सोमवार को लालगढ़ में साधुओं को भोजन कराया गया। इस प्रकार स्वर्ण-जयन्ती के प्रथम भाग का कार्य समाप्त हुआ।

इस अवसर पर महाराजा साहब के पास भारत के बहुधा सभी नरेशों, राजघरानों, देशी-विदेशी मित्रों और शुभचिन्तकों के बधाई-सूचक तारों, पत्रों और मनमोहक कविताओं का तांता बंध गया। स्वयं सम्राट् जॉर्ज छठे ने महाराजा साहब के पास नीचे लिखा बधाई-सूचक संदेश भेज अपनी तरफ़ से शुभ भावनाएं प्रकट कीं—

"आप अपने शासनकाल की जो स्वर्ण जयन्ती आज मना रहे हैं, उसके लिए आपको हार्दिक बधाई देते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता है। इस उल्लेखनीय अवसर पर मैं आपकी मंगलकामना के साथ-साथ भविष्य में आपके राज्य के सुख और समृद्धि की, जिसकी ओर आपका बड़ा ध्यान रहता है, हार्दिक कामना प्रकट करता हूं।"

श्रीमती सम्राज्ञी मेरी ने भी इस अवसर पर तार भेजकर इनको बधाई दी। इसी भांति भारत के वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने भी निम्नलिखित तार भेजकर इन्हें बधाई दी—

"ता० १८ सितंबर को आपके महत्त्वपूर्ण शासन के पचास साल

समाप्त होने के अवसर पर मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूं। इस दीर्घ काल में आपने शासक, सैनिक एवं राजनीतिज्ञ के उच्चकोटि के गुण प्रदर्शित किये हैं। मैं भली भांति जानता हूं कि अपने राज्य के लाभ की तरफ़ आपने जितनी लगन प्रकट की है, उसके लिए बीकानेर (राज्य) आपका कितना ऋणी है। चीन, फ्रांस तथा अन्यत्र सम्राट् की फ़ौजों के साथ रहकर की गई आपकी उल्लेखनीय सेवाओं तथा पिछले कुछ वर्षों में राज्य-शासन-सम्बन्धी विधानों में की गई आपकी सहायता की इस अवसर पर प्रशंसा न करना अनुचित होगा। यह मेरी हार्दिक एवं उत्कट अभिलाषा है कि आप तथा आपके शासन के अन्तर्गत बीकानेर राज्य बहुत वर्षों तक सुख और समृद्धि की प्राप्ति करे।"

महाराजा का स्वर्ण जयन्ती पर प्रजा को शुभ सन्देश

महाराजा साहब ने इन शुभ कामनाओं के प्रति हार्दिक धन्यवाद देते हुए बीकानेरी प्रजा को मारवाड़ी भाषा में संदेश भेजा, जिसका भाषानुवाद नीचे लिखे अनुसार है—

'श्रीलक्ष्मीनारायणजी की कृपा से मुझको राज्य करते हुए आज पचास वर्ष हुए हैं और इस अवसर पर सबसे पहले अपनी प्यारी प्रजा के सब धर्मों और जातियों के लोगों को अपनी तरफ़ से मैं प्रेम तथा शुभ कामना का यह संदेश देता हूं।

'मुझे युवा हुए ३९ वर्ष हो गये। मैं अपने राज्य और अपनी प्रजा के प्रति अपने कर्त्तव्य को अन्य सब बातों से मुख्य समझता हूं और आप लोगों की भलाई को अपने विचारों और कामों में मैंने सबसे आगे रक्खा है। मैं प्रति दिन तीन बार आपके मंगल, सुख और संपति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता रहा हूं तथा मेरी प्रार्थना है कि परमात्मा हमें अकाल, पैदावार की कमी और बीमारियों से बचावे।

'परमेश्वर को अनेक धन्यवाद देते हुए मैं इस बात को बड़ी कृतज्ञता के साथ सदा याद रक्खूंगा कि मेरी प्यारी प्रजा ने मेरे राज-सिंहासन और स्वयं मेरे लिए ऐसी अनोखी राज-भक्ति प्रकट की है, जिससे

प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्न हो सकता है। मुझे तथा मेरे कुटुम्ब को इस बात का बहुत हर्ष और गर्व है कि आप लोग मेरे तथा मेरे कुटुम्ब के लिए निरन्तर प्रेम और श्रद्धाभाव रखते आये हैं और मुझे इस बात से भी बड़ी प्रसन्नता है कि राजा और प्रजा का, पिता-पुत्रवाला पुराना सम्बन्ध परमात्मा की कृपा से अबतक हमारे और आप लोगों के बीच क़ायम है।

'मैं सदैव आपके सुख-दुःख में शामिल रहा हूं और जब ईश्वर ने दयाकर मुझे हर्ष प्रकट करने का अवसर दिया है, तब आप लोगों ने भी पूर्ण रूप से हर्ष मनाया है और जब मुझपर दुःख पड़ा है, जैसा कि सब मनुष्यों पर पड़ता है, तब आप लोगों के हृदय भी मेरे दुःख से पीड़ित हुए हैं।

'मैं सर्व शक्तिमान् परमात्मा को अत्यन्त नम्रता से भक्तिपूर्वक धन्यवाद देता हूं कि उसने मुझे बीकानेर राज्य की, जिसपर मैं उसी की कृपा से राज्य कर रहा हूं, सेवा करने के लिए यह आयु दी और मुझे स्वास्थ्य तथा शक्ति प्रदान की, जिससे मैं अपनी प्यारी प्रजा की भरसक रक्षा तथा भलाई कर सकूं। मैंने अपने जीवन को राज्य और प्रजा की सेवा के लिए अर्पण कर दिया है। इसलिए मुझे यह विश्वास दिलाने की आवश्यकता नहीं कि मैं अपने जीवन के शेष दिनों में, जो ईश्वर मुझे प्रदान करेगा, आप लोगों के सुख और संपत्ति बढ़ाने के लिए बराबर ऐसे ही प्रयत्न करता रहूंगा।

'राज्य की सामर्थ्य के अनुसार मेरे सारे प्रयत्न इस बात के लिए रहे हैं कि आप लोगों के नैतिक तथा सांसारिक हितों की वृद्धि हो, आप लोगों को शिक्षा मिले, आप लोगों की तन्दुरुस्ती बनी रहे और आप लोगों की आर्थिक दशा और अधिक सुधरे—ख़ासकर नहरों के बनाने से और रेलों-द्वारा जो कि अब मेरे राज्य में प्रत्येक तरफ़ चल रही हैं। मैं यह बात जानता हूं कि अभी बहुत कुछ करना बाकी है और कई वर्षों से मैंने यह नीति धारण की है कि तरक़्क़ी का ऐसा निश्चित कार्यक्रम रखा जाये,

जो मेरे राज्य में काम में लाया जा सके और जिससे राष्ट्रनिर्माण के तथा दूसरे लाभदायक कामों में तरक्की होती रहे। अन्य बातों के अतिरिक्त मैं इसका पूरा प्रयत्न कर रहा हूं कि आप में से जिनकी ज़मीन गङ्ग नहर से सींचे जानेवाले इलाक़े में नहीं है, उनको इससे भी कहीं बड़ी तजवीज़-द्वारा आबपाशी के अमूल्य लाभ पहुंचें। मैं आशा करता हूं कि परमेश्वर की कृपा से ऐसी नहर के आने में अधिक समय न लगेगा।

'मेरी खास आज्ञा के अनुसार इस समय मेरी सरकार कई तजवीज़ें तैयार कर रही है, जिनमें से एक तजवीज़ ऋण-ग्रस्त किसानों की सहायता करने के विषय में है। मेरा यह विचार है कि ता० ३० अक्टोबर को एक दरबार करूं और उस दरबार में इस संबंध की घोषणा की जावे। मुझे आशा है कि ये तजवीज़ें आप लोगों के लिए लाभदायक और सहायता पहुंचानेवाली सिद्ध होंगी।

'मेरे और आपके पूर्वजों ने इस राज्य को क़ायम किया और इतना महान् बनाया। अब हमारा और आपका तथा हमारी और आपकी संतानों का केवल यही कर्त्तव्य नहीं है कि वे इस गौरवमय बपौती को क़ायम रखें, बल्कि भरसक प्रयत्न कर वे इस राज्य की प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा बढ़ावें। इसकी स्वतन्त्रता और एकता ज्यों की त्यों बनी रहे और पहिले की भांति भविष्य में भी तमाम जातियों के लोग आपस में सुख-शांति और प्रेमपूर्वक रहें।

'इस सन्देश को समाप्त करने से पहिले मैं आपमें से प्रत्येक व्यक्ति को अंतःकरण से आशीर्वाद देता हूं। श्रीकरणीजी सदा आप लोगों को बनाये रखें और आपकी रक्षा करें।'

कार्तिक वदि ७ (ता० २६ अक्टोबर) मंगलवार से जयन्ती के दूसरे भाग का कार्य आरंभ हुआ। इस अवसर पर बाहर के भी कितने ही प्रतिष्ठित व्यक्ति बीकानेर में निमंत्रित किये गये थे। उस दिन सायंकाल के पौने पांच बजे किंग एम्परर जॉर्ज पष्ठ स्टेडियम में विद्यार्थियों के

स्वर्ण-जयन्ती का दूसरा भाग

खेल हुए और वहीं सिविल अफ़सरों को भोज दिया गया। रात्रि में ९ बजे लालगढ़ में करणीनिवास दरबार हॉल में उमरावों तथा सरदारों को भोज दिया गया, जिसमें महाराजा साहब भी सम्मिलित हुए।

दूसरे दिन कार्तिक वदि ८ (ता० २७ अक्टोबर) बुधवार को सायंकाल के ४½ बजे जनता का वृहत् मेला किंग जॉर्ज षष्ठ स्टेडियम के विशाल मैदान में भरा और वहीं सेठ-साहुकारों के भोज का आयोजन किया गया। कार्तिक वदि ९ (ता० २८ अक्टोबर) गुरुवार को सायंकाल के ६ बजे बीकानेरी सेना ने शारीरिक खेल दिखलाये। रात्रि में पौने नौ बजे क़िले के शिवविलास बग़ीचे में उमरावों और सरदारों की तरफ़ से महाराजा साहब को भोज दिया गया। इस अवसर पर मेजर-जेनरल सरदार बहादुर ठाकुर (अब राजा) जीवराजसिंह ने सरदारों की तरफ़ से अपने भाषण में इनके प्रति मंगलकामना करते हुए राजभक्ति प्रकट की। उसके उत्तर में इन्होंने उनको धन्यवाद देते हुए एक छोटासा सुन्दर भाषण दिया, जिसमें सरदारों की कर्त्तव्य-परायणता एवं शासन-नीति का उल्लेख करते हुए भविष्य में सरदारों को उनके शासन-प्रबंध के बारे में समयोचित सुधार करने की सलाह दी।

कार्तिक वदि १० (ता० २९ अक्टोबर) शुक्रवार को सायंकाल के ५ बजे बीकानेर की सेना का प्रदर्शन हुआ और विक्टोरिया मेमोरियल क्लब में सेना के अफ़सरों को भोज दिया गया।

कार्तिक वदि ११ (ता० ३० अक्टोबर) शनिवार को प्रातःकाल के ९½ बजे क़िले के गंगानिवास दरबार हॉल में आम दरबार हुआ, जिसमें राज्य के उमराव, सरदार और प्रतिष्ठित कर्मचारी एवं नागरिक उपस्थित हुए। इस अवसर पर महाराजा साहब ने अपने भाषण में बीकानेर-निवासियों की राजभक्ति की प्रशंसा करते हुए पचास वर्ष के भीतर होनेवाले शासन-सुधारों का

स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव पर दरबार में महाराजा-द्वारा होनेवाली उदारताओं की घोषणा

संक्षिप्त उल्लेख किया। तदनन्तर स्वर्णजयन्ती महोत्सव के उपलक्ष्य में महाराजा साहब की तरफ़ से निम्नलिखित बख़्शिशों की घोषणा की गई—

राजधानी में क्षय के रोगियों के लिए दो लाख पचीस हज़ार रुपये की लागत से अस्पताल बनाया जायगा।

प्रिंस विजयसिंह जेनरल ज़नाना अस्पताल में महाराजा साहब के निजी व्यय से बीस हज़ार रुपयों की लागत का बच्चों का वार्ड तथा उसी अस्पताल में सतरह हज़ार रुपयों की लागत का निर्धन रोगियों के लिए एक वार्ड बनाया जायगा। मर्दाना अस्पताल में पुरुषों के लिए बीस हज़ार रुपये की लागत के दो वार्ड और बनाये जायेंगे। चिकित्सा में वैज्ञानिक पद्धति पर चिकित्सा होने के लिए कई प्रकार के यंत्र मंगवाये गये हैं। उनमें "मिलिग्राम रेडियम" नामक यंत्र फिर मंगवाया जाकर आवश्यक सामान और औज़ारों की पूर्त्ति की जायगी।

राज-सभा (Legislative Assembly) में चुने हुए मेम्बरों में ६ मेम्बरों की वृद्धि होगी।

म्युनिसिपेलिटियों के प्रेसिडेन्ट चुने हुए होंगे और दाईख़ानों एवं बच्चों की रक्षा के लिए प्रति वर्ष आर्थिक सहायता मिला करेगी।

उमरावों तथा सरदारों के ठिकानों के उत्तम प्रबन्ध के लिए उनको कुछ आवश्यक सुविधाएं दी जायेंगी।

सैनिकों के भत्ते आदि में वृद्धि होकर डूंगर लान्सर्ज़ के सैनिकों और अफ़सरों के वेतन में तरक़्क़ी की जायेगी।

राज्य की कुल आय का दसवां हिस्सा प्रजा-हितकारी कार्यों में व्यय होगा।

राजधानी में श्रीलक्ष्मीनारायणजी के पब्लिक पार्क को बढ़ाया जावेगा, जिसका व्यय महाराजा साहब के निजी कोष से होगा।

राज्य में आयुर्वेदिक फ़ार्मेसी और औषधालयों को बढ़ाने के लिए वार्षिक व्यय के अतिरिक्त ७५००० रुपये एक मुश्त दिये जायेंगे।

प्राचीन ग्रन्थों के प्रकाशनार्थ पांच हज़ार रुपये वार्षिक दिये जायेंगे, जिनसे 'गंगा ओरिएंटल सीरीज़' राज्य से प्रकाशित होगी।

'सायर' के महसूल में कृषकों के लाभ और व्यापार की वृद्धि की दृष्टि से घी, चोआ सज्जी तथा बीकानेर के बने हुए ऊनी कपड़ों पर निर्यात-कर माफ़ किया जाता है। कृषि के औज़ारों पर आयात-कर बिलकुल न लगेगा।

राजधानी में स्थावर सम्पत्ति की बिक्री पर जो फ़ीस ली जाती है, उसमें ५० प्रति शत कमी होगी।

गंग नहर के निकट कृषकों की ख़रीदी हुई भूमि पर किश्तों के सूद के लगभग बयालीस लाख रुपये बाक़ी हैं, जो माफ़ किये जाते हैं तथा किश्तों के सूद में भविष्य में कमी भी की जायगी।

गंग नहर के आस-पास की भूमि में कपास की खेती में हानि हुई है, इसलिए २२६६१६ रुपये माफ़ किये जाते हैं।

नोहर और भादरा तहसीलों में तीन वर्ष के लिए लगान में आठ रुपये प्रति सैकड़ा कमी की जाती है।

ग्राम-सुधार-विभाग खोलने के लिए बारह लाख रुपये मंजूर किये जाते हैं।

रतनगढ़, भादरा, हनुमानगढ़, सूरतगढ़ और विजयनगर में जानवरों की चिकित्सा के लिए और अस्पताल खोले जायेंगे।

राज्य के अहलकारों ने पन्द्रह हज़ार रुपये स्वर्ण जयन्ती महोत्सव पर चंदे में दिये हैं, वे वापिस उनके हित में ही लगाये जायेंगे और उनकी उन्नति के लिए उन रुपयों से एक फ़ंड खोला जायेगा, जिसमें पांच हज़ार रुपये राज्य से दिये जायेंगे।

ता० १८ सितंबर ईसवी सन् १९३७ को जो क़ैदी सज़ा भुगत रहे थे उनकी सज़ा में ५१ दिन प्रति वर्ष के हिसाब से माफ़ी दी जायगी और अच्छा आचरण रखनेवाले क़ैदियों को तीन दिन के बजाय महीने में ४ दिन की माफ़ी मिलेगी।

हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी को पचीस हज़ार रुपये की सहायता प्रदान की जाती है।

शिक्षा की वृद्धि के हेतु चूरू, सुजानगढ़, सरदारशहर तथा गंगानगर में हाई स्कूल; छापर, सूरतगढ़, डूंगरगढ़, करणपुर, राजगढ़, रेनी, लूणकरणसर, हनुमानगढ़ तथा नोखामंडी में एंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल की इमारतों में वृद्धि करने तथा नई बनाने के लिए तीन लाख आठ हज़ार पांच सौ और हनुमानगढ़ में कन्या पाठशाला खोलने के लिए चार हज़ार रुपये मंजूर किये जाते हैं।

रतनगढ़ और भादरा के अस्पतालों को बढ़ाने एवं राजलदेसर, मोमासर, करणपुर तथा रायसिंहनगर में अस्पताल खोलने के लिए दो लाख चौदह हज़ार दो सौ छियासी रुपये मंजूर किये जाते हैं।

राजधानी में ग़रीबों को जल की अधिक सुविधा देने के लिए तीस हज़ार रुपये प्रदान किये जाते हैं, जिसका फ़ंड सम्पूर्ण होने पर एक लाख पचीस हज़ार रुपये हो जायेंगे।

इनके अतिरिक्त महाराजा साहब ने निजी कोष से तीन लाख रुपये इस अवसर पर दान देने की आज्ञा प्रदान की, जो नीचे लिखे अनुसार व्यय होंगे—

बीकानेर में नवीन मंदिरों के निर्माण में ८६७००; कोलायत में नये मन्दिरों के बनवाने में ८८५००; पुष्कर में माताजी के मंदिर के निर्माण में ५०००; अन्य मन्दिरों के कार्यों में २००००; द्वारका में रणछोड़जी के मंदिर में स्वर्ण के किवाड़ों के लिए ३०३४० तथा जैनमंदिरों, सिक्खों के गुरुद्वारे, गिरजाघर और मस्जिदों की मरम्मत में ३६०० रुपये।

सेना के जुबिली आर्मी बेनीवोलेंट फ़ंड में ५०००, वाल्टर नोबुल्स हाई स्कूल में संतरण विद्या (तैरना) सीखने के लिए हौज़ बनाने के निमित्त ५०००, शिक्षा-संबंधी पारितोषिक फ़ंड में २००० और गजनेर-निवासियों के हितार्थ ५५० रुपये प्रदान किये जायेंगे।

इनके अतिरिक्त इस अवसर पर राजमहलों के नौकरों को पुरस्कार

में ३६००० रुपये दिये जाने तथा ७००० रुपये वार्षिक तरक़्क़ी की आज्ञा दी गई।

उसी दिन राजकीय आज्ञा पत्र (Bikaner State Gazette)-द्वारा स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में सैनिक तथा अन्य उपाधियां, ताज़ीम का सम्मान और नई जागीरें दी जाने तथा कुछ पुराने ताज़ीमी सरदारों की पहले की जागीरों में वृद्धि होने, एवं कई प्रतिष्ठित व्यापारियों को पैर में स्वर्ण-भूषण पहिनने का सम्मान प्राप्त होने और छड़ी, चपरास आदि सम्माननीय वस्तुएं प्रयोग में लाने की घोषणा भी प्रकाशित हुई, जिसका सारांश निम्नलिखित है—

स्वर्ण जयन्ती पर उपाधियां आदि मिलना

महाराजकुमार शार्दूलसिंह को 'कर्नल', भंवर करणीसिंह तथा अमरसिंह को 'लेफ़्टेनेंट', कर्नल जयदेवसिंह को 'ब्रिगेडियर', मेजर राव बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह (सारोठिया) को 'लेफ़्टेनेंट-कर्नल' तथा अन्य कई अफ़सरों को उच्च सैनिक उपाधियां और ठाकुर प्रतापसिंह (बीदासर) एवं मेजर-जेनरल, सरदार बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह सी० बी० ई०, ओ० बी० ई० (सांडवा) को वंशपरंपरा के लिए तथा राय बहादुर सेठ सर विश्वेसरदास डागा, के० सी० आई० ई० को वैयक्तिक रूप से 'राजा' की उपाधि प्रदान की गई। मेजर ठाकुर भारतसिंह को नई जागीर और ताज़ीम का सम्मान दिया गया और कर्नल राव बहादुर ठाकुर शार्दूलसिंह सी० आई० ई० (बगसेऊ), मेजर-जेनरल राव बहादुर ठाकुर हरिसिंह, सी० आई० ई० (सत्तासर) तथा मेजर राव बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह (सारोठिया) की पहले की जागीरों में वृद्धि की गई।

विनायक नन्दशंकर मेहता (प्राइम मिनिस्टर, बीकानेर राज्य), मियां अहसान-उल-हक़ (चीफ़ जस्टिस, हाई कोर्ट, बीकानेर) और राय बहादुर लाला जयगोपाल पुरी, सी० आई० ई० (कोलोनिज़ेशन मिनिस्टर) को निजी तौर पर ताज़ीम का सम्मान दिया गया।

राज-कार्य आदि में अच्छी सेवा करनेवाले व्यक्तियों, राजवी

सरदारों, अन्य अफ़सरों, मुत्सद्दियों एवं प्रतिष्ठित अह्लकारों, सेठ-साहूकारों आदि को भी इन्होंने इस अवसर पर यथा योग्य बैज ऑव् ऑनर, पदक, ख़ास रुक़्क़े, सिरोपाव, कैफ़ियत लिखने का सम्मान आदि देकर संतुष्ट किया।

तत्पश्चात् क़िले के विक्रम-निवास नामक नवीन विशाल दरबार भवन में नज़र-न्योछावर का आम दरबार हुआ, जिसमें राजवियों, उमरावों, सरदारों, प्रतिष्ठित राज-कर्मचारियों आदि की नज़र-न्योछावर स्वीकार की गई। उसी दिन सायंकाल को सेना में निशान (झंडे) वितरण किये गये। कार्तिक वदि १२ (ता० ३१ अक्टोबर) रविवार को सायंकाल के ५ बजे इन्होंने बीकानेर में पोस्ट एंड टेलिग्राफ़ ऑफ़िस की नवीन इमारत का उद्घाटन किया।

कार्तिक वदि ३० (ता० ३ नवंबर) बुधवार को महाराजा साहब की सेवा में मारवाड़ी चेम्बर ऑव् कॉमर्स, कलकत्ता, मारवाड़ी एसोसिएशन, कलकत्ता; जूटबेलर्स एसोसिएशन, कलकत्ता; पीपल्स गोल्डेन जुबिली कमेटी, बीकानेर; जैन श्वेतांबरी तेरा पन्थी सभा, गङ्गनहर कोलोनीज़; बीकानेर म्युनिसिपेलिटी; ज़िले की म्युनिसिपेलिटियों के प्रतिनिधियों; आर्यसमाज; बार एसोसिएशन, बीकानेर; गङ्गनहर कोलोनी के व्यापारियों; नागरी भंडार सोसाइटी, गुणप्रकाशक सज्जनालय सभा; शार्दूल ब्रह्मचर्य्याश्रम; मेहता मूलचन्द विद्यालय; रामपुरिया हाई स्कूल; वासुदेव कन्हैयालाल विद्यालय; भैंरूरत्न पाठशाला; मूलचन्द चिकित्सालय और सेठिया जैन प्राथमिक संस्था एवं माहेश्वरियों, ओसवालों, अग्रवालों, ब्राह्मणों, सिक्खों और मुसलमानों की तरफ़ से डेपुटेशनों ने उपस्थित होकर अभिनंदन पत्र समर्पित किये।

नवम्बर (कार्तिक) मास का प्रथम सप्ताह वाइसराय तथा अन्य यूरोपीय मेहमानों के स्वागत-समारोह के लिए नियत हुआ था। भारत के वाइसराय मार्किस ऑव् लिनलिथगो का लेडी लिनलिथगो-सहित कार्तिक सुदि १ (ता० ४ नवम्बर) गुरुवार को स्पेशल ट्रेन-

लॉर्ड लिनलिथगो का बीकानेर जाना

द्वारा बीकानेर पहुंचना हुआ। महाराजा साहब ने अपने महाराजकुमार, मुख्य-मुख्य उमरावों, राजवियों तथा स्टाफ़ के अफ़सरों के साथ बीकानेर के रेल्वे स्टेशन पर जाकर उनका स्वागत किया।

तदनन्तर वाइसराय की सवारी का हाथियों पर बड़ा जुलूस निकला, जो रेल्वे स्टेशन से डूंगर मेमोरियल कॉलेज, नागरी भंडार, कोट दरवाज़ा, एडवर्ड रोड और क़िले के सामने के गंगानिवास पब्लिक पार्क के पास होता हुआ सूर सागर पर समाप्त हुआ। फिर मोटरों-द्वारा वाइसराय अपनी पार्टी-सहित लालगढ़ पहुंचे, जहां महाराजा साहब ने उनसे मुलाक़ात की। बारह बजे के बाद बदले की मुलाक़ात के लिए वाइसराय इनके पास क़िले में गये। सायंकाल के ४$\frac{3}{4}$ बजे वाइसराय ने बीकानेर की सेना का अवलोकन किया।

कार्तिक सुदि २ (ता० ५ नवम्बर) शुक्रवार को वाइसराय ने प्रिन्स विजयसिंह मेमोरियल हॉस्पिटल का अवलोकन किया। फिर सायंकाल के पांच बजे गंगा गोल्डेन जुबिली म्यूज़ियम् का—जो बीकानेर की प्रजा की तरफ़ से स्वर्ण जयंती की स्मृति में बनाया गया है—वाइसराय ने उद्घाटन किया। कार्तिक सुदि ३ (ता० ६ नवम्बर) शनिवार को वाइसराय ने महाराणी नोबल्स गर्ल्स स्कूल, गंगा सिल्वर जुबिली कोर्ट, किंग जॉर्ज हॉल और सिल्वर जुबिली पब्लिक लाइब्रेरी, इर्विन लेजिस्लेटिव एसेम्बली हॉल, क़िले के पुराने महलों, शस्त्रागार, पुस्तकालय आदि का निरीक्षण किया। उसी दिन रात्रि के ८$\frac{1}{2}$ बजे दरबार हॉल (करणी निवास) में वाइसराय के सम्मान में महाराजा साहब की ओर से भोज हुआ। इस अवसर पर महाराजा साहब ने अपने भाषण में साधारण रूप से बीकानेर राज्य में होनेवाली उन्नति एवं अंग्रेज़ सरकार को युद्ध के समय दी जानेवाली सहायता आदि का उल्लेख करते हुए स्वर्ण जयन्ती महोत्सव पर वाइसराय के आगमन पर प्रसन्नता प्रकट की। इसके उत्तर में वाइसराय ने अपने भाषण में महाराजा साहब की शासन-कुशलता, राजनैतिक योग्यता, प्रजा-प्रियता और इनके समय में होनेवाली बीकानेर राज्य की अभूतपूर्व

उन्नति का दिग्दर्शन कराते हुए इनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की। श्रीमान् भारत सम्राट् ने इस समय महाराजा को माननीय 'जेनरल' की सैनिक उपाधि दी, जिसकी घोषणा भी इसी अवसर पर वाइसराय ने की। भारतीय नरेशों में महाराजा साहब ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिनको 'जेनरल' का सबसे उच्च सम्मान प्राप्त हुआ है। कार्तिक सुदि ४ (ता० ७ नवम्बर) रविवार को वाइसराय अपनी पार्टी-सहित गजनेर गये और दो दिन वहां ठहरे। कार्तिक सुदि ६ (ता० ६ नवम्बर) मंगलवार को सायंकाल के ६½ बजे गजनेर से स्पेशल ट्रेन-द्वारा वाइसराय विदा हुए। इस अवसर पर बीकानेर में वाइसराय के साथी अंग्रेज़ों और देशी अफ़सरों के अतिरिक्त अन्य बहुतसे अंग्रेज़ अफ़सर, अखबारों के संवाददाता, एवं हिन्दुस्तानी मेहमान बीकानेर में थे। उनका भी महाराजा साहब की तरफ़ से स्वागत किया गया। इन अवसरों पर भी नगर की सजावट एवं रोशनी की बहार दर्शनीय थी।

कार्तिक सुदि १३ (ता० १६ नवम्बर) मंगलवार को बीकानेर में राज्य की तरफ़ से एक वृहत् भोज हुआ, जिसमें श्रीमान् महाराजा साहब, महाराजकुमार और राज्य के उमराव, सरदार तथा प्रायः सब मुख्य-मुख्य अफ़सर विद्यमान थे। इस अवसर पर बीकानेर के प्रधान मन्त्री विनायक नन्दशङ्कर मेहता ने स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के सम्बन्ध में भाषण दिया, जो संक्षेप में इस प्रकार है—

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष्य में प्रधान मन्त्री और महाराजा के भाषण

'स्वर्ण जयन्ती समारोह की यह घटना हम लोगों के लिए गर्व का विषय है, क्योंकि आज श्रीमान् की यहां उपस्थिति इस बात की द्योतक है कि बीकानेर राज्य की प्रजा की भलाई के लिए श्रीमान् के साथ कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्य भी संयुक्त उत्तरदायित्व रखते हैं।......

'गत चालीस वर्षों में श्रीमान् ने इस राज्य की जो उन्नति की है, उससे समाचारपत्रों ने संसार को पहले ही परिचित करा दिया है। राज्य के क्रमिक विकास के सम्बन्ध में श्रीमान् ने प्रजा को जो कुछ प्रदान किया

है, उसे भी जनता जान गई है।

'हम समझते हैं कि इस प्रकार स्वतन्त्र प्रमाण के द्वारा उन आरोपों का स्वतः खंडन हो गया है, जो हम पर गत कुछ महीनों में किये गये हैं। ऐसे निराधार आरोपों का खंडन करना हमने ज़रूरी नहीं समझा। वे इस योग्य नहीं थे कि उनपर ध्यान दिया जाता। उदाहरणार्थ, कुछ लोगों ने प्रकटतया हम राज्य के सेवकों से सहानुभूति दिखाने के लिए यह कहा कि बीकानेर में कर्मचारियों के वेतन में कमी तथा रेल्वे टिकटों पर अतिरिक्त वृद्धि की जा रही है; यहां तक मिथ्या प्रचार किया गया कि बीकानेर स्टेट सेविंग बैंक ने जमा करनेवालों की रक़में देने से इनकार कर दिया है। इतना ही नहीं यह भी कहा गया कि चार रुपया प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से ज़बरदस्ती वसूल किया जा रहा है, जिसके फलस्वरूप लोगों को भारी कष्ट हो रहा है। उन्होंने यह भी कहा कि यह सब जुबिली फ़ंड की रक़म बढ़ाने के लिए किया गया है और यह भी कि एक करोड़ रुपये जुबिली में खर्च किया जाना निश्चित हुआ है। यह भी कहा गया कि प्रजा को फ़ंड में धन देना चाहिए, क्योंकि राज्य के पास आवश्यक धन नहीं है। ये सब बातें दो तीन आन्दोलन-कर्ताओं-द्वारा गढ़ी गई थीं, जिनके विरुद्ध क़ानूनी कार्यवाही हुई थी। रही जुबिली समारोह के खर्च की बात—जिसमें ३ लाख रुपये का स्वर्ण-तुलादान, श्रीमान् वाइसराय तथा बहुत से नरेशों के आगमन, एवं यूरो-पियन तथा भारतीय मेहमानों के अतिथ्य का व्यय भी सम्मिलित है—वह कुल मुश्किल से एक करोड़ का द्वादशांश (लगभग ८ लाख रुपये) होगा। जिन दानों की घोषणा पहले की जा चुकी है, उनका विवरण और उनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में यहां कुछ कहना व्यर्थ होगा; फिर भी इस अव-सर पर मैं एक महत्त्वपूर्ण बात के संबंध में कुछ कहूंगा।

'शासक पर श्रद्धा और परंपरागत राज-भक्ति की भावना के अनु-सार "पीपल्स-गोल्डेन जुबिली कमेटी" ने श्रीमान् के तुलादान के सोने का मूल्य जुटाने का विचार प्रकट किया था, परंतु महाराजा साहब ने, प्रजा

की राजभक्ति की क़द्र करते हुए भी, इस बात को अस्वीकार कर दिया और इस रक़म का प्रबंध राज्यकोष से ही हुआ। वास्तव में सिद्धान्त-रक्षा के विचार से और अपनी प्रजा का लिहाज़ रखते हुए श्रीमान् ने केवल इसी बात को अस्वीकार नहीं कर दिया, बल्कि और भी कई ऐसी बातों को नामंजूर कर दिया। मैं यहां उनका विवरण न दूंगा, क्योंकि लोग उन्हें जान चुके हैं।......

'इस तथ्य के होते हुए भी कि फ़ंड का विचार प्रजा में ही उत्पन्न हुआ और मुख्यतः ग़ैर-सरकारी लोगों ने ही सब ज़िलों में समितियाँ बनाकर चन्दा किया, दो खास मौक़ों पर श्रीमान् की सरकार ने सूचना निकाली थी कि चन्दा वसूल करने में प्रजा पर किसी तरह का दबाव न डाला जाय।......

'मैं इस बात पर तर्क नहीं करना चाहता कि हमारी शासन-प्रणाली सभी दृष्टियों से आधुनिक शासन-व्यवस्था के तत्त्वों से परिपूर्ण है। हमारी राज्य-व्यवस्था प्राचीन है। जब तक हम प्रजा की भलाई के लिए प्रयत्न जारी रखते हैं, तब तक हमें अपनी परम्परागत शासन-शैली को पूर्णतः तोड़ने की आवश्यकता नहीं है।

'अपने उद्देश्य और उनकी प्राप्ति के साधनों के संबंध में हम अपनी प्रजा को ही सबसे उत्तम निर्णायक मानते हैं। उन उद्देश्यों और उनके साधनों के सम्बन्ध में परीक्षण के तौर पर हमारी सरकार ने गत ४० वर्षों का प्रामाणिक लेखा तैयार किया है और मैं नहीं समझता कि यह कहना धृष्टता होगी कि अनेक बाधाओं के होते हुए भी श्रीमान् की प्रजा काफ़ी समृद्ध हो गई है।

'सम्राट् के प्रति श्रीमान् की सच्ची भक्ति प्रसिद्ध है और उसी तरह यह बात भी विख्यात है कि आपकी प्रजा आपका अनुसरण करने को तैयार है। इस प्रकार हम अनुभव करते हैं कि राष्ट्रों के ब्रिटिश कॉमन्वेल्थ में, जो क्रमशः विकसित हो रहा है, हमारा स्थान निश्चित है। ऐसा महसूस किया जा रहा है कि साम्राज्य के विभिन्न भागों के सम्बन्धों का

न्याययुक्त एकीकरण आवश्यक है। यह स्पष्ट है कि ऐसा एकीकरण अमल में आनेवाला है। हमें विश्वास है कि इसके क्रियात्मक रूप में आने पर साम्राज्य पहले की अपेक्षा अधिक दृढ़ हो जायगा। विकास का समय दीर्घ हो सकता है, परन्तु राष्ट्र के जीवन में लगातार प्रगति और शांतिपूर्ण विकास जारी रहने की अवस्था में इतना समय कुछ भी नहीं है। इस प्रकार के विकास के लिए हमें आशा रखनी चाहिये कि मुख्य ध्येय की प्राप्ति के बाद रियासतों का अखिल भारत के साथ वैसा ही संबंध स्थापित हो जायगा जैसा भारत का साम्राज्य के साथ उसके अन्तर्भूत अंश के रूप में होगा।......'

इसके उत्तर में महाराजा साहब ने अपनी शासन-नीति आदि के विषय में अपने सारगर्भित भाषण में कुछ सामयिक बातें कहीं, जो इस प्रकार हैं—

'शासन-कार्य में मेरा हाथ बंटानेवाले आप सज्जनों को धन्यवाद देना केवल एक रस्म मात्र होगी। मैं इस अवसर पर अपने हृदय में जो समझ रहा हूं, उसे पूर्णतः व्यक्त करना चाहता हूं। मैं अनुभव करता हूं कि मैं एक ऐसे परिवार के बीच में हूं, जिसका केन्द्र मैं समझा जाता हूं। यह भावना ही मुझे भूतकालीन कठिनाइयों के समय जीवन प्रदान करती रही है और भविष्य में भी करती रहेगी, एवं निश्चय है कि परिवर्त्तन के इस युग में आप सब को भी कर्तव्य-मार्ग पर अग्रसर होते समय जीवन प्रदान करती रहेगी।

'इस युग की प्रवृत्ति पर विचार करते हुए मैं अपने अफ़सरों के सम्मान की विशेष क़द्र करता हूं, क्योंकि वे मेरे उद्देश्य को समझने के लिए उपयुक्त स्थिति में हैं और मैं जानता हूं कि बिना उन सेवाओं के, जो मैंने अपने बीकानेरी तथा अन्य अफ़सरों से गत ३९ वर्षों में प्राप्त की हैं, हम ऐसी सफलता प्राप्त न कर सके होते, जिसका श्रेय निष्पक्ष विचारक हमें दे रहे हैं।

'इस प्रकार की गई सेवाओं से प्रभावान्वित होकर मैंने राज्य की

सर्विसों (नौकरियों) को उपयुक्त बनाने के लिए, शासन की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए उन्हें अधिकाधिक अमली संरक्षण प्रदान किये हैं।

'मैं समझता हूं कि हम इस बात का दावा कर सकते हैं कि जहां तक प्राप्य आदर्श के लिए संभव हो सकता है, हमने अपने यहां से रिश्वतख़ोरी नष्ट कर दी है, परन्तु हमें इसके मूलोच्छेद के लिए प्रजा के सहयोग की ज़रूरत है। जहां तक सम्भव हुआ है हमने नौकरियों में स्थानीय योग्य लोगों को ही भर्ती किया है। ई० स० १९०६ से हम अपने नवयुवकों को इसी उद्देश्य से शिक्षित करते आये हैं और हमारा आदर्श यही है कि नौकरियों की प्रत्येक शाखा में राज्य की प्रजा को स्थान दिया जाय, जिसका इसके लिए प्रथम अधिकार है।

'मैं इस बात से अवगत हूं कि कुछ लोग यह विश्वास करते हैं कि मैं यूरोपियन अफ़सरों को नियुक्त करने की कमज़ोरी दिखलाया करता हूं। समय-समय पर यह शिकायतें भी होती आई हैं कि मैं सार्वजनिक उत्तरदायित्व के पदों पर रियासत के बाहर के व्यक्तियों को नियुक्त किया करता हूं। यदि राज्य के हितों के वास्ते किसी खास पद के लिए सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति को चुनना कमज़ोरी है तो मुझ में यह कमज़ोरी है और मुझे उसके लिए लज्जा नहीं है। मैंने पहले भी सार्वजनिक रूप में कहा है और फिर कहता हूं कि कोई व्यक्ति यूरोपियन या परदेशी होने से बीकानेर राज्य में नौकरी पाने से वंचित नहीं रहेगा, बशर्ते कि वह उस पद के लिए योग्यता और अनुभव में सर्वश्रेष्ठ पाया जाय। इस अवसर पर मैं उन कतिपय यूरोपियन अफ़सरों के प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने अन्य अवसरों तथा जुबिली के मौक़े पर विशेष सेवाएं की हैं। साथ ही मैं उन विदेशी (अन्य प्रान्तों और राज्यों के) अफ़सरों के कार्यों की भी क़द्र करता हूं, जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य किये हैं।

'यूरोपियन और विदेशी अफ़सरों की नियुक्ति के सिलसिले में एक शिकायत यह भी है कि मैं सब कुछ खुद किया करता हूं, जिसका

मतलब यह है कि मैं काम को वितरित नहीं करता और अफ़सरों को इस बात का मौक़ा नहीं देता कि वे अपना काम यथेष्ट रूप से करें। यह अजीब बात है कि यह धारणा केवल बाहरी लोगों की ही नहीं है। यह बात कुछ राजकर्मचारियों के मस्तिष्क में भी घर कर गई है, यद्यपि वे ऐसे ही लोग हैं, जो मेरे निकट सम्पर्क में नहीं आये हैं। इस सम्बन्ध में कुछ भी कहना सफ़ाई देने के समान है, जिसकी मुझे ज़रूरत नहीं है; तो भी मैं ईमानदारी के साथ कह सकता हूं कि मैं कार्य के वितरण में पूर्ण विश्वास रखता हूं। मैंने ऐसा करने का प्रयत्न किया है; क्योंकि मैं ख़ास समय पर ही नहीं, बल्कि सदा उस अतिश्रम से बचने की चेष्टा करता हूं, जो परिस्थिति ने मुझपर डाल रक्खा है। कदाचित् मेरा बड़ा दोष आदर्शवाद है। मेरा विश्वास है कि अगर कोई काम करना है तो उसे भलीभांति करना चाहिये और मैं इस आदर्श वचन का क़ायल हूं कि "पूर्णता की उच्चतम पराकाष्ठा यह है कि छोटी से छोटी वस्तु को भी अच्छाई के साथ किया जाय।" मैं नहीं समझता कि इस बात से इनकार किया जा सकता है कि प्रत्येक बात पर ध्यान रखना सफलता के लिए प्रथम आवश्यक वस्तु है। यदि यह सिद्धान्त कार्य-रूप में परिणत न किया गया होता तो मैं नहीं समझता कि श्रीमान् वाइसराय दो दिन पहले मुझे ऐसा लिखते कि उनके आगमन के समय प्रबन्ध वास्तव में परिपूर्ण था। इस अवसर पर मुझे उस व्यवस्था के ज़िम्मेदार अपने अफ़सरों को श्रीमान् वाइसराय की क़द्रदानी का संदेश देते हुए बड़ा आनन्द हो रहा है। इससे मुझे अपने प्रसिद्ध पूर्वज दक्षिण के राठोड़-साम्राज्य के बलहरा की अंगूठी पर खुदे उस वाक्य का स्मरण आता है, जिसमें कहा गया था कि " दृढ़ संकल्प के साथ आरम्भ किया हुआ और अध्यवसाय (लगन) के साथ जारी रक्खा हुआ कार्य निश्चय सफलतापूर्वक समाप्त होता है।"

'रही मंत्रियों (मिनिस्टरों)' के विश्वास की बात, सो इन दिनों शासनकार्य ऐसा विषम हो गया है कि प्रत्येक शासक के लिए शासन-

समस्या के बारे में मंत्रियों का परामर्श लेना आवश्यक हो गया है। ऐसी दशा में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि महत्त्वपूर्ण निश्चय का अवसर आने पर मैं आपसे राय लेता हूं। आप सब जानते हैं कि मैं इतना ही नहीं करता बल्कि समस्या के पहलू पर पूर्णतः छानबीन कर लेने की ग़रज़ से अपने राज्य के ग़ैर-सरकारी प्रमुख व्यक्तियों से भी आवश्यकता पड़ने पर परामर्श करता हूं।......

'मुझे प्रसन्नता है कि कौंसिल कर-सम्बन्धी प्रश्न पर ठीक परिणाम पर पहुंचने के लिए विचार कर रही है। हमें अपनी प्रजा पर अधिक कर लगाने की इच्छा नहीं है, न हम कर से वसूल किये गये रुपयों को शासन के अतिरिक्त और किसी काम में खर्च करते हैं। हम प्रजा से जो लेते हैं, उसके बदले में उसे स्वास्थ्य और सद्विचार आदि देते हैं। सभी सरकारें अपनी-अपनी प्रजा पर कर लगाती हैं। हमें भी ऐसा करना पड़ता है। फिर भी मेरी नीति यह रही है कि इससे प्रजा की जीविका पर आघात न हो।......

'हमारी सरकार की शैली के सम्बन्ध में आपने कुछ बातें कही हैं। मैं मानता हूं कि वह शैली मुख्य तत्त्वों में उसी रूप में सुरक्षित है, जिस रूप में हमारे पूर्वजों के समय थी, किन्तु साथ ही इस बात की भी प्रत्येक दिशा में चेष्टा की गई है कि शासन-प्रणाली के आधुनिक तत्त्वों को भी यथासंभव अपनाया जाय।......

'भारत का एक बड़ा भाग इस समय अपने परंपरागत सामाजिक सङ्गठन पर शासन के नये विचारों के प्रभाव का अनुभव कर रहा है। भारतीय राज्यों में हम इन घटनाओं को दिलचस्पी के साथ देख रहे हैं और किसी भी लाभदायक नये मार्ग से अपनी प्रजा को लाभान्वित करने के लिए चिन्तित हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि समय गतिवान् है।

'साथ ही हमें शीघ्रतापूर्वक उस बात का अनुकरण भी नहीं करना चाहिये, जो अन्यत्र हो रही है, क्योंकि संभव है इस प्रकार की उतावली में हम अपनी प्राचीन शासन-प्रणाली को नष्ट कर दें और हमें ऐसा कोई वास्तविक राजनैतिक सुधार भी न प्राप्त हो, जो प्रजा के लिए लाभ-

दायक हो।......

'हमें कृपालु परमात्मा के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये, जिसने हमें सदैव सौभाग्य प्रदान किया है। हमारे भौतिक साधन लगातार बढ़ते गये हैं। हमारी प्रजा उनसे लाभान्वित हुई है। हम साम्प्रदायिक दंगों से बचे हुए हैं और हमारी प्रजा शासक के प्रति परंपरागत विश्वास के संबंध से सुखी है। वास्तव में ईश्वर के प्रति कृतज्ञ होने के लिए हमें बहुत कुछ प्राप्त है।'

नवम्बर के अंतिम सप्ताह में स्वर्ण जयन्ती के चतुर्थ भाग का आरम्भ हुआ। इस अवसर पर भारत के प्रायः सभी नरेशों, सगे-सम्बन्धियों, प्रतिष्ठित व्यक्तियों आदि को जयन्ती-महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रण भेजे गये। मार्गशीर्ष वदि ७ (ता० २४ नवम्बर) बुधवार से ही मेहमानों का आगमन प्रारम्भ हो गया, जिसका क्रम मार्गशीर्ष वदि १२ (ता० २९ नवम्बर) सोमवार तक चलता रहा। इस अवसर पर ग्वालियर के महाराजा जयाजीराव, उदयपुर के महाराणा सर भूपालसिंहजी, जोधपुर के महाराजा सर उम्मेदसिंहजी, जयपुर के महाराजा सर मानसिंहजी, बूंदी के महाराव राजा सर ईश्वरीसिंहजी, कोटा के महाराव सर उम्मेदसिंहजी, पटियाला के महाराजा सर भूपेन्द्रसिंह (स्वर्गवासी), कच्छ के महाराव सर खेंगारजी, प्रतापगढ़ के महारावत सर रामसिंहजी, दतिया के महाराजा सर गोविंदसिंहजी, बनारस के महाराजा सर आदित्यनारायणसिंहजी (स्वर्गवासी), पालनपुर के नवाब सर ताले मुहम्मदखां, नरसिंहगढ़ के राजा विक्रमसिंहजी, सीतामऊ के राजा सर रामसिंहजी, वांकानेर के महाराणा सर अमरसिंहजी, दांता के महाराणा भवानीसिंहजी, दरभंगा के महाराजाधिराज सर कामेश्वरप्रसादसिंहजी, पालीताणा के ठाकुर सर बहादुरसिंहजी और खैरागढ़ के राजा वीरेन्द्रबहादुरसिंहजी आदि उत्सव में सम्मिलित हुए। इनके अतिरिक्त कितने ही स्थानों के दीवान, कई राजकुटुम्बी, प्रतिष्ठित सरदार और ठिकानेदार भी उपस्थित हुए। महाराजा ने सब का समुचित स्वागत किया। मेहमानों के मनोरंजनार्थ सेना की क़वायदों,

स्वर्ण जयन्ती पर राजा-महाराजाओं का बीकानेर में आगमन

वीरतायुक्त खेलों, रोशनी, आतिशबाज़ी आदि का प्रबन्ध किया गया था।

मार्गशीर्ष वदि १३ (ता० ३० नवंबर) मंगलवार को लालगढ़ के दरबार-हॉल करणीनिवास में महाराजा की ओर से उनके सम्मान में राजकीय भोज हुआ, जिसमें इन्होंने उपस्थित नरेशों को कष्ट उठाकर बीकानेर पधारने के लिए धन्यवाद दिया तथा कई सामयिक बातों का उल्लेख भी किया। तदनन्तर ग्वालियर के नवयुवक महाराजा जयाजीराव ने अपने भाषण में महाराजा गंगासिंहजी के समय में बीकानेर राज्य की जो अभूतपूर्व उन्नति हुई उसका उल्लेख करते हुए इनकी शासनकुशलता और पारस्परिक एकता के व्यवहार की प्रशंसा की। फिर खैरागढ़ के राजा और लोकप्रसिद्ध डाक्टर बी० एस० मुंजे ने अपने भाषणों में महाराजा के उत्तम गुणों का वर्णन करते हुए इनकी राजनैतिक योग्यता पर प्रकाश डाला।

मार्गशीर्ष वदि १४ (ता० १ दिसंबर) बुधवार को नरेशगण और प्रतिष्ठित मेहमान गजनेर गये, जहां से दूसरे दिन उन्होंने अपने-अपने स्थानों के लिए प्रस्थान किया।

रामेश्वर की यात्रा करना

इसके एक वर्ष बाद वि० सं० १९९५ (ई० स० १९३९) के शीतकाल में महाराजा साहब ने हैदराबाद, मैसूर, ट्रावनकोर आदि दक्षिण की रियासतों का भ्रमण करते हुए रामेश्वर की यात्रा की। वहां राजमाता पुंगलियानी (स्वर्गीय महाराजा डूंगरसिंह की राणी) और महाराणी भटियाणी भी इनके शामिल हो गईं। वहां से कोटा होते हुए ये अपनी राजधानी को लौटे।

महाराजा का पारिवारिक जीवन

महाराजा का पारिवारिक जीवन बड़ा सुखी है। इनके तीन विवाह हुए, जिनमें से छोटी महाराणी भटियाणी विद्यमान है, जो धर्मपरायण और सुशिक्षित महिला है। ई० स० १९३३ (वि० सं० १९९०) में उक्त महाराणी से महाराजा का विवाह हुए २५ वर्ष हो गये, अतएव राज्य में उस दिन के उपलक्ष्य में विशेष रूप से खुशी मनाई गई। ई० स० १९३५ (वि० सं० १९९१) के नव वर्षारंभ के अवसर पर उक्त महाराणी को सी० आई०





महाराजा सर गंगासिंहजी, महाराजकुमार शार्दूलसिंह तथा भंवर करणीसिंह एवं अमरसिंह सहित

(इम्पीरीयल ऑर्डर ऑव् दि क्राउन ऑव् इंडिया) का खिताब सम्राट् जॉर्ज पंचम की ओर से प्राप्त हुआ। हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस, ने भी ई० स० १९३७ (वि० सं० १९९४) के दिसम्बर मास में उसे डॉक्टरेट की उच्च उपाधि देकर सम्मानित किया। महाराजा के चार महाराजकुमार और दो महाराजकुमारियां हुईं, जिनमें से दो कुंवरों—रामसिंह और वीरसिंह—का शिशुकाल में ही देहांत हो गया और राजकुमारी चांदकुमारी का किशोर अवस्था में परलोकवास हुआ, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है।

महाराजकुमार शार्दूलसिंह का जन्म महाराणी राणावत से हुआ। वह एक होनहार राजकुमार है। उसने लगभग साढ़े चार वर्ष तक बीकानेर राज्य का शासन-प्रबंध अपने पिता की निर्दिष्ट नीति पर मनोयोग-पूर्वक करके प्रजावत्सलता का परिचय दिया, जिससे वह बड़ा लोकप्रिय हो गया है। उसके दो पुत्र—भंवर करणीसिंह और अमरसिंह—तथा एक पुत्री—भँवरबाई सुशीलकुंवरी—है।

भंवरबाई सुशीलकुंवरी अपने नाम के अनुसार ही अनेक गुणों से संपन्न है। एक उच्च कुलोत्पन्न राजकुमारी में जो गुण होने चाहियें, वे इसमें विद्यमान हैं। उसे योग्य व्यक्तियों-द्वारा अच्छी शिक्षा दी जा रही है। वह बड़ी तीव्र-बुद्धि है और अपने पूर्वजों की सत्-कीर्ति सुनने का उसको बड़ा अनुराग है। सुशीलकुंवरी का संबंध उदयपुर के महाराजकुमार भगवतसिंह[1] से हुआ है।

भंवर करणीसिंह, गंभीर, मृदुभाषी, कलाप्रिय और प्रतिभाशाली होने के साथ ही मितव्ययी है। उसको क्षत्रियोचित वीरता के कार्यों से पूर्ण अनुराग है। वह अच्छा अश्वारोही और टेनिस का खिलाड़ी होने के साथ ही बंदूक का निशाना लगाने में भी कुशल है। उसकी मुख-मुद्रा से

---

(१) उदयपुर (मेवाड़) के वर्तमान महाराणा सर भूपालसिंहजी के कोई संतान न होने से वि० सं० १९९५ के फाल्गुन (ई० स० १९३९ फरवरी) मास में उन्होंने अपने पितृव्य महाराज गजसिंह के उत्तराधिकारी शिवरती के महाराज हिम्मतसिंह के पौत्र और प्रतापसिंह के पुत्र भगवतसिंह को दत्तक लिया है।

राठोड़ोचित शौर्य और कुलाभिमान की मात्रा स्पष्ट प्रकट होती है। वह धैर्यवान् और संकोचशील है एवं अपने पिता महाराजकुमार शार्दूलसिंह के सदृश सद्गुणों से अलंकृत है। उसके उत्तम आचरण और कर्मनिष्ठा को देखते हुए बीकानेर-निवासियों को उससे बहुत कुछ आशा है। अध्ययन में उसने अच्छी उन्नति की है।

भंवर अमरसिंह प्रखरबुद्धि और विनयशील है। वह हास्य और विनोदप्रिय होते हुए भी धर्म की ओर पूर्ण रुचि रखता है। उसको हिंदी भाषा से भी प्रेम है, जो उसकी माता कुंवराणी बाघेली से उसमें अवतरित हुआ है। उक्त कुंवराणी बाघेली हिन्दी की विदुषी और काव्य-प्रेमी महिला है। रीवां के राजघराने में हिंदी का प्रेम पहले से ही चला आता है और वहां के नृपतियों के लिखित ग्रंथ अब तक प्रशंसा के पात्र बने हुए हैं। इस स्थिति में उक्त कुंवराणी का हिंदी-साहित्य के प्रति सहज अनुराग होना स्वाभाविक बात है। महाराजा साहब ने अमरसिंह को महाराजकुमार विजयसिंह का दत्तक रख दिया है, जिससे उसकी गणना राजपरिवार में होती है। अतएव उसका वर्णन राजपरिवार में किया जायगा।

महाराजा साहब का अपने दोनों पौत्रों और पौत्रियों से बड़ा प्रेम है। ये इनकी शिक्षा बीकानेर में ही योग्य व्यक्तियों-द्वारा करा रहे हैं। उपर्युक्त दोनों राजकुमारों की तैरने की ओर भी रुचि है।

महाराजा की दूसरी महाराणी तंवराणी के कोई संतति नहीं हुई और वि० सं० १९७९ आषाढ वदि ११ (ई० स० १९२२ ता० २१ जून) को उसका परलोकवास हो गया।

विद्यमान महाराणी भटियाणी से महाराजकुमार विजयसिंह और वीरसिंह तथा महाराजकुमारी शिवकुंवरी का जन्म हुआ। महाराजकुमार वीरसिंह का तो बचपन में ही स्वर्गवास हो गया और महाराजकुमार विजयसिंह का २२ वर्ष की आयु में वि० सं० १९८८ (ई० स० १९३२) में परलोकवास हुआ। उक्त महाराजकुमार के केवल तीन पुत्रियां ही हुईं, अतएव महाराजा साहब की आज्ञानुसार दूसरा पौत्र अमरसिंह उसका

दत्तक रख दिया गया है। महाराजकुमारी शिवकुंवरी का विवाह कोटा के महाराजकुमार भीमसिंह से हुआ है, जिसके एक पुत्र और एक पुत्री है।

महाराजा के जीवन की विशेषताएं

महाराजा सर गंगासिंहजी का व्यक्तित्व उच्च होने पर भी इनका जीवन सादगी से पूर्ण है। इनके राज्य-शासन में प्रजा-हित के जितने कार्य हुए हैं, उतने पहले कभी नहीं हुए। आधुनिक भारत के उन विरले नरेशों में से ये भी एक हैं, जो प्रजा से बातचीत करने में संकोच नहीं करते और स्वयं उनके दुःख-सुख पूछकर उनकी खोज़-ख़बर लेते हैं। इनका हृदय बड़ा कोमल और उदार है।

वि० सं० १९५६ (ई० स० १८९९-१९००) के भयङ्कर दुष्काल तथा हैज़े के प्रकोप के समय इन्होंने स्वयं संकटापन्न स्थानों में जा-जाकर, अपने प्राणों की तनिक भी परवाह न करते हुए, लोगों की यथोचित सहायता की।

इनका शिक्षानुराग प्रशंसनीय है। इनके समय में बीकानेर राज्य में शिक्षा की बड़ी उन्नति हुई है। प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। राजधानी में उच्च शिक्षा के लिए ई० स० १९३५ (वि० सं० १९९२) से डिग्री (बी० ए०) कॉलेज हो गया है। इसके अतिरिक्त कितने ही हाई स्कूल, मिडिल स्कूल और प्राइमरी स्कूल स्थापित हो गये हैं। राज्य के अधिकांश बड़े-बड़े गांवों में पाठशालाएं खोल दी गई हैं, जिनमें मुफ़्त शिक्षा दी जाती है। ग़ैर सरकारी पाठशालाओं को भी राज्य से सहायता मिलती है। स्त्री-शिक्षा के ये कट्टर पक्षपाती हैं और बालिकाओं की शिक्षा के लिए भी कितनी ही पाठशालाएं स्थापित हो गई हैं। पर्दानशीन महिलाओं के लिए इन्होंने 'महाराणी कन्या पाठशाला' में समुचित व्यवस्था कर वहां उच्च शिक्षा देने का प्रबन्ध कर दिया है। राजपूतों में शिक्षा-प्रेम जाग्रत करने के हेतु एक उच्च श्रेणी का विद्यालय स्थापित कर दिया गया है। फलतः अब बीकानेर राज्य के कई बड़े-बड़े ओहदों पर शिक्षित राजपूत भी पाये जाते हैं। राजपूतों का विद्रोह और लूट-खसोट करने का

स्वभाव मिट गया है और वे बहुधा विवेकशील, राजभक्त एवं योग्य बनते जाते हैं। होनहार विद्यार्थियों को ये उच्च शिक्षा के लिए राज्य के व्यय से छात्रवृत्ति देकर बाहर के विद्यालयों में भी भिजवाते हैं। वर्तमान समय में शिक्षितों की अधोगति देखकर कलाकौशल की शिक्षा देने के लिए इन्होंने विलिंग्डन टेक्निकल इंस्टिट्यूट बनाया है।

चिकित्सा-विभाग में भी पर्याप्त उन्नति हो गई है। वैज्ञानिक ढंग से चिकित्सा करने के लिए राजधानी में विशाल अस्पताल बन गया है, जिसमें पुरुषों, स्त्रियों और बालकों की चिकित्सा के लिए भिन्न-भिन्न वार्ड हैं एवं चिकित्सा सुचारु रूप से होती है। प्रायः सब बड़े-बड़े क़स्बों में अस्पतालों की स्थापना हो गई है और कई गांवों में आयुर्वेदिक औषधालय भी खुल गये हैं। इन्होंने अपनी रजत और स्वर्ण जयन्तियों पर इस कार्य के लिए प्रचुर द्रव्य देकर अपनी उदारता का पूर्ण परिचय दिया है।

राजधानी में एक वृहत् पुस्तकालय स्थापित हो गया है, जिसमें पुस्तकों का उत्तम संग्रह है। इसके अतिरिक्त नागरी भंडार तथा अन्य स्वतन्त्र पुस्तकालयों से भी यहां के निवासियों को बड़ा लाभ पहुंचता है। बड़े-बड़े क़स्बों में भी पुस्तकालय खुल गये हैं। इन्होंने क़िले की प्राचीन हस्त-लिखित पुस्तकों के संग्रह को 'गङ्गा ओरिएंटल सीरीज़' के नाम से राज्य के व्यय से प्रकाशित करने की आज्ञा प्रदान की है, जिससे कई अप्राप्य, अमूल्य और महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाश में आ जायेंगे।

पुरातत्त्व-सम्बन्धी सामग्री को सुरक्षित रखने के लिए राजधानी में म्यूज़ियम् की भी स्थापना हो गई है।

महाराजा ने राजधानी में राजकुमारी चांदकुंवरबाई अनाथाश्रम, किंग जॉर्ज अपाहिज आश्रम आदि संस्थाएं स्थापित कर इन श्रेणियों के व्यक्तियों का बड़ा उपकार किया है। प्रजा के आराम के लिए राजधानी में कई सुन्दर बाग़ लगे हैं, जिनमें गङ्गानिवास पब्लिक पार्क एवं श्रीरतनविहारीजी, श्रीरसिकविहारीजी तथा श्रीलक्ष्मीनारायणजी के मंदिरों के पार्क मुख्य हैं।

बीकानेर में जल का अभाव प्रसिद्ध है, जो इनके प्रयत्न से बहुत कुछ मिट गया है। राजधानी में नल लग जाने से बड़ी सुविधा हो गई है और जनता को भी आसानी से थोड़े व्यय में जल मिल जाता है।

इनको अपने सामंतों से बड़ा प्रेम है। उनकी उत्तम सेवाओं से प्रसन्न होकर इन्होंने कितने ही गांव उन्हें जागीर में प्रदान किये हैं।

राज्य के सभी महत्त्वपूर्ण कार्यों को ये स्वयं करते हैं। कभी-कभी राज्यकार्य में ये इतने व्यस्त हो जाते हैं कि इन्हें अन्य कार्यों के लिए अवकाश तक नहीं मिलता। अपने कर्मचारियों से भी ये परिश्रमपूर्वक कार्य लेते हैं, जिससे वे भी परिश्रमशील हो गये हैं और काम करते हुए नहीं थकते। इनकी शासन-कुशलता सर्वत्र प्रसिद्ध है। इनकी कार्य-शैली सुन्दर और व्यवस्थित है। राजपूताना ही नहीं, प्रत्युत भारत के अधिकांश राज्यों में बीकानेर उन्नतिशील राज्य माना जाता है। राज्य की भाषा हिन्दी होने से साधारण प्रजा को अपनी प्रार्थनाएं अधिकारियों के सामने उपस्थित करने में कठिनाइयां नहीं होती। रेल, तार और डाक के महकमों का विस्तार होने से यात्रा एवं पत्रव्यवहार का कष्ट मिट गया है। सुंदर सड़कों के द्वारा गमनागमन की शिकायतें दूर हो गई हैं। राज्य में हाकड़ा और गंगनहर के आ जाने तथा जगह-जगह नये बांध बंध जाने से कृषि-कर्म में वृद्धि हो गई है। फलस्वरूप कई नवीन गांव बस गये हैं और बस रहे हैं। गंगनहर के समीप का इलाक़ा तो अच्छा आबाद हो गया है। व्यापार की वृद्धि के लिए स्थान-स्थान पर बड़ी-बड़ी मंडियां बन गई हैं, जिनसे वहां की प्रजा सम्पन्न होती जाती है। भाकरा का बंध बनवाये जाने की भी व्यवस्था हो रही है, जिससे राज्य के बचे हुए उत्तरी भाग में भी जल का कष्ट मिटकर निकट भविष्य में वह कृषिपूर्ण हो सकेगा।

ये बड़े ईश्वरभक्त हैं। सनातनधर्म पर इनकी पूर्ण आस्था है तथा धर्म-सम्बन्धी प्रत्येक कार्य को ये सांगोपांग पूरा करते हैं। विलायत-यात्रा आदि के समय भी ये सदा धार्मिक कृत्यों का बड़ा ध्यान रखते हैं। ये बड़े उदारचित्त और दृढप्रतिज्ञ हैं एवं शस्त्र तथा अश्वसंचालन आदि क्षत्रियोचित

गुणों से संपन्न हैं। राजपूताने में ये ही ऐसे नरेश हैं, जिन्होंने किशोर अवस्था में ही युद्ध में जाने की अभिलाषा प्रकट की और चीन आदि सुदूरवर्त्ती देशों में सेना-सहित जाकर छोटी अवस्था में ही राठोड़ोचित वीरता का पूर्ण रूप से परिचय दिया। यूरोपीय महासमर में भी इन्होंने अपने वंश-गौरव के अनुरूप योग्यता और वीरता वतलाई।

ये आवश्यकतानुसार शासन-सम्बन्धी कार्यों में देश के योग्य और अनुभवी पुरुषों को भी वुलाकर परामर्श लेते हैं। इनको समय-समय पर देश के गण्यमान्य पुरुषों से मिलने का अवसर भी प्राप्त होता रहता है। इनको स्वदेश और निजधर्म पर पूर्ण श्रद्धा है, अतः गोवर्द्धनपीठ के शंकराचार्य वीकानेर में जाकर धर्मोपदेश भी करते हैं। अन्य धर्मों के प्रति भी इनको अनुराग है और धार्मिक पक्षपात किंचित् भी नहीं है।

इनको हिंदी और अंग्रेज़ी का समुचित ज्ञान है। काव्य से इन्हें प्रेम है और वीर रस के काव्यों को गंभीरतापूर्वक सुनते हैं। अंग्रेज़ी भाषा पर तो इनका पूर्ण अधिकार है। इनकी भाषणशैली इतनी सुंदर है कि सुननेवाले का कभी जी नहीं उकताता। इसी प्रकार इनकी लेखन शैली भी विशुद्ध और प्रभावशालिनी है। ये जटिल से जटिल वात को वहुत थोड़े समय में ही समझ लेते हैं। मेधा शक्ति इतनी प्रवल है कि राज्य-कार्य में पूर्ण रूप से व्यस्त रहने पर भी ये किसी वात को नहीं भूलते।

इन्हें अपने पूर्वजों की कीर्ति का वड़ा गर्व है। राजधानी के राजमहलों में से प्रत्येक किसी न किसी पूर्वज के नाम पर वना है। अपने पूर्वजों की कीर्ति को चिरस्थायी रखने के लिए राज्य में इनके समय में जितने भी नये क़स्वे और गांव वसे हैं, उनका नामकरण इन्होंने वहुधा उन्हीं के नाम पर किया है। वंशपरम्परागत हिन्दू संस्कृति और कुला-भिमान का इनको पूरा ध्यान है। सामाजिक विषयों में सुधारप्रिय होने पर भी ये कोई ऐसा कार्य नहीं करते, जिससे संस्कृति और कुल-मर्यादा के नाश होने की संभावना हो। ये सव धर्मों को समान दृष्टि से देखते हैं, जिससे इनके दीर्घ-शासन में धार्मिक झगड़े कभी नहीं हुए। धार्मिक

रूढ़ियों का ये बराबर पालन करते हैं और श्राद्ध आदि अवसरों पर एकाहार रहकर स्वधर्म-प्रेम का परिचय देते हैं। अपने राज्य में प्रचलित कुरीतियों को मिटाने में ये प्रयत्नशील हैं। इनके प्रयत्न से कितनी ही कुरीतियां—बालविवाह, वृद्धविवाह, अनमेलविवाह आदि की प्रथाएं—धीरे-धीरे मिटती जाती हैं। इनके शासन की भारत सरकार के अंग्रेज़ अफ़सरों तथा देश के विभिन्न नेताओं ने बड़ी प्रशंसा की है। पुलिस के सुप्रबन्ध से डाके और राहज़नी बंद हो गई है। उमराव, सरदार आदि इनके आज्ञाकारी हैं। बीकानेर राज्य की सेना भी ब्रिटिश सेना के समान सुसज्जित है। यहां का शासन एकांगी नहीं है। प्रजा को उत्तरदायित्वपूर्ण शासन में भाग देने के लिए ज़मींदार परामर्शकारिणी सभा, व्यवस्थापक सभा, म्युनिसिपैलिटियां आदि स्थापित हो गई हैं। यहां यह कहना अयुक्त न होगा कि अंग्रेज़ी भारत में व्यवस्थापक सभाओं का जन्म होने के पूर्व ही महाराजा साहब ने अपने यहां उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की नींव रख दी थी। फिर भी समयानुसार परिवर्त्तन की बहुत कुछ गुंजाइश है, किन्तु बिना पूर्ण सोच-विचार के शासनशैली में परिवर्त्तन करना कभी-कभी अनिष्टकर हो जाता है और देश की संस्कृति के लिए घातक सिद्ध होता है। इस बात को देखते हुए ये शासनशैली के क्रमिक विकास में विश्वास रखते हैं और शासन के प्रत्येक विषय का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् ही आगे का मार्ग निर्दिष्ट करते हैं, जिसका इन्होंने स्वयं अपने भाषणों में समय-समय पर उल्लेख किया है।

ये अंग्रेज़ सरकार के पूर्ण मित्र हैं। समय-समय पर इन्होंने सरकार को महत्त्वपूर्ण सहायता देकर अपना कर्तव्य पालन किया है। फलतः उक्त सरकार ने भी इनकी प्रतिष्ठा और मान मर्यादा में यथेष्ट वृद्धि की है तथा अपना विश्वासपात्र समझकर गत महायुद्ध के संधि-सम्मेलनों में इन्हें भारत का प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। उस अवसर पर इन्होंने परिश्रम-पूर्वक अपने उत्तरदायित्व का पालन किया, जिसकी वाइसरॉय, भारतमंत्री और इंग्लैंड के प्रधानमंत्री आदि उच्च अफ़सरों ने समय-समय पर बड़ी

प्रशंसा की। ई० स० १६३८ (वि० सं० १६६५) के दिसम्बर मास में जर्मनी के ज़ेक प्रदेश पर अधिकार करने के कारण यूरोप में युद्ध के बादल उमड़ पड़े। उस समय आत्मसम्मानार्थ ब्रिटिश सरकार के ज़ेकोस्लोवेकिया की रक्षार्थ युद्ध में भाग लेने की पूरी संभावना थी। इस अवसर पर महाराजा साहब ने वाइसरॉय के पास तार भेज आवश्यकता के समय अपनी सेना और धन सम्राट् की आज्ञा होते ही युद्ध में लगाने की इच्छा प्रकट की और अपने मित्र राज्यों को भी इसके लिए तैयार किया। वाइसरॉय ने महाराजा साहब के इस कार्य की प्रशंसा कर तत्परता के लिए धन्यवाद दिया। पीछे से ब्रिटिश साम्राज्य के प्रधान मंत्री सर नेविल चैंबरलेन के उद्योग से यह संकट टल गया।

सम्राट् के राजघराने के साथ इनका बड़ा अच्छा सम्बन्ध रहा है। वि० सं० १६६६ (ई० स० १६०६) में इनकी माता चन्द्रावत (स्वर्गीय महाराज लालसिंह की पत्नी) का देहान्त होने पर स्वयं सम्राट् जॉर्ज पञ्चम (स्वर्गवासी) ने इनके पास तार भेजकर सहानुभूति का परिचय दिया था। इसी प्रकार स्वर्गवासी महाराजकुमार विजयसिंह के परलोकवास के अवसर पर भी सम्राट् ने सहानुभूति-सूचक तार भेजा था।

काश्मीर, बड़ोदा, ग्वालियर, कपूरथला, पटियाला, रीवां आदि राज्यों के शासकों तथा भारत के अन्य नरेशों के साथ इनकी मैत्री है। राजपूताने के उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, बूंदी, कोटा, अलवर, डूंगरपुर, प्रतापगढ़, किशनगढ़, पालनपुर, झालावाड़, टोंक आदि राज्यों के शासकों के साथ भी इनका अच्छा सम्बन्ध है। वे भी इन (महाराजा) का पूर्ण सम्मान करते तथा इनकी सलाहों को आदर की दृष्टि से देखते हैं। देशी राज्यों के सम्बन्ध में इन्होंने जो-जो सेवाएं की हैं, वे बड़े महत्त्व की हैं। उनसे प्रेरित होकर भारतीय नरेशों ने कई बार इनका बड़ा सम्मान किया है। ई० स० १६३८ ता० १५ मई (वि० सं० १६६५ ज्येष्ठ वदि १) रविवार को मैसूर के युवराज कांतिराव नरसिंहराज वडियार के कुंवर जयचमराजेन्द्र का विवाह मध्यभारत के चरखारी नरेश की राजकुमारी से

हुआ। उस अवसर पर इन्होंने भी महाराजा मैसूर के मेहमान होकर प्रीति प्रदर्शित की।

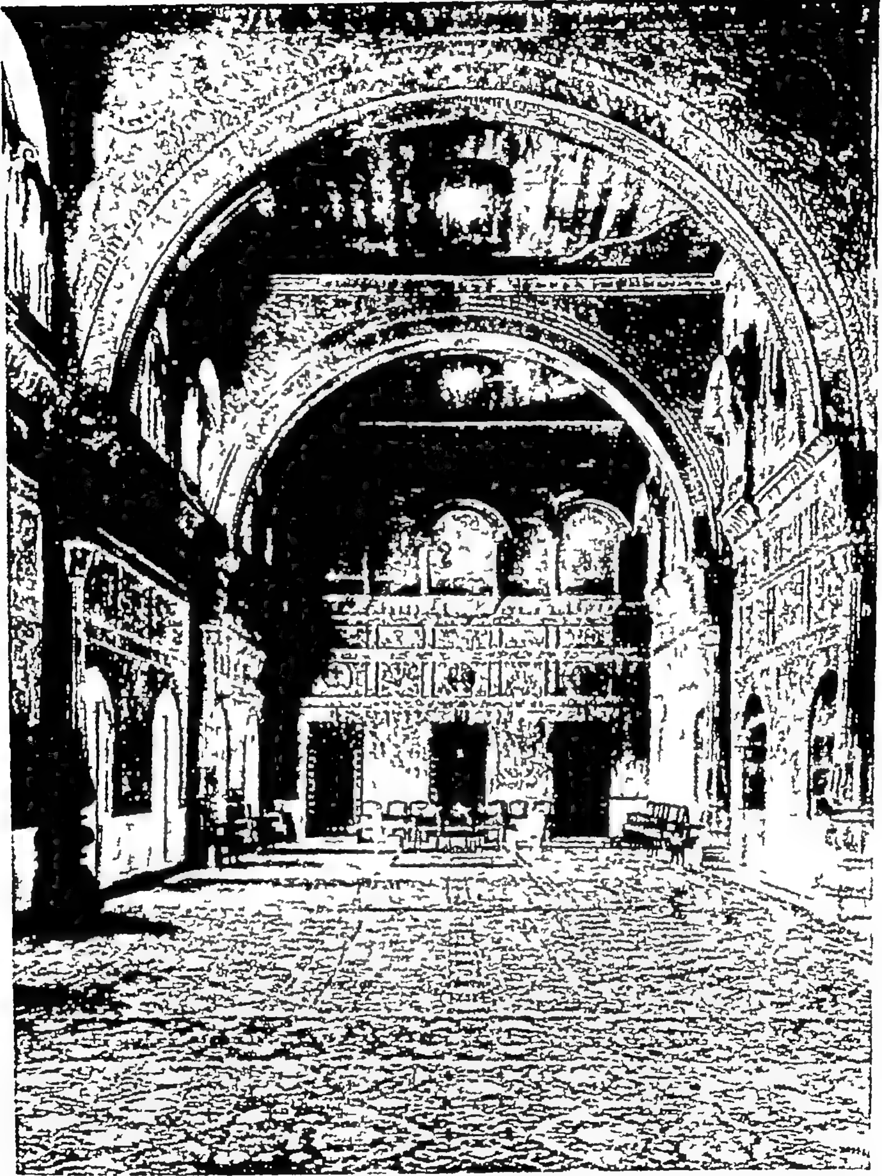
ये ब्रिटिश भारत की उन्नति चाहते हैं और अपने राज्य को भारत का एक अङ्ग मानते हैं; पर उग्र नीतिवादियों की कठोर नीति को पसन्द नहीं करते। शासन की उन्नति प्रजा के सहयोग पर ही अवलंबित है, ऐसा मानने पर भी जिस आतुरता से लोग आगे बढ़ रहे हैं उसे ये हानिप्रद समझते हैं। ये भारतीय सभ्यता के अनुसार राजा और प्रजा के बीच उस पवित्र सम्बन्ध को, जो यहां की परिस्थिति के अनुकूल और वांछनीय है, देखना चाहते हैं। अपनी भूल को स्वीकार करने में ये कभी संकोच नहीं करते, बल्कि जब कभी इनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाता है, तब ये उसका संशोधन कर देते हैं[1]। देश-हित के कार्यों के लिए महाराजा के

(१) महाराजा सरदारसिंह का एक विवाह कुंवरपदे में उदयपुर के महाराणा सरदारसिंह की पुत्री महताबकुंवरी से हुआ था और महाराणा का विवाह उक्त महाराजा की बहिन से। इन वैवाहिक सम्बन्धों में अच्छा प्रयत्न करने के कारण बीकानेर राज्य से उदयपुर के प्रधान मन्त्री मेहता रामसिंह को पारितोषिक के रूप में जागीर प्राप्त हुई थी, जिसका कुछ भाग उसके कनिष्ट पुत्र इन्द्रसिंह के नाम पर उसके जीवन-काल तक बना रहा। इन्द्रसिंह निःसन्तान था जिससे उसने अपने बड़े भाई ज़ालिमसिंह के तीसरे पुत्र उग्रसिंह के बड़े बेटे शिवनाथसिंह को गोद लिया। इन्द्रसिंह की मृत्यु के समय बीकानेर में रीजेंसी कौंसिल-द्वारा शासन होता था, जिसने महाराजा साहब के अधिकार-संपन्न होने पर इसका फ़ैसला होने की राय दी। महाराजा साहब ने अधिकार मिलने पर शिवनाथसिंह की गोदनशीनी को स्वीकार कर इन्द्रसिंह के नाम पर जो जागीर थी, वह उसके जीवनकाल के लिए बहाल कर दी। वि० सं० १९७२ (ई० स० १९१६) में शिवनाथसिंह की मृत्यु हो गई। तब पूर्व आज्ञा के अनुसार उस (शिवनाथसिंह) के पुत्र विद्यमान होने पर भी वह जागीर ख़ालसा हो गई। उस समय शिवनाथसिंह के पुत्र पृथ्वीसिंह, जयसिंह और वीरसिंह छोटी अवस्था के थे। वयस्क होने पर उन्होंने अपनी पैतृक जागीर अनुचित रूप से राज्याधिकार में जाने की ओर महाराजा साहब का ध्यान आकर्षित किया। इसपर इन्होंने वस्तुस्थिति पर पूर्ण रूप से विचारकर इन्द्रसिंह की जागीर वि० सं० १९९३ (ई० स० १९३७) में, उदयपुर के महाराणा सर भूपालसिंहजी के बीकानेर आगमन के अवसर पर, पुनः पृथ्वीसिंह, जयसिंह और वीरसिंह के नाम पर बहाल कर दी है।

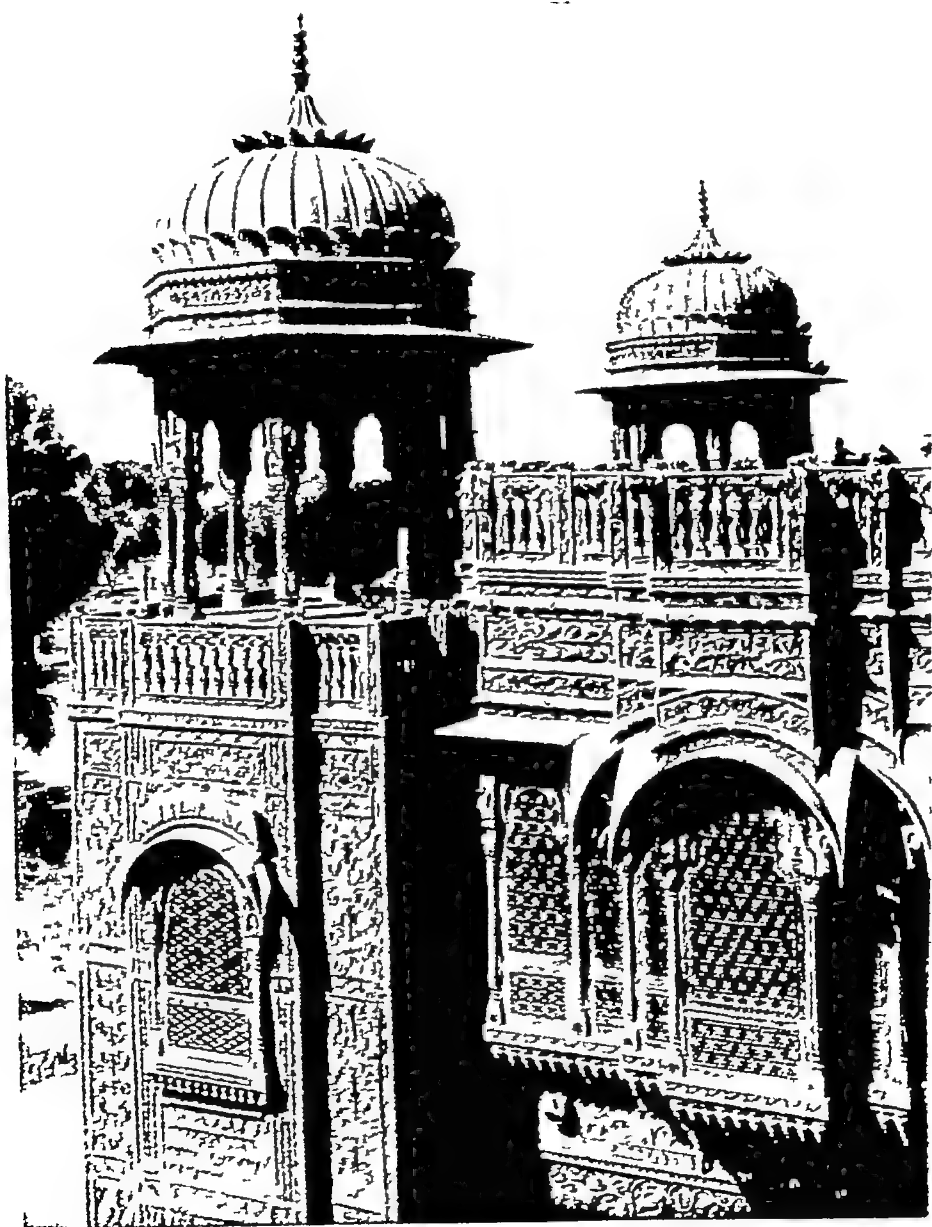
विचार उदार हैं और ये ऐसे कार्यों के लिए सहायता देने में कभी पीछे नहीं हटते। सामाजिक और आर्थिक सुधारों के विषय में भी इनके विचार संकुचित नहीं हैं। इनका अनुभव है कि जहां कार्य नीति के अनुसार सहज में हो सके, वहां दबाव की आवश्यकता नहीं है। अत्यधिक शीघ्रता और कठोरता से सदा क्रांतियों का जन्म होता है, जिनका दबाना कठिन हो जाता है।

ये दृढ़व्रती और निर्भीक व्यक्ति हैं। ई० स० १६१६ (वि० सं० १६७३) में हरिद्वार से गंगा की एक शाखा निकालने के लिए जब अंग्रेज़ सरकार विचार करने लगी तब उसका भारतीय जनता ने पूर्ण विरोध किया। उस समय भारत सरकार ने इन्हें इसकी जांच कमेटी में नियुक्त किया। इन्होंने बड़ी दृढ़ता से सरकार को सुझा दिया कि इस कार्य से हिन्दू जनता के हृदय पर बड़ी चोट पहुँचेगी और परिणाम अच्छा न होगा। इनके इस विचार को सरकार ने भी उचित समझा, जिसके फलस्वरूप गंगा की शाखा निकालने का कार्य स्थगित हो गया। पटियाला और धौलपुर राज्यों के बीच एक अरसे से विवाद चल रहा था, उसको मिटाने के लिए जब मामला इनको सौंपा गया, तब इन्होंने बुद्धिमत्तापूर्वक उस मामले का निपटारा करवा दिया, जिससे पुनः दोनों राज्यों के बीच मैत्री स्थापित हो गई।

इनके पचास वर्ष के शासनकाल में बीकानेर राज्य में ही नहीं, दिल्ली, बम्बई, आबू आदि में भी बड़ी-बड़ी कोठियां और भवन बनाये गये हैं। बीकानेर राज्य में इनके बनवाये हुए महलों, कोठियों, बंगलों आदि की संख्या बहुत अधिक है। राजधानी के अतिरिक्त राज्य के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्थानों—देशणोक, गजनेर, सूरतगढ़, हनुमानगढ़, छापर, सुजानगढ़ आदि—में भी अनेक विशाल भवन हैं। इन्हें प्राचीन स्थानों की रक्षा का पूरा ध्यान है और ये समय-समय पर उनका जीर्णोद्धार भी कराते रहते हैं। राजधानी बीकानेर के दुर्ग-स्थित प्राचीन राज्य-प्रासाद में महाराजा साहब ने कई बार सुधार करवाया है। वहां दरबार के योग्य पहले कोई विशाल भवन न था। अतएव इन्होंने वहां 'गंगानिवास दरबार



गंगानिवास दरबार हॉल, बीकानेर



लालगढ़ महल की खुदाई का काम

हॉल' और 'विक्रमनिवास दरबार हॉल' की नूतन इमारतें बनवा दी हैं, जिनसे राजमहलों की शोभा बढ़ गई है।

लोकहितकारी कार्यों की ओर अधिक रुचि होने से इनके दीर्घ राज्यकाल में राजधानी बीकानेर के अतिरिक्त गांवों में भी बड़ी-बड़ी इमारतें बनी हैं। बीकानेर नगर पहले तंग गलियों से परिपूरित था और बाज़ार में दूकानों आदि का कोई क्रम न था एवं स्वच्छता का अभाव था। अब वहां चौड़ी-चौड़ी सुन्दर सड़कें बनवादी गई हैं तथा स्वच्छता का पूरा प्रबन्ध कर दिया गया है। मकान आदि क्रमबद्ध और मार्ग चौड़े हो जाने से नगर की शोभा बढ़ गई है। गगनचुंबी अट्टालिकाएं, सुन्दर मकान और बंगले तथा स्थान-स्थान पर रमणीक उद्यान बन जाने से बीकानेर नगर ने वस्तुतः अब नूतन रूप धारण किया है। यह इनके प्रगतिशील शासन का ही फल है कि बीकानेर राज्य में इतनी भव्य इमारतें दीख पड़ती हैं। तुलनात्मक दृष्टि से यदि विवेचना की जाय तो बीकानेर के सब राजाओं ने मिलकर भी लगभग साढ़े तीनसौ वर्षों में इतनी इमारतें नहीं बनवाईं, जितनी अकेले महाराजा सर गंगासिंहजी ने बनवाई हैं। इनमें भी लोक-हित के लिए बनी हुई इमारतों की संख्या अधिक है।

इनके समय में डूंगर मेमोरियल कॉलेज, वॉल्टर नोबल्स हाई स्कूल, महाराणी नोबल्स गर्ल्स स्कूल, विलिंग्डन टेक्निकल इंस्टिट्यूट, विजय हॉस्पिटल, इर्विन असेंबली हॉल, विक्टोरिया मेमोरियल, चांदकुंवरी अनाथाश्रम, किंग जॉर्ज अपाहिज-आश्रम, गंगा गोल्डन जुबिली म्यूज़ियम, छापाखाना, पब्लिक लाइब्रेरी, विजय भवन और लालगढ के सुंदर महल आदि बने हैं। लालगढ़ में खुदाई का काम बड़ा सुन्दर है। ऐसे विशाल महल बहुधा कम ही जगह देखने में आये हैं। इनके अतिरिक्त कई बड़े-बड़े क़स्बों में बने हुए पाठशालाओं और अस्पतालों के भवन भी सुंदर हैं। गंगा सिल्वर जुबिली कोर्ट, रेल्वे ऑफ़िस तथा विक्रमपुर कैंटूनमेंट की सैनिकों के लिए बनी दुमंज़िली बारिकें भी बीकानेर की दर्शनीय वस्तुओं में

से हैं। इन इमारतों तथा लोक-हितकारी कार्यों में महाराजा साहब ने करोड़ों रुपये व्यय किये हैं। बीकानेर-स्टेट रेल्वे, जिसका विस्तार लगभग आठसौ मील तक पहुंच गया है, इस राज्य की आय का मुख्य साधन है। उसके द्वारा भी बीकानेर राज्य की प्रजा की बहुत कुछ जीविका चलती है। महाराजा साहब जनता के आमोद-प्रमोद और मनोरंजन का पूरा ध्यान रखते हैं। इन्होंने तीन लाख रुपये की लागत से बीकानेर के गंगा निवास पब्लिक गार्डन में 'गंगा सिनेमा हॉल' की सुंदर इमारत भी बनवादी है। महाराजा साहब ने इन इमारतों को बनवाने में पूर्ण दक्षता से काम लिया है।

कला-कौशल और औद्योगिक उन्नति की तरफ़ इनकी पूरी रुचि है। ये वैज्ञानिक साधनों को ही उन्नति का साधन मानते हैं, पर उनके आश्रय में रहकर भारतीय कला को भुला देना श्रेयस्कर नहीं समझते। कला-कौशल की वृद्धि के लिए ये सदा प्रोत्साहन देते हैं। इनके समय में बीकानेर की शिल्प-कला में नूतन जागृति हुई है, जिसके उदाहरण लाल-गढ़ के सुंदर महल, विजय भवन और गंगानिवास दरबार हॉल में दीख पड़ते हैं। बीकानेर में रेल्वे का वर्कशॉप, बिजलीघर और वॉटर वर्क्स तथा क़स्बों में कॉटन प्रेस, शुगर मिल्स आदि कारख़ाने स्थापित हो जाने से सहस्रों आदमियों के निर्वाह का साधन हो गया है। बीकानेर का बिजलीघर इतना बड़ा है कि बीकानेर से दूर-दूर तक कोला-यत, सांडवा, चूरू आदि में भी उसके द्वारा बिजली पहुंचाई जाती है। संगीतकला, चित्रकला आदि के संरक्षण की तरफ़ भी इनका ध्यान है।

बीकानेर राज्य की प्रजा परिश्रमी और सहनशील है। अधिकांश ज़मीन एक साखी होने से वहां खरीफ़ की ही साख उत्पन्न होती है। गंगनहर के आस-पास की ज़मीन में दोनों साखें होती हैं, परंतु अधिकांश कृषकों का जीवन-निर्वाह खेती या पशुपालन से ही होता है एवं कुछ कठिनाइयां भी विद्यमान हैं। साधारण से साधारण किसान के पास भी चालीस या पचास बीघे तक ज़मीन है, जिससे वह अपना निर्वाह सामान्यतः अच्छी तरह

कर लेता है। ज़मीन का लगान भी अधिक नहीं लिया जाता है। राज्य ने समय-समय पर कर का दर निश्चित करने के लिए ब्रिटिश भारत से योग्य और अनुभवी व्यक्तियों को बुलाकर पैमाइश कराई है। अकाल तथा थोड़ी वर्षा के समय में लगान में माफ़ी होकर यथा समय काश्तकारों को तक़ावी भी बांटी जाती है, जिससे उनको बड़ी सुविधा हो जाती है।

बीकानेर राज्य के व्यापारी बड़े संपन्न हैं। वे दूर-दूर तक जाकर व्यापार करते हैं। रेल्वे का विस्तार हो जाने से राज्य में तिजारत की अधिक सुविधा हो गई है। जहां रेल्वे नहीं पहुंची है वहां मोटरों या ऊंटों द्वारा यातायात होता है, जिससे अकाल के समय अन्न आदि पहुंचाने का कष्ट बहुत कुछ मिट गया है। राजधानी में 'बीकानेर स्टेट बैंक' स्थापित कर दिया गया है, जिससे आवश्यकता के समय लोगों को क़र्ज़ा भी मिल जाता है।

महाराजा साहब को स्वदेशी वस्तुओं से भी प्रेम है। अपने राज्य में स्वदेशी वस्तुओं का इस्तेमाल बढ़ाने की इनकी इच्छा रहती है और इसके लिए इन्होंने राज्य के कर्मचारियों को स्पष्ट रूप से हिदायत कर रक्खी है। स्वदेश में अच्छी वस्तुएं न बनने की दशा में बाहर की अच्छी वस्तुएं भी काम में ली जाती हैं।

इन्होंने अपने राज्य में जहां इतने सुधार किये हैं, वहां राजकीय कर्मचारियों को भी विस्मरण नहीं किया है। योग्यतानुसार राज्य में वहीं के निवासियों को स्थान दिया जाता है। समय-समय पर उनके वेतन और पद में वृद्धि कर अच्छी सेवाओं के उपलक्ष्य में ये उन्हें पुरस्कार भी देते हैं। इन्होंने अच्छी सेवाओं के उपलक्ष्य में समय-समय पर कितने ही व्यक्तियों को नई जागीरें, उपाधियां, ताज़ीम का उच्च सम्मान, तमगे, सनदें आदि देकर उनके उत्साह में वृद्धि की है। राज्य के मुलाज़िमों के लिए पेंशन तथा प्रॉविडेंट और ग्रेजुइटी आदि फ़ंडों की व्यवस्था कर दी गई है। कोई कर्मचारी यदि छोटी अवस्था में मर जाय तो अच्छी सेवा के उपलक्ष्य में ये उसके बाल-बच्चों आदि की परवरिश का प्रबन्ध कर देते हैं। राज्य की

ऐसी प्रजा की, जिसके निर्वाह का अन्य साधन न हो, उसकी हैसियत के अनुसार निःसंकोच सहायता की जाती है।

इनको अपने राज्य के प्राचीन स्थानों, मंदिरों आदि की रक्षा का पूर्ण ध्यान रहता है। लाखों रुपये व्यय कर इन्होंने इन स्थानों का समय-समय पर जीर्णोद्धार भी कराया है। इन्होंने अपने पूर्वजों-द्वारा दान में दी हुई भूमि, गांव आदि स्थावर सम्पत्ति को लेने की कभी चेष्टा नहीं की। यदि किसी के पास कोई प्राचीन सनद नहीं पाई जाय तो उसकी उचित जांच होकर उसकी भूमि आदि उसको ही, जिसके अधिकार में वह संपत्ति दीर्घ काल से चली आती है, वहाल कर दी जाती है।

बीकानेर राज्य में उच्च और दायित्वपूर्ण पदों पर देशी आदमियों को तो स्थान दिया ही जाता है, किन्तु योग्य व्यक्तियों के अभाव में बाहर के प्रतिष्ठित और अनुभवी व्यक्तियों को भी स्थान दिया जाता है। एक प्रकार से महाराजा की यह नीति अनुचित नहीं है, क्योंकि वर्तमान समय में बीकानेर राज्य में जो कुछ उन्नति हुई है, वह विशेष कर बाहर के उच्च कर्मचारियों की सलाहों से ही संभव हुई है। ये बड़े राजनीतिज्ञ हैं, जिसका परिचय समय-समय पर दी हुई इनकी वक्तृताओं से मिलता है, जो इन्होंने इंग्लैंड आदि में विभिन्न अवसरों पर दी थीं। ये शासन-प्रणाली में हानि पहुंचानेवाले व्यक्तियों को क्षमा नहीं करते। रिड़ी के राजा जीवराजसिंह तंवर ने कल्याणसिंहपुरा गांव, जो उसको ठेके के तौर मिला हुआ था, जागीर में बतलाकर राज्य के विरुद्ध आचरण करना चाहा। जब इसकी तहक़ीकात हुई तो सारा भेद खुल गया। इसपर उसका ठिकाना ज़ब्त कर लिया गया और उसके अपराध में उसे राज्य से निर्वासित कर दिया। जीवराजसिंह ने इसके विरुद्ध राजपूताने के तत्कालीन एजेंट टू दि गवर्नर जेनरल सर रॉबर्ट हॉलैंड की शरण ली। उसने इस मामले पर पूरे तौर से विचार करने के पूर्व ही इनको पुनः उसका ठिकाना उसे लौटाने की सिफ़ारिश की। राज्य के न्यायोचित अन्तरङ्ग विषयों में एजेंट

गवर्नर जेनरल का हस्तक्षेप करना इनको अखरा, अतः इन्होंने तत्काल सर हॉलैंड को वस्तुस्थिति का परिचय कराते हुए निर्भीकतापूर्वक उत्तर दिया, जिससे फिर उसे राज्य के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप करने की नीति छोड़नी पड़ी। राजपूताना के कतिपय राज्यों में इस समय 'मोरुस आला' का नया क़ानून जारी किया गया है। महाराजा साहब ने अपने यहां ऐसा कोई क़ानून जारी नहीं किया है। बीकानेर राज्य में आम लोगों के लिए बहुत समय से यह प्रथा चली आती थी कि यदि कोई व्यक्ति निःसंतान मर जाता और उसकी सात पीढ़ी तक उसका कोई कुटुम्बी न होता तो उसकी सारी सम्पत्ति राज्य में मिला ली जाती थी, परंतु महाराजा साहब ने अपने ज्येष्ठ पौत्र भंवर करणीसिंह के जन्म के शुभ अवसर पर इस प्रथा को अपने राज्य से बिल्कुल उठा दिया। कितनी ही दूर का कोई वारिस क्यों न हो अब उसको निःसन्तान मरनेवाले संबंधी की सम्पत्ति मिल जाती है।

महाराजा के ५० वर्ष के शासन काल में जो-जो उन्नति हुई, उसका संक्षेप से ऊपर वर्णन किया जा चुका है। इनके कठोर परिश्रम और बुद्धिमत्तापूर्ण शासन-प्रणाली से राज्य की वार्षिक आय एक करोड़ तेंतीस लाख रुपये तक पहुंच गई है। राज्य-कोष धन से परिपूर्ण है। ये यूरोप की कितनी ही संस्थाओं के सदस्य और संरक्षक हैं। परोपकार के लिए इनका द्वार सदा खुला रहता है। राज्य के प्रत्येक विभाग के कार्य का ये स्वयं निरीक्षण करते हैं, जिससे इनको अपने राज्य की वस्तुस्थिति का भली भांति अनुभव हो गया है।

मृगया राजपूतों का प्राचीन धर्म है, जिससे महाराजा साहब भी विमुख नहीं रहे हैं, पर इधर इन्होंने उसमें विशेष आसक्ति नहीं रक्खी है। जब अत्यधिक परिश्रम से थक जाते हैं उस समय कुछ मनोविनोद के लिए ये मृगया को जाते हैं। फिर भी अपने हाथों से इन्होंने अब तक कई सौ सिंह आदि हिंसक जंतुओं को मारा है। अभी थोड़े दिन हुए ई० स० १९३८ के अप्रेल मास में ग्वालियर और उदयपुर (मेवाड़)

राज्य के समीपवर्ती जंगल में एक पहाड़ी चट्टान पर बैठे हुए ये एक शेर का शिकार कर रहे थे कि इतने में पीछे की तरफ़ से एक दूसरा शेर पहाड़ी की तरफ़ से चढ़कर इनके बहुत समीप पहुंच गया। अन्तर केवल २२ फुट ही रह गया था, परंतु तत्काल ही इन्होंने बड़ी फुर्ती से उसको अपनी बन्दूक का निशाना बना दिया।

महाराजा का वर्ण गेहुंआ, क़द ऊंचा, वक्षस्थल चौड़ा, बाहु विशाल और शरीर बलिष्ठ है। लगभग ५८ वर्ष की आयु होने पर भी इनकी मुख-मुद्रा से राजपूती शौर्य की आभा प्रकट होती है। ये बड़े प्रभावशाली पुरुष हैं। एक बार जो कोई भी इनसे मिल लेता है, उसपर इनका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। यूरोप आदि के धुरंधर राजनीतिज्ञों पर भी महाराजा के व्यक्तित्व की गहरी छाप जम गई है और भारतीय नरेशों में तो ये महान् राजनीतिज्ञ, बलिष्ठ योद्धा और निर्भीक व्यक्ति माने जाते हैं। नरेशों में बहुधा जो दुर्व्यसन पाये जाते हैं, उनसे ये सर्वथा मुक्त रहे हैं। इनको यदि कोई व्यसन है तो वह यही कि ये सदा राज्य-कार्य और सिपहगिरी में तल्लीन रहते हैं और राज्य की उन्नति को ही अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य समझते हैं।

ग्यारहवां अध्याय

बीकानेर राज्य के सरदार और प्रतिष्ठित घराने



राजपूताने के अन्य राज्यों की भांति बीकानेर राज्य का भी बहुतसा भूमि-भाग सरदारों में बंटा हुआ है। इनमें कई ठिकाने पुराने हैं, जिनकी सेवाओं का बड़ा महत्त्व है। कई अच्छी सेवाओं के उपलक्ष्य में तथा रिश्तेदारी के कारण समय-समय पर जागीरें देकर नये बढ़ाये गये हैं, जिससे वहां के राजपूत जागीरदारों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। सरदारों में अधिकतर राठोड़ हैं, जिनमें तीन बड़ी शाखाएं बीका, बीदावत और कांधलोतों की हैं। राजपूतों की अन्य शाखाओं अर्थात् सीसोदियों, कछवाहों, चौहानों, भाटियों, तंवरों, परमारों और पड़िहारों के भी कुछ ठिकाने हैं। इनमें भाटियों के ठिकानों की संख्या अधिक है, दूसरों की थोड़ी। क्रमविभाग के अनुसार इन जागीरदारों की कई श्रेणियां हैं, जिनमें तीन मुख्य हैं—

(१) राजवी सरदार।

(२) सिरायत, उमराव और ताज़ीमी सरदार।

(३) ग़ैर ताज़ीमी जागीरदार, भोमिये आदि।

महाराजा साहब के निकटस्थ संबंधी राजवी कहलाते हैं। उनकी प्रतिष्ठा भाइयों के समान होती है। राजवियों में महाराजा गजसिंह के वंशधरों का मुख्य स्थान है, जो गजसिंहोत राजवी कहलाते हैं और दो श्रेणियों में विभक्त हैं—

(१) ड्योढ़ीवाले राजवी—महाराजा गजसिंह के पुत्र छत्रसिंह के वंशधर ड्योढ़ीवाले राजवी कहलाते हैं। स्वर्गवासी महाराजा डूंगरसिंह तथा वर्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी इसी शाखा से दत्तक लिये गये हैं, अतएव इनका ड्योढ़ीवाले राजवियों से निकटतम संबन्ध है।

ड्योढ़ीवाले राजवियों के तीन ठिकाने अनूपगढ़, खारड़ा और रिड़ी हैं। इनमें अनूपगढ़ के महाराज (भंवर) अमरसिंह तथा खारड़ा के महाराज सर भैरूंसिंह की प्रतिष्ठा सर्वोपरि है। उपर्युक्त तीनों ठिकानेवाले 'महाराज' कहलाते हैं।

(२) हवेलीवाले राजवी—महाराजा गजसिंह के पुत्र सुल्तानसिंह, मुहकमसिंह और देवीसिंह के वंशज हवेलीवाले राजवी कहलाते हैं, जिनके ठिकाने बनीसर, नाभासर, आलसर, सांईसर, सलूंडिया, कुरभड़ी, बिलनियासर और धरनोक हैं।

उपर्युक्त राजवी सरदारों के अतिरिक्त महाराजा गजसिंह के भाई अमरसिंह, तारासिंह और गूदड़सिंह (आनंदसिंहोत) के वंशजों की गणना भी राजवियों में ही होती है, परन्तु उनका रिश्ता दूर पड़ जाने से उनमें से कुछ ताज़ीमी सरदारों में और कुछ ग़ैर ताज़ीमी सरदारों में माने जाते हैं।

गजसिंहोत राजवी सरदारों में से पहले कई बीकानेर के क़िले में ही रहते थे; परन्तु जैसे-जैसे वंश विस्तार होने लगा, उनको अपने सुभीते के अनुसार क़िले के बाहर हवेलियां बनाकर रहना पड़ा। फलतः आजकल प्रायः सब राजवी क़िले के बाहर अपनी-अपनी हवेलियों में रहते हैं।

उनके निर्वाह के लिए राज्य की तरफ़ से जागीरें तो हैं ही, साथ ही उन्हें प्रतिवर्ष नक़द रक़म भी दी जाती है। विवाह और ग़मी के अवसरों पर भी राज्य से उनको नक़द रक़म मिलती है। ग़मी के अवसरों पर महाराजा साहब उनकी हवेलियों पर जाकर मातमपुर्सी की रस्म पूरी करते हैं। योग्यता के अनुसार राज्य में उन्हें उच्च पद भी दिये जाते हैं, जिनका वेतन पृथक् मिलता है। जागीर के एवज़ में उनसे कोई नौकरी नहीं ली जाती और न चाकरी की रक़म-रेख अथवा नया सरदार नियत होने पर नज़राना ही लिया जाता है। अपनी रजत और स्वर्ण जयंतियों पर महाराजा साहब ने उनकी शिक्षा और भरण-पोषण का पूरा प्रबन्ध कर दिया है।

ताज़ीमी सरदार—राज्य में १३० ताज़ीमी सरदार हैं, जो तीन श्रेणियों में विभाजित हैं—

(१) दोलड़ी ताज़ीम और हाथ का कुरबवाले
(२) इकोलड़ी ताज़ीम तथा बांहपसाववाले और
(३) केवल ताज़ीमवाले

प्रथम वर्ग में ३३ ठिकाने हैं, जिनमें चार—महाजन, बीदासर, रावतसर और भूकरका—प्रमुख हैं, जो 'सिरायत' कहलाते हैं। इस वर्ग के सरदार जब महाराजा साहब के पास जाते हैं तो ये (महाराजा साहब) खड़े होकर हाथ का कुरब देकर उनका अभिवादन ग्रहण करते हैं और जब वहां से सरदार लौटते हैं तो उनके सम्मानार्थ पूर्ववत् महाराजा साहब पुनः खड़े हो जाते हैं।

द्वितीय वर्ग में २८ ठिकाने हैं। जब इन ठिकानों के सरदार महाराजा साहब के पास जाते हैं, तो ये खड़े हो जाते हैं और उनके अभिवादन करने पर बांह पसाव का कुरब देते हैं, पर उनके वहां से लौटने पर खड़े नहीं होते।

तृतीय वर्ग के सरदारों के ६६ ठिकाने हैं, जिनको सादी ताज़ीम मिलती है अर्थात् जब वे महाराजा साहब के पास जाते हैं, तो ये केवल खड़े होकर उनका अभिवादन स्वीकार करते हैं।

ग़ैर ताज़ीमी जागीरदारों के बहुतसे ठिकाने हैं। इनमें से कई पुराने और कुछ नये हैं। ग़ैर ताज़ीमी सरदारों में से कुछ को समय-समय पर बीकानेर के नरेशों ने प्रतिष्ठा बढ़ाकर उनको ताज़ीमी सरदारों में दाख़िल कर दिया है। वर्तमान महाराजा साहब के दीर्घ शासनकाल में कई सरदारों को उनकी उत्तम सेवाओं के कारण नवीन जागीरें दी गईं, ताज़ीमी सरदारों में १४ ठिकाने बढ़ाये गये और पहले के ५ जागीरदारों को ताज़ीम का सम्मान देकर उनका दर्जा बढ़ाया गया है। साथ ही १० ताज़ीमी सरदारों की पहले की जागीरों में वृद्धि भी हुई है।

बीकानेर राज्य के सरदारों को दीवानी तथा फ़ौजदारी मुक़दमे सुनने का अधिकार नहीं है। पहले सरदार अपनी-अपनी जागीर की आय के अनुसार घोड़ों, ऊंटों और पैदलों के साथ राज्य की सेवा करते थे, किन्तु

महाराजा सूरतसिंह के समय से उनकी जमीयत की चाकरी बंद होकर उसके एवज़ में नक़द रक़म राज्य में दाखिल होने लगी है। जागीरदारों की मृत्यु होने पर, जिनके यहां बंधान हो चुका है उनको रक़म रेख के अनुसार एक वर्ष की आय और जिनकी रक़म रेख माफ़ है तथा बंधान नहीं हुआ है उनको आय का तीसरा हिस्सा नज़राने में देना पड़ता है; परंतु कुछ सरदारों को ऐसा नज़राना माफ़ भी है।

बड़े दर्जे के सरदारों में से कई को नक्क़ारा-निशान, सोने-चांदी की छड़ी तथा चपरास रखने और अपने ठिकानों में घड़ी बजाने का सम्मान प्राप्त है। ताज़ीमी सरदारों की मृत्यु होने पर उनकी हवेली में स्वयं महाराजा साहब मातमपुर्सी के लिए जाते हैं और इनकी तरफ़ से उन्हें दर्जे के अनुसार सिरोपाव और घोड़ा दिया जाता है। बड़े दर्जे के सरदारों में से किसी-किसी को सिरोपाव और घोड़े के अतिरिक्त ख़ास तौर पर सिरोपाव और हाथी भी दिये जाते हैं। अपने पट्टे की मालगुज़ारी की रक़म जागीरदार स्वयं वसूल करते हैं। उनके ठिकानों की आबकारी की समस्त आय राज्य लेता है। पहले ताज़ीमी सरदारों को शराब की भट्टियां रखने का अधिकार था, पर आबकारी का नवीन प्रबंध हो जाने से ताज़ीमी सरदारों को उनके घरू व्यवहार के लिए शराब लागत मूल्य पर मिल जाती है। ठिकानों के अन्तर्गत खनिज पदार्थों पर राज्य का ही स्वत्त्व है।

उनको मुकदमे के समय सरकारी कचहरियों में हाज़िर होना भी माफ़ है। सरदारों के स्वत्त्वों और शासन-विषयक परामर्श के लिए 'सरदार एडवाइज़री कमेटी' है, जो समय-समय पर उनके स्वत्त्वों की रक्षा का प्रबंध करती है और कुशासन के समय उसकी तरफ़ उनका ध्यान दिलाती है। राज्य में व्यवस्थापक सभा है, जिसमें सरदारों के प्रतिनिधि भी लिये जाते हैं। क़र्ज़दारी, नाबालिग़ी आदि के समय ठिकानों पर कोर्ट ऑव् वार्डस् के द्वारा शासन होकर वहां का प्रबन्ध मैनेजर के द्वारा होता है। सरदारों की शिक्षा के लिए 'वाल्टर-नोबल्स हाई स्कूल' की स्थापना

बहुत वर्ष हुए हो चुकी है, जिससे अब सरदारों में भी विद्यावृद्धि होती जाती है एवं उनको योग्यता के अनुसार उच्च पद भी दिये जाते हैं, जिनका वेतन राज्य से मिलता है। सरदारों की पुत्रियों के लिए 'महाराणी नोवल्स गर्ल्स स्कूल' है। गंभीर अपराधों के कारण पहले सरदारों की जागीरें राज्य ज़ब्त कर लेता था, जिसपर वे विद्रोह कर बैठते थे, किंतु महाराजा साहब की शासन-शैली से वे संतुष्ट हैं और राजभक्ति में दृढ़ रहकर सदा राज्य की आज्ञा का पालन करते हैं। शिक्षा के सुप्रभाव से वर्त्तमान समय में बहुधा सरदार सरल, विनम्र और कर्मनिष्ठ बनते जाते हैं तथा उनकी दुष्प्रवृत्तियां (लूट-मार आदि) बन्द होती जाती हैं। वाल्टर-कृत राजपुत्र हितकारिणी सभा के उद्देश्यों के अनुसार उनमें बहुत कुछ सामाजिक सुधार हो गये हैं और वे बहुविवाह, मदिरा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त होकर सम्पन्न भी होते जाते हैं। सैनिक शिक्षा की उचित व्यवस्था होने से उनमें से कई अच्छे सैनिक भी हो गये हैं और गत यूरोपीय महासमर आदि के समय उन्होंने क्षत्रियोचित वीरता दिखलाकर पूर्ण शौर्य प्रकट किया है।

राजवी सरदार

ड्योढ़ीवाले राजवी

अनूपगढ़

महाराजा गजसिंह के कई कुंवर थे। उनमें छत्रसिंह दूसरा था[1]। वह पिता की विद्यमानता में ही वि० सं० १८३६ भाद्रपद सुदि २

---

(१) दयालदास की ख्यात (जि० २, पत्र ६४) में कुंवर छत्रसिंह को महाराजा गजसिंह का तीसरा पुत्र लिखा है और वहां उसका नाम सूरतसिंह के पीछे दिया है; परन्तु उस (दयालदास) के ही बनाये हुए 'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' में छत्रसिंह का नाम राजसिंह के पीछे दिया है अर्थात् छत्रसिंह को गजसिंह का दूसरा पुत्र और

(ई० स० १७७९ ता० १२ सितंबर) को परलोक सिधारा[1]। कुंवर छत्रसिंह के केवल एक पुत्र दलेलसिंह था[2], जो पिता के देहांत के समय अल्पवयस्क था। ऐसे कठिन समय में उसका पितामह महाराजा गजसिंह भी वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में स्वर्ग सिधारा, जिससे बालक महाराज दलेलसिंह को पितृ-प्रेम से वंचित होना पड़ा; परन्तु उसकी बुद्धिमती माता ने उसे अधीर न

सूरतसिंह को तीसरा पुत्र बतलाकर चौथा पुत्र श्यामसिंह एवं पांचवां सुलतानसिंह को लिखा है। यही नहीं, दयालदास की ख्यात में सुलतानसिंह का नाम पन्द्रहवां दिया है। वेद मुहताओं-द्वारा निर्मित 'देशदर्पण' में भी सूरतसिंह को छत्रसिंह से छोटा लिखा है। कैप्टेन पाउलेट के 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट', मुंशी सोहनलाल-कृत 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर', श्रीराम मीरमुंशी-कृत 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' तथा 'लिस्ट ऑव् रूलिंग प्रिंसेज़, चीफ़्स एण्ड लीडिंग परसोनेजिज़' में दिये हुए वंशवृक्षों में महाराजा गजसिंह का दूसरा पुत्र सुलतानसिंह, तीसरा छत्रसिंह और चौथा सूरतसिंह दिया है।

उदयपुर (मेवाड़) के भीमपद्मेश्वर नामक शिवालय—जिसको महाराणा भीमसिंह की महाराणी बीकानेरी पद्मकुंवरी ने, जो महाराज सुलतानसिंह की पुत्री थी, वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में बनवाया था—की प्रशस्ति से, जिसका उल्लेख हमने ऊपर पृ० ३६२ में किया है, यही निष्कर्ष निकलता है कि सुलतानसिंह सूरतसिंह से छोटा था। दयालदास की ख्यात के अतिरिक्त अन्य सब ख्यातों में छत्रसिंह को सूरतसिंह से बड़ा बतलाया है। सूरतसिंह के जन्म संवत् (१८२२) और छत्रसिंह के मृत्यु संवत् (१८३६) पर विचार करने से भी यह प्रतीत होता है कि सूरतसिंह छत्रसिंह से छोटा था। सुलतान-सिंह को भीमपद्मेश्वर की प्रशस्ति में सूरतसिंह से छोटा बतलाया है। ऐसी स्थिति में उसका नाम सूरतसिंह के पीछे रखना और छत्रसिंह को गजसिंह का दूसरा कुंवर मानना पड़ेगा, जैसा कि 'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' में है।

(१) संवत् १८३६ वर्षे शाके १७०१ भाद्रपदमासे शुक्ले तिथौ द्वितीयायां रविवासरे घ० ५। २६ हस्तनक्षत्रे घ० ६। ४६ शूल-योग(गे) घ० २। ८ बालवकरणे एवं पंचांगशुद्धौ महाराजाधिराज-श्रीगजसिंहजीतत्पुत्रः महाराजश्रीछत्रसिंहजीश्रीपरमेश्वरपरमभक्तिसंसक्त-चित्तः परमधाममुक्तिपदं प्राप्तः ...... । (स्मारक का लेख)

(२) वंशक्रम—[१] छत्रसिंह [२] दलेलसिंह [३] शक्तिसिंह [४] लालसिंह [५] विजयसिंह और [६] अमरसिंह।

होने दिया और उसको उचित शिक्षा दिलाई, जिससे वह योग्य और गंभीर बन गया। महाराजा गजसिंह का दाह-संस्कार होने के पीछे उस(गजसिंह)के अन्य कुंवर—सुलतानसिंह, अजबसिंह, मोहकमसिंह, देवीसिंह और खुशहालसिंह—से अन्यत्र चले गये, किंतु दलेलसिंह बीकानेर में ही रहा।

महाराजा गजसिंह के पुत्र राजसिंह और पौत्र प्रतापसिंह का छः महीने के भीतर ही देहान्त हो जाने से गजसिंह के पुत्रों में से सूरतसिंह बीकानेर राज्य का स्वामी हुआ। बीकानेर राज्य की ख्यातों आदि से स्पष्ट है कि छत्रसिंह, सूरतसिंह की अपेक्षा आयु में बड़ा था, जिससे उसका पुत्र दलेलसिंह वहां के सिंहासन का वास्तविक अधिकरी था, परन्तु वह अपनी बाल्यावस्था के कारण सिंहासन से वंचित रहा। उस समय राजपूताना के अन्य राज्यों की भांति बीकानेर राज्य की स्थिति भी संतोषजनक न थी और पास के राज्य उसकी कमज़ोरी का लाभ उठाकर वहां की भूमि पर अधिकार करना चाहते थे। कई सरदार स्वच्छंद हो रहे थे। ऐसी स्थिति में शासन-सत्ता किसी योग्य व्यक्ति के अधिकार में दिये बिना राज्य-रक्षा होना कठिन समझ स्वामिभक्त सरदारों ने भी महाराजा सूरतसिंह के गद्दी बैठने में कोई आपत्ति न की। बाल्यावस्था व्यतीत होने पर यदि दलेलसिंह सूरतसिंह से झगड़ा करता तो उसमें सफलता होना कठिन ही नहीं असंभव था, क्योंकि शासन-सूत्र सूरतसिंह के हाथ में होने से उस(सूरतसिंह)को सब प्रकार की सुविधा थी तथा सरदार और राज्य के कर्मचारी उसके हाथ में थे। इस अवस्था में झगड़ा बढ़ाने में व्यर्थ ही रक्तपात होता और असीम धन-जन की हानि होने के अतिरिक्त देश की दुर्दशा होती। स्थिति की भयंकरता और माता के सच्चे उपदेशों से दलेलसिंह स्वभावतः शांतिप्रिय हो गया था, इसलिए वह आयु-पर्यन्त राज्य-सिंहासन का भक्त बना रहा और सूरतसिंह के प्रति उसके हृदय में उच्च भावना विद्यमान रही।

उसकी इस उदार वृत्ति से प्रेरित होकर महाराजा सूरतसिंह ने

उसके सम्मान और मर्यादा में किंचित् न्यूनता न की और उसके रहने के लिए बीकानेर के दुर्ग में ही पृथक् भवन बनवाकर सारा व्यय राज्य से मिलने की व्यवस्था की एवं उसके निजी व्यय के लिए छत्रगढ़ (जो कुंवर छत्रसिंह के नाम पर बसाया गया था), सूरपुरा और सुरनाणा आदि गांव निकाल दिये तथा उसकी उपाधि 'महाराज' स्थिर की। दलेलसिंह का वि० सं० १८९५ वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८३८ ता० १ मई) को परलोकवास हुआ। उसके पांच पुत्रों में से लक्ष्मणसिंह बाल्यकाल में ही मर गया था, किन्तु शक्तिसिंह, मदनसिंह, खड्गसिंह एवं खुम्माणसिंह उसकी मृत्यु के समय विद्यमान थे। उनमें से ज्येष्ठ शक्तिसिंह प्रचलित रीति के अनुसार पिता की संपत्ति का स्वामी हुआ।

वि० सं० १८९७ (ई० स० १८४०) में उदयपुर के महाराणा सरदारसिंह का गया-यात्रा से लौटते हुए महाराजा रत्नसिंह की राजकुमारी से विवाहार्थ बीकानेर में आगमन हुआ। उस समय महाराजा रत्नसिंह ने अपनी राजकुमारी के विवाह के साथ ही, महाराज शक्तिसिंह की पुत्री नंदकुंवरी का विवाह भी महाराणा के भतीजे कुंवर शार्दूलसिंह (बागोर के महाराज शेरसिंह का ज्येष्ठ पुत्र) के साथ कर दिया। शक्तिसिंह के केवल एक पुत्र लालसिंह हुआ, जो वि० सं० १९०५ के फाल्गुन मास (ई० स० १८४९ फ़रवरी) में अपने पिता का परलोकवास होने पर उसका उत्तराधिकारी हुआ।

महाराज लालसिंह का जन्म वि० सं० १८८८ मार्गशीर्ष सुदि १२ (ई० स० १८३१ ता० १६ दिसम्बर) को हुआ था। बाल्यकाल में उसको प्रचलित पद्धति के अनुसार हिंदी की शिक्षा दी गई। क्षत्रियों के जन्मसिद्ध अधिकार शस्त्र-संचालन और अश्वविद्या में भी, वह थोड़े ही समय में कुशल हो गया। उसके शरीर की गठन बलिष्ठ और अवयव सुदृढ़ थे। उदारता और दयालुता उसके विशेष गुण थे। वह राजा और प्रजा का आजीवन शुभचिंतक रहा, इसलिए बीकानेर की प्रजा उसपर बड़ी श्रद्धा रखती थी। उस (लालसिंह) के तीन पुत्र—गुलाबसिंह,



महाराज लालसिंह

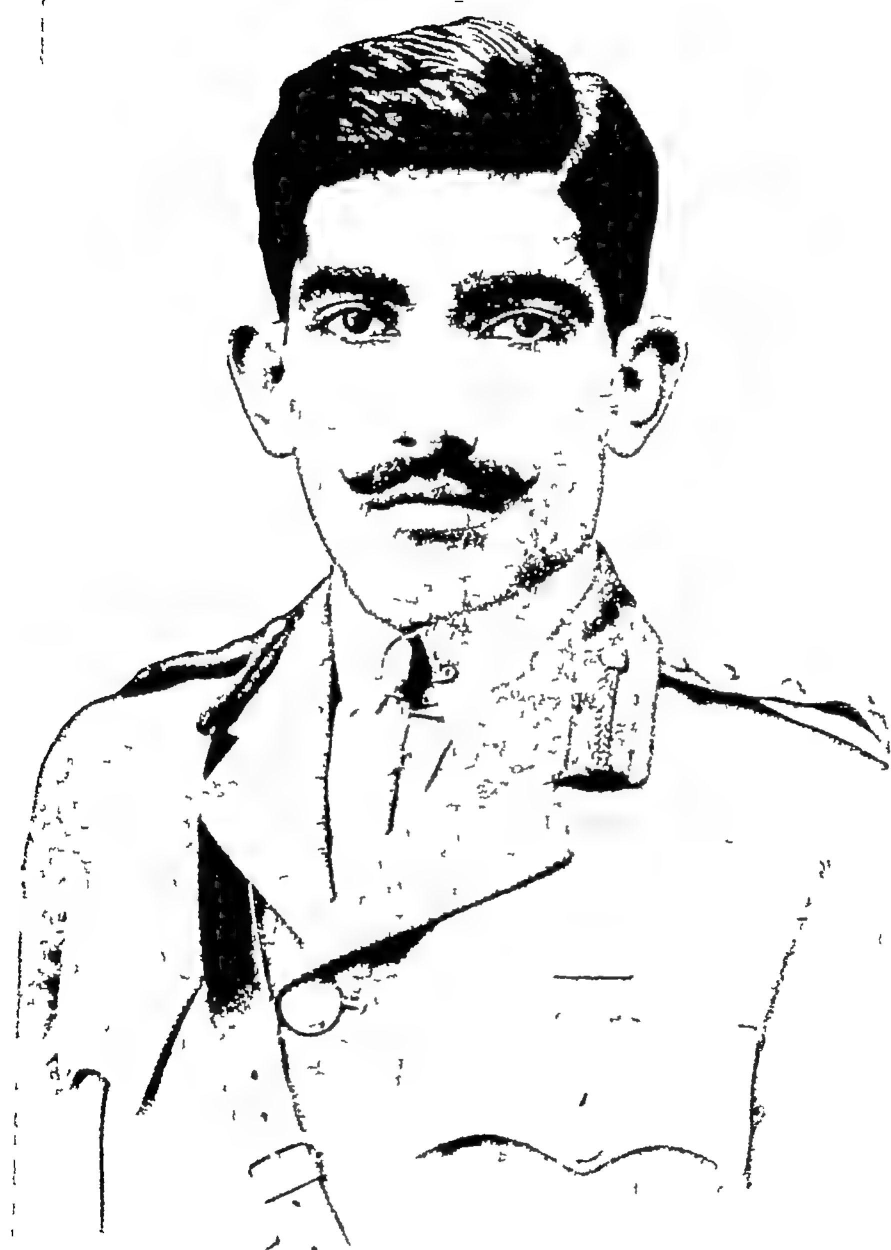
डूंगरसिंह और गंगासिंहजी—हुए। गुलाबसिंह वि० सं० १९२१ ज्येष्ठ वदि १२ (ई० स० १८६४ ता० १ जून) बुधवार को बाल्यावस्था में ही मर गया। लालसिंह ने महाराजा रत्नसिंह और सरदारसिंह से सदा मेल रक्खा, जिससे वे दोनों महीपाल उससे प्रसन्न रहे और वे उसकी सलाहों को ग्रहण भी करते थे। जब महाराजा सरदारसिंह का एक मात्र कुंवर तख़्तसिंह वि० सं० १९२४ पौष सुदि ९ (ई० स० १८६८ ता० ४ जनवरी) को परलोक सिधारा तो उक्त महाराजा को पुत्र शोक और अपने निःसंतान होने का बड़ा दुःख हुआ। फिर उसने महाराज लालसिंह के पुत्र डूंगरसिंह को अपने पास रखकर उसको शिक्षा आदि दिलाना आरम्भ किया। ऐसा प्रसिद्ध है कि महाराजा सरदारसिंह का विचार उपर्युक्त डूंगरसिंह को अपना उत्तराधिकारी निर्वाचित करने का था; किन्तु वह इस विचार को कार्यरूप में परिणत करने के पूर्व ही वि० सं० १९२९ (ई० स० १८७२) में स्वर्गवासी हो गया। इसलिए वहां उत्तराधिकार के लिए झगड़ा खड़ा हो गया। उस समय डूंगरसिंह के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति भी दावेदार थे, किन्तु डूंगरसिंह वहां का वास्तविक हक़दार था। भूतपूर्व महाराजा सरदारसिंह की राजमहिषी और सब प्रमुख सरदार भी उस (डूंगरसिंह) को ही बीकानेर का स्वामी बनाना चाहते थे। फलतः अंग्रेज़-सरकार ने पूरी छानबीन कर उसको ही महाराजा सरदारसिंह का उत्तराधिकारी स्वीकार किया। उसने राज्याधिकार पाने पर बीकानेर राज्य में कई सुधार किये और शासन-कार्य के लिए कौंसिल की स्थापना की। उसका सभापति महाराज लालसिंह नियत किया गया, जिसने बड़ी योग्यतापूर्वक अपने दायित्व का पालन किया।

पंद्रह वर्ष राज्य करने के उपरान्त महाराजा डूंगरसिंह का वि० सं० १९४४ (ई० स० १८८७) में स्वर्गवास हुआ। उस (डूंगरसिंह) के कोई संतान न थी, इसलिए उसने अपनी विद्यमानता में अपने छोटे भाई गंगासिंहजी (लालसिंह का तृतीय पुत्र) को अपना उत्तराधिकारी नियत कर लिया था। महाराजा डूंगरसिंह के क्रमानुयायी गंगासिंहजी हुए,

जो बीकानेर के वर्तमान नरेश हैं। इसके थोड़े दिनों बाद महाराज लालसिंह आश्विन वदि १४ (ता० १६ सितंबर) को परलोक सिधारा। उसकी कीर्ति चिरस्थायी रखने के लिए स्वर्गीय महाराजा डूंगरसिंह ने शिवबाड़ी के सुन्दर स्थान में लालेश्वर का मनोहर शिवालय और वर्तमान महाराजा साहब ने लाखों रुपये की लागत से बीकानेर में लालगढ़ महल की विशाल इमारत बनवाकर वहां उसकी प्रस्तर-प्रतिमा स्थापित की, जिसका उद्घाटन भारत के भूतपूर्व वाइसरॉय लॉर्ड हार्डिंज ने किया था।

लालसिंह के दोनों पुत्र दत्तक चले जाने से उसका वारिस कोई न रहा। उसका ठिकाना स्थिर रह सके, अतएव उसकी पत्नी चंद्रावत (जो वर्तमान बीकानेर नरेश की सगी माता थी) के स्नेह और आग्रहवश महाराजा सर गंगासिंहजी ने अपने छोटे महाराजकुमार विजयसिंह को, जिसका जन्म वि० सं० १९६६ चैत्र सुदि ८ (ई० स० १९०९ ता० २९ मार्च) को हुआ था, महाराज लालसिंह के नाम पर माता चंद्रावत को दत्तक दे दिया। चंद्रावत की अंतिम अभिलाषा सफल हो जाने पर वह भी वि० सं० १९६६ मार्गशीर्ष सुदि १ (ई० स० १९०९ ता० १३ दिसंबर) को परलोक सिधारी। इस अवसर पर महाराजा ने अपनी माता के स्वर्गवास का अत्यधिक शोक माना और स्वयं सम्राट् जॉर्ज पञ्चम ने, जो उस समय युवराज था, समवेदना प्रकट की। स्वर्गवासी महाराजा डूंगरसिंह के समय में लालसिंह की जागीर आदि में वृद्धि हो गई थी; परंतु फिर भी वह उसके पद के योग्य न थी। अतएव महाराजा साहब ने विजयसिंह के पद के योग्य लगभग एक लाख रुपये वार्षिक आय की जागीर निकाल दी, जिसमें अनूपगढ़ मुख्य है। वहां का स्वामी 'अनूपगढ़ का महाराज' कहलाता है तथा बीकानेर में लालगढ़ के महलों के समीप ही 'विजय भवन' नामक उसका पृथक् महल है।

महाराजकुमार विजयसिंह, जो बड़ा पितृभक्त, दृढ़चित्त, कार्यकुशल और होनहार था, इस वैभव को अधिक काल तक न भोग सका और वि० सं० १९८८ माघ सुदि ५ (ई० स० १९३२ ता० ११ फ़रवरी) को परलोक



महाराजकुमार विजयसिंह [स्वर्गीय]

सिधारा[1]। उसके केवल तीन पुत्रियां ही हुईं और पुत्र न था, इसलिए महाराजा साहब ने अपने छोटे पौत्र (युवराज शार्दूलसिंह के दूसरे कुँवर) भंवर अमरसिंह को उसका दत्तक रख दिया।

भंवर अमरसिंह का जन्म वि० सं० १९८२ पौष वदि ११ (ई० स० १९२५ ता० ११ दिसंबर) शुक्रवार को हुआ। वह सुशील, चतुर, मृदुभाषी, हँसमुख और अच्छे स्वभाववाला है। उसके स्वभाव में हास्यप्रियता और विनोद की मात्रा भी पाई जाती है, जिससे चाहे कैसा ही शुष्क स्वभाव का मनुष्य क्यों न हो, उससे मिलने पर प्रसन्न हुए बिना नहीं रहता। धर्म में उसकी पूरी रुचि है। अच्छा घुड़सवार होने के साथ ही उसे टेनिस का शौक़ है। महाराजा साहब उसको बीकानेर में ही रखकर योग्य शिक्षकों-द्वारा भंवर करणीसिंह के साथ शिक्षा दिला रहे हैं। शिक्षा में उसने अच्छी उन्नति की है और आशा है कि योग्य वयस्क होने पर वह अपने कुल-गौरव में वृद्धि करेगा।

खारड़ा

इस ठिकाने के राजवी-सरदार की उपाधि 'महाराज' है। राज्य की तरफ़ से उसको 'महाराज श्री ....बहादुर' लिखा जाता है और ताज़ीम का सम्मान प्राप्त है।

महाराजा गजसिंह का तीसरा कुँवर छत्रसिंह था, जिसका पुत्र दलेलसिंह हुआ। उस (दलेलसिंह) के चार पुत्र—शक्तिसिंह, मदनसिंह, खड्गसिंह और खुमाणसिंह—हुए। महाराजा सरदारसिंह का देहांत होने पर शक्तिसिंह के वंशज बीकानेर के अधीश हुए। मदनसिंह का पुत्र खेतसिंह था, जिसका जन्म वि० सं० १८८८ भाद्रपद वदि ३० (ई० स० १८३१ ता० ६ सितंबर) को हुआ। पहले उसको सब खर्च राज्य से मिलता था, फिर हाथ-खर्च के लिए वि० सं० १९०५ (ई० स० १८४८) में महाराजा रत्नसिंह ने

(१) वंशक्रम—[१] मदनसिंह [२] खेतसिंह और [३] भैरूंसिंह।

हाडलां गांव, वि० सं० १९१२ (ई० स० १८५५) में महाराजा सरदारसिंह ने खारड़ा गांव और महाराजा डूंगरसिंह ने उसको बीरोर गांव बख्शा। वि० सं० १९४७ मार्गशीर्ष वदि १३ (ई० स० १८९० ता० १० दिसंबर) को खेतसिंह का देहांत हुआ । उसका पुत्र महाराज सर भैरूंसिंह बहादुर खारड़ा का वर्तमान स्वामी है।

महाराज सर भैरूंसिंह का जन्म वि० सं० १९३६ प्रथम आश्विन वदि १४ (ई० स० १८७९ ता० १५ सितंबर) को हुआ। उसकी प्रारंभिक शिक्षा बीकानेर मे ही हुई। फिर वह उच्च शिक्षा के लिए अजमेर के मेयो कॉलेज में भेजा गया, जहां उसने ई० स० १८९५ के सितंबर (वि० सं० १९५२ आश्विन) मास तक शिक्षा प्राप्त की। तदनन्तर वह ई० स० १८९६ (वि० सं० १९५३) में महाराजा साहब के साथ भारत के विभिन्न नगरों में भ्रमणार्थ गया। इसके दो वर्ष पीछे वि० सं० १९५५ (ई० स० १८९८) में जब अंग्रेज़ सरकार की ओर से सर ऑर्थर मार्टिंडल ने बीकानेर जाकर महाराजा साहब को शासनसंबंधी अधिकार सौंपे, तब महाराजा ने उस(भैरूंसिंह)को स्टेट कौंसिल (राज्यसभा) का सदस्य नियत किया। तत्पश्चात् समय-समय पर महाराजा साहब का पर्सनल सेक्रेटरी, कौंसिल का सीनियर (मुख्य) मेम्बर, महक्मा ख़ास में पोलिटिकल (राजनैतिक) और फ़ॉरेन (वैदेशिक) विभाग का सेक्रेटरी एवं स्टेट कौंसिल तथा केबिनेट का उपसभापति (Vice President) रहकर उसने अच्छा कार्य किया। अपनी रजत जयन्ती के अवसर पर वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में महाराजा साहब ने उसको अपना पर्सनल ए० डी० सी० नियत किया। इसी अवसर पर उसको ज़ाती तौर पर 'बहादुर' की उपाधि और लेफ़्टेनेन्ट कर्नल का ख़िताब भी दिया गया।

निकट संबंधियों में मुख्य तथा योग्य और कुशल कार्यकर्ता होने के कारण महाराजा साहब ने अपनी वर्षगांठ के अवसर पर वि० सं० १९६३ आश्विन सुदि १० (ई० स० १९०६ ता० २७ सितंबर) को उसे जयसिंहदेसर गांव तथा वि० सं० १९७५ आश्विन सुदि १०



कर्नल महाराजश्री सर भैरूसिंह बहादुर
के. सी. एस. आई., सी. एस. आई. [खारड़ा]

(ई० स० १६१८ ता० १५ अक्टोबर) को तेजरासर गांव और प्रदान किये। वि० सं० १६६८ (ई० स० १६११) में सम्राट् जॉर्ज पञ्चम के राज्याभिषेक-उत्सव में सम्मिलित होने के लिए जब महाराजा साहब लंडन गये तब अपनी अनुपस्थिति में राज्यकार्य सुचारुरूप से चलाने के लिए इन्होंने उक्त महाराज को पूरे अधिकारों से राज्य-सभा का सभापति नियत किया। अंग्रेज़ सरकार ने भी उसे ई० स० १६०६ (वि० सं० १६६५) के नववर्षारंभ पर सी० एस० आई० और ई० स० १६१६ (वि० सं० १६७२) के नववर्षारंभ पर के० सी० एस० आई० के उच्च सम्मान प्रदान किये। वि० सं० १६७४ में महाराजा साहब ने उसको बीकानेर की सेना में कर्नल का पद दिया। वि० सं० १६६१ (ई० स० १६३४) में इन्होंने उसको स्वर्ण की चपरास रखने की प्रतिष्ठा प्रदानकर 'बहादुर' की उपाधि वंशपरंपरा के लिए दे दी। उसी वर्ष रामप्रसाद दुबे ने बीकानेर के प्रधानमंत्री पद से अवकाश ग्रहण किया, तब उसके स्थान पर ता० ३१ अक्टोबर (कार्तिक वदि ६) को महाराज सर भैरूंसिंह नियत किया गया। इस पद का कार्य डेढ़ वर्ष तक करने के बाद स्वास्थ्य ठीक न होने से ई० स० १६३६ ता० १ फ़रवरी (वि० सं० १६६२ माघ सुदि ६) को उसने इस्तीफ़ा दे दिया। इस समय वह 'वाल्टर-कृत राजपूत हितकारिणी-सभा' का सभापति है। सार्व-जनिक कार्यों में उसकी अभिरुचि होने से बीकानेर की कई संस्थाओं ने कई बार उसको सभापति बनाकर सम्मानित किया है। उसको सम्राट् के राज्याभिषेक एवं जुबिली आदि के भी कई पदक मिले हैं।

उसके दो पुत्र अजीतसिंह और अभयसिंह हुए। उनमें से अभयसिंह का बाल्यकाल में ही देहांत हो गया। कुंवर अजीतसिंह का जन्म वि० सं० १६७४ श्रावण सुदि ११ (ई० स० १६१७ ता० ३० जुलाई) मंगलवार को हुआ। उसने वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त, उच्चशिक्षा के लिए अजमेर के मेयो कॉलेज में प्रवेश किया। वहां की डिप्लोमा परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद वह बीकानेर में एफ़० ए० (Intermediate) की परीक्षा पा रहा है। वि० सं० १६६३

(ई० स० १९३६) में उसका विवाह मेवाड़ के बोहेड़े के रावत नाहरसिंह शक्तावत के पुत्र नारायणसिंह की पुत्री से हुआ है।

महाराज सर भैरूंसिंह निरभिमानी, मितव्ययी, विनम्र और सरल व्यक्ति है। उसको काव्य से अनुराग है। उसका प्रथम विवाह भवाद (जोधपुर राज्य) के तंवर ठाकुर शिवनाथसिंह की पुत्री से वि० सं० १९४७ (ई० स० १८९०) में, द्वितीय विरसलपुर (जैसलमेर राज्य) के भाटी राव मोतीसिंह की भतीजी से वि० सं० १९५८ (ई० स० १९०२) में, तृतीय परेवड़ा (बीकानेर राज्य) के भाटी ठाकुर कानसिंह की बहन से वि० सं० १९७३ (ई० स० १९१६) में और चतुर्थ घड़ियाला (बीकानेर के राज्य) के भाटी रावल दीपसिंह की पुत्री से हुआ, जिनमें से तंवराणी के गर्भ से चंदनकुंवरी का जन्म हुआ, जो भदावर के स्वामी महेन्द्रमानसिंह को व्याही गई। इसी प्रकार विरसलपुर की भटियाणी के उदर से शुभकुंवरी का जन्म हुआ, जो झलाय (जयपुर राज्य) के वर्तमान ठाकुर गोवर्धनसिंह को व्याही गई है। बीकानेर राज्य में उक्त महाराज का कुंवर 'हीरोजी' कहलाता है और पत्नियां 'राणी' पदवी से संबोधित की जाती हैं[1]।

---

(१) ड्योढ़ीवाले राजवियों की पंक्ति में महाराज भैरूंसिंह के पश्चात्, सैलाना राज्य (सेंट्रल इंडिया) के विद्यानुरागी स्वर्गीय राजा जसवंतसिह के दूसरे पुत्र महाराज मान्धातासिंह (जो बीकानेर राज्य की स्टेट कौंसिल का वाइस प्रेसिडेन्ट है) की बैठक है और उसको वही सम्मान प्राप्त है, जो महाराज भैरूंसिंह को है एवं उसकी प्रतिष्ठा महाराजा साहब अनूपगढ़, खारबा और रिड़ी के समान करते हैं। महाराज मान्धातासिंह विद्वान्, इतिहासप्रेमी, गुणग्राही, प्रबंधकुशल और पूर्ण राजनीतिज्ञ है। उसको महाराजा साहब ने बीकानेर की सेना का ऑनरेरी मेजर नियतकर 'बहादुर' का ख़िताब प्रदान किया है एवं उसकी उत्तम सेवाओं से प्रेरित होकर अपनी ५९ वीं वर्षगांठ पर जागीर देने की घोषणा की है। उसकी पत्नियां भी 'राणी' कही जाती हैं। इसी प्रकार महाजन, बीदासर और सांडवा के सरदारों (जिनकी उपाधि 'राजा' है) की पत्नियां भी 'राणी' कहलाती हैं।



मेजर महाराजश्री मान्धातासिंह बहादुर

रिड़ी

महाराजा गजसिंह के तीसरे कुंवर छत्रसिंह के पुत्र दलेलसिंह के तीसरे बेटे खड्गसिंह[1] के मुकनसिंह और तख़्तसिंह नामक दो पुत्र थे, जिनमें से तख़्तसिंह निःसंतान था। मुकनसिंह का तृतीय पुत्र नाहरसिंह था, जिसके पुत्र जगमालसिंह, नारायणसिंह और पृथ्वीसिंह हुए। उनकी जागीर में पहले खिलरिया गांव था। महाराजा सर गंगासिंहजी ने उसके अतिरिक्त जगमालसिंह को रिड़ी गांव और प्रदान किया। वि० सं० १९८७ (ई० स० १९३०) में जगमालसिंह[2] की मृत्यु होने पर उसका पुत्र तेजसिंह रिड़ी का स्वामी हुआ, जो वहां का वर्तमान सरदार है। उसका जन्म वि० सं० १९६९ वैशाख वदि ५ (ई० स० १९१२ ता० ६ अप्रेल) को हुआ। उसने बीकानेर के वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल में शिक्षा पाई है। उसकी उपाधि 'महाराज' है और राज्य से उसको 'महाराज श्री.................. साहिब' लिखा जाता है।

महाराज तेजसिंह के एक पुत्र और दो भाई चंद्रसिंह तथा गोविंदसिंह हैं।

---

(१) वंशक्रम—[१] खड्गसिंह [२] मुकनसिंह [३] नाहरसिंह [४] जगमालसिंह और [५] तेजसिंह।

(२) महाराज जगमालसिंह सरलचित्त, मनस्वी, साहित्यानुरागी और विवेकशील व्यक्ति था। उसने महाराज पृथ्वीराज-कृत 'वेलि क्रिसन रुकमणी री' नामक अद्वितीय डिंगल-ग्रंथ की टीका की थी, जिसको ठाकुर रामसिंह एम. ए. और पंडित सूर्यकरण पारीक (स्वर्गीय)-द्वारा संपादन करवाकर हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग ने ई० स० १९३१ में प्रकाशित किया है।

हवेलीवाले राजवी

वनीसर

वनीसर के राजवी, महाराजा गजसिंह के कुंवर सुलतानसिंह के वंशधर हैं। राज्य से उनको 'राजवी श्री ....हवेलीवाला' लिखा जाता है।

महाराजा गजसिंह का एक विवाह सिरोही के देवड़ा चौहान राव मानसिंह (उम्मेदसिंह) की पुत्री गजकुंवरी (गज्यादे) से वि० सं० १८१० (ई० स० १७५३) में हुआ था[1], जिसके उदर से कुंवर सुलतानसिंह का जन्म हुआ। सुलतानसिंह के बड़े और योग्य होने पर महाराजा ने उसको निर्वाह के लिए बारह गांव जागीर में दिये। उक्त महाराजा अपने ज्येष्ठ पुत्र महाराजकुमार राजसिंह से असंतुष्ट हो गया, जिससे वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में वह (राजसिंह) भयभीत होकर देशणोक चला

---

(१) मेरा, सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २६८।

बीकानेर राज्य के सिंढायच दयालदास की ख्यात (जिल्द २, पत्र ७६) में उस(देवड़ी राणी)का नाम अखैकुंवरी लिखा है और यह भी लिखा है कि जब महाराजा गजसिंह जोधपुर के महाराजा विजयसिंह की सहायतार्थ, वहां के पदच्युत महाराजा रामसिंह और उस(रामसिंह)के सहायक जयआपा सिंधिया के मुक़ाबले को गया हुआ था, तब सिरोही से मेड़ते के मुक़ाम पर डोला आया और वहीं मिर्ज़ा के बाग़ में यह विवाह हुआ। 'देशदर्पण' से स्पष्ट है कि यह विवाह वि० सं० १८१० के चैत्र मास (ई० स० १७५४ मार्च) में हुआ था।

ख्यातों में राणियों के नामों का मिलान करने पर कभी-कभी उनमें अन्तर भी पाया जाता है, जिसका कारण यही जान पड़ता है कि विवाह हो जाने पर जब राणी पति-गृह में जाती, तब उसका नाम कभी-कभी बदल भी दिया जाता था। देवड़ी राणी का नाम महाराजा से मिलता हुआ था, इसलिए यह संभव है कि विवाह होने पर महाराजा गजसिंह ने उसका नाम पलट दिया हो। ऐसे उदाहरण राजपूताना के अन्य राज्यों के इतिहास में तो कहीं-कहीं, पर जोधपुर राज्य के इतिहास में अधिक मिलते हैं।

गया, जहां से वह महाराजा विजयसिंह के पास जोधपुर गया। चार वर्ष पीछे महाराजा के विश्वास दिलाने पर वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) में वह पीछा बीकानेर गया, परन्तु महाराजा और उसकी सफ़ाई नहीं हुई और कुछ दिनों के पीछे महाराजा ने अपने छोटे कुंवर सुलतानसिंह, अजबसिंह और मोहकमसिंह को उसको बंदी कर लेने की आज्ञा दी, जिसपर उन्होंने देवीद्वारे के मार्ग से अन्तःपुर में जाते समय उसको बन्दी कर लिया।

वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में महाराजा गजसिंह रुग्ण हो गया और उसको अपना अवसान निकट जान पड़ा, तब उसने राजसिंह को बुलाकर बहुत कुछ नसीहत की और अपने भाइयों से, जिन्होंने उसको बंदी किया था, किसी प्रकार से वैर या बदला न लेने की हिदायत की। तदनन्तर चैत्र सुदि ६ (ता० २५ मार्च) को महाराजा गजसिंह का परलोकवास हो गया। दाहसंस्कार के पीछे सुलतानसिंह, राजसिंह के डर से बीकानेर छोड़कर देशणोक चला गया। बारह दिन बीतने पर राजसिंह बीकानेर के सिंहासन पर बैठा, परंतु गद्दीनशीनी के कुछ दिन बाद ही वह स्वर्ग सिधारा और उसका बालक पुत्र प्रतापसिंह वहां का स्वामी हुआ। उसकी आयु उस समय केवल छः वर्ष की थी। वह (प्रतापसिंह) भी केवल चार मास ही राज्य करने पाया और परलोक सिधारा। तब महाराजा गजसिंह के अन्य छोटे पुत्रों में से महाराजा सूरतसिंह (प्रतापसिंह का पितृव्य और राजसिंह का छोटा भाई), जो गजसिंह की मृत्यु के बाद से ही बीकानेर राज्य का कार्य संभालता था और प्रभावशाली था, सिंहासनारूढ़ हुआ।

इस प्रकार बीकानेर में थोड़े ही समय में दो पीढ़ियां समाप्त हो जाने और सूरतसिंह के राजगद्दी पर बैठ जाने से निराश होकर सुलतानसिंह देशणोक से जोधपुर चला गया। इसपर महाराजा विजयसिंह ने उसको अपने यहां रक्खा, किन्तु वहां से सूरतसिंह के लिए टीका (राज्यतिलक) बीकानेर भेज दिया गया। जब वहां से उसको सहायता मिलने की कुछ भी

आशा न दीख पड़ी तो वह उदयपुर चला गया, जहां महाराणा भीमसिंह ने उसको बड़े सम्मान से रक्खा। उदयपुर में रहते समय सुलतानसिंह ने अपनी पुत्री पद्मकुंवरी का विवाह एकलिङ्गजी में वि० सं० १८५६ (ई० स० १७६६) में उक्त महाराणा से कर दिया[1]। पद्मकुंवरी ने अपने गुरु श्रवणनाथ[2] के उपदेश से शिवभक्ति में रत रहकर उदयपुर में पीछोला झील के पश्चिमी तट पर अमरकुंड पर अपने पति और अपने नाम से भीमपद्मेश्वर नामक शिवालय बनवाकर वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में उसकी प्रतिष्ठा की। उस समय वहां स्वर्ण और रौप्य के तुलादान किये गये[3]।

---

(१) फिर छपन्ना समत लगि, आय भूप सुरतांन।
पदमकुंवरि ताकी सुता, दीनी भीम निदान॥
...एकलिंगपुर मांड हो, रचि सुरतान अभंग।
जान उदयपुर तें चढ़ी, भीम उछह जुत अंग॥

कृष्णाकवि, भीमविलास; पृ० ११३।

'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' में यह विवाह नाथद्वारे में होना लिखा है; परन्तु 'भीमविलास' में, जो महाराणा भीमसिंह के समय में बना था, यह विवाह एकलिंगजी में होना लिखा है, जो अधिक विश्वसनीय है।

(२) श्रवणनाथमहापुरुषार्पिते
नृपतिरत्नसुकचित्तऊमाधवे॥
शुभशिवालयनिर्मितये स्वयं
स्वमहिषीगुरुकीर्तिमथाकरोत्॥ २९॥

उदयपुर की भीमपद्मेश्वर की प्रशस्ति।

[वीरविनोद; भाग २, जिल्द ४, पृ० १७८२ (छपी हुई पुस्तक)]

(३) तुलामारूढ़ा सा क्षितिपतिमता पट्टमहिषी
सुवर्णैरूप्यैर्वा निखिलजनताश्चर्यजनिकां।
ततो द्रव्यै भव्यैरकृत सुकृतान्नैः पुरुरसैः
सुतृप्तं तद्दत्तं द्विजचतुरशीतिव्रजमिदम्॥ ३३॥

वही, उदयपुर की भीमपद्मेश्वर की प्रशस्ति।

कुछ ख्यातों में ऐसा भी लिखा मिलता है कि महाराज सुलतानसिंह बूंदी तथा कोटा के नरेशों के पास भी जाकर रहा था। कर्नल टॉड का कथन है कि जयपुर में रहते समय उस (सुलतानसिंह) ने और अजबसिंह ने भटनेर जाकर महाराजा सूरतसिंह के विरोधी सरदारों और भट्टियों को अपनी तरफ़ मिला लिया, परन्तु उनमें से कई ने उक्त महाराजा के भय तथा लालच के वशीभूत हो उनका साथ नहीं दिया। महाराजा की सेना से बीगोर नामक स्थान पर उनका मुक़ाबला हुआ, जिसमें उनकी हार हुई। महाराजा ने इस विजय की स्मृति में वहां फतहगढ़ नामक क़िला बनवाया।

सुलतानसिंह के दो पुत्र गुमानसिंह[1] और अखैसिंह थे, जो पिता की मृत्यु के कुछ वर्षों बाद बीकानेर चले गये। इसपर महाराजा रत्नसिंह ने गुमानसिंह को वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) में बनीसर और महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १९१६ (ई० स० १८५९) में नाभासर प्रदान किये। उन्हीं दिनों अखैसिंह को भी आलसर प्रदान किया गया। गुमानसिंह का पुत्र पन्नेसिंह था। पन्नेसिंह तक सुलतानसिंह के वंशधर 'महाराज' कहलाते रहे। पन्नेसिंह के चार पुत्र—हम्मीरसिंह, बलवंतसिंह, जवानीसिंह और जयसिंह—हुए। उनमें से बलवंतसिंह निःसंतान रहा एवं जवानीसिंह महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर अजबसिंह[2] के पौत्र और फ़तेहसिंह के पुत्र

---

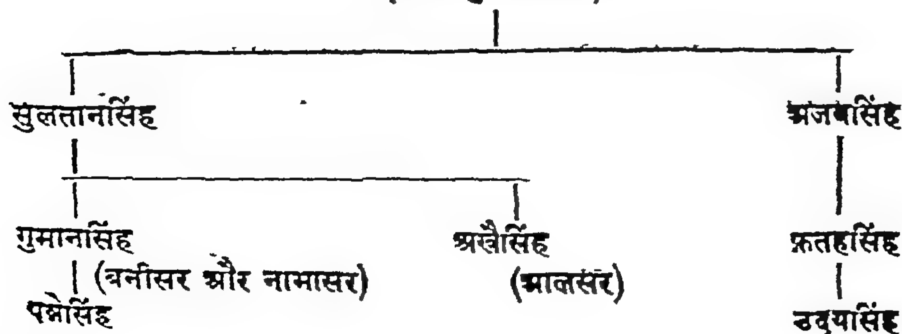
(१) वंशक्रम—[१] सुलतानसिंह [२] गुमानसिंह [३] पन्नेसिंह [४] हंमीरसिंह [५] शेरसिंह [६] गुलाबसिंह और [७] अभयसिंह।

(२) महाराजा गजसिंह का परलोकवास हो जाने के पीछे अजबसिंह बीकानेर में न रहा और सिंध की तरफ़ चला गया। वहां से वह जोधपुर गया। तब उसको महाराजा विजयसिंह ने लोहावट जागीर में देकर अपने यहां रक्खा। जोधपुर राज्य में रहते समय उसके द्वारा बीकानेर राज्य में बिगाड़ होता था, इसलिए बीकानेर से उसका दमन करने के लिए सेना रवाना हुई, तब वह वहां से जयपुर चला गया। जयपुर के महाराजा ने उसको जागीर देकर आदरपूर्वक रक्खा। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसकी जागीर कम होकर उसके पुत्र फ़तहसिंह के केवल थोड़ासा भाग बहाल रहा। फ़तहसिंह का

उदयसिंह के, जो जयपुर राज्य में जागीर रखता था, गोद गया। इस कारण हम्मीरसिंह का बनीसर पर और उसके चतुर्थ भाई जयसिंह का नाभासर पर अधिकार रहा। हम्मीरसिंह का पुत्र शेरसिंह संतानहीन था, इसलिए उसके पितृव्य जयसिंह का दूसरा पुत्र गुलाबसिंह, जिसको अजबसिंह की शाखा मे जवानीसिंह के पुत्र प्रतापसिंह ने दत्तक लिया था, उस(शेरसिंह)का उत्तराधिकारी हुआ। गुलाबसिंह का पुत्र अभयसिंह बनीसर का वर्तमान

उत्तराधिकारी उसका पुत्र उदयसिंह हुआ, किन्तु वह सन्तानहीन था। अतएव अजबसिंह के भ्राता सुलतानसिंह के पौत्र पन्नेसिंह का तीसरा पुत्र जवानीसिंह बनीसर (बीकानेर राज्य) से गोद जाकर उस(उदयसिंह)का क्रमानुयायी हुआ। इसको जयपुर राज्य ने स्वीकार न किया। फलत- अजबसिंह के वंशधरों के पास जयपुर राज्य में जो जागीर थी, वह खालसा हो गई और जवानीसिंह के लिए केवल एक गांव रख दिया गया। जवानीसिंह का पुत्र प्रतापसिंह भी नि सन्तान था, इसलिए फिर बनीसर की शाखा नाभासर से जवानीसिंह के लघु भ्राता जयसिंह का दूसरा पुत्र गुलाबसिंह प्रतापसिंह के गोद गया। गुलाबसिंह का पुत्र अभयसिंह है, जिसके पास जयपुर राज्य की ओर से चाटसू परगने में श्रीनिवासपुरा गांव, जो जवानीसिंह को दिया गया था, विद्यमान है। बीकानेर राज्य ने पन्नेसिंह के ज्येष्ठ पुत्र हंमीरसिंह के बेटे शेरसिंह के कोई सन्तान न होने से बनीसर की जागीर भी गुलाबसिंह के नाम पर बहाल कर दी थी। वह भी अभयसिंह के अधिकार में है।

(१) उदयसिंह और जवानीसिंह में निकट का क्या सम्बन्ध था और फिर दोनों शाखाएं किस प्रकार एक हो गईं, उसको स्पष्ट करने के लिए यहां पर उक्त दोनों शाखाओं का सम्मिलित वंश-वृक्ष दिया जाता है—

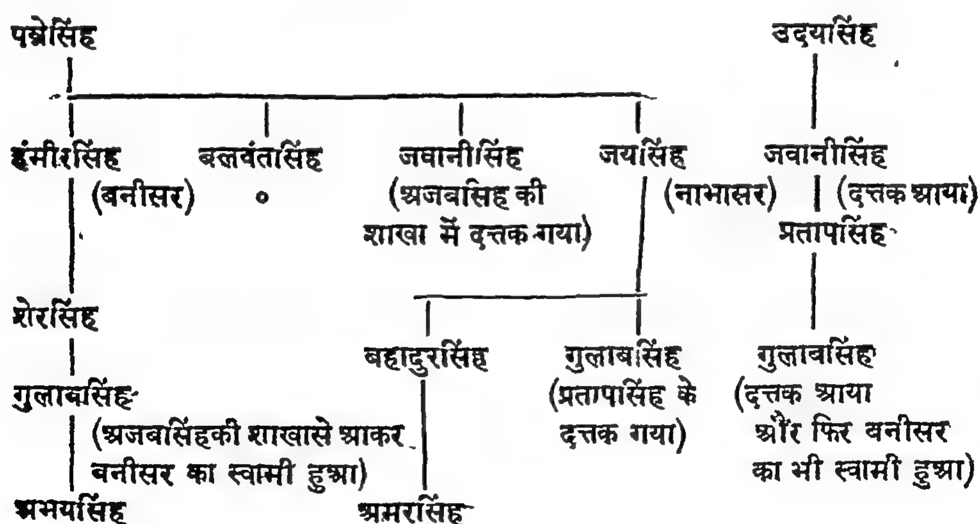


राजवी है, जो सुलतानसिंह के वंशजों में प्रमुख है। उसका जन्म वि० सं० १९७४ माघ वदि १ (ई० स० १९१८ ता० २८ जनवरी) को हुआ और वह बीकानेर के 'वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल' में शिक्षा पा रहा है।

नाभासर

नाभासर के स्वामी महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर महाराज सुलतानसिंह के पौत्र और गुमानसिंह के पुत्र पन्नेसिंह[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि भी राजवी है और राज्य से उनको 'राजवी श्री ········ हवेली-वाला' लिखा जाता है।

महाराज पन्नेसिंह का चतुर्थ पुत्र जयसिंह था, जिसका नाभासर पर अधिकार रहा। उस(जयसिंह)के दो पुत्र—बहादुरसिंह और गुलाबसिंह—हुए। बहादुरसिंह का पुत्र अमरसिंह वहां का वर्तमान राजवी है। उसका जन्म वि० सं० १९६६ माघ वदि ४ (ई० स० १९१० ता० २९ जनवरी) को हुआ।



'देशदर्पण' में अजबसिंह के पौत्र और फ़तहसिंह के पुत्र का नाम दुलहसिंह दिया है; किन्तु मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' एवं श्रीराम मीरमुंशी, बीकानेर-द्वारा-रचित 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' में दिये हुए वंशवृक्षों में तथा अन्य स्थलों पर फ़तहसिंह के पुत्र का नाम उदयसिंह ही दिया है।

(१) वंशक्रम—[१] जयसिंह [२] बहादुरसिंह और [३] अमरसिंह।

बीकानेर राज्य के राजवी सरदारों में वही सर्वप्रथम व्यक्ति है, जिसने अंग्रेज़ी भाषा में युनिवर्सिटी की बी० ए० तथा एल-एल० बी० की उच्च परिक्षाएं पास की हैं। वह कुछ समय तक वर्तमान महाराजा साहब के पर्सनल स्टॉफ़ में भी रहा और इस समय रतनगढ़ में मुंसिफ़ है।

गुलाबसिंह पहले अजबसिंह की शाखा में अपने पिता के बड़े भाई जवानीसिंह का (जो फ़तहसिंह के पुत्र उदयसिंह का उत्तराधिकारी हुआ था) दत्तक रहा और फिर बनीसर के राजवी शेरसिंह का निःसंतान देहांत हो जाने से वह उसका क्रमानुयायी हुआ, जिसका वर्णन बनीसर के प्रसङ्ग में किया गया है।

आलसर

आलसर के स्वामी, महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर सुलतानसिंह के दूसरे कुंवर अखैसिंह[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि भी राजवी है और वे भी हवेलीवाले राजवी कहलाते हैं तथा राज्य में उनका स्थान बनीसर तथा नाभासर के समान है।

अखैसिंह के बीकानेर में चले जाने पर महाराजा रत्नसिंह ने उसके निर्वाह की व्यवस्था कर दी और उसे आलसर प्रदान किया। अखैसिंह के तीन पुत्र—दुलहसिंह, भीमसिंह और शिवनाथसिंह—हुए। दुलहसिंह के चार पुत्र—नाथूसिंह, भैरोंसिंह, रावतसिंह और खुशहालसिंह—हुए। उनमें से रावतसिंह अपने चाचा भीमसिंह का उत्तराधिकारी हुआ।

नाथूसिंह के चार पुत्र—गोपालसिंह, तेजसिंह, हीरसिंह और चांदसिंह—हुए। भैरोंसिंह के करणीसिंह, तख़्तसिंह, रामलालसिंह और गुलाबसिंह हुए। तख़्तसिंह मोहकमसिंह (महाराजा गजसिंह का छोटा पुत्र) की शाखा में दत्तक गया है। करणीसिंह का पुत्र भोपालसिंह, रामलालसिंह का नंदसिंह और गुलाबसिंह के दो पुत्र—बजरंगसिंह तथा मेघसिंह—हैं।

---

(१) वंशक्रम—[१] अखैसिंह [२] दुलहसिंह [३] नाथूसिंह और [४] गोपालसिंह।

दुलहसिंह के तीसरे भाई शिवनाथसिंह के आसूसिंह नामक पुत्र हुआ। आसूसिंह के चार पुत्र—बैरिशाल, सूरजमलसिंह, अगरसिंह और रिड़मलसिंह—हुए। बैरिशाल का बेटा देवीसिंह है। आलसर के उपर्युक्त राजवियों में गोपालसिंह प्रमुख है।

सांईसर

सांईसर के राजवी महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर मोहकमसिंह[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि राजवी है और राज्य से उनको 'राजवी श्री ....' लिखा जाता है।

मोहकमसिंह, महाराजा गजसिंह के समय, उसकी आज्ञानुसार अपने ज्येष्ठ भ्राता राजसिंह को बंदी करने में सम्मिलित था। जब वह उक्त महाराजा की विद्यमानता में अपनी माता को पहुंचाने जैसलमेर जा रहा था, उस समय मार्ग में फलोदी के मुक़ाम पर शीतला के प्रकोप से उसकी मृत्यु हो गई[2]। उस समय उसकी स्त्री के गर्भ था, जिससे जैसलमेर में उसके पुत्र चैनसिंह का जन्म हुआ। उसकी जैसलमेर में ही परवरिश हुई। इसी बीच महाराजा गजसिंह का भी परलोकवास हो गया और राजसिंह तथा प्रतापसिंह भी थोड़े ही दिन राज्य कर स्वर्गवासी हुए। पन्द्रह वर्ष की आयु होने पर चैनसिंह जोधपुर पहुंचा। उस समय महाराजा मानसिंह वहां की गद्दी पर था। उसने उसको फलोदी परगने में मूंजासर आदि कई गांव पट्टे में दिये, जो कुछ समय बाद ख़ालसा हो गये और केवल जांबा गांव ही उसके वंशजों के बहाल रहा, जो अद्यावधि वर्तमान है।

चैनसिंह का पुत्र सरदारसिंह था। उसके प्रतापसिंह और ओनाड़सिंह

---

(१) वंशक्रम—[१] मोहकमसिंह [२] चैनसिंह [३] सरदारसिंह [४] ओनाड़सिंह [५] मोहनसिंह [६] मुकनसिंह [७] रघुनाथसिंह और [८] तख़्तसिंह।

(२) आर्य आख्यान कल्पद्रुम में लिखा है कि वह महाराजा सूरतसिंह के गद्दी बैठने के पीछे अपने भाई अजबसिंह के साथ सिंध की तरफ़ चला गया था।

नामक पुत्र हुए। ओनाड़सिंह का पुत्र मोहनसिंह, महाराजा सरदारसिंह के समय बीकानेर चला गया, तब उक्त महाराजा ने उसको सांईसर प्रदान किया। मोहनसिंह का पुत्र मुकनसिंह निःसंतान था, इसलिए मोहनसिंह के पितृव्य प्रतापसिंह का पुत्र रघुनाथसिंह, उस(मोहनसिंह)की भी संपत्ति का स्वामी हुआ, परंतु वह भी निःसंतान था, अतएव आलसर (सुलतानसिंहोत शाखा) से भैरूंसिंह का पुत्र तख़्तसिंह दत्तक जाकर उस(रघुनाथसिंह)का उत्तराधिकारी हुआ, जो वहां का वर्तमान सरदार है।

सलूंडिया

सलूंडिया के सरदार महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर देवीसिंह[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि राजवी है और राज्य से उनको 'राजवी श्री............हवेलीवाला' लिखा जाता है।

महाराजा गजसिंह के १८ कुंवरों में से देवीसिंह महाराजा सूरतसिंह के राजगद्दी बैठने के बाद तीन-चार वर्ष तक तो बीकानेर में ही रहा, पर उसके साथ मेल न रहने के कारण वह वहां से अपने छोटे भाई खुशहालसिंह[2] को लेकर देशणोक चला गया और कुछ दिनों तक वहीं रहा। फिर दोनों भाई जोधपुर पहुंचे, जहां महाराजा

---

(१) वंशक्रम—[१] देवीसिंह [२] पृथ्वीसिंह [३] शिवदानसिंह [४] करणीबख़्शसिंह [५] सुरजनसिंह और [६] प्रतापसिंह।

(२) ख़ुशहालसिंह के बीकानेर जाने पर महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८७७ (ई० स० १८२०) में लालासर और हिम्मतसर नामक दो गांव उसे जागीर में प्रदान किये। वि० सं० १९१० पौष वदि २ (ई० स० १८५३ ता० १७ दिसंबर) को ख़ुशहालसिंह की मृत्यु हुई। वह बड़ा वीर था। 'देशदर्पण' में लिखा है कि उसने बूंदी में रहते समय वहां के महाराव राजा विष्णुसिंह के कहने पर कटार से सुनहरे नाहर को मारा। उसका पुत्र मूलसिंह हुआ। मूलसिंह का पुत्र भीमसिंह और पौत्र रामकिशनसिंह था। भीमसिंह बीकानेर की स्टेट कौंसिल का सदस्य भी रहा था। उसकी मृत्यु हो जाने पर उसका पुत्र रामकिशनसिंह लालसर आदि का स्वामी हुआ, पर वह भी निःसंतान था इसलिए उसकी मृत्यु के पश्चात् उसकी जागीर राज्य में मिला दी गई।

भीमसिंह ने उनके निर्वाह के लिए जागीर निकाल दी। वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में महाराजा भीमसिंह का देहांत हो गया और जालोर से जाकर महाराज गुमानसिंह का पुत्र मानसिंह जोधपुर का स्वामी हुआ। महाराजा मानसिंह ने उनका सम्मान पूर्ववत् स्थिर रक्खा; परंतु दोनों भाई मृत महाराजा भीमसिंह के अनुवर्त्तियों में थे, इसलिए वहां न ठहरकर वे जयपुर के महाराजा जगतसिंह के पास चले गये; किंतु वहां भी उनकी न निभी। तब अलवर के रावराजा बख़्तावरसिंह ने उनको अपने यहां बुला लिया। कुछ दिनों तक अलवर में रहने के बाद वे बूंदी गये। महाराव राजा विष्णुसिंह ने उनको अपने यहां रखना चाहा; पर वे वहां न ठहरकर शाहपुरा चले गये। वहां के स्वामी राजाधिराज अमरसिंह ने उनको अपने यहां ठहराया। जब उन दोनों भाइयों के बूंदी से शाहपुरे जाकर ठहरने का समाचार उदयपुर के महाराणा भीमसिंह ने सुना तो उसने उनको उदयपुर बुला लिया।

वि० सं० १८७७ (ई० स० १८२०) में महाराणा भीमसिंह ने अपनी राजकुमारी अजबकुंवरी का विवाह बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के महाराजकुमार रत्नसिंह से किया। उस समय महाराणा ने महाराजकुमार रत्नसिंह से उन दोनों भाइयों को पुनः बीकानेर ले जाने के लिए कहा। इसपर वह उनको अपने साथ बीकानेर ले गया, जहां उसने महाराजा सूरतसिंह से निवेदन कर उनके रहने के लिए हवेलियां दिलाईं और उनकी जीविका का भी प्रबन्ध करा दिया।

वि० सं० १६०० आश्विन सुदि ५ (ई० स० १८४३ ता० २८ सितंबर) को महाराज देवीसिंह की मृत्यु हुई। उसके चार पुत्र—अजीतसिंह, पृथ्वीसिंह सालिमसिंह और रणजीतसिंह—हुए। अजीतसिंह की निःसंतान मृत्यु हुई। पृथ्वीसिंह के तीन पुत्र—शिवदानसिंह, हिम्मतसिंह और समर्थसिंह—थे। शिवदानसिंह का पुत्र करणीबख़्शसिंह और पौत्र सुरजनसिंह हुआ। सुरजनसिंह निःसंतान था, इसलिए उसके चाचा भगवंतसिंह का पुत्र प्रतापसिंह, उस (सुरजनसिंह) का उत्तराधिकारी हुआ, जो सलूंडिया का

वर्तमान सरदार है और इस समय बीकानेर के वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल में शिक्षा पा रहा है।

कुरझड़ी

कुरझड़ी के सरदार महाराजा गजसिंह के पुत्र देवीसिंह के बेटे पृथ्वीसिंह[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि राजवी है और राज्य से उनको 'राजवी श्री········हवेलीवाला' लिखा जाता है।

पृथ्वीसिंह का दूसरा पुत्र हिम्मतसिंह था, जिसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र गेनसिंह हुआ। कुरझड़ी का वर्त्तमान राजवी भौमसिंह गेनसिंह का पुत्र है।

बिलनियासर

इस ठिकाने के स्वामी महाराजा गजसिंह के पुत्र देवीसिंह के वंशधर हैं। देवीसिंह का पुत्र पृथ्वीसिंह था, जिसका तृतीय पुत्र समर्थसिंह[2] हुआ। समर्थसिंह के तीन बेटे—भारतसिंह, माधोसिंह और सवाईसिंह—हुए। भारतसिंह के निःसंतान मरने पर बिलनियासर की जागीर पर उसके दूसरे भाई माधोसिंह का अधिकार हुआ। उसके वंशधरों की उपाधि राजवी है और राज्य से उनको 'राजवी श्री········हवेलीवाला' लिखा जाता है।

माधोसिंह का पुत्र मेघसिंह बिलनियासर का वर्त्तमान स्वामी है।

धरणोक

यह ठिकाना महाराजा गजसिंह के छोटे कुंवर देवीसिंह के तीसरे पुत्र रणजीतसिंह[3] के वंशधरों के अधिकार में है। उनकी उपाधि राजवी

(१) वंशक्रम—[१] हिम्मतसिंह [२] गेनसिंह और [३] भौमसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] समर्थसिंह [२] माधोसिंह और [३] मेघसिंह।

(३) वंशक्रम—[१] रणजीतसिंह [२] रघुनाथसिंह [३] करणीसिंह और [४] हीरसिंह।

है और राज्य से उनको 'राजवी श्री..........हवेलीवाला' लिखा जाता है।

रणजीतसिंह के तीन पुत्र—रघुनाथसिंह, बाघसिंह और सालिमसिंह—हुए। बाघसिंह तथा सालिमसिंह निःसंतान थे। रघुनाथसिंह का पुत्र करणीसिंह हुआ, किन्तु वह भी संतानहीन मरा। इसलिए कुरझड़ी के राजवी गेनसिंह का दूसरा पुत्र हीरसिंह दत्तक जाकर उस(करणीसिंह)का उत्तराधिकारी हुआ, जो धरणोक का वर्तमान सरदार है।

बीकानेर राज्य के सरदार

सिरायत

दोहरी (दोलड़ी) ताज़ीम और हाथ के कुरब का सम्मानवाले

महाजन

महाजन बीकानेर राज्य के चार बड़े ठिकानों में (जो सिरायत कहलाते हैं) सबसे बड़ा ठिकाना है। पहले इसका नाम शाहोर था। राव लूणकर्ण के कुंवर रत्नसिंह को वि० सं० १५६२ (ई० स० १५०५) में यह ठिकाना मिला। तब से इसका नाम महाजन हुआ। यहां के सरदार रत्नसिंहोत बीका कहलाते हैं।

---

(१) वंशक्रम—[१] रत्नसिंह [२] अर्जुनसिंह [३] जसवन्तसिंह [४] देवीदास [५] उदयभाण (उदयसिंह) [६] प्रतापसिंह [७] अभयसिंह (अभयराम या अजबसिंह) [८] भीमसिंह [९] शिवदानसिंह [१०] शेरसिंह [११] वैरिशाल [१२] अमरसिंह [१३] रामसिंह [१४] हरिसिंह और [१५] भूपालसिंह।

मुंशी देवीप्रसाद ने लिखा है कि राव बीका खंडेले के स्वामी रिड़मल को पराजित कर उसकी विधवा बहन प्राणकुंवरी को बीकानेर के महलों में ले आया। उससे अमरा और बीसा नाम के दो पुत्र हुए, जिनमें से अमरा के वंशज महाजन के ठाकुर हैं, जो अमरावत बीका कहलाते हैं (राव बीका का जीवनचरित्र; पृ० ४२)। ख्यातों

महाजन का ठिकाना रत्नसिंह को मिलने के कुछ ही दिनों बाद राव जैतसी के समय आमेर के कछवाहा राजा पृथ्वीराज का छोटा पुत्र सांगा अपने भाई रत्नसिंह से कलह हो जाने के कारण सहायता लेने बीकानेर गया। राव जैतसी ने (जो उसका मामा होता था) उस(सांगा)की सहायतार्थ अपनी सेना रवाना की, जिसमें अन्य बड़े सरदारों के साथ रत्नसिंह भी विद्यमान था। बीकानेर की सेना की सहायता से सांगा ने आमेर का अधिकांश भाग अपने अधिकार में कर लिया और अपने नाम पर सांगानेर नामक नवीन क़स्बा बसाया। सांगा का अधिकार जम जाने पर बीकानेर की सेना तो लौट गई, किंतु रत्नसिंह कुछ दिनों तक सांगानेर में ही अपने राजपूतों-सहित रहा।

उन्हीं दिनों जोधपुर में राव गांगा की गद्दीनशीनी पर बखेड़ा खड़ा हो गया और वहां की गद्दी के वास्तविक हक़दार वीरम ने अपने छोटे भाई शेखा की सहायता से, मारवाड़ की गद्दी प्राप्त करने के लिए चढ़ाई कर दी। उस अवसर पर राव गांगा ने राव जैतसी से सहायता चाही, तब बीकानेर से राव जैतसी एक बड़ी सेना लेकर स्वयं जोधपुर गया, जिसमें रत्नसिंह भी साथ था और उसी की बरछी से शेखा के सहायक नागोर के खान का हाथी घायल होकर भागा।

आदि के अनुशीलन से उक्त कथन असत्य प्रमाणित होता है। महाजन के ठाकुर, जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, रत्नसिंहोत बीका हैं। अमरा के वंशज तो उक्त ठिकाने के मुख्य कार्यकर्त्ता (प्रधान) रहे हैं।

'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' और 'देशदर्पण' में जसवंतसिंह के पीछे देवीदास का नाम नहीं है अर्थात् जसवंतसिंह के पीछे उदयभाण का ही नाम दिया है। गजनेर गांव में राव वीरम की देवली है, उसपर वि० सं० १७१२ वैशाख सुदि ९ (ई० स० १६५६ ता० १३ अप्रेल) का शिलालेख है। उसमें महाजन के सरदारों की ठाकुर उदयभाण तक वंशावली दी है, जिसमें जसवंतसिंह के पीछे क्रमशः देवीदास और उदयभाण के नाम हैं। इससे स्पष्ट है कि देवीदास भी महाजन का स्वामी हुआ था। मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' और मीरमुंशी श्रीराम-रचित 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तक में दिये हुए वंशवृक्षों में देवीदास का नाम जसवंतसिंह के पीछे दिया है।

रत्नसिंह की मृत्यु हो जाने पर उसका पुत्र अर्जुनसिंह महाजन का स्वामी हुआ। जब वि० सं० १६०२ (ई० स० १५४५) में जोधपुर पर राव मालदेव का अधिकार हो गया, तो उसने फिर मेड़ते के राव जयमल से छेड़-छाड़ करनी आरंभ की। इसपर राव जयमल ने बीकानेर से सहायता चाही। तब राव कल्याणमल ने उस (जयमल) की सहायतार्थ सेना रवाना की। उसमें महाजन का ठाकुर अर्जुनसिंह भी था। इसके अनन्तर राव मालदेव की दिल्ली के बादशाह शेरशाह के गुलाम हाजीखां पर चढ़ाई होने पर अर्जुनसिंह भी दूसरे सरदारों के साथ उस (हाजीखां) की सहायतार्थ भेजा गया था।

अर्जुनसिंह के पीछे जसवंतसिंह महाजन का स्वामी हुआ, जिसका पुत्र देवीदास और उसका उदयभाण हुआ। महाराजा सूरसिंह के राज्य-काल में जोहियों का उपद्रव बढ़ने पर उदयभाण उनपर भेजा गया। उसने उनसे वीरतापूर्वक युद्ध किया और माछोटा के पास उनके मुक़ाबले में उसके १८ तथा नोहर के पास दो पुत्र काम आये। बीकानेर की सीमा में वि० सं० १७०१ (ई० स० १६४४) में नागोर के राव अमरसिंह की सेना का उत्पात बढ़ने पर महाराजा कर्णसिंह के आदेशानुसार दीवान मेहता जसवंतसिंह सेना लेकर उस ओर रवाना हुआ, उस समय कई प्रमुख सरदारों के साथ उदयभाण का ज्येष्ठ पुत्र जगतसिंह भी उक्त सेना में विद्यमान था। उदयभाण का उत्तराधिकारी उसका छोटा पुत्र प्रतापसिंह हुआ[1]।

महाराजा अनूपसिंह के समय चूंडेर (चूंडेहर) के गढ़ पर बीकानेर राज्य का अधिकार होकर वि० सं० १७३५ (ई० स० १६७८)

(१) महाराजा कर्णसिंह के समय के वि० सं० १७१३ वैशाख सुदि ९ (ई० स० १६५६ ता० १६ अप्रेल) के गजनेर गांव के राव वीरम की देवली के लेख से पाया जाता है कि उक्त संवत् तक उदयभाण विद्यमान था, अतएव संभव है कि जगतसिंह पिता की विद्यमानता में उक्त लड़ाई में गया हो और निःसन्तान ही उसकी विद्यमानता में मर गया हो, जिससे उसका छोटा भाई प्रतापसिंह उक्त ठिकाने का स्वामी हुआ हो।

में वहां अनूपगढ़ की स्थापना हुई तथा खारवारां का ठिकाना भागचन्द (किसनावत भाटी) को दिया गया। कुछ ही दिनों के वाद वहां का विद्रोही सरदार (विहारीदास का पुत्र) जोहियों की सहायता से फिर उत्पात करने लगा और भागचन्द से उसका दमन न हो सका तो महाराजा ने खारवारां का पट्टा भी प्रतापसिंह के पुत्र ठाकुर अभयसिंह (अजवसिंह) के नाम कर दिया। अजवसिंह के वहां सेना लेकर पहुंचने पर भागचंद खारवारां का गढ़ छोड़कर चला तो गया, किन्तु जोहियों की सहायता प्राप्तकर उसने अजवसिंह पर आक्रमण कर दिया, जिसमें अजवसिंह तथा उसका दस वर्षीय पुत्र मोहकमसिंह वंदी हुआ; परंतु मोहकमसिंह छोटी अवस्था का होने के कारण मुक्त कर दिया गया। पीछे से वड़े होने पर उसने जोहियों को मारकर अपने पिता का वदला लिया।

तदनन्तर भीमसिंह[1] महाजन की गद्दी पर बैठा। वि० सं० १७९६ (ई० स० १७३९) में महाराजा जोरावरसिंह के राज्यकाल में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने वीकानेर पर चढ़ाई की। उन दिनों महाराजा अभयसिंह और उसके भ्राता वख़्तसिंह के वीच वैमनस्य हो गया था, जिससे वख़्तसिंह ने महाराजा जोरावरसिंह से मेल करना चाहा। महाराजा (जोरावरसिंह) को पहले वख़्तसिंह का विश्वास न हुआ, जिससे उसने वख़्तसिंह के कथन पर ध्यान न दिया, पर जव उस(वख़्तसिंह)ने मेड़ते पर वलपूर्वक अधिकार कर लिया, तव उस(जोरावरसिंह)को वख़्तसिंह का विश्वास हो गया और ज्यों ही जोधपुर की सेना वीकानेर की ओर अग्रसर हुई तो महाराजा जोरावरसिंह ने भूकरका के ठाकुर तथा महाजन के दीवान दौलतसिंह को उसके पास भेज दिया। इसका महाराजा अभयसिंह की सेना पर वहुत वुरा प्रभाव पड़ा और वह असफल होकर लौट गई। उसी वर्ष महाराजा ने ठाकुर भीमसिंह को जोहियों का दमन करने के लिए सेना देकर भटनेर पर रवाना किया, क्योंकि वे राज्य की आज्ञा के विरुद्ध आचरण करते थे। भीमसिंह ने मलू गोदारे तथा उसके पुत्रों आदि

(१) भीमसिंह का एक भाई केसरीसिंह था, जिसके वंशधर कुंभाणा के ठाकुर हैं।

को मरवाकर वहां अपना अधिकार कर लिया और भटनेर में मिली हुई संपत्ति राज्य में दाखिल नहीं की। इससे महाराजा ने उससे अप्रसन्न होकर हसनखां भट्टी को सेना-सहित भटनेर पर भेजा, जिसने उस-(भीमसिंह)को वहां से निकाल दिया। इसपर वह जोधपुर के महाराजा अभयसिंह से जाकर मिल गया और वि० सं० १७६७ (ई० स० १७४०) में उसको बीकानेर पर चढ़ा लाया, परन्तु उसका सारा प्रयत्न निष्फल हुआ, जैसा कि महाराजा जोरावरसिंह के इतिहास में बतलाया गया है। महाराजा गजसिंह के राज्य-समय में वि० सं० १८०५ (ई० स० १७४८) में ठाकुर दौलतसिंह (बाय), ठाकुर दानसिंह मोहकमसिंहोत (सांडवा) तथा जोरावरसिंह केसरीसिंहोत के दीवान दौलतसिंह के द्वारा ठाकुर भीमसिंह के अपराध क्षमा होने की बात तय होने पर गारबदेसर के मुक़ाम पर वह महाराजा की सेवा में उपस्थित हो गया। महाराजा ने उसके पिछले सारे अपराध क्षमा कर महाजन की जागीर पीछी उसके नाम बहाल कर दी। ठाकुर भीमसिंह का वि० सं० १८१५ (ई० स० १७५८) में देहांत हुआ। उसके दो पुत्र भगवानसिंह और शिवदानसिंह हुए। वि० सं० १८१८ (ई० स० १७६१) में महाराजा गजसिंह की सेवा में ठाकुर भीमसिंह के उक्त दोनों पुत्रों के उपस्थित होने पर महाराजा ने भगवानसिंह के लिए कांकड़वाला की जागीर नियत की और शिवदानसिंह को महाजन का ठाकुर बनाया। शिवदानसिंह का पुत्र शेरसिंह और पौत्र वैरिशाल हुआ।

वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२९) में बीकानेर के महाराजा रत्नसिंह ने जैसलमेर पर जो सेना भेजी, उसका अध्यक्ष ठाकुर वैरिशाल था। उसी वर्ष उस(वैरिशाल)के बावरी, जोहिये आदि लुटेरों को अपने इलाक़े में रखने और उनके द्वारा चोरी आदि करवाने के कारण महाराजा ने अप्रसन्न होकर उसपर सेना भेजी, जिसपर वह भागकर भटनेर चला गया। उसके पुत्रों आदि ने कुछ दिनों तक तो राज्य की सेना का सामना किया, पर अन्त में लड़ने में अपनी हानि देख उन्होंने महाजन का

क़िला राज्य को सौंप दिया। फिर थोड़े दिनों पश्चात् वैरिशाल भी अपने अपराध क्षमा करवाकर महाराजा की सेवा में उपस्थित हो गया। इसपर महाराजा ने साठ हज़ार रुपये दंड के ठहराकर महाजन का पट्टा उसको प्रदान कर दिया। महाजन पहुंचने पर ठाकुर वैरिशाल ने उन लोगों में से कितने एक को, जिन्होंने महाजन का क़िला राज्य की सेना को सौंपा था, मरवा डाला और स्वयं फूलड़े गांव में जा रहा। इसपर महाराजा ने फिर महाजन पर सेना भेजकर उसे ख़ालसा कर लिया। फिर उस-(वैरिशाल)के बहावलपुर (भावलपुर) राज्य में होने का पता पाकर महाराजा ने दिल्ली के रेज़िडेन्ट से इस संबंध में लिखा-पढ़ी की। तब वहां से बहावलपुर के स्वामी के नाम ख़रीता भेजा गया, जिससे ठाकुर वैरिशाल का वहां रहना भी असंभव हो गया और वह जैसलमेर चला गया। अनन्तर सेना एकत्रकर वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) में वह पूगल के राव रामसिंह के पास चला गया और उससे मिलकर राज्य की सेना से लड़ने की तैयारी करने लगा। जब उसका उत्पात अत्यधिक बढ़ा तो महाराजा ने अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी कर उसे चेतावनी दिलाई, परंतु उसने विद्रोह का मार्ग न छोड़ा। इसपर अंग्रेज़-सरकार ने उसका दमन करने के लिए अंग्रेज़ी सेना भेजने की सूचना प्रकाशित की, जिसकी ख़बर महाराजा को भी दी गई, किन्तु इसकी आवश्यकता न पड़ी; क्योंकि महाराजा के स्वयं सेना लेकर पूगल पहुंचने पर वैरिशाल वहां से भागकर फिर जैसलमेर चला गया। महाराजा की सेना ने कुछ दिन तक पूगल में लड़ाई कर वहां अपना अधिकार कर लिया और विद्रोही दबा दिये गये। एक वर्ष बाद कई प्रमुख सरदारों के प्रयत्न से समझौता होने पर ठाकुर वैरिशाल महाराजा की सेवा में उपस्थित हो गया और साठ हज़ार रुपये दंड के देने पर उसे पुनः महाजन की जागीर मिल गई।

वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) में होनेवाली सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेर राज्य से अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ भेजी हुई सेना में महाजन का दीवान भी वहां की जमीयत के साथ सम्मिलित



स्वर्गीय कर्नल रावबहादुर राजा हरिसिंह
सी. आई. ई [महाजन]

था। इस अवसर पर महाजन की जमीयत ने भी स्वामीभक्ति का अच्छा परिचय दिया। इसलिए युद्ध की समाप्ति होने पर उत्तम सेवाओं के कारण अन्य सरदारों के साथ महाजन के दीवान को भी महाराजा ने सिरोपाव, आभूषण आदि देकर सम्मानित किया। ठाकुर वैरिशाल के उत्तराधिकारी अमरसिंह ने महाराजा डूंगरसिंह को विष देने के षड्यंत्र में भाग लिया, इसलिए वि० सं० १९३२ (ई० स० १८७६) में उसे पदच्युत कर उसका पुत्र रामसिंह महाजन का सरदार बनाया गया, किन्तु रामसिंह ने भी महाराजा की इच्छा के विरुद्ध ही आचरण रक्खा। वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में राज्य और सरदारों के बीच रेख बढ़ाने के विषय में प्रबल विरोध हो गया। उस समय ठाकुर रामसिंह भी विद्रोही सरदारों में सम्मिलित था। यही नहीं, महाजन में राज्य की सेना के विरुद्ध लड़ाई की तैयारी भी की गई। अन्त में ठाकुर रामसिंह इस अपराध के कारण पृथक् किया गया और उसके स्थान में उसके छोटे भाई शिवनाथसिंह का पुत्र हरिसिंह महाजन का ठाकुर नियत किया गया।

ठाकुर हरिसिंह का जन्म वि० सं० १९३४ (ई० स० १८७७) में हुआ था। उसकी शिक्षा मेयो कॉलेज, अजमेर में हुई। उसकी बुद्धिमानी और राजभक्ति से प्रेरित होकर महाराजा ने उसे राजकीय कौंसिल में पब्लिक वर्क्स कमेटी का सदस्य नियत किया और फिर वह इस विभाग का मन्त्री बनाया गया। स्थानीय वाल्टर-कृत राजपुत्र हितकारिणी सभा का वह उपसभापति भी रहा था। उसके उत्तम आचरण के कारण अंग्रेज़-सरकार ने ई० स० १९११ (वि० सं० १९६८) में उसे 'राव बहादुर' और ई० स० १९२८ (वि० सं० १९८४) में सी० आई० ई० का ख़िताब देकर सम्मानित किया। वर्तमान महाराजा साहब ने अपनी रजत जयन्ती के अवसर पर ई० स० १९१२ (वि० सं० १९६९) में उस (हरिसिंह) को 'राजा' की ज़ाती उपाधि प्रदान की। फिर ई० स० १९२८ (वि० सं० १९८५) में इन्होंने अपनी वर्षगांठ के अवसर पर उसकी 'राजा' की उपाधि वंशपरम्परा के लिए कर दी। वह बहुश्रुत, बुद्धिमान्, इतिहास-प्रेमी, विनयशील, उदार

और मिलनसार व्यक्ति था। राजपूतों में प्रचलित टीका, मद्यपान और बहु-विवाह आदि की कुप्रथाओं का वह बड़ा विरोधी था। वह आजन्म राज्य का शुभचिन्तक रहा, जिससे महाराजा साहब उसका पूर्ण विश्वास कर उसकी सलाहों को मानते थे। वि० सं० १६६० (ई० स० १६३३) में उसका निःसंतान देहांत होने पर उसका चाचा भूपालसिंह महाजन ठिकाने का स्वामी हुआ, जो इस समय विद्यमान है। राजा भूपालसिंह पहले गंगा-रिसाले का कमांडिंग अफ़सर रह चुका है। बीकानेर राज्य की ओर से उसे 'कर्नल' की उपाधि दी गई है।

बीदासर

राव जोधा का एक पुत्र बीदा¹ (राव बीका का सहोदर भाई) छापर-द्रोणपुर का स्वामी था। वह इलाक़ा उसने मोहिलों (चौहानों की एक शाखा) से लिया था, किन्तु मोहिल वरसल ने दिल्ली के सुलतान की सहायता प्राप्तकर फिर अपने इलाक़े पर अधिकार कर लिया। तब राव बीका ने बीदा की सहायता कर पीछा उसको उसका इलाक़ा दिलाया। इस सहायता के एवज़ में बीदा ने बीका की अधीनता स्वीकार की। फलतः उसके वंशज

---

(१) वंशक्रम—[१] बीदा [२] संसारचन्द्र [३] सांगा [४] गोपाल-दास [५] केशवदास [६] गोविंददास [७] मानसिंह [८] धनराजसिंह [६] कुशलसिंह [१०] केसरीसिंह [११] ज़ालिमसिंह [१२] उम्मेदसिंह [१३] रामसिंह [१४] शिवनाथसिंह (शिवदानसिंह) [१५] बहादुरसिंह [१६] हुक्मसिंह [१७] हीरसिंह और [१८] प्रतापसिंह।

ठाकुर बहादुरसिंह-लिखित 'बीदावतों की ख्यात' में कुशलसिंह और केसरीसिंह के बीच में जयसिंह और दौलतसिंह के नाम अधिक दिये हैं (जि० २, पृ० ११ तथा २२)। मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में दिये हुए वंशवृक्ष (पृ० ४२) में गोविंददास के पीछे मानसिंह और मानसिंह के पीछे क्रमशः धनराजसिंह, जयसिंह, दौलतसिंह, केसरीसिंह और ज़ालिमसिंह के नाम दिये हैं। उसमें कुशलसिंह का नाम छोड़ दिया है।

बीकानेर राज्य के सामंत हैं और वे बीदावत कहलाते हैं तथा उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। बीदावतों के ठिकानों में बीदासर का ठिकाना मुख्य है[1]।

बीदा की उपाधि 'राव' थी। उसने कई युद्धों में वीरता दिखलाई। राव जोधा के उत्तराधिकारी सांतल की मृत्यु हो जाने पर उसका छोटा भाई सूजा जोधपुर का स्वामी हुआ। राव जोधा ने बीका के सांतल और सूजा की अपेक्षा ज्येष्ठ होने के कारण पूजनीक चीज़ें बीकानेर भेजने का वचन दिया था, परंतु इससे पूर्व ही उसकी मृत्यु हो गई और सांतल भी कुछ ही महीने राज्य कर काल-कवलित हो गया। सूजा के गद्दी बैठने पर बीका ने उसको पूजनीक चीज़ें बीकानेर भिजवाने के लिए कहलाया, परंतु उसने इसपर ध्यान न दिया। तब अपनी सेना के साथ जाकर बीका ने जोधपुर को घेर लिया। उस समय राव बीदा भी बीदाहद के तीन हज़ार सैनिकों की जमीयत-सहित उसके साथ था।

उस (बीदा) ने अपने जीवन-काल में ही छापर-द्रोणपुर के दो भाग कर अपने पुत्र उदयकर्ण को द्रोणपुर और संसारचंद्र को पड़िहारा (उस समय का) बांट दिया, जिससे उदयकर्ण के सहोदर भाई उसके साथ और संसारचंद्र के सगे भाई संसारचंद्र के साथ रहे, जिनको उन्होंने गांव आदि निर्वाह के लिए दिये। उदयकर्ण के पुत्र कल्याणदास और राव लूणकर्ण

(१) बीकानेर राज्य के सिरायतों में महाजन के नीचे बीदासर और रावतसर के सरदारों का स्थान है। इन दोनों सरदारों की बैठक दरबार में एक ही है तथा प्रतिष्ठा भी समान है, जिससे वे एक दूसरे के नीचे नहीं बैठते। यदि बीदासर का सरदार दरबार में उपस्थित हुआ हो तो रावतसर का उपस्थित नहीं होता। गद्दीनशीनी के दरबार में जब दोनों ही सरदारों का आना अनिवार्य होता है, तब पहले बीदासर का सरदार महाराजा के तिलक करने के लिए दाहिनी मिसल (बैठक) से खड़ा होता है और तिलक करता है एवं रावतसर का सरदार बीदासर के आगे सिंहासन की ओर मुह कर खड़ा होता है। तिलक के बाद नज़राना करते समय रावतसर का सरदार पहले नज़राना करता है और उसके बाद बीदासर का। ऐसे अवसरों पर बीदासर का सरदार दाहिनी मिसल (बैठक) की पंक्ति से नज़राना करते समय रावतसर के स्थान पर चला जाता है।

के बीच विरोध हो गया, जिससे द्रोणपुर से कल्याणदास का अधिकार उठ गया और बीदा के सारे भूमि-भाग पर संसारचंद्र के पुत्र सांगा का अधिकार हो गया। सांगा का पुत्र गोपालदास हुआ, जिसने महाराजा रायसिंह के विरुद्ध आचरण करनेवाले व्यक्तियों में से सारण (जाट) भरथा को महाराजा सूरसिंह की आज्ञा से मारकर स्वामीभक्ति का परिचय दिया। उसके तीन पुत्र—जसवंतसिंह, तेजसिंह और केशवदास—थे। ठाकुर गोपालदास ने अपने अंतिम समय में अपने ठिकाने के तीन विभाग कर जसवंतसिंह को द्रोणपुर तथा तेजसिंह को चाहड़वास दिया और केशवदास को बीदासर देकर पाटवी बनाया, क्योंकि उसने एक युद्ध में उसके प्राण बचाये थे। केशवदास के पीछे गोविन्ददास, मानसिंह, धनराजसिंह[1], कुशलसिंह, केसरीसिंह, ज़ालिमसिंह, उम्मेदसिंह और रामसिंह क्रमशः बीदासर के सरदार हुए।

ठाकुर रामसिंह निःसंतान था, इसलिए ठाकुर उम्मेदसिंह के छोटे पुत्र अजीतसिंह का वंशधर शिवनाथसिंह उसके गोद गया। महाराजा रत्नसिंह के समय में लाहौर में सिक्खों के साथ अंग्रेज़ों की लड़ाई के समय बीदासर की जमीयत ने भी राजकीय सेना में सम्मिलित होकर अच्छी सेवाएं कीं; इसलिए युद्ध की समाप्ति पर महाराजा ने बीदासर के मंत्री को कड़ा-जोड़ी और सिरोपाव प्रदानकर सम्मानित किया। वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में भारत-व्यापी सिपाही-विद्रोह के समय अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ जब स्वयं महाराजा सरदारसिंह, बीकानेर

---

(१) ठाकुर धनराजसिंह के दो पुत्र जयसिंह और कुशलसिंह थे। जयसिंह का पुत्र दौलतसिंह था। दौलतसिंह के संतान न होने से जयसिंह की शाखा नष्ट हो गई, तब कुशलसिंह का पुत्र केसरीसिंह दत्तक जाकर बीदासर का स्वामी हुआ, जिसके वंश में बीदासर के सरदार हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि ख्यात लेखकों ने जयसिंह और दौलतसिंह का वंश न चलने और कुशलसिंह के पुत्र केसरीसिंह के गोद जाने से उन (जयसिंह और दौलतसिंह) का नाम छोड़कर धनराज के पीछे कुशलसिंह और केसरीसिंह का नाम लिख दिया है।



राजा प्रतापसिंह [बीदासर]

की सेना के साथ रवाना हुआ, उस समय भी बीदासर के ठाकुर शिवनाथ-सिंह ने अपनी जमीयत भेजी थी। उस(शिवदानसिंह)का उत्तराधिकारी उसका पुत्र बहादुरसिंह हुआ। रेख के संबंध में वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में उसने राज्य की आज्ञा के विरुद्ध आचरण किया, इसलिए बीदासर के ठिकाने से पृथक् किया जाकर वह पांच वर्ष के लिए देवली की छावनी में भेज दिया गया और बीदासर पर उसका पुत्र हुक्मसिंह नियत किया गया। ठाकुर हुक्मसिंह के पीछे उसका पुत्र हीरसिंह बीदासर का स्वामी हुआ, परंतु वह निःसंतान था, इसलिए उसके छोटे भाई खुमाण-सिंह का पुत्र प्रतापसिंह दत्तक लिया गया, जो बीदासर का वर्तमान सरदार है और मेयो कॉलेज, अजमेर में शिक्षा पा रहा है। विद्यमान बीकानेर-नरेश महाराजा सर गंगासिंहजी ने ई० स० १९३७ ता० ३० नवंबर (वि० सं० १९९४ मार्गशीर्ष वदि १३) को अपनी स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर उसको स्थायी रूप से 'राजा' की उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया है।

रावतसर

बीकानेर राज्य के चार सिरायतों में बीदासर और रावतसर की बैठक तथा प्रतिष्ठा समान है। रावतसर कांधलोतों का मुख्य ठिकाना है, जो राठोड़ों की एक शाखा है और राव रणमल के एक पुत्र कांधल से चली है। राव बीका के जोधपुर से प्रस्थान करते समय अन्य सरदारों एवं संबंधियों के अतिरिक्त उसका चाचा कांधल भी साथ था, जिसने बीकानेर राज्य की स्थापना में मुख्य भाग लिया था। यह ठिकाना राव बीका ने कांधल के पुत्र राजसी[1] को वि० सं० १५५६ (ई० स० १४९९) में दिया था।

---

(१) वंशक्रम—[१] राजसी [२] किशनदास (किशनसिंह) [३] उदयसिंह [४] राघवदास [५] रामसिंह (रायसिंह) [६] लखधीरसिंह [७] चतरसिंह [८] आनन्दसिंह [९] जयसिंह [१०] हिम्मतसिंह [११] विजयसिंह [१२] भोमसिंह [१३] नाहरसिंह [१४] जोरावरसिंह [१५] रणजीतसिंह [१६] हुक्मसिंह [१७] मानसिंह और [१८] रावत तेजसिंह।

यहां के सरदार की उपाधि 'रावत' है।

ख्यातों से प्रकट है कि बादशाह अकबर ने महाराजा रायसिंह को अहमदाबाद के स्वामी पर भेजा था, जिसको उक्त महाराजा ने हराकर क़ैद कर लिया। इस चढ़ाई में अन्य प्रमुख सरदारों के साथ रावतसर के स्वामी राघवदास ने पूर्ण तत्परता दिखलाई और उसका पुत्र जगतसिंह वीरगति को प्राप्त हुआ। तदनन्तर रामसिंह, लखधीरसिंह, चतरसिंह, आनन्दसिंह, जयसिंह, हिम्मतसिंह, विजयसिंह, भोमसिंह, नाहरसिंह और जोरावरसिंह क्रमशः रावतसर के स्वामी हुए।

वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में अन्य सरदारों और मंत्रियों के साथ रावतसर का मंत्री भी अपनी जमीयत के साथ बीकानेर की सेना में विद्यमान था। ई० स० १८५७ (वि० सं० १९१४) में सिपाही विद्रोह के अवसर पर महाराजा सरदारसिंह के साथ रावतसर के स्वामी ने भी अंग्रेज़ सरकार को यथेष्ट सहायता दी। रावत जोरावरसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र रणजीतसिंह रावतसर का सरदार हुआ। वि० सं० १९४२ (ई० स० १८८५) में उसकी मृत्यु होने पर उसका पुत्र हुक्मसिंह, जिसका जन्म वि० सं० १९२७ (ई० स० १८७०) में हुआ था, रावतसर का स्वामी हुआ, किन्तु वि० सं० १९५० (ई० स० १८९३) में २३ वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गई। उस समय तक उसके कोई संतान नहीं हुई थी, जिससे उसका चाचा हंमीरसिंह वहां का रावत बनाया गया। इसके दो-तीन महीने बाद ही भूतपूर्व रावत हुक्मसिंह के मानसिंह नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, अतएव हंमीरसिंह को अपने ठिकाने सूंई में चला जाना पड़ा और शिशु मानसिंह हुक्मसिंह का उत्तराधिकारी बनाया गया। रावत मानसिंह का भी थोड़ी आयु में ही देहावसान हो गया। उसका पुत्र तेजसिंह

ई० स० १८९४ (वि० सं० १९५१) में प्रकाशित 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तक में दिये हुए रावतसर के वंश-विवरण में आनंदसिंह के पीछे जयसिंह और विजयसिंह के पीछे भोमसिंह का नाम दिया है, किन्तु 'देशदर्पण', 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' आदि में उनके नाम नहीं हैं।



रावत तेजसिंह [रावतसर]

रावतसर का वर्तमान सरदार है। उसने मेयो कॉलेज, अजमेर में शिक्षा पाई है।

भूकरका

यहां के स्वामी राव जैतसी के पुत्र श्रीरंग (शृंग) के वंशधर हैं[1] और वे शृंगोत बीका कहलाते हैं। महाराजा रायसिंह के समय में उपर्युक्त श्रीरंग के वंशजों को भूकरका की जागीर मिली।

दिल्ली के स्वामी शेरशाह की मारवाड़ पर चढ़ाई होने पर जोधपुर का राव मालदेव बिना लड़े ही भाग गया। फलतः शेरशाह का मारवाड़ पर अधिकार हो गया, परंतु उस(शेरशाह)की मृत्यु के पश्चात् मालदेव ने पुनः मारवाड़ पर अधिकार कर लिया और जोधपुर पर अधिकार होने के पीछे वह मेड़ते के स्वामी जयमल से छेड़ छाड़ करने लगा तथा थोड़े समय बाद उसने मेड़ते पर चढ़ाई कर दी। इसपर राव जयमल ने बीकानेर से सहायता मंगवाई। तब राव कल्याणमल ने अपने भाई श्रीरंग आदि को सेना देकर उसकी सहायतार्थ भेजा। श्रीरंग का उत्तराधिकारी भगवानदास हुआ। बादशाह अकबर की आज्ञानुसार महाराजा रायसिंह के अहमदाबाद पर चढ़ाई करने के समय अन्य सरदारों आदि के साथ ठाकुर भगवानदास भी महाराजा के साथ विद्यमान था और वह उस युद्ध में काम आया। भगवानदास के पीछे मनोहरदास (मनहरदास) पिता की संपत्ति का स्वामी हुआ। महाराजा सूरसिंह ने उसके एक पुत्र किशनसिंह को सीधमुख की जागीर देकर उसका पृथक् ठिकाना क़ायम किया। मनोहरदास का पुत्र कर्मसेन हुवा। वि० सं० १७०१ (ई० स० १६४४) में नागोर के राव अमरसिंह की सेना का उत्पात बीकानेर की सीमा में बढ़ने पर महाराजा कर्णसिंह

---

(१) वंशक्रम—[१] श्रीरंग (शृङ्ग) [२] भगवानदास [३] मनोहरदास [४] कर्मसेन [५] खड्गसेन (खड्गसिंह) [६] पृथ्वीराज [७] कुशालसिंह [८] सवाईसिंह [९] मदनसिंह [१०] अभयसिंह [११] अजीतसिंह (जैतसिंह) [१२] खेतसिंह [१३] नाथूसिंह [१४] कान्हसिंह और [१५] राव अमरसिंह।

के आदेशानुसार दीवान मेहता (मुंहता) जसवंत सेना लेकर उसपर गया। उसके साथ कई प्रमुख सरदारों के अतिरिक्त भूकरके का ठाकुर कर्मसेन भी था।

वि० सं० १७५५ (ई० स० १६९८) में बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र स्वरूपसिंह बीकानेर का स्वामी हुआ, जो बालक था। उस समय भूकरके का ठाकुर पृथ्वीराज राज्य-कार्य में सहायता देता था।

महाराजा अजीतसिंह ने वि० सं० १७६३ (ई० स० १७०७) में जोधपुर पर अधिकार कर लेने के पीछे महाराजा सुजानसिंह की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। पहले तो किसी ने उसका अवरोध न किया, पर एक साहसी लुहार के वीरतापूर्ण कार्य ने ठाकुर पृथ्वीराज तथा अन्य सरदारों का रक्त खौला दिया। उन्होंने सेना एकत्र कर महाराजा अजीतसिंह की सेना का ऐसी वीरता से मुक़ाबला किया कि उसे संधि कर बीकानेर से लौट जाना पड़ा। जब महाराजा सुजानसिंह दक्षिण से लौटकर बीकानेर में आया तो उसने प्रसन्न होकर अभूतपूर्व वीरता, साहस एवं राज्य-भक्ति का उदाहरण देनेवाले ठाकुर पृथ्वीराज के सम्मान में वृद्धि की।

पृथ्वीराज की मृत्यु होने पर उसका पुत्र कुशलसिंह पिता की संपत्ति का अधिकारी हुआ, जो सदा राज्य का शुभचिन्तक रहा। जोधपुर के महाराजा अभयसिंह और उसके छोटे भाई बख़्तसिंह (नागोर के स्वामी) के बीच जब विरोध हो गया, तब बख़्तसिंह ने महाराजा जोरावरसिंह से मेल कर उसे सहायक बनाना चाहा। उक्त महाराजा को बख़्तसिंह का विश्वास न था, इसलिए भूकरके का ठाकुर कुशलसिंह, वास्तविक स्थिति का भेद लेने के लिए उसके पास भेजा गया। जब कुशलसिंह ने बख़्तसिंह से बात-चीत कर सारी बात जान ली तो महाराजा जोरावरसिंह को बख़्तसिंह का विश्वास हो गया। जब बख़्तसिंह ने मेड़ते पर अपनी सेना रवाना की उस समय महाराजा जोरावरसिंह ने भी उसके पास अपनी सेना भेज दी।

इसपर नाराज़ होकर वि० सं० १७६७ (ई० स० १७४०) में महाराजा अभयसिंह ने भाद्रा और चूरू के विद्रोही सरदारों के कहने से बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। उस समय महाराजा जोरावरसिंह ने बीकानेर की रक्षा का यथोचित प्रबंध कर गढ़ के भीतर से शत्रु-सैन्य का सामना किया। उक्त विद्रोही सरदारों को छोड़कर इस समय बीकानेर राज्य की रक्षा के लिए अन्य सरदारों की सेनाएं गढ़ में एकत्रित थीं और उनका संचालन भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के हाथों में था।

तदनन्तर भट्टियों और जोहियों का उपद्रव बढ़ने पर ठाकुर कुशलसिंह-सेना के साथ कर्णपुरा के जोहियों को दंड देने के लिए भेजा गया, परंतु उन्हीं दिनों महाराजा के सपरिवार देशणोक करणीजी का दर्शन करने के हेतु प्रस्थान करने के कारण वह पुनः बुला लिया गया।

वि० सं० १८०३ (ई० स० १७४६) में महाराजा जोरावरसिंह का निःसंतान देहांत हो गया। राजगद्दी के लिए उपद्रव न हो, अतएव ठाकुर कुशलसिंह ने अविलंब गढ़ तथा राजधानी का प्रबंध अपने हाथों में ले लिया। फिर उसने अन्य व्यक्तियों की सलाह से महाराज आनंद-सिंह (महाराजा अनूपसिंह का छोटा कुंवर) के दूसरे पुत्र गजसिंह को गद्दी पर बिठलाया, जो सिंहासन के सर्वथा योग्य था। इसपर गजसिंह के ज्येष्ठ भ्राता अमरसिंह ने जोधपुर राज्य की सहायता से बीकानेर पर चढ़ाई की। इस लड़ाई में कुशलसिंह बीकानेर की सेना के हरावल में था।

महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८५६ (ई० स० १७६६) में सूरतगढ़ का निर्माण होने के कुछ दिनों बाद भट्टियों का उपद्रव बढ़ने पर महाराजा सूरतसिंह ने कई प्रमुख सरदारों के साथ, जिनमें भूकरके का ठाकुर मदनसिंह भी था, एक बड़ी सेना भटनेर पर भेजी। इसके कुछ वर्ष पीछे वि० सं० १८५६ (ई० स० १८०२) में ठाकुर मदनसिंह किसी अपराध के कारण मार डाला गया।

लाहौर की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में महाराजा रत्नसिंह ने अपनी सेना अंग्रेज़-सरकार की सहायतार्थ भेजी। उस समय

राजकीय सेना के साथ भूकरके के ठाकुर का भाई भी विद्यमान था, जिसको उत्तम सेवा के बदले में, युद्ध की समाप्ति पर मोतियों का चौकड़ा तथा सिरोपाव मिले।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) में सिपाही-विद्रोह के समय अंग्रेज़-सरकार की सहायतार्थ जब स्वयं महाराजा सरदारसिंह अपनी सेना के साथ गया, उस समय भूकरका के स्वामी ने भी सहायता पहुंचाई।

वि० सं० १६६६ (ई० स० १६१२) में महाराजा साहब ने अपनी रजत जयन्ती के अवसर पर ठाकुर कान्हसिंह को व्यक्तिगत तौर पर 'राव' का ख़िताब प्रदान किया। वि० सं० १६८५ (ई० स० १६२८) में अपनी वर्षगांठ के उपलक्ष्य में उसको सदा के लिए 'राव' की उपाधि से विभूषित करने का महाराजा साहब का विचार था, परंतु उन्हीं दिनों कान्हसिंह की मृत्यु हो गई। तब महाराजा ने उसके दत्तक पुत्र अमरसिंह को, जो भूकरका का वर्तमान सरदार है, वंशपरंपरा के लिए 'राव' की उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया।

दूसरे सरदार (उमराव)

दोहरी (दोलड़ी) ताज़ीम और हाथ के कुरब का सम्मानवाले

सांखू

यह ठिकाना महाराजा सूरसिंह ने अपने छोटे भाई किशनसिंह[1] को वि० सं० १६७५ (ई० स० १६१८) में दिया था। उसके वंश के किशनसिंहोत बीका कहलाते हैं। किशनसिंह के दो पुत्र भोमसिंह और जगत्सिंह थे, जिनमें से जगत्सिंह के वंशधरों का सांखू पर अधिकार रहा।

---

(१) वंशक्रम—[१] किशनसिंह [२] जगत्सिंह [३] दुर्जनसिंह [४] सुजानसिंह [५] जगरूपसिंह [६] डूंगरसिंह [७] दलसिंह [८] चैनसिंह [६] खंगारसिंह [१०] सुमेरसिंह [११] विजयसिंह और [१२] हीरसिंह।



राव अमरसिंह [धूकसका]

तदनन्तर दुर्जनसिंह, सुजानसिंह, जगरूपसिंह, डूंगरसिंह, दलसिंह, चैनसिंह और खंगारसिंह क्रमशः सांखू के स्वामी हुए। जब महाराजा रत्नसिंह के समय अंग्रेज़-सरकार की सहायतार्थ सिक्खों की लड़ाई में बीकानेर राज्य की सेना सम्मिलित हुई, तब उसमें सांखू के सरदार ने भी अपने मंत्री के साथ जमीयत भेजी थी। उस समय की उत्तम सेवाओं के उपलक्ष्य में युद्ध की समाप्ति पर अन्य सेना-नायकों के साथ-साथ सांखू के मंत्री को भी कड़ा-जोड़ी और सिरोपाव देकर पुरस्कृत किया गया।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के समय महाराजा सरदारसिंह के साथ सांखू के सरदार ने भी सिपाही-विद्रोह को दमन करने में बड़ी सहायता पहुंचाई।

खंगारसिंह के पीछे सुमेरसिंह और विजयसिंह क्रमशः सांखू के स्वामी हुए। विजयसिंह निःसंतान था, इसलिए उसके निकटवर्ती कुटुंबियों में से भानसिंह का बड़ा पुत्र हीरसिंह गोद जाकर वहां का स्वामी हुआ, जो सांखू का वर्तमान सरदार है।

कूचोर (चूरूवाला)

इस ठिकाने के स्वामी जोधपुर के राव जोधा के भाई कांधल के पौत्र वणीर[1] के वंशज हैं। वणीर की जागीर में पहले चाचावाद था। फिर उसके वंशजों को चूरू की जागीर मिली, जहां उन्नीसवीं शताब्दी तक उनका अधिकार रहा। राज्य की आज्ञा उल्लंघन करने के कारण कई बार

---

(१) वंशक्रम—[१] वणीर [२] हरा [३] सांवलदास [४] बलभद्र [५] भीमसिंह [६] कुशलसिंह [७] इन्द्रसिंह [८] हरिसिंह [९] शिवसिंह [१०] पृथ्वीसिंह [११] भैरूंसिंह [१२] लालसिंह और [१३] प्रतापसिंह।

'देशदर्पण', 'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' एवं 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तकों में वणीर के पुत्र का नाम मालदेव दिया है, किन्तु मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में दिये हुए वंशवृक्ष (पृ० ४६) में सर्वत्र कूचोरवालों को वणीर के पुत्र हरा के वंश से बतलाया है।

चूरू पर राज्य की सेना ने जाकर अधिकार कर लिया, परंतु फिर उत्पात न करने का इक़रार करने एवं दंड के रुपये जमा करा देने पर वह ठिकाना पीछा उनको मिल गया; तो भी वहां के स्वामियों का स्वभाव न सुधरा और वे राज्य की अवज्ञा कर,लूट-खसोट करते रहे। अंत में महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में ससैन्य चूरू पर अधिकार करने के लिए प्रस्थान किया। उस समय नवलगढ़ तथा बिसाऊ (जयपुर राज्य) के सरदारों के मध्यस्थ होने पर महाराजा ने २५००० हज़ार रुपये दंड के लेना स्वीकार कर ठाकुर शिवसिंह का अपराध क्षमा कर दिया, जिसपर वह महाराजा के पास उपस्थित हो गया।

यद्यपि नवलगढ़ और बिसाऊ के सरदारों के मध्यस्थ होने पर उस समय समझौता हो गया, परंतु ठाकुर शिवसिंह ने बहुत कुछ ताकीद होने पर भी दंड के रुपये दाखिल नहीं किये। इसपर वि० सं० १८७१ (ई० स० १८१४) में महाराजा की आज्ञानुसार प्रधान मंत्री अमरचंद सुराणा ने चूरू जाकर गढ़ को घेर लिया। इसी बीच ठाकुर शिवसिंह का देहांत हो गया और उसके पुत्र पृथ्वीसिंह ने रसद समाप्त हो जाने तथा बाहर से रसद मिलने के मार्ग बंद हो जाने पर विवश होकर जीवनरक्षा की याचना की। अमरचंद-द्वारा इस बात का वचन मिलने पर वह गढ़ छोड़कर सकुटुंब जोधपुर चला गया। तब चूरू पर राज्य का अधिकार हो गया।

वि० सं० १८७२ (ई० स० १८१५) तथा १८७३ (ई० स० १८१६) में बणीरोतों तथा शेखावाटी के सरदारों की सहायता से पृथ्वीसिंह फिर उत्पात करने लगा। उसने सीकर तथा बिसाऊ की सम्मिलित जमीयत के बल पर चूरू के गढ़ पर अधिकार करने का निष्फल प्रयत्न किया। राज्य की बलवान् सेना के सम्मुख जब उसका कुछ भी बस न चला तो उसने मीरख़ां पठान की सहायता प्राप्त की, जिसने उसका चूरू पर अधिकार करा दिया।

अंग्रेज़ सरकार और महाराजा सूरतसिंह के बीच वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) में संधि स्थापित हो गई। उसकी एक शर्त के अनुसार विद्रोही सरदारों का दमन करने के लिए अंग्रेज़ सरकार ने सहायता देना

स्वीकार किया। महाराजा के लिखने पर विद्रोहियों को दबाने के लिए जेनरल एलनर की अध्यक्षता में सरकारी फ़ौज गई, जिसने एक मास तक पृथ्वीसिंह से युद्ध किया। अंत में शक्ति क्षीण होने पर ठाकुर गढ़ खालीकर रामगढ़ (जयपुर राज्य) में चला गया।

चूरू छूट जाने पर ठाकुर पृथ्वीसिंह इधर-उधर भटकता रहा। उसनें अपना पट्टा पाने के लिए बहुत कुछ उद्योग किया, पर उसे सफलता न मिली। इसी बीच उसकी मृत्यु हो गई। फिर वि० सं० १९११ (ई० स० १८५५) में महाराजा सरदारसिंह के राज्यकाल में ठाकुर पृथ्वीसिंह के एक पुत्र ईश्वरीसिंह ने चूरू पर अधिकार कर लिया। यह खबर बीकानेर में पहुंचने पर महाराजा ने चूरू पर सेना भेजी, जिसने युक्तिपूर्वक गढ़ में प्रवेशकर उसे खाली करवा लिया। इस झगड़े में ईश्वरीसिंह मारा गया।

महाराजा डूंगरसिंह के राज्य-समय में चूरू के हक़दारों को राज्य की आज्ञा बराबर पालन करने की शर्त पर निर्वाह के लिए गांव दिये गये। उस समय पृथ्वीसिंह के कनिष्ठ पुत्र ठाकुर लालसिंह को भी, जो देशणोक में निवास करता था, बीकानेर जाने पर कूचोर की जागीर दी गई, परंतु उसने अपने पूर्वजों की प्रकृति के अनुसार उत्पात करना बंद न किया और प्रत्यक्ष रूप से राज्य के अपराधियों को अपने यहां शरण देने लगा। महाराजा के लिखने पर पोलिटिकल एजेंट ने उसे रोका और भविष्य के लिए उससे मुचलका लिखवा लिया।

ठाकुर लालसिंह का जन्म वि० सं० १९०४ (ई० स० १८४७) में हुवा था। वर्तमान महाराजा साहब की बाल्यावस्था के समय वह रीजेंसी कौंसिल का सदस्य रहा और उसे अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से 'रायबहादुर' का ख़िताब भी प्राप्त हुआ था। उसका पुत्र ठाकुर प्रतापसिंह कूचोर का वर्तमान सरदार है।

माणकरासर (भादरावाला)

रावत कांधल के एक पुत्र अरड़कमल का पौत्र सांईदास था, जिसके पांचवें वंशधर लालसिंह[1] को भाद्रा का इलाक़ा और महाराजा जोरावरसिंह के समय ताज़ीम मिली। लालसिंह की चतुर्थ पीढ़ी में प्रतापसिंह हुआ, जिसका एक पुत्र बाघसिंह था, जिसको माणकरासर की जागीर मिली। उसके वंश के कांधल सांईदासोत कहलाते हैं।

महाराजा जोरावरसिंह के समय में चूरू के ठाकुर संग्रामसिंह ने विद्रोहाचरण किया, जिससे उसकी जागीर छीनकर जुझारसिंह को दे दी गई। इसपर वह(संग्रामसिंह) भाद्रा के ठाकुर लालसिंह को, जो उस(संग्रामसिंह)का मित्र था, साथ लेकर जोधपुर चला गया। वि० सं० १७९६ (ई० स० १७३९) में जोधपुर की चढ़ाई बीकानेर पर होने के समय लालसिंह भी जोधपुरी सेना की एक टुकड़ी के साथ था, किंतु इस चढ़ाई का कुछ परिणाम न निकला। तब उसी वर्ष के श्रावण महीने में महाराजा अभयसिंह ने लालसिंह आदि विद्रोहियों के साथ पुनः बीकानेर पर चढ़ाई की। महाराजा जोरावरसिंह ने इस अवसर पर लालसिंह को समझाने के लिए कई सरदारों को भेजा। इसी बीच जयपुरवालों की जोधपुर पर चढ़ाई होने का समाचार पाकर महाराजा अभयसिंह को विफल मनोरथ होकर लौट जाना पड़ा।

कुछ दिनों बाद लालसिंह पीछा बीकानेर लौट गया। उस समय महाराजा जोरावरसिंह जयपुर में था। लालसिंह के बीकानेर राज्य में जाने और सांईदासोतों के उत्पात करने का समाचार मिलने पर महाराजा ने उनका दमन करने के लिए सेना भेजी। लालसिंह उस समय बाय के क़िले में था। वह राज्य की सेना के आने का समाचार पाकर भाद्रा चला

---

(१) वंशक्रम—[१] अरड़कमल [२] खेतसिंह [३] सांईदास [४] जयमल [५] आसकरण [६] हरिसिंह [७] दौलतसिंह [८] लालसिंह [९] अमरसिंह [१०] चैनसिंह [११] प्रतापसिंह [१२] बाघसिंह [१३] मुकुंदसिंह [१४] उदयसिंह [१५] भैरूंसिंह [१६] धोकलसिंह और [१७] कुमेरसिंह।

गया, पर उसके साथ की दस तोपें, जो महाराजा अभयसिंह ने दी थीं, रह गईं, जिनपर राज्य की सेना का अधिकार हो गया। महाराजा की सेना ने भाद्रा जाकर उसको घेर लिया। अन्त में सेना-व्यय (पेशकशी) देने का इक़रार कर उसने आत्मसमर्पण कर दिया। जयपुर पहुंचने पर वि० सं० १७६७ (ई० स० १७४०) में वह नाहरगढ़ में क़ैद कर दिया गया।

जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह की मृत्यु के उपरांत जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने लालसिंह को क़ैद से छुड़वाकर अपने पास बुला लिया और वि० सं० १८०४ (ई० स० १७४७) में बीकानेर से आये हुए अन्य विद्रोही सरदारों के साथ सेना देकर उसे भी बीकानेर पर भेजा, पर इस लड़ाई में भी जोधपुर की सेना की पराजय हुई और सरदार आदि घायल होकर भाग गये। लालसिंह इससे निराश नहीं हुआ और वह बीकानेर राज्य के गांवों को लूटने लगा। इसपर महाराजा गजसिंह ने अपने भाई तारासिंह को सेना देकर उसका दमन करने को भेजा, परंतु लड़ाई होने पर स्वयं तारासिंह अपने कितने ही साथियों सहित मारा गया। तब वि० सं० १८१३ (ई० स० १७५६) में महाराजा ने पुरोहित जगरूप तथा चौहान रूपराम को उसपर भेजा। पीछे से शेखावत नवलसिंह आदि भी चार हज़ार सेना के साथ गये और उन्होंने उसे महाराजा की अधीनता स्वीकार करने को बाध्य किया। महाराजा के अनूपपुर पहुंचने पर लालसिंह राजकीय सेवा में प्रविष्ट होने को उद्यत हुआ, परंतु मार्ग में अपशकुन हो जाने के कारण वह वापस लौट गया। इसपर क्रुद्ध होकर महाराजा ने स्वयं उसपर चढ़ाई की और उसके प्रधान स्थान डूंगराना के गढ़ को तोपों की मार से नष्ट कर दिया। ऐसी दशा में लालसिंह, महाराजा के राससाणा पहुंचने पर उसकी सेवा में उपस्थित हो गया। महाराजा ने उसका अपराध क्षमाकर उसकी जागीर उसे सौंप दी।

लालसिंह के पीछे क्रमशः अमरसिंह और चैनसिंह भाद्रा के स्वामी हुए। चैनसिंह का पुत्र प्रतापसिंह हुआ। उस (प्रतापसिंह) का भी राज्य

से मेल न रहा। फलतः महाराजा सूरतसिंह के समय में वि० सं० १८७२ (ई० स० १८१५) में भाद्रा का ठिकाना उससे छीन लिया गया और उसकी ताज़ीम बन्द कर दी गई एवं दस हज़ार रुपये वार्षिक उसके तथा उसके कुटुंबियों के निर्वाह के लिए नियत किये गये, परंतु फिर भी उसने अपना आचरण न सुधारा, तब वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) में वह अपनी बुरी आदतों के कारण क़ैदकर हिसार भेज दिया गया। प्रतापसिंह के दो पुत्र रणजीतसिंह[1] और बाघसिंह हुए। भाद्रा पर राज्य का अधिकार हो जाने के कारण महाराजा सरदारसिंह ने बाघसिंह को निर्वाह के लिए माणकरासर की जागीर दी। वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी गदर के समय माणकरासर का सरदार भी महाराजा की सेना के साथ अंग्रेज़ों की सहायता में लगा था।

बाघसिंह के पीछे मुकुंदसिंह, उदयसिंह, भैरूंसिंह और धोंकलसिंह क्रमशः माणकरासर के स्वामी हुए। धोंकलसिंह का पुत्र कुमेरसिंह माणकरासर का वर्तमान सरदार है।

सीधमुख

यह ठिकाना महाराजा सूरसिंह के समय राव जैतसिंह के एक पुत्र शृंग (श्रीरंग) के तीसरे वंशधर किशनसिंह[2] को वि० सं० १६७३ (ई० स० १६१६) में मिला था। उसके वंश के शृंगोत बीका कहलाते हैं।

---

(१) रणजीतसिंह के वंशजों के अधिकार में बाणूंदा का ठिकाना था। वहां के अन्तिम ठाकुर ईश्वरीसिंह (दुर्जनसालसिंह का पुत्र) के निःसन्तान गुज़र जाने पर बाणूंदा का ठिकाना भी वर्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी ने माणकरासर के ठिकाने के अन्तर्गत कर दिया।

(२) वंशक्रम—[१] किशनसिंह [२] प्रतापसिंह [३] उत्तमसिंह [४] सूरतसिंह [५] ज़ालिमसिंह [६] भानीसिंह [७] रघुनाथसिंह [८] लक्ष्मणसिंह [९] संपतिसिंह और [१०] हरिसिंह।

वि० सं० १७०१ (ई० स० १६४४) में महाराजा कर्णसिंह के समय नागोर के स्वामी अमरसिंह ने बीकानेर की सीमा के जाखांणिया गांव पर अधिकार कर लिया। इसपर महाराजा कर्णसिंह ने वहां से अमरसिंह का थाना उठवा देने के लिए अपने सरदारों के नाम आज्ञा भेजी, जिसपर मेहता जसवंतसिंह कई प्रमुख सरदारों के साथ सेना लेकर उक्त गांव में गया। इस अवसर पर इस सेना के साथ सीधमुख का ठाकुर किशनसिंह भी था।

महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में सीधमुख का ठाकुर नाहरसिंह विद्रोही हो गया। तब महाराजा का प्रधान मंत्री अमरचंद सेना लेकर सीधमुख गया और नाहरसिंह को क़ैद कर बीकानेर ले आया। महाराजा ने नाहरसिंह को मरवा डाला और सीधमुख उसके भाई अमरसिंह को प्रदान किया। फिर भी वहां का झगड़ा शांत न हुआ[1]।

अंग्रेज़ सरकार से संधि स्थापित हो जाने के पीछे विद्रोही सरदारों का दमन करने के लिए महाराजा सूरतसिंह ने अंग्रेज़ सरकार से सहायता मंगवाई। अंग्रेज़ी सेना के साथ कर्नल एलनर सर्वप्रथम सीधमुख गया। वहां ठाकुर पृथ्वीसिंह ने दस दिन तक तो उसका सामना किया, पर बाद में वह भागकर सीकर चला गया। फिर महाराजा ने उस ठिकाने को ज़ब्त कर लिया।

वि० सं० १८६० (ई० स० १८३३) में मानसिंह वैरिशालोत तथा पृथ्वीसिंह आदि ने सीधमुख पर चढ़ाई कर वहां अपना अधिकार कर लिया एवं वहां की प्रजा का धन आदि लूटकर उन्हें बहुत कष्ट दिया। इसपर राज्य की तरफ़ से सुराणा हुक्मचंद ने जाकर लुटेरे सरदारों का दमन किया और सीधमुख पर पुनः राज्य का अमल क़ायम किया।

---

(१) ख्यातों में दिये हुए मूल इतिहास में तो नाहरसिंह और अमरसिंह के नाम मिलते हैं, परन्तु सीधमुख की वंशावलियों में इनके नाम नहीं हैं। संभव है इनका वंश न चलने से वंशावली-लेखकों ने इनके नाम छोड़ दिये हो, जैसा कि कई जगह हुआ है।

वि० सं० १९०३ (ई० स० १८४६) में महाराजा रत्नसिंह ने भूकरका के ठाकुर अजीतसिंह के छोटे पुत्र हठीसिंह को सीधमुख की जागीर प्रदान की, जिसने वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) में अंग्रेज़ों और लाहौर के सिक्खों के साथ होनेवाली लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार के पक्ष में महाराजा की सेना के साथ रहकर सेवा की। इस सैनिक सेवा के उपलक्ष्य में महाराजा ने युद्ध समाप्त होने पर हठीसिंह को मोतियों का चौकड़ा और सिरोपाव प्रदान किया।

वि० सं० १९११ (ई० स० १८५४) में महाराजा ने सीधमुख के भूतपूर्व ठाकुर रघुनाथसिंह की विधवा को शृंगसर से लक्ष्मणसिंह को दत्तक लाने की स्वीकृति दी और हठीसिंह को थीराणे पर बहाल रक्खा, जो भूकरका की तरफ़ से उस (हठीसिंह) को जागीर में मिला था।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर को दमन करने में महाराजा के साथ सीधमुख की जमीयत-सहित हठीसिंह भी विद्यमान था।

ठाकुर लक्ष्मणसिंह का देहांत होने पर संपतसिंह उसका क्रमानुयायी हुआ। तदनन्तर उसका पुत्र हरिसिंह सीधमुख का स्वामी हुआ। उसकी निःसन्तान मृत्यु हो जाने के कारण सीधमुख पर कोर्ट ऑव् वार्ड्स का प्रबंध है।

पूगल

पूगल के स्वामी जैसलमेर के भाटियों की ही एक शाखा में से हैं। पहले वे स्वतंत्र थे। बीका के जांगल देश विजय करने के बाद से उनका सम्बन्ध राठोड़ों से स्थापित हुआ और वे बीकानेर के अधीन हो गये। उनकी गणना परसंगियों में होती है।

जैसलमेर के रावल केहर का ज्येष्ठ पुत्र केलण था। उसने पिता की आज्ञा के बिना अपना विवाह महेचों (राठोड़ों) के यहां कर लिया, जिससे केहर ने उसको निर्वासित कर अपने दूसरे पुत्र लक्ष्मण को अपना

उत्तराधिकारी बनाया। तब केलण ने अपने बाहुबल से नया ठिकाना बीकमपुर क़ायम किया। उसका पुत्र चाचा पूगल का स्वामी हुआ। चाचा का पुत्र वैरसल और उसका शेखा हुआ। लंघे (सिंध के मुसलमान) शेखा से वैर रखते थे, जिससे उन्होंने उसके भाई तिलोकसी और जगमाल को अपनी ओर मिला और उनकी सहायता से शेखा को गिरफ़्तार कर पूगल पर अपना अधिकार कर लिया। राव बीका का अधिकार उन दिनों जांगल देश पर हो चुका था। उसने चढ़ाई कर मुसलमानों और विद्रोही भाटियों को भगाकर शेखा का पुनः पूगल पर अधिकार करा दिया। इसके कुछ दिनों बाद राव बीका ने पूगल जाकर शेखा की पुत्री रंगकुवरी से विवाह किया, जिससे लूणकर्ण का जन्म हुआ।

वि० सं० १५३५ (ई० स० १४७८) में जब राव बीका ने कोड़मदेसर के तालाव पर गढ़ बनवाने का आयोजन किया तो जैसलमेर के भाटी उसका विरोध करने को उद्यत हुए। उन्होंने राव शेखा को भी अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया, पर वह उनके शामिल न हुआ।

राव सूजा के जोधपुर में सिंहासनारूढ़ होने के बाद राव बीका ने पूजनीक चीज़ें लाने के लिए उसपर चढ़ाई की। उस समय अन्य सरदारों तथा उनकी सैन्य के अतिरिक्त पूगल के भाटी भी उसकी सहायतार्थ गये थे।

राव लूणकर्ण के राज्यारम्भ में ही कुछ ठिकानों के सरदार राज्य के विरोधी हो गये, जिसपर उसने उनका दमन करने के लिए ससैन्य प्रस्थान किया। इस अवसर पर उसकी सेना में अन्य सरदारों आदि के अतिरिक्त पूगल का राव हरा भी शामिल था।

(१) वंशक्रम—[१] चाचा [२] वैरसल [३] शेखा [४] हरा [५] वरसिंह [६] जेसा [७] कान्हसिंह [८] आसकर्ण [९] जगदेव [१०] सुदर्शन [११] गणेशदास [१२] विजयसिंह [१३] दलकर्ण [१४] अमरसिंह [१५] अभयसिंह (अनूपसिंह) [१६] रामसिंह [१७] रणजीतसिंह [१८] करणीसिंह [१९] रघुनाथसिंह [२०] महताबसिंह [२१] जीवराजसिंह और [२२] देवीसिंह।

नारनोल के नवाब शेख अबीमीरा पर राव लूणकर्ण की चढ़ाई होने पर ठीक लड़ाई के समय विरोधियों के भड़काने में आकर जिन सरदारों ने उसका साथ छोड़ दिया, उनमें राव हरा भी एक था। इसका परिणाम यह हुआ कि शक्ति कम हो जाने के कारण राव लूणकर्ण इसी लड़ाई में मारा गया।

आंबेर के कछवाहा सांगा की सहायतार्थ जो सेना राव जैतसी ने भेजी थी, उसमें पूगल का राव वरसिंह भी था।

वि० सं० १५८५ (ई० स० १५२८) में राव जैतसी जोधपुर के राव गांगा की सहायतार्थ गया। इस अवसर पर अन्य सरदारों आदि के अतिरिक्त राव वरसिंह भी उसके साथ गया था।

मारवाड़ से वि० सं० १६०२ (ई० स० १५४५) में शेरशाह सूर की मृत्यु हो जाने के बाद राव मालदेव ने जोधपुर पर अधिकार कर लिया और वह मेड़ते के स्वामी जयमल से छेड़-छाड़ करने लगा। तब उस (जयमल)-ने बीकानेर से सहायता मंगवाई। इसपर राव कल्याणमल ने अन्य कई सरदारों के साथ राव वरसिंह को उसकी सहायता के लिए भेजा।

महाराजा कर्णसिंह के राज्य-काल में पूगल का राव सुदर्शन विद्रोही हो गया, तब उसका दमन करने के लिए राजा कर्णसिंह ने ससैन्य पूगल पर चढ़ाई कर गढ़ को घेर लिया। प्रायः एक मास के घेरे के बाद अवसर पाकर सुदर्शन लखवेरा भाग गया। तदनन्तर महाराजा कर्णसिंह ने उसका गढ़ नष्ट करवाकर वहां राज्य का थाना नियत कर दिया। सुदर्शन का लखवेरा में भी पीछा किया जाने पर वहां के जोहियों ने कर्णसिंह की सेवा में उपस्थित हो पेशकशी दी, जिसपर वह बीकानेर लौट गया। इसके बाद पूगल का बंटवारा हुआ, जिसमें शेखा के ज्येष्ठ पुत्र हरा के वंश के गणेशदास को कई गांवों के साथ पूगल की जागीर तथा राव की पदवी दी गई।

वि० सं० १८१८ (ई० स० १७६१) में पूगल के राव दलकर्ण ने अपने एक कामदार को मार डाला। इसपर उस (राव) का पुत्र अमरसिंह उससे

अप्रसन्न होकर बीकानेर चला गया । अमरसिंह से पेशकशी लेकर महाराजा गजसिंह ने पूगल की जागीर उसके नाम कर दी। वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२६) में राज्य की सेना की महाजन पर चढ़ाई होने पर, वहां का ठाकुर वैरिशाल भागकर भावलपुर होता हुआ जैसलमेर चला गया और वहां सेना एकत्र करने लगा। उसके इस राज्य विरोधी षड्यंत्र में पूगल के राव रामसिंह की भी पूरी सहायता थी। पीछे से वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) में महाजन का ठाकुर पूगल जाकर युद्ध की तैयारी करने लगा। उसके शामिल होकर रामसिंह भी राज्य का बहुत बिगाड़ करने लगा। ऐसी दशा में महाराजा रत्नसिंह ने उसका दमन करने के लिए सेना भेजी और इस संबंध में अंग्रेज़-सरकार को भी उचित कार्यवाही करने को लिखा। अनन्तर उसने स्वयं उधर प्रस्थान किया, जिसपर वैरिशाल तो भाग गया और रामसिंह गढ़ के अन्दर घुस गया। कुछ दिनों बाद उसने प्राण-रक्षा का वचन लेकर आत्मसमर्पण कर दिया । फलस्वरूप गढ़ पर राज्य का अधिकार हो गया और वह भाटी शार्दूलसिंह को दे दिया गया। पीछे से रामसिंह के उपस्थित होने पर महाराजा ने उसे गुढ़ा आदि गांव दे दिये। महाराजा के लौट जाने पर कुछ विद्रोही सरदारों ने पूगल के गढ़ पर अधिकार करने का प्रयत्न किया, परंतु उसमें उन्हें सफलता न मिली।

राव रामसिंह का पुत्र रणजीतसिंह था, किंतु वह निःसंतान था, इसलिए उसका छोटा भाई करणीसिंह पूगल की जागीर का स्वामी हुआ। तदनंतर उसका पुत्र रघुनाथसिंह पूगल का अधिकारी हुआ, परंतु वह भी संतानहीन था, इसलिए भूतपूर्व ठाकुर रामसिंह के तीसरे भाई शार्दूलसिंह का पौत्र महताबसिंह, रघुनाथसिंह का उत्तराधिकारी हुआ। महताबसिंह के पश्चात् जीवराजसिंह पूगल का राव हुआ, जिसको अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से ई० स० १६१८ (वि० सं० १६७५) में 'राव बहादुर' का ख़िताब मिला। वि० सं० १६८२ (ई० स० १६२५) में उसकी मृत्यु होने पर उसका पुत्र देवीसिंह वहां का सरदार हुआ, जो पूगल का वर्तमान राव है।

सांडवा

सांडवे के स्वामी राव बीदा के प्रपौत्र, द्रोणपुर के राव सांगा के पुत्र गोपालदास[1] के वंशधर हैं।

राव गोपालदास ने अपने तीन पुत्रों—जसवंतसिंह, तेजसिंह और केशवदास—में अपनी जागीर बीदाहद तीन हिस्सों में बराबर बांट दी, परंतु पाटवी छोटे पुत्र केशवदास को नियत किया, जिसने एक युद्ध में उसके प्राण बचाये थे। इस बंटवारे में जसवन्तसिंह को द्रोणपुर का एक हिस्सा उसके निकटवर्ती गांवों सहित मिला था, जहां उसने अपने पिता के नाम पर 'गोपालपुरा' गांव बसाकर अपना ठिकाना नियत किया। गुजरात पर चढ़ाई होने के समय महाराजा रायसिंह के साथ जसवन्तसिंह भी गया और उसमें उसका पुत्र पृथ्वीराज काम आया। कुछ काल पीछे जसवन्तसिंह की असावधानी से गोपालपुरा उसके अधिकार से निकलकर उसके दूसरे भाई तेजसिंह के अधिकार में चला गया।

'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' तथा 'देशदर्पण' आदि में लिखा है कि उसके पुत्र मनोहरदास को वि० सं० १६४१ (ई० स० १५८४) में

(१) वंशक्रम—[१] गोपालदास [२] जसवंतसिंह [३] मनोहरदास [४] रूपसिंह [५] भारमल [६] लखधीरसिंह [७] दानसिंह [८] धीरतसिंह [९] लालसिंह [१०] भोमसिंह [११] जैतसिंह [१२] रणजीतसिंह [१३] हीरसिंह [१४] मोतीसिंह और [१५] राजा जीवराजसिंह।

मुंहणोत नैणसी की ख्यात के पीछे से बढ़ाये हुए अंश (जि० २, पृ० ४५६) एवं 'आर्य आख्यान कल्पद्रुम' में मनोहरदास के पीछे क्रमश. जगमाल और मोहकमसिंह के नाम दिये हैं। वस्तुत: इनका नाम वंशक्रम में न होना चाहिये, क्योंकि ये सांडवा के जागीरदार कभी नहीं हुए। लखधीरसिंह के नि.संतान मरने पर मोहकमसिंह का पुत्र दानसिंह ककू से जाकर सांडवे का स्वामी हुआ था। संभव है इसी कारण से जगमालसिंह और मोहकमसिंह के नाम ख्यात-लेखकों ने सांडवे की पीढ़ियों में अंकित कर दिये हों। 'देशदर्पण' आदि ख्यातों में धीरतसिंह के पीछे भोमसिंह का नाम है, लालसिंह का नहीं। इसका कारण यही है कि लालसिंह सांडवे का ठाकुर होकर नि:संतान गुज़र गया और फिर उसका भाई भोमसिंह सांडवे का ठाकुर हुआ। इसलिए वंशावली-लेखकों ने लालसिंह के नि संतान होने से उसका नाम ही छोड़ दिया।

महाराजा रायसिंह ने पहले की प्रतिष्ठा के साथ बाघावास (वर्तमान सांडवा) की जागीर देकर अपना उमराव बनाया, परंतु इससे उसको संतोष न हुआ और अपनी पैतृक जागीर द्रोणपुर के न मिलने से वह नाराज़ होकर मारवाड़ चला गया, जहां उसे जालोड़ा की जागीर मिली और वहीं उसका देहांत हुआ। बीकानेर के स्वामी महाराजा कर्णसिंह ने दक्षिण से लौटते समय उपर्युक्त मनोहरदास के पुत्र रूपसिंह को अपने साथ ले लिया और बीदाहद के पैतृक गांवों के साथ उसे बाघावास देकर उसका पहले का कुरब क़ायम रखा। उस समय वहां चौधरी गोपी नामक गोदारा जाट बड़ा प्रबल था, जिसने वहां रूपसिंह का अधिकार न होने दिया। इसपर रूपसिंह ने उसे मारकर वहां अधिकार कर लिया। तब से बाघावास 'सांडवा' कहलाने लगा।

वि० सं० १७२५ (ई० स० १६६८) में रूपसिंह की मृत्यु होने पर उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र भारमल हुआ। जब महाराजा सुजानसिंह के समय जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई हुई, उस समय भारमल और कोठारी रतनसी उक्त महाराजा (अजीतसिंह) को समझाने के लिए भेजे गये। अजीतसिंह ने भारमल को अपने शामिल होने को कहा, परंतु उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया, जिससे उक्त महाराजा ने तेजसिंहोतों (बीदावतों) के साथ उसे भी क़ैद कर लिया। फिर उसने बीकानेर पर चढ़ाई की, किन्तु उसमें उसे सफलता न हुई। तब विवश होकर अन्य सरदारों के साथ उसने भारमल को भी छोड़ दिया। वि० सं० १७६३ (ई० स० १७०६) में भारमल का देहांत होने पर उसका पुत्र लखधीरसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ, जिसके वि० सं० १७८५ (ई० स० १७२८) में निःसंतान गुज़र जाने पर उपर्युक्त मनोहरदास के दूसरे पुत्र जगमाल के पौत्र दानसिंह को सांडवे की जागीर मिली। उसने सांडवे के गढ़ की नींव डाली। वह बीकानेर की तरफ़ की कई लड़ाइयों में शामिल रहा।

जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने वि० सं० १७९० (ई० स० १७३३) में बीकानेर पर चढ़ाई की और उधर से बख़्तसिंह ने खरबूज़ी के गढ़ पर

आक्रमण किया। उस समय दानसिंह बख़्तसिंह के मुक़ाबले पर खरबूज़ी (अब सुजानगढ़) में नियत था। तदनन्तर महाराजा सुजानसिंह ने उसे खरबूज़ी का गढ़ छोड़कर बीकानेर चले आने का हुक्म दिया। तब वह बीकानेर जाकर महाराजा के शामिल अभयसिंह के मुक़ाबले में जा डटा। वि० सं० १८०३ (ई० स० १७४६) में महाराजा जोरावरसिंह का देहांत होने पर महाराजा गजसिंह बीकानेर का स्वामी हुआ। उस समय उसके भाई अमरसिंह के जोधपुर की सेना के साथ चढ़ आने पर दानसिंह का कुंवर धीरतसिंह महाराजा के पक्ष में रहकर लड़ा।

इस घटना के थोड़े ही समय पीछे महाराजा अभयसिंह और बख़्तसिंह में विरोध हो गया। बख़्तसिंह दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह के पास गया और पठानों के साथ के युद्ध में भाग लेने के पश्चात् वहां से एक बड़ी सेना लेकर सांभर गया। फिर उसने अपनी सहायता के लिए महाराजा गजसिंह को भी कहलाया, जो उसकी सहायतार्थ गया। उस समय महाराजा के साथ कुंवर धीरतसिंह की अध्यक्षता में सांडवे की जमीयत भी उपस्थित थी। महाराजा अभयसिंह ने बख्तसिंह का बल बढ़ा हुआ देखा तो उसने मल्हार राव होल्कर को अपना सहायक बनाया और मरहठी सेना की सहायता पाकर बख़्तसिंह पर चढ़ाई की। उस समय जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह और मल्हारराव होल्कर के प्रयत्न से दोनों भाइयों (अभयसिंह तथा बख़्तसिंह) में मेल हो गया और महाराजा गजसिंह बीकानेर लौट गया।

जोधपुर के महाराजा अभयसिंह का देहांत होने पर वि० सं० १८०६ (ई० स० १७४९) में उसका पुत्र रामसिंह वहां का स्वामी हुआ, किंतु उसके और नागोर के स्वामी बख़्तसिंह के बीच वैमनस्य हो गया। रामसिंह के अपमानजनक व्यवहार से जोधपुर के अधिकांश सामंत बख़्तसिंह से जा मिले और उसे जोधपुर का राज्य लेने के लिए प्रेरित करने लगे। इसपर उसका सहास बढ़ गया और रामसिंह की सेना के पहुंचने पर उसने मुक़ाबले के लिए प्रस्थान किया। इस

अवसर पर भी बख़्तसिंह ने बीकानेर से सहायता चाही। तब महाराजा गजसिंह ने स्वयं अपनी सेना के साथ प्रयाण किया। उस समय भी महाराजा के सैन्य में सांडवे की जमीयत-सहित कुंवर धीरतसिंह विद्यमान था। महाराजा रामसिंह और बख़्तसिंह के बीच कई लड़ाइयां हुईं, जिनमें महाराजा रामसिंह की पराजय हुई और बख़्तसिंह का जोधपुर पर अधिकार हो गया। फिर रामसिंह ने जयआपा सिंधिया से सहायता प्राप्त-कर बख़्तसिंह से युद्ध का आयोजन किया।

वि० सं० १८०६ (ई० स० १७५२) में महाराजा बख़्तसिंह मर गया और उसका पुत्र विजयसिंह जोधपुर का स्वामी हुआ। जयआपा ने रामसिंह का पक्ष लेकर विजयसिंह पर चढ़ाई की, उस समय विजयसिंह का मुख्य सहायक बीकानेर का स्वामी गजसिंह था। जयआपा के मुक़ाबले में विजयसिंह की सहायतार्थ उसके जाने पर उक्त युद्ध में धीरतसिंह ने भी बीकानेर की सेना में रहकर युद्ध किया था।

उन्हीं दिनों दिल्ली के बादशाह अहमदशाह के समय उसका दीवान मंसूरअली बाग़ी हो गया, जिसपर बादशाह की तरफ़ से फ़रमान पहुंचने पर बीकानेर से महाराजा गजसिंह ने अपनी सेना भेजी, उसमें कुंवर धीरतसिंह भी सम्मिलित हुआ। युद्ध समाप्त होने पर उस (धीरतसिंह) की अच्छी सेवा के उपलक्ष्य में बादशाह की ओर से उसको ख़िलअत मिली।

वि० सं० १८२० (ई० स० १७६३) में जैसलमेर के महारावल मूल-राज के भेजे हुए मेहता मानसिंह ने आकर महाराजा गजसिंह से दाउदपुत्रों आदि का नोहर के कोट पर छलपूर्वक अधिकार करने का समाचार निवेदन किया और उससे सहायता की याचना की। फिर विद्रोहियों के बल्लर में नगर बसने की सूचना पाने पर महाराजा ने उनके विरुद्ध एक विशाल सेना भेजी, जिसमें सांडवे का ठाकुर धीरतसिंह भी अपने राजपूतों-सहित शामिल था। दाउदपुत्रों ने संधि की बातचीत की, पर बीकानेरी सेना के इनकार करने पर उन्होंने अवसर पाकर अचानक उसपर

आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में बीकानेर की सेना की पराजय हुई और कई सरदारों के अतिरिक्त ठाकुर धीरतसिंह ने भी वीरगति पाई। उसके पीछे लालसिंह सांडवे का ठाकुर हुआ, जिसकी निःसंतान मृत्यु होने पर उसका छोटा भाई भोमसिंह वि० सं० १८२७ (ई० स० १७७०) में उसका उत्तराधिकारी हुआ। ठाकुर भोमसिंह ने वि० सं० १८३० (ई० स० १७७३) के लगभग खरबूजी (सुजानगढ़) का गढ़ बनवाया तथा वि० सं० १८३१ (ई० स० १७७४) में अपने नाम पर भोमपुरा गांव बसाया। तदनन्तर वि० सं० १८५२ (ई० स० १७९५) में जैतसिंह सांडवे का स्वामी हुआ, जिसने वि० सं० १८५६ (ई० स० १७९९) में सांडवे में चौतीना का कुआं खुदवाया, जो जैतसागर नाम से प्रसिद्ध है।

जोधपुर के महाराजा भीमसिंह की मृत्यु होने पर सिंघवी इन्द्रराज आदि ने उसके चचेरे भाई मानसिंह को वहां का राजा बनाया। किन्तु इसके थोड़े ही दिनों बाद मृत महाराजा की राणी से धोंकलसिंह नामक पुत्र होने का संवाद प्रकट होकर वहां गृह कलह उत्पन्न हो गया। जोधपुर के अधिकांश बड़े बड़े सरदारों ने धोंकलसिंह का पक्ष लिया और जयपुर के महाराजा जगतसिंह तथा बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह को अपना मुख्य सहायक बनाया। फिर धोंकलसिंह को गद्दी दिलाने के लिए महाराजा जगतसिंह, महाराजा सूरतसिंह, अमीरखां पठान तथा जोधपुर के सरदारों ने जोधपुर को जाकर घेर लिया। उस समय सांडवे की जमीयत-सहित ठाकुर जैतसिंह भी बीकानेर की सेना के साथ था। राठोड़ और कछवाहे सरदारों की इस संयुक्त सेना ने छः मास तक वहां घेरा रक्खा। उस समय अधिकांश मारवाड़ पर धोंकलसिंह के नाम की दुहाई फिर गई थी। केवल जोधपुर के दुर्ग पर ही, जो महाराजा मानसिंह के अधिकार में था, क़ब्ज़ा होना बाक़ी था। जोधपुर नगर पर इस संयुक्त सेना का पूर्णतः अधिकार था। इतने में सैनिकों की तनख़्वाह चुकाने के संबंध में जोधपुर के सरदारों और कछवाहों में अनबन हो गई। यह अच्छा अवसर देख मानसिंह ने अमीरखां को अपनी ओर मिला लिया।

महाराजा सूरतसिंह उस समय ज्वर-पीड़ित था, अतएव वह राठोड़ और कछवाहों की सेना में फूट देख बीकानेर लौट गया। इससे धोंकलसिंह का पक्ष निर्बल हो गया। इतने में महाराजा मानसिंह की तरफ़ से सिंघवी इंद्रराज ने कुछ सेना के साथ जाकर जयपुर राज्य में उपद्रव कर दिया, जिससे महाराजा जगतसिंह भी अपनी सेना के साथ जयपुर को लौट गया और मानसिंह के विरोधी सरदार नागोर चले गये। इस प्रकार सहज ही में जोधपुर का घेरा उठ जाने से महाराजा मानसिंह स्वच्छन्द हो गया और फिर उसने अमीरख़ां पठान-द्वारा, ठाकुर सवाईसिंह आदि धोंकलसिंह के पक्षपाती सरदारों को मरवा डाला।

तदनंतर महाराजा मानसिंह ने महाराजा सूरतसिंह से बदला लेने का निश्चय कर वि० सं० १८६४ (ई० स० १८०७) में बीकानेर पर सेना रवाना की। उस समय सांडवे का ठाकुर जैतसिंह कई अन्य सरदारों के साथ सीमा प्रांत के प्रबंध के लिए नियत था। उसने वहां पर नियुक्त बीकानेरी सेना के साथ शत्रु सेना का वीरता एवं चतुराई से सामना किया तथा विपक्षियों का बहुतसा माल असबाब अपने अधिकार में कर वह अन्य सरदारों-सहित बीकानेर लौट गया। इसपर महाराजा सूरतसिंह ने उसका यहां तक सम्मान किया कि अपने रुमाल से उसके वदन को झाड़ा।

वि० सं० १८७३ (ई० स० १८१६) में मीरख़ां पठान की बीदावतों के इलाक़े पर चढ़ाई होने का समाचार पाकर महाराजा सूरतसिंह ने मेहता मेघराज सहजरामोत को ससैन्य उधर भेजा। उक्त मेहता ने बीदासर तथा सांडवे में थाने स्थापित कर वहां का समुचित प्रबन्ध किया।

वि० सं० १८८३ (ई० स० १८२६) में ठाकुर जैतसिंह की निःसंतान मृत्यु होने पर ककू के ठाकुर जवानीसिंह का पुत्र रणजीतसिंह सांडवे का स्वामी हुआ।

महाराजा रत्नसिंह के समय लाहौर के सिक्खों के साथ की लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ वि० सं० १९०३ (ई० स० १८४६) में

बीकानेर राज्य की सेना भेजी गई। उसमें सांडवे के ठाकुर की तरफ़ से उसका मंत्री भी वहां के राजपूतों-सहित सम्मिलित हुआ। इस सेवा के उपलक्ष्य में महाराजा ने उसे सिरोपाव आदि देकर सम्मानित किया।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में भारत-व्यापी ग़दर के दमन करने में ठाकुर रणजीतसिंह अपने राजपूतों-सहित सब से प्रथम राज्य की सेना में सम्मिलित हुआ। इससे प्रसन्न होकर महाराजा सरदारसिंह ने उस-(रणजीतसिंह)को हाथी तथा सिरोपाव प्रदान किया। इस अवसर पर जहां-जहां राज्य की सेना गई, वहां-वहां ठाकुर रणजीतसिंह ने भी विद्यमान रहकर अंग्रेज़ सरकार की अच्छी सेवा की। विद्रोहियों के मुक़ाबले में एक बार उसका भाई पन्नसिंह भी घायल हुआ। उस(रणजीतसिंह)का पुत्र जसवंतसिंह पिता की विद्यमानता में ही मर गया, परन्तु उसकी पत्नी गर्भवती थी। कुछ दिनों पीछे उससे हीरसिंह का जन्म हुआ। वि० सं० १९२३ (ई० स० १८६६) में महाराजा सरदारसिंह ने रणजीतसिंह को पदच्युत कर हीरसिंह को सांडवे का ठाकुर नियत किया और हाथी तथा सिरोपाव देकर उसका सम्मान बढ़ाया।

वि० सं० १९४४ (ई० स० १८८७) में महाराजा डूंगरसिंह का देहांत हो गया। उस समय वर्तमान महाराजा साहब की बाल्यावस्था के कारण शासन-कार्य के लिए रीजेंसी कौंसिल बनाई गई, जिसका ठाकुर हीरसिंह भी एक सदस्य बनाया गया। ठाकुर हीरसिंह के तीन पुत्र हुकमसिंह, देवीसिंह और उदयसिंह हुए, पर उन तीनों की ही उसके जीवन-काल में मृत्यु हो गई। इसलिए वि० सं० १९४८ (ई० स० १८९१) में उस (हीरसिंह)का देहांत होने पर उसके चाचा दूलहसिंह का पुत्र मोतीसिंह सांडवे का स्वामी हुआ, किंतु उसकी भी वि० सं० १९८० (ई० स० १९२३) में निःसंतान मृत्यु हो गई। तब गांव सैरूने के ठाकुर वैरिशालसिंह का दूसरा पुत्र जीवराजसिंह उस(मोतीसिंह)का उत्तराधिकारी होकर सांडवे का स्वामी हुआ। नियमानुसार महाराजा साहब ने उसकी हवेली पर जाकर मातमपुर्सी की रस्म पूरी की।



मेजर जेनरल सरदार बहादुर राजा जीवराजसिंह
सी बी ई, ओ. बी. ई. [सांडवा]

ठाकुर जीवराजसिंह का जन्म वि० सं० १९३५ फाल्गुन वदि ११ (ई० स० १८७९ ता० १७ फ़रवरी) को हुआ। प्रारंभिक शिक्षा बीकानेर के वाल्टर नोबल्स स्कूल (अब हाई स्कूल) में प्राप्त करने के अनन्तर वि० सं० १९५६ (ई० स० १८९९) में वह १३ वीं शेखावाटी रेजिमेंट में डाइरेक्ट कमीशन की जगह भरती हुआ। ई० स० १९०१-२ में सीमा-प्रान्त के वज़ीरिस्तान की लड़ाई में वह अपनी रेजिमेंट के साथ गया, जहां का तमग़ा उसे मिला। फिर वर्तमान महाराजा साहब ने उसको वहां से बुलाकर वि० सं० १९६१ (ई० स० १९०४) में अपना ए० डी० सी० नियत किया तथा अपने यहां की पैदल सेना (जो अब सादूल लाइट इनफेंट्री कहलाती है) का असिस्टेंट कमांडेंट बनाकर कैप्टेन की उपाधि दी। इसके दो वर्ष पीछे इनकी यूरोप-यात्रा के समय भी वह इनके साथ रहा।

ई० स० १९०९ (वि० सं० १९६६) में गंगा रिसाले (केमल कोर) के असिस्टेंट कमांडिंग ऑफ़िसर के पद पर उसकी नियुक्ति हुई। उसी वर्ष उसकी अच्छी सेवा से प्रसन्न होकर महाराजा साहब ने अपनी वर्ष गांठ पर लाखणसर का ठिकाना जागीर में देकर उसको ताज़ीम और पैर में स्वर्णाभूषण पहनने का सम्मान प्रदान किया। ई० स० १९११ (वि० सं० १९६८) में महाराजा साहब स्वर्गवासी श्रीमान् सम्राट् जॉर्ज पञ्चम के राज्याभिषेकोत्सव में सम्मिलित होने के लिए पुनः लंडन गये। उस समय भारत के देशी राज्यों से फ़ौजी अफ़सर भी वहां बुलाये गये थे, इसलिए इन्होंने बीकानेर-राज्य की तरफ़ से जीवराजसिंह को लंडन भेजा। वहां उसे स्वयं सम्राट् ने अपने हाथ से राज्याभिषेकोत्सव का पदक (Coronation Medal) प्रदान किया। तदनंतर ई० स० १९११ में ही उक्त सम्राट् ने भारत में आकर दिल्ली में राज्याभिषेकोत्सव का दरबार किया। उस अवसर पर भी वह महाराजा के साथ उपस्थित रहा और उसे दिल्ली दरबार का पदक मिला। उसी वर्ष वह गंगा रिसाले का कमांडिंग ऑफ़िसर नियत होकर मेजर बनाया गया।

ई० स० १९१४ (वि० सं० १९७१) में यूरोप में जिस युद्ध का सूत्रपात

आस्ट्रिया ने किया था, जर्मनी ने उसमें सम्मिलित होकर उसे विश्वव्यापी महासमर का रूप दे दिया। ऐसी दशा में अंग्रेज़ सरकार को भी वाध्य होकर उसमें भाग लेना पड़ा। महाराजा साहव ने अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ अपनी सेना रणक्षेत्र में भेजी और स्वयं भी फ्रांस के रणक्षेत्र में पहुंचे। उस समय ठाकुर जीवराजसिंह गंगारिसाले के साथ मिश्र (Egypt) के मोर्चे पर भेजा गया, जहां उसने कई लड़ाइयों में वड़ी वीरता और रण-कौशल का परिचय दिया, जिसकी अंग्रेज़ सरकार के उच्च अफ़सरों—लेफ़्टेनेंट जेनरल सर मैक्सवेल, कमांडर-इन-चीफ़ इजिप्शियन फ़ोर्सेज़, सर ए० टी० मरे आदि—ने अपनी रिपोर्टों में वड़ी प्रशंसा की।

स्वेज़ नहर, ट्रिपोलिक वाउन्डरी, मेडिटरेनियन सी कोस्ट और पैलेस्टाइन में गंगा रिसाले ने वहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किये, जिनकी अंग्रेज़ सरकार ने वड़ी प्रशंसा की। इस युद्ध के समय की गई सेवाओं के उपलक्ष्य में महाराजा साहव ने ठाकुर जीवराजसिंह को ई० स० १९१५ (वि० सं० १९७२) में लेफ़्टेनेंट कर्नल का ओहदा प्रदान किया। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसको युद्ध के तीन भिन्न-भिन्न तमगे (War Medals) मिलने के अतिरिक्त ई० स० १९१६-१७ में क्रमशः 'वहादुर' और 'सरदार वहादुर' तथा 'ओ० वी० ई०' (आर्डर ऑव् दि ब्रिटिश इंडिया, क्रमशः द्वितीय और प्रथम श्रेणी) की उपाधियां मिलीं। इनके अतिरिक्त उसे सर्वियन सरकार की ओर से 'आर्डर ऑव् दि सर्वियन व्हाइट ईगल' (चतुर्थ श्रेणी) का सम्मान भी प्राप्त हुआ।

ई० स० १९१७ (वि० सं० १९७४) में महाराजा साहव वार केविनेट में शरीक होकर वीकानेर लौटे, तव युद्धक्षेत्र से ठाकुर जीवराजसिंह को भी अपने साथ ले आये। इसके थोड़े दिनों वाद ही जव ठाकुर हरिसिंह गंगारिसाले को देखने के लिए इजिप्ट गया, उस समय जीवराजसिंह स्थानापन्न मिलिटरी मेम्वर नियत होकर 'वीकानेर वार वोर्ड' की कार्यकारिणी सभा का सदस्य और चीफ़ रिक्रूटिंग ऑफ़िसर वनाया गया। पिछले दोनों पदों का कार्य वह युद्ध की समाप्ति तक करता रहा। उसी वर्ष महाराजा साहव ने उसको

'मास्टर ऑव् सेरिमनीज़' बनाकर 'कर्नल' का ओहदा प्रदान किया। युद्ध समाप्त हो जाने पर इन्होंने उसकी युद्ध के समय की हुई सेवाओं की क़द्र कर उसकी जागीर में वृद्धि की।

युद्ध समाप्त होने पर जब संधि-सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए महाराजा साहब यूरोप गये, उस समय ठाकुर जीवराजसिंह भी इनके साथ गया। महाराजा ने उस(ठाकुर जीवराजसिंह)की सेवाओं से प्रसन्न होकर उसे 'ब्रिगेडियर-जेनरल' की उपाधि प्रदान की तथा ई० स० १६२० (वि० सं० १६७७) में अंग्रेज़ सरकार ने उसको 'सी० बी० ई०' (कमांडर ऑव् दि आर्डर ऑव् ब्रिटिश एम्पायर) की उपाधि प्रदान की।

ई० स० १६२२ (वि० सं० १६७६) में महाराजा साहब इंग्लैंड गये, उस समय भी ये उसको 'चीफ़ ऑव् दि स्टाफ़' बनाकर अपने साथ ले गये। इसके एक वर्ष पीछे इन्होंने वीकानेर के क़िले और बड़े कारख़ाने के काम उसके सुपुर्द किये। तदनंतर वह देवस्थान का प्रवन्धक बनाया गया और ई० स० १६२४ (वि० सं० १६८१) में गेस्ट हाउसों का कार्य भी उसे सौंपा गया। इसके दो वर्ष बाद ई० स० १६२६ (वि० सं० १६८३) में वह वीकानेर में 'सरदार एडवाइज़री कमेटी' का सदस्य निर्वाचित किया गया।

जेनेवा (स्विट्ज़रलैन्ड, यूरोप) में होनेवाली लीग ऑव् नेशन्स (राष्ट्र-संघ) की बैठकों में सम्मिलित होने के लिए ई० स० १६२४ में महाराजा साहब यूरोप गये, उस समय भी ठाकुर जीवराजसिंह 'चीफ़ ऑव् दि स्टॉफ़' की हैसियत से इनके साथ विद्यमान था। इसी प्रकार वि० सं० १६८७ (ई० स० १६३०) में राष्ट्र संघ, राउंड टेबल कान्फरेंस तथा इंपीरियल कान्फरेंस में सम्मिलित होने के हेतु महाराजा साहब पुनः यूरोप गये तब भी वह 'चीफ़ ऑव् दि स्टॉफ़' बनकर इनके साथ गया।

ई० स० १६३२ (वि० सं० १६८६) में ठाकुर जीवराजसिंह वीकानेर की 'राजसभा' का सदस्य चुना गया। इसके एक वर्ष पीछे स्वास्थ्य ठीक न रहने से उसने महाराजा साहब से निवेदन कर पेंशन प्राप्त की। उसी वर्ष अपनी वर्ष गांठ के अवसर पर महाराजा साहब ने उसको अपनी सेना का

ऑनरेरी मेजर-जेनरल बनाया। पहले वह स्थानीय वाल्टर-कृत राजपुत्र हितकारिणी सभा का एक सदस्य था; फिर उपसभापति का पद रिक्त होने पर वह उस पद पर नियत किया गया और इस समय वह बीकानेर की लेजिस्लेटिव असेंबली का भी एक सदस्य है। ठाकुर जीवराजसिंह ने सांडवे का स्वामी होने पर एक लाख रुपये व्यय कर वहां के गढ़ को दुरुस्त करा कई नये भवन बनवाये तथा वहां लक्ष्मीनारायण एवं देवी के मंदिर भी बनवा दिये हैं।

महाराजा साहब की ठाकुर जीवराजसिंह पर पूर्ण कृपा है। वि० सं० १६८६ और १६६३ (ई० स० १६३२ और १६३६) में दो बार इन्होंने सांडवे जाकर उसको गौरवान्वित किया है। परलोकवासी सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की रजत जयन्ती के अवसर पर ई० स० १६३५ (वि० सं० १६६२) में लालगढ़ में दरबार होने पर उसको रजत जयन्ती पदक दिया गया।

उसके तीन पुत्र हैं। ज्येष्ठ पुत्र खेतसिंह का विवाह उदयपुर के भूतपूर्व महाराणा फ़तहसिंह के भतीजे शिवरती के महाराज हिम्मतसिंह की पुत्री से हुआ है। उक्त विवाह के अवसर पर वर्त्तमान महाराणा सर भूपालसिंहजी ने उसको हाथी प्रदान कर सम्मानित किया।

ठाकुर जीवराजसिंह की गणना बीकानेर राज्य के विश्वासपात्र और उच्च वर्ग के सम्मानित सरदारों में होती है। वह राजा और प्रजा का हितैषी समझा जाता है। अपनी असाधारण प्रतिभा के कारण ही उसने इतनी उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त की है। राठोड़ों के योग्य ही सारे वीरोचित गुणों का उसमें समावेश है। वीर, साहसी, रणकुशल और नीतिज्ञ होने के साथ ही वह प्रखर बुद्धिशाली और उदार-चित्त व्यक्ति है। महाराजा साहब ने अक्टोबर सन् १६३७ में होनेवाले, अपने पचास वर्ष के शासन के, स्वर्ण जयन्ती महोत्सव में उसे वंशपरंपरा के लिए 'राजा' की उपाधि देकर सम्मानित किया है और वि० सं० १६६४ (ई० स० १६३८) में उसको अपने यहां की एक्ज़िक्युटिव कौंसिल का एक सदस्य भी नियत किया है।

गोपालपुरा

राव बीदा के प्रपौत्र राव गोपालदास की मृत्यु होने पर उसका पुत्र जसवन्तसिंह द्रोणपुर का स्वामी हुआ। उसने द्रोणपुर की सीमा में गोपालपुरा गांव बसाया और वहां ठिकाना बांधा, परन्तु थोड़े दिनों बाद ही उसकी जागीर भी चाहड़वास के स्वामी तेजसिंह ने दबा ली। तेजसिंह का ज्येष्ठ पुत्र चन्द्रभान हुआ, जिसका देहान्त होने पर उसके पुत्र नारायणदास[1] की जागीर में गोपालपुरा और उसके चाचा रामचन्द्र की जागीर में चाहड़वास रहा। तेजसिंह के वंशज 'तेजसिंहोत बीदावत' कहलाते हैं।

महाराजा सुजानसिंह के राज्यकाल में उस (सुजानसिंह) की अनुपस्थिति के समय जोधपुर के स्वामी अजीतसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई की। उस समय 'तेजसिंहोत बीदावत' विद्रोही थे, पर वे अजीतसिंह के शामिल न हुए। इसपर अप्रसन्न होकर अजीतसिंह ने गोपालपुरा के ठाकुर कर्मसेन को (जिसने इस दुष्कार्य में सहयोग देना स्वीकार न किया था) बंदी बना लिया। अन्त में जब अजीतसिंह असफल होकर जोधपुर लौटा, तब उसने कर्मसेन को मुक्त कर दिया।

कर्मसेन के पीछे हरनाथसिंह, उदयसिंह और भोपालसिंह क्रमशः गोपालपुरा के स्वामी हुए। महाराजा रत्नसिंह के समय वि० सं० १८९० (ई० स० १८३३) में लोढ़सर के बीदावत रूपसिंह का उत्पात बहुत बढ़

(१) वंशक्रम—[१] तेजसिंह [२] चन्द्रभान [३] नारायणदास [४] हिम्मतसिंह [५] कर्मसेन [६] हरनाथसिंह [७] उदयसिंह [८] भोपालसिंह [९] मंगलसिंह [१०] हंमीरसिंह [११] देवीसिंह [१२] रामसिंह [१३] जगमालसिंह और [१४] मानसिंह।

श्रीराम मीरमुंशी-रचित, 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तक में भोपालसिंह की जगह गोपालसिंह एवं हंमीरसिंह की जगह अमरसिंह नाम दिये हैं, किन्तु अन्य ख्यातों आदि में भोपालसिंह और हंमीरसिंह नाम ही मिलते हैं।

गया। तब महाराजा ने उसपर सुराणा लालचन्द को सेना-सहित भेजा। मारवाड़ में लड़ाई होने पर कितने ही सरदारों के साथ गोपालपुरे के ठाकुर भोपालसिंह का छोटा पुत्र भारतसिंह, वीरतापूर्वक लड़ता हुआ मारा गया। तदनन्तर भोपालसिंह का ज्येष्ठ पुत्र मंगलसिंह वहां का स्वामी हुआ।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर में विद्रोहियों का दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ गोपालपुरे के ठाकुर हंमीरसिंह (मंगलसिंह का पुत्र) ने भी पूरी-पूरी सहायता पहुंचाई। हम्मीरसिंह के बाद देवीसिंह गोपालपुरे का स्वामी हुआ, जिसके निःसन्तान मरने पर उसके कुटुम्बी जसवन्तसिंह का पुत्र रामसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। रामसिंह के पीछे जगमालसिंह गोपालपुरे का स्वामी हुआ, जिसका उत्तराधिकारी ठाकुर मानसिंह वहां का वर्त्तमान सरदार है।

वाय

वि० सं० १७६६ (ई० स० १७३६) में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई हुई, उस समय श्रीरंग के पांचवे वंशधर पृथ्वीराज के छोटे पुत्र दौलतसिंह ने राज्य की अच्छी सेवा की, जिसके बदले में महाराजा जोरावरसिंह ने उस (दौलतसिंह) को वाय की जागीर दी। उसके वंश के 'श्रृंगोत बीका' कहलाते हैं।

---

(१) वंशक्रम—[१] दौलतसिंह [२] बहादुरसिह [३] पेमसिंह [४] रणजीतसिंह [५] शिवजीसिंह [६] जगमालसिंह [७] गोविन्दसिंह और [८] अमरसिंह।

'देशदर्पण' में वाय के स्वामियों की जो वंशावली दी है, उसमें पेमसिंह के पूर्व दौलतसिंह का नाम देकर उसके पूर्वाधिकारी का नाम बहादुरसिंह बतलाया है, परन्तु मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में लिखित वाय के वंशवृक्ष में क्रमशः दौलतसिंह, बहादुरसिंह, चैनसिंह और पेमसिंह के नाम दिये हैं। नैणसी की ख्यात के पीछे से बढ़ाये हुए अंश (जि० २, पृ० ४५१) में वाय के सरदारों की जो वंशावली दी है, उसमें दौलतसिंह, बहादुरसिंह और पेमसिंह के नाम दिये हैं, चैनसिंह का नाम नहीं है।

महाराजा गजसिंह की गद्दीनशीनी से नाराज़ होकर उसका बड़ा भाई अमरसिंह अन्य विद्रोही सरदारों से मिलकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह की सेना के साथ बीकानेर पर चढ़ गया, तब महाराजा गजसिंह अपने संबंधियों एवं प्रमुख सरदारों के साथ शत्रुसेना का मुक़ाबला करने के लिए गया। उस समय दौलतसिंह बीकानेर की सेना की हरावल में था।

वि० सं० १८०६ (ई० स० १७५२) में दिल्ली के बादशाह अहमदशाह ने महाराजा (गजसिंह) को 'राजराजेश्वर, महाराज-शिरोमणि' का खिताब देकर सम्मानित किया। उस समय दौलतसिंह का एक पुत्र भोपतसिंह महाराजा के साथ विद्यमान था। बादशाह ने उसको भी सिरोपाव देकर सम्मानित किया। वि० सं० १८१३ (ई० स० १७५६) में नोहर में सिक्खों का उपद्रव बढ़ने पर दौलतसिंह आदि कई प्रमुख व्यक्ति उधर का प्रबंध करने के लिए भेजे गये।

वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेरी सहायक सेना के साथ वाय का मंत्री भी गया था, जिसे लड़ाई की समाप्ति पर महाराजा ने सोने के कड़े और सिरोपाव पुरस्कार में दिये।

महाराजा सरदारसिंह के राज्य-काल में वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में अंग्रेज़ी सेना का विद्रोह हो गया, जो सारे भारत में फैल गया। उस समय महाराजा सरदारसिंह ने अपनी सेना-सहित अंग्रेज़ सरकार को पूरी-पूरी मदद पहुंचाई। इस अवसर पर अन्य ठिकानों के समान वाय के स्वामी ने भी अच्छी सेवा बजाई।

वर्तमान महाराजा साहब के सिंहासनारूढ़ होने पर वाय का ठाकुर जगमालसिंह रीजेंसी कौंसिल का सदस्य निर्वाचित किया गया। इस पद पर वह ई० स० १८९० (वि० सं० १९४७) तक रहा। उसका उत्तराधिकारी-गोविंदसिंह हुआ।

उस(गोविंदसिंह)के पुत्र की उसकी विद्यमानता में ही मृत्यु हो

गई। इसलिए गोविंदसिंह के पश्चात् उसका पौत्र अमरसिंह वाय का ठाकुर हुआ, जो वहां का वर्तमान सरदार है।

जसाणा

भटनेर से भट्टी हयातखां महाराजा अनूपसिंह के समय सेना लेकर बीकानेर पर चढ़ा, उस समय उसका श्रीरंग (शृंग) के चौथे वंशधर खड्गसेन से सिरसा में युद्ध हुआ, जिसमें वह (खड्गसेन) काम आया। इस सेवा के उपलक्ष्य में उसके पुत्र अमरसिंह[1] को वि० सं० १७५१ (ई० स० १६९४) में यह ठिकाना मिला। उसके वंश के 'शृंगोत-बीका' कहलाते हैं।

महाराजा सूरतसिंह के राज्य-समय वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) में बीकानेर से दिल्ली वकील भेजकर विद्रोही-सरदारों का दमन करने के लिए अंग्रेज़-सरकार से सेना मंगवाई गई। इसपर जेनरल एलनर सरकारी फ़ौज लेकर बीकानेर गया। फिर कई विद्रोही सरदारों का दमन करने के उपरान्त वह सेना-सहित जसाणा गया। कुछ देर तक तो वहां के ठाकुर अनूपसिंह ने अंग्रेज़ी सेना का मुक़ावला किया, पर पीछे से वह हारकर शेखावाटी में भाग गया।

वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) में सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेर की सहायक सेना के साथ जसाणे की तरफ़ से भोमसिंह भी था, जिसको लड़ाई की समाप्ति होने पर महाराजा रत्नसिंह ने मोतियों का चौकड़ा और सिरोपाव पुरस्कार में दिये।

---

(१) वंशक्रम—[१] अमरसिंह [२] साहिबसिंह [३] भवानीसिंह [४] संग्रामसिंह [५] अनूपसिंह [६] लालसिंह [७] मेघसिंह [८] शक्तिसिंह [९] शार्दूलसिंह [१०] जयसिंह और [११] वीरेन्द्रसिंह।

मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में अमरसिंह के बाद लाभसिंह का नाम दिया है, परन्तु 'मुंहणोत नैणसी की ख्यात' और 'देशदर्पण' आदि में अमरसिंह के बाद लाभसिंह का नाम नहीं है और साहिबसिंह का नाम ही दिया है, जैसा कि ऊपर के वंशक्रम में दिखलाया है।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के अवसर पर महाराजा सरदारसिंह के साथ अन्य ठिकानों के समान जसाणे के स्वामी ने भी अंग्रेज़ों को पूरी-पूरी सहायता पहुंचाई।

महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में बीकानेर के कुछ सरदार विद्रोहाचरण में प्रवृत्त हो गये। तब जसाणे का स्वामी मेघसिंह भी गिरफ़्तार किया जाकर पांच वर्ष के लिए देवली की छावनी में भेज दिया गया और उसकी जागीर उसके पुत्र शक्तिसिंह के नाम कर दी गई।

शक्तिसिंह का उत्तराधिकारी उसका छोटा भाई शार्दूलसिंह हुआ। तदनन्तर उसका पुत्र जयसिंह वहां का सरदार हुआ। उसने अजमेर के मेयो कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की थी और फिर उसको बीकानेर राज्य में तहसीलदारी का पद मिला। वह सरदार एडवाइज़री कमेटी का सदस्य और राज्य-सभा का मेंबर भी था। वह होनहार और नीतिज्ञ होने के साथ ही उदार-चित्त व्यक्ति था। वि० सं० १९९४ (ई० स० १९३७) में उसकी मृत्यु होने पर उसका पुत्र वीरेन्द्रसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ, जो जसाणे का वर्तमान ठाकुर है।

जैतपुर

जैतपुर के सरदार रावतोत कांधल राठोड़ हैं और उनकी उपाधि रावत है। वि० सं० १६५८ (ई० स० १६०१) में महाराजा रायसिंह ने मनोहरदास के पुत्र चंद्रसेन[1] को जैतपुर का ठिकाना देकर ताज़ीम का

---

(१) वंशक्रम—[१] चंद्रसेन [२] देवीसिंह [३] अर्जुनसिंह [४] सूरसिंह [५] स्वरूपसिंह [६] सरदारसिंह [७] ईश्वरीसिंह [८] कानसिंह [९] मूलसिंह [१०] माधवसिंह और [११] रूपसिंह।

मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में अर्जुनसिंह के स्थान में राजसी और सूरसिंह के स्थान में बनमालीसिंह नाम दिये हैं और कानसिंह को ईश्वरीसिंह के छोटे भाई अनूपसिंह का पुत्र बतलाया है।

सम्मान प्रदान किया। बादशाह अकबर की आज्ञानुसार महाराजा रायसिंह-द्वारा गुजरात की तरफ़ चढ़ाई होने पर अन्य सरदारों आदि के साथ चंद्रसेन भी विद्यमान था और वह उस लड़ाई में काम आया।

वि० सं० १८०४ (ई० स० १७४७) में महाजन और भाद्रा के ठाकुर बीकानेर राज्य के विरोधी होकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह को गजसिंह के भाई अमरसिंह का सहायक बनाकर वहां की सेना को बीकानेर पर चढ़ा लाये। कई मास के असफल मोर्चे के बाद अभयसिंह ने गजसिंह और अमरसिंह के बीच राज्य आधा-आधा बांटने की शर्त पर संधि करने का प्रस्ताव किया, परंतु गजसिंह ने यह प्रस्ताव स्वीकार न किया और शत्रु-सैन्य से मुकाबला करने को जा डटा। इस अवसर पर जैतपुर के रावत स्वरूपसिंह ने अद्भुत वीरता दिखलाकर जोधपुर के सेनानायक रतनचंद भंडारी का पीछा किया और उसको बरछी के एक ही वार में मार डाला।

महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८५६ (ई० स० १७९९) में[1] सोढल गांव में सूरतगढ़ का निर्माण होने पर उधर के भट्टी उत्पात करने लगे। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने कई प्रमुख सरदारों के साथ, जिनमें जैतपुरे की तरफ़ से रावत सरदारसिंह का भाई पद्मसिंह भी विद्यमान था, दो हज़ार सेना उनपर भेजी। उपर्युक्त सेना ने उनका दमन कर वहां के प्रबंध के लिए फ़तहगढ़ का निर्माण किया। वि० सं० १८६१ (ई० स० १८०४) में सुराणा अमरचंद की अध्यक्षता में भटनेर पर सेना भेजी गई। इस सेना ने दुर्ग के भीतर घुसने की चेष्टा की, परंतु इस प्रयत्न में ७० सरदार मारे गये, जिनमें जैतपुर की तरफ़ का नैनसी सोढ़ा भी था।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के समय महाराजा सरदारसिंह के साथ अन्य ठिकानों के अतिरिक्त जैतपुर के सरदार ने भी अंग्रेज़ों की बड़ी सहायता की।

रावत माधवसिंह का पुत्र रूपसिंह जैतपुर का वर्तमान सरदार है।

(१) सूरतगढ़ के बनवाये जाने का समय कहीं वि० सं० १८६२ और कहीं वि० सं० १८१२ भी मिलता है।

राजपुरा

राव जैतसी को युद्ध में मारकर जोधपुर के राव मालदेव ने बीकानेर राज्य पर अधिकार कर लिया। फिर उस (जैतसी) का पुत्र कल्याणमल सिरसा में राजगद्दी पर बैठा, जहां से उसका छोटा भाई भीमराज दिल्ली में शेरशाह के पास गया और उसकी सहायता से उसने बीकानेर के गये हुए राज्य पर पीछा अपने भाई का अधिकार करा दिया। इसपर राव कल्याणमल ने भीमराज को वि० सं० १६०२ (ई० स० १५४५) में भोमसर की जागीर और 'गई भूमि का बाहड़ू' का विरुद देकर सम्मानित किया[1]। महाराज रायसिंह की बादशाह अक़बर के समय गुजरात पर चढ़ाई होने पर जो सरदार मारे गये, उनमें भीमराज का पुत्र नारण (नौरंग) भी था। भीमराज[2] के वंश के भीमराजोत बीका कहलाये। उसके सातवें वंशधर जोरावरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र हिम्मतसिंह को महाराजा गजसिंह के समय राजपुरा का ठिकाना मिला।

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेर की सहायक सेना के साथ राजपुरे के ठाकुर ने भी अपनी जमीयत भेजी थी। लड़ाई की समाप्ति होने पर महाराजा रत्नसिंह ने उक्त जमीयत के मुखिया को सोने के कड़े और सिरोपाव पुरस्कार में प्रदान किये।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र २०।

(२) वंशक्रम—[१] भीमराज [२] नारायणदास (नोरंग) [३] रघुनाथसिंह [४] राजसिंह [५] प्रतापसिंह [६] रूपसिंह (अनूपसिंह) [७] जोरावरसिंह [८] हिम्मतसिह [९] मुकुंदसिंह [१०] कल्याणसिंह [११] बाघसिंह [१२] अमरसिंह [१३] विजयसिंह [१४] अभयसिंह [१५] दुर्जनशालसिंह [१६] नारायणसिंह और [१७] कुशलसिंह।

'देशदर्पण' में हिम्मतसिंह के बाद मुकुंदसिंह का नाम न होकर अमरसिंह का नाम दिया है और उसके बाद क्रमश कल्याणसिंह, बाघसिंह तथा विजयसिंह के नाम दिये हैं। बाघसिंह और विजयसिंह के बीच अमरसिंह का नाम नहीं है।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर में अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ महाराजा सरदारसिंह के साथ राजपुरे के सरदार ने भी अपनी जमीयत भेजकर महाराजा और अंग्रेज़ सरकार के प्रति राजभक्ति प्रकट की।

ठाकुर नारायणसिंह का दत्तक पुत्र कुशलसिंह राजपुरे का वर्तमान सरदार है।

कुंभाणा

राव लूणकर्ण का एक कुंवर रत्नसिंह था, जिसके छठे वंशधर अभयसिंह के दो पुत्र भीमसिंह और केसरीसिंह हुए। केसरीसिंह को महाराजा अनूपसिंह के समय कुंभाणा की जागीर और ताज़ीम मिली। उसके वंशज रत्नसिंहोत बीका कहलाते हैं।

महाराजा सूरतसिंह ने अपने राज्यकाल में सोढल गांव में अपने नाम से सूरतगढ़ का क़स्बा आबाद कराया और वहां गढ़ बनवाया, जिसका कार्य कुंभाणे के ठाकुर-द्वारा ही हुआ था।

महाजन के ठाकुर वैरिशाल और कुंभाणे के ठाकुर लालसिंह के बीच वैर होने के कारण लालसिंह ने वि० सं० १८९० (ई० स० १८३३) में वैरिशाल को मार डाला। इस अपराध के कारण महाराजा रत्नसिंह ने कुंभाणे की जागीर ज़ब्त कर ली, जिसपर वह (लालसिंह) विद्रोही होकर आस-पास के गांवों में लूट-मार करने लगा। पीछे से महाराजा ने उसके अपराध क्षमा कर उसकी जागीर पुनः उसको बहाल कर दी।

---

(१) वंशक्रम—[१] केसरीसिंह [२] जोरावरसिंह [३] चैनसिंह [४] किशनसिंह [५] लालसिंह [६] गीगासिंह [७] मेघसिंह और [८] दौलतसिंह (दलसिंह)।

मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में चैनसिंह के स्थान में मानसिंह एवं गीगासिंह को गंगासिंह लिखा है। कुछ जगह गीगासिंह को गिरधारीसिंह भी लिखा मिलता है।

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) की लाहौर की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेरी सहायक-सेना के साथ कुंभाणे का मंत्री भी गया था, जिसे युद्ध समाप्त होने पर महाराजा रत्नसिंह ने सिरोपाव आदि पुरस्कार में दिये।

भारतव्यापी ग़दर के दमन में (वि० सं० १६१४ = ई० स० १८५७) महाराजा सरदारसिंह के साथ कुंभाणे के ठाकुर ने भी अच्छी सेवा की।

वहां का वर्तमान सरदार राव बहादुर दौलतसिंह, ठाकुर मेघसिंह का पुत्र है। उसकी शिक्षा मेयो कॉलेज अजमेर में हुई है। वह वि० सं० १६७२ (ई० स० १६१५) में राज्य-सेवा में प्रविष्ट हुआ और इस समय 'मुसाहिब ख़ासगी' (मास्टर ऑव् दि हाउसहोल्ड) के पद पर नियुक्त है। ई० स० १६२७ (वि० सं० १६८४) में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसको 'राव बहादुर' का ख़िताब मिला। उसकी उत्तम सेवाओं की क़द्र कर वर्तमान महाराजा साहब ने उसको तख़्तपुरा तथा बेरावास गांव और प्रदान किये हैं।

जैतसीसर

यह ठिकाना सर्वप्रथम पंवार (परमार) सुलतानसिंह के पुत्र जैतसी[1] को महाराजा जोरावरसिंह के राज्य-काल में मिला था[2]। पीछे से महाराजा सूरतसिंह के समय जैतसी के पौत्र माधोसिंह को ताज़ीम का सम्मान-मिला। पहले उनका निवास-स्थान अजमेर इलाक़े के श्रीनगर में था, परंतु रिश्तेदारी के कारण बाद में वे बीकानेर चले गये। उनकी गणना

---

(१) वंशक्रम—[१] सुलतानसिंह [२] जैतसिंह [३] केसरीसिंह [४] माधोसिंह [५] चांदसिंह [६] दीपसिंह [७] उत्तमसिंह [८] किशनसिंह [६] विशालसिंह और [१०] जोरावरसिंह।

(२) श्रीराम मीरमुंशी-रचित 'ताज़ीमी राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तक में महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८२१ (ई० स० १७६४) में जैतसिंह के पुत्र केसरीसिंह को जैतसीसर मिलने का उल्लेख है।

परसंगियों में है। ठाकुर विशालसिंह का पुत्र जोरावरसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

चाड़वास

यह ठिकाना राव बीदा के प्रपौत्र गोपालदास ने अपने एक पुत्र तेजसिंह[1] को दिया था। फिर उसको महाराजा रायसिंह के समय में राज्य की तरफ़ से ताज़ीम प्रदान की गई। उसके वंशधर तेजसिंहोत बीदा कहलाते हैं।

तेजसिंह के बाद क्रमशः रामचंद्र, प्रतापसिंह, प्रेमसिंह, मुकुंदसिंह, विजयसिंह और बहादुरसिंह चाड़वास के स्वामी हुए।

वि० सं० १८२० (ई० स० १७६३) में राज्य की सेना की दाउदपुत्रों तथा जोहियों पर चढ़ाई होने के समय उसके साथ चाड़वास की जमीयत भी गई थी। बहादुरसिंह का पुत्र पृथ्वीसिंह हुआ।

वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में चाड़वास का गढ़ महाराजा सूरतसिंह की आज्ञानुसार गिरवाया गया[2], जिससे वहां का स्वामी राज्य का विरोधी बन गया। अतएव जब वि० सं० १८७३ (ई० स० १८१६) में चूरू के ठाकुर पृथ्वीसिंह ने अपनी जागीर पर अधिकार करने के लिए लड़ाई की तो वह भी उसका पक्षपाती हो गया। अंत में महाराजा रत्नसिंह के समय वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) में डूंडलोद तथा मंडावा (जयपुर

---

(१) वंशक्रम—[१] तेजसिंह [२] रामचन्द्र [३] प्रतापसिंह [४] पेमसिंह [५] मुकुंदसिंह [६] विजयसिंह [७] बहादुरसिंह [८] पृथ्वीसिंह [९] संग्रामसिंह [१०] ज्ञानसिंह (गेनसिंह) [११] जवाहरसिंह [१२] मानसिंह और [१३] जैतसिंह।

(२) गढ़ी गिराये जाने का कारण ठाकुर बहादुरसिंह-लिखित 'बीदावतों की ख्यात' (जि० २, पृ० ७७२) में इस तरह लिखा है कि गोपालपुरा के ठाकुर भोपालसिंह के यह कहने पर कि चाड़वास के स्वामी की मदद के कारण चूरू पर अधिकार होना कठिन है, महाराजा सूरतसिंह ने चाड़वास पर सेना भेजकर वहां का गढ़ गिरवा दिया।

राज्य) के सरदारों के प्रार्थना करने पर महाराजा रत्नसिंह ने पृथ्वीसिंह के पुत्र संग्रामसिंह का अपराध क्षमा कर दिया और उसकी जागीर उसे सौंप दी। इस अवसर पर उससे दंड के चालीस हज़ार रुपये भी वसूल किये गये।

वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) की लाहौर की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में चाड़वास से बीदावत बख्तावरसिंह भी बीकानेरी सहायक सेना के साथ गया था। लड़ाई की समाप्ति होने पर महाराजा ने उसे सिरोपाव आदि पुरस्कार में दिये।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर मे महाराजा सरदारसिंह के साथ चाड़वास के ठाकुर संग्रामसिंह ने अपने पुत्र ज्ञानसिंह को भेजा, जिसने महाराजा की आज्ञा में रहकर अच्छी सेवा की।

ठाकुर संग्रामसिंह का देहांत होने पर ज्ञानसिंह चाड़वास का स्वामी हुआ। उसका पुत्र जवाहिरसिंह और जवाहिरसिंह का मानसिंह हुआ, जिसका पुत्र जैतसिंह चाड़वास का वर्तमान सरदार है।

मलसीसर

चाड़वास के ठाकुर तेजसिंह के पुत्र रामचंद्र का दूसरा बेटा भागचंद था, जिसके पुत्र कीर्तिसिंह[1] ने अपने लिए मलसीसर का ठिकाना क़ायम किया। उसके पौत्र बख्तसिंह को महाराजा गजसिंह ने उस(बख्तसिंह)के पिता नाहरसिंह की विद्यमानता में ही यह ठिकाना और वि० सं० १८४१ (ई० स० १७८४) में ताज़ीम प्रदान की। उसके वंश के तेजसिंहोत बीदा कहलाते हैं।

(१) वंशक्रम—[१] कीर्तिसिंह [२] नाहरसिंह [३] बख्तसिंह [४] ईश्वरीसिंह [५] रघुनाथसिंह [६] कान्हसिंह [७] रणजीतसिंह और [८] देवीसिंह।

महाराजा गजसिंह-द्वारा मलसीसर प्राप्त होने पर बख़्तसिंह ने वहां गढ़ बनवाया। उसका उत्तराधिकारी ईश्वरीसिंह हुआ, जिसके पुत्र रघुनाथसिंह की अपने पिता की विद्यमानता में ही मृत्यु हो जाने पर उस-(ईश्वरीसिंह)के पुत्र कान्हसिंह को मलसीसर की जागीर मिली।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन में महाराजा सरदारसिंह के साथ मलसीसर के ठाकुर रणजीतसिंह (कान्हसिंह का पुत्र) ने भी अपनी जमीयत भेजी। रणजीतसिंह का पुत्र देवीसिंह मलसीसर का वर्तमान सरदार है।

हरासर

राव बीदा के प्रपौत्र गोपालदास के पुत्र जसवंतसिंह का बेटा पृथ्वीराज हुआ, जिसके वंश के पृथ्वीराजोत बीदा कहलाये। पहले उनकी जागीर बाड़ेला, अणखीसर आदि स्थानों में रही। पीछे से महाराजा सुजानसिंह के समय पृथ्वीराज के प्रपौत्र थानसिंह को राज्य के विद्रोही सरदार तेजसिंहोत बीदा बिहारीदास को मारने की सेवा के एवज़ में अट्ठारह गांवों के साथ हरासर का ठिकाना ताज़ीम-सहित मिला।

वि० सं० १७६६ (ई० स० १७३६) में जोधपुर के महाराजा अभय-सिंह की बीकानेर पर चढ़ाई हुई। उस समय हरासर के सरदार तथा सैनिक आदि भी बीकानेर के क़िले में थे और उन्होंने अच्छी सेवा की।

महाराजा गजसिंह ने वि० सं० १८२६ (ई० स० १७७२) में रावतसर के स्वामी पर चढ़ाई करने का निश्चय किया, परंतु यह काम बीदावतों के अपने हाथ में ले-लेने पर उक्त महाराजा ने स्वयं वहां जाना स्थगित कर

---

(१) वंशक्रम—[१] थानसिंह [२] देवीसिंह [३] मोहनसिंह [४] बुधसिंह [५] लक्ष्मणसिंह [६] मोतीसिंह [७] रणजीतसिंह [८] रघुनाथसिंह [६] आनन्दसिंह और [१०] जीवराजसिंह।

दिया। इस अवसर पर जिन बीदावतों ने यह कार्य अपने ज़िम्मे लिया, उनमें थानसिंह का पुत्र देवीसिंह भी शामिल था। देवीसिंह के दो पुत्र थे, जिनमें से मोहनसिंह उसका उत्तराधिकारी रहा और छोटे पुत्र हरिसिंह[1] के वंशधर सारोठिया के स्वामी हुए। मोहनसिंह के पीछे बुधसिंह और लक्ष्मणसिंह क्रमशः हरासर के स्वामी हुए। महाराजा रत्नसिंह के समय दो वर्ष (वि० सं० १६०२ से १६०४ = ई० स० १८४५ से १८४७) तक लक्ष्मणसिंह हरासर के ठिकाने से वंचित रहा और वह ठिकाना सारोठिया के नाहरसिंह (उपर्युक्त हरिसिंह का पौत्र) को दे दिया गया, परन्तु फिर महाराजा ने हरासर लक्ष्मणसिंह को ही दे दिया। वि० सं० १६०२

(१) वंशक्रम—[१] हरिसिंह [२] जवानीसिंह [३] नाहरसिंह [४] नवलसिंह [५] शिवनाथसिंह और [६] जीवराजसिंह।

सारोठिया के ठिकाने में सारोठिया, मारोठिया और कादिया नामक तीन गांव हैं। सारोठिया की जागीर हरिसिंह के पौत्र नाहरसिंह को प्राप्त हुई। नाहरसिंह, सिपाही-विद्रोह के समय अंग्रेज़-सरकार की सहायतार्थ बीकानेर की जो सेना गई उसमें सम्मिलित था। महाराजा रत्नसिंह ने उसको हरासर का सरदार भी नियत किया था, परंतु दो वर्ष बाद ही वह ठिकाना पुनः वहां के सरदार लक्ष्मणसिंह को ही मिल गया। नाहरसिंह के पुत्र नवलसिंह के संतति न थी, जिससे शिवनाथसिंह, नवलसिंह का दत्तक जाकर वहां का ठाकुर हुआ। शिवनाथसिंह का उत्तराधिकारी उसका पुत्र जीवराजसिंह हुआ, जिसके अधिकार में हरासर के अतिरिक्त सारोठिया का ठिकाना भी है।

ठाकुर जीवराजसिंह ने वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल में शिक्षा प्राप्त की और फिर वह महाराजा सर गंगासिंहजी के राज्य-समय वि० सं० १६८३ (ई० स० १६२६) में डूंगर लान्सर्ज़ में जमादार नियत हुआ। तदनन्तर महाराजा साहब ने वि० सं० १६८५ (ई० स० १६२८ नवंबर) में उसको अपना ए० डी० सी० बनाकर कप्तान की

(ई० स० १८४५) मे लाहौर के सिक्खों के साथ की अंग्रेजों की लड़ाई में

उपाधि प्रदान की। वि० सं० १९८७ (ई० स० १९३० अगस्त) में लीग ऑव नेशन्स की जेनेवा में बैठक हुई, उस समय महाराजा साहब भारत सरकार के प्रतिनिधि होकर वहां गये और वहां से इंपीरियल कॉन्फ्रेंस, लंडन मे सम्मिलित हुए। इन दोनों अवसरों पर जीवराजसिंह इनके साथ विद्यमान था। इसी प्रकार वि० सं० १९८८ (ई० स० १९३१) में जब महाराजा साहब का राउंड टेबल कान्फरेंस में भाग लेने के लिए लंडन जाना हुआ, उस समय भी वह इनके साथ गया। सारोठिया ठिकाने के सरदार की व्यक्तिगत रूप से पहले ताज़ीम थी, परंतु वर्तमान महाराजा साहब ने जीवराजसिंह की कार्य-कुशलता से प्रसन्न होकर वि० सं० १९८९ (ई० स० १९३२) में अपनी वर्ष गांठ पर उसको वंश-परंपरा के लिए ताज़ीम का सम्मान दिया और उसी वर्ष उसको अपना पर्सनल सेक्रेटरी भी नियत किया। इसके एक वर्ष बाद वह बीकानेरी सेना में मेजर बनाया गया। वि० सं० १९९१ (ई० स० १९३४) में वह मिलिटरी सेक्रेटरी बनाया गया। स्वर्गीय सम्राट जॉर्ज पञ्चम की रजत-जयन्ती पर वि० सं० १९९२ (ई० स० १९३५) में महाराजा साहब इंग्लैंड गये, तब भी वह उनके साथ था। उसकी उत्तम कारगुज़ारी और कर्मनिष्ठा से प्रसन्न होकर वि० सं० १९९३ (ई० स० १९३६) में सम्राट जॉर्ज छठे की वर्ष-गांठ पर उसको अंग्रेज सरकार की तरफ़ से 'राव बहादुर' का ख़िताब मिला। ई० स० १९३७ (वि० सं० १९९४) के मार्च मास में सम्राट् जॉर्ज छठे के राज्याभिषेकोत्सव में सम्मिलित होने के लिए महाराजा साहब लंडन गये। उस समय वह चीफ़ ऑव् दि स्टॉफ़ की हैसियत से इनके साथ था। इंग्लैंड से लौटने पर उसी वर्ष इन्होंने उसको 'मास्टर आव् सेरिमनीज़' नियत किया और अपनी स्वर्ण जयंती पर उसे लेफ़्टेनेंट-कर्नल का ख़िताब, तथा 'बैज़ ऑव् आनर' प्रदान कर उसकी जागीर में वृद्धि की। वि० सं० १९९४ (ई० स० १९३८) के फ़रवरी मास में हरासर के ठाकुर आनंदसिंह की निःसंतान मृत्यु होने पर महाराजा साहब ने उसको वहां का हक़दार समझ हरासर का ठिकाना भी उसको प्रदान कर दिया है।





लेफ्टेनेंट-कर्नल रावबहादुर ठाकुर जीवराजसिंह [हरासर]

बीकानेर की सेना के साथ ठाकुर लक्ष्मणसिंह ने भी अपने मंत्री को जमीयत के साथ भेजा। युद्ध की समाप्ति होने पर महाराजा ने अन्य सरदारों के समान हरासर के मंत्री को भी सिरोपाव आदि दिये।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के समय महाराजा सरदारसिंह के साथ ठाकुर लक्ष्मणसिंह ने भी विद्रोहियों के दमन में पूरी मदद पहुंचाई।

लक्ष्मणसिंह के पीछे मोतीसिंह और रणजीतसिंह क्रमशः हरासर के ठाकुर हुए। रणजीतसिंह की निःसंतान मृत्यु होने पर रघुनाथसिंह दत्तक लिया गया। उसका पुत्र आनंदसिंह भी निःसंतान मर गया। तब महाराजा साहब ने उस स्थान पर सारोठिया के लेफ्टेनेंट कर्नल राव बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह को उसका उत्तराधिकारी नियत किया, जो वहां का वर्तमान सरदार हैं। उसका प्रारम्भिक हाल ऊपर पृष्ठ ६९१ के टिप्पण में आ गया है। महाराजा साहब ने उसे अपनी राजसभा का मेम्बर नियत करने के अतिरिक्त ई० स० १९३९ (वि० सं० १९९६) के मई मास में कन्ट्रोलर ऑव् दी हाउसहोल्ड (मुसाहिब ख़ासगी) के पद पर नियत किया है।

इस समय वह मास्टर ऑव् सेरिमनीज़, मिलिटरी सेक्रेटरी और कन्ट्रोलर ऑव् दी हाउसहोल्ड की जगहों का काम करता है।

वह कर्तव्यपरायण, तीव्र बुद्धिवाला, विचारशील और महाराजा साहब का विश्वास-भाजन है।

लोहा

राव बीदा के पौत्र सूरा ने अपने भाइयों से पृथक् होकर गांव सांवतिया में अपना ठिकाना बांधा था। जब जैसलमेर के महारावल की आज्ञा से जैसलमेर इलाक़े के सिरड़ां के भाटी मेहाजल आदि राज्य की गनगौर को लेकर चले गये तो उपर्युक्त सूरा के पुत्र संगारसिंह के बेटे

लाखणसिंह ने भाटियों से लड़ाई की और मेहाजल को मारकर वह राज्य की गनगौर को ले आया। इस सेवा के बदले में महाराजा कर्णसिंह के समय वि० सं० १६८६ (ई० स० १६३२) में उसको ताज़ीम-सहित लोहा की जागीर मिली। उसके वंशधर खंगारोत बीदा कहलाते हैं।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ लोहा के जागीरदार कीरतसिंह ने भी बड़ी सहायता पहुंचाई।

कीरतसिंह के पीछे क्रमशः ईश्वरीसिंह, वाघसिंह और मेघसिंह लोहा के स्वामी हुए। मेघसिंह का उत्तराधिकारी ठाकुर बलदेवसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

खुड़ी

राव बीदा के पौत्र सूरा के पुत्र खंगारसिंह के एक पुत्र किशनसिंह ने खुड़ी में ठिकाना बांधा। फिर महाराजा कर्णसिंह ने वि० सं० १६९५ (ई० स० १६३८) में उसे ताज़ीम प्रदान की। उसके वंश के बीदावत खंगारोत कहलाते हैं।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ खुड़ी के ठाकुर चिमनसिंह ने भी अच्छी सेवा की। ठाकुर चिमनसिंह के कोई संतान न थी, इसलिए उसने

---

(१) वंशक्रम—[१] लाखणसिंह [२] देवीसिंह (देवीदास) [३] फ़तहसिंह [४] बख़्तसिंह [५] वैरिशाल [६] भवानीसिंह [७] पृथ्वीसिंह [८] कीरतसिंह [९] ईश्वरीसिंह [१०] बाघसिंह [११] मेघसिंह और [१२] बलदेवसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] किशनसिंह [२] कुंभकर्ण [३] फ़तहसिंह [४] जोरावरसिंह [५] इन्द्रभान [६] विजयसिंह [७] गुमानसिंह [८] हणूत (हनुमन्तसिंह) [९] शिवसिंह [१०] चिमनसिंह और [११] दुर्जनसिंह।

अपने जीवन-काल में ही अपने पितृव्य रिड़मलसिंह के पुत्र दुर्जनसिंह को गोद ले लिया था। अतएव उस (चिमनसिंह) का देहांत होने पर दुर्जनसिंह खुड़ी का स्वामी हुआ, जो वहां का वर्तमान सरदार है।

कनवारी

राव बीदा के पौत्र सूरा का एक पुत्र खंगारसिंह था, जिसके चतुर्थ वंशधर बख़्तसिंह के दो पुत्र हुए, जिनमें से छोटे दीपसिंह[1] को महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८३६ (ई० स० १७७९) में कनवारी की जागीर और ताज़ीम मिली। उसके वंशज खंगारोत बीदा कहलाते हैं।

दीपसिंह के पश्चात् क्रमशः हरनाथसिंह और दलेलसिंह वहां के स्वामी हुए। हरनाथसिंह के समय कई वर्षों तक कनवारी की जागीर उसके हाथ से निकलकर लोहा के साथ मिल गई थी। फिर दलेलसिंह (हरनाथसिंह का उत्तराधिकारी) ने महाराजा सूरतसिंह की आज्ञा से उसे अपने क़ब्ज़े में किया।

वि० सं० १८८१ (ई० स० १८२४) में ददे्रवा का ठाकुर सूरजमल विद्रोही हो गया और उसने अंग्रेज़ी इलाक़े के गांव बैल का थाना लूटा। अंग्रेज़ी सेना के चढ़ आने पर वह (सूरजमल) बीदावतों के इलाक़े में भाग गया। तब राज्य की सेना उसपर भेजी गई। सूरजमल ने एक के बाद दूसरी, इस तरह कई गढ़ियों में भागकर प्राण बचाये। राज्य की सेना ने हर जगह उसका पीछा कर सब गढ़ियां नष्ट कर दीं। उनमें कनवारी की गढ़ी भी राज्य की सेना ने नष्ट की और वहां राज्य का अधिकार हो गया। पीछे से दलेलसिंह का अपराध क्षमा कर उसको कनवारी का ठिकाना दे दिया गया। तदनंतर मानसिंह वहां का स्वामी हुआ।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में भारतव्यापी ग़दर के दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ कनवारी के ठाकुर शक्तिसिंह

---

(१) वंशक्रम—[१] दीपसिंह [२] हरनाथसिंह [३] दलेलसिंह [४] मानसिंह [५] शक्तिसिंह [६] अगरसिंह और [७] चन्द्रसिंह।

(सगतसिंह, मानसिंह का पुत्र) ने भी अच्छी सहायता पहुंचाई।

शक्तिसिंह का पुत्र मुकुंदसिंह पिता की विद्यमानता में ही गुज़र गया, इसलिए मुकुंदसिंह का पुत्र अगरसिंह अपने दादा का उत्तराधिकारी हुआ। उसका पुत्र ठाकुर चंद्रसिंह कनवारी का वर्तमान सरदार है। प्रारंभिक शिक्षा वाल्टर नोवल्स (हाई) स्कूल में प्राप्त करने के अनन्तर उसने अजमेर के मेयो कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। वह 'होम सेक्रेटरी' और पीछे से 'असिस्टेन्ट कन्ट्रोलर ऑव् दि हाउसहोल्ड' के पद पर काम कर चुका है।

सारूंडा

राव बीका का एक चाचा मंडला[1] था, जो उस(बीका)के जोधपुर का स्वत्व त्यागकर जांगल देश जाने पर उसके साथ ही चला गया था। राव बीका ने अपने जीवन-काल में वि० सं० १५५१ (ई० स० १४९४) में उसे सारूंडा की जागीर प्रदान की। उसके वंशज मंडलावत कहलाते हैं।

बीदा का द्रोणपुर पर पुनः अधिकार करा देने के लिए बीकानेर से जो सेना राव बीका के साथ गई, उसमें उसका चाचा मंडला भी शामिल था। फिर राव जोधा की मृत्यु होने पर जब राव बीका ने पूजनीक चीज़ें

---

(१) वंशक्रम—[१] मंडला [२] सांईदास [३] संसारचन्द्र [४] दूदा (दूदसिंह) [५] महेशदास [६] जसवन्तसिंह [७] मनोहरदास [८] शक्तिसिंह [९] जोगीदास [१०] मनरूपसिंह [११] इन्द्रसिंह [१२] केसरीसिंह [१३] ज़ालिमसिंह [१४] ईश्वरीसिह [१५] जैतसिंह [१६] नाहरसिंह [१७] रणजीतसिंह [१८] भैरूसिंह और [१९] विशालसिंह।

'देश-दर्पण' में जोगीदास, मनोहरदास, शक्तिसिंह और मनरूपसिंह के नाम क्रमपूर्वक दिये हैं तथा जोगीदास से ही वंशावली आरम्भ की है। 'आर्य-आख्यान-कल्पद्रुम' के लेखक ने भी यही क्रम रक्खा है। मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में सांईदास के बाद संसारचन्द्र का नाम नहीं है और महेशदास के पीछे हिम्मतसिंह का नाम देकर जैतसिंह के बाद बहादुरसिंह का नाम दिया है।

लाने के लिए जोधपुर पर चढ़ाई की, उस समय भी मंडला ससैन्य उसके साथ था।

दद्रेवा आदि कई ठिकानों के सरदारों के विद्रोही हो जाने पर राव लूणकर्ण ने उनका दमन करने के लिए ससैन्य प्रस्थान किया। अन्य प्रमुख ठिकानों के सरदारों के अतिरिक्त इस सेना के साथ सारूंडे का महेशदास भी गया। जैसलमेर पर चढ़ाई होने पर भी वह साथ था और सर्वप्रथम उसने ही राजोलाई से चढ़कर जैसलमेर की तलहटी को लूटा। कछवाहे सांगा की सहायतार्थ राव जैतसी ने जिन सरदारों को भेजा, उनमें भी महेशदास शामिल था। वि० सं० १५८५ (ई० स० १५२८) में राव जैतसी जोधपुर के राव गांगा की सहायतार्थ गया। उस समय भी उसकी सेना में महेशदास था।

बादशाह अकबर की आज्ञानुसार महाराजा रायसिंह ने अहमदाबाद के स्वामी पर चढ़ाई की, जिससे लड़ाई होने पर उसके बहुत से सरदार काम आये। इस अवसर पर सारूंडा के ठाकुर शक्तिसिंह ने वीरगति पाई।

वि० सं० १८०३ (ई० स० १७४६) में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने बीकानेर के कुछ विद्रोही सरदारों के शामिल बीकानेर पर चढ़ाई की। महाराजा गजसिंह अपनी सेना-सहित उसके मुक़ाबले को गया। इस अवसर पर उसकी सेना की दाहिनी अनी में मंडला के वंशज भी थे।

लाहौर की सिक्खों के साथ की अंग्रेज़ों की लड़ाई में बीकानेर की सहायक सेना के साथ सारूंडे की जमीयत भी गई थी। लड़ाई की समाप्ति होने पर महाराजा रत्नसिंह ने वहां (सारूंडा) के मंत्री को सिरोपाव आदि पुरस्कार में दिये।

ठाकुर भैरूंसिंह का दत्तक पुत्र विशालसिंह सारूंडे का वर्त्तमान सरदार है।

राणासर

यह ठिकाना महाराजा रत्नसिंह ने अपने मामा के वंशजों में से ठाकुर भोमसिंह[1] पंवार को वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) में प्रदान किया था। उसके वंशजों की गणना परसंगियों में होती है।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर में विद्रोहियों का दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ राणासर के ठाकुर ने भी अच्छी मदद की।

ठाकुर नाहरसिंह इस ठिकाने का वर्तमान सरदार है।

नीमां

यह ठिकाना महाराजा सूरसिंह के समय उसके छोटे भाई किशनसिंह (किशनदास) के पुत्र जगतसिंह[2] को वि० सं० १६८७ (ई० स० १६३०) में मिला।

---

(१) वंशक्रम—[१] भोमसिंह [२] गुलाबसिंह [३] लक्ष्मणसिंह और [४] नाहरसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] किशनसिंह [२] जगतसिंह [३] भोमसिंह (भीमसिंह) [४] श्यामसिंह (रामसिंह) [५] बाघसिंह [६] पेमसिंह [७] बिशनसिंह [८] शेरसिंह [९] हरिसिंह [१०] शिवनाथसिंह और [११] सूरजबख़्शसिंह।

मुंहणोत नैणसी की ख्यात के पीछे से बढ़ाये हुए अंश में बीकानेर के नीमां ठिकाने के सरदारों की वंशावली भी दी है। उसमें पेमसिंह तक नाम तो ठीक हैं, परंतु उसके आगे भीमसिंह [भोमसिंह] नाम दिया है। मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में दिये हुए वंशवृत्त में किशनसिंह के दो पुत्रों—भोमसिंह और जगतसिंह—के नाम दिये हैं एवं भोमसिंह की औलाद में नीमां के ठाकुर और जगतसिंह के वंश में सांखू के ठाकुर का होना बतलाया है। इसके विरुद्ध मुंहणोत नैणसी की ख्यात में सांखू की जो वंशावली दी है, उसमें सांखू के स्वामी को जगतसिंह के पुत्र दुर्जनसिंह का वंशधर लिखा है। ऐसा ही 'आर्य-आख्यान-कल्पद्रुम' एवं 'देशदर्पण' से भी पाया जाता है। राय बहादुर सोढ़ी हुकमसिंह-रचित 'सवानह उम्री रउसा और शरफ़ा, बीकानेर' में दिये हुए वंशवृक्ष में महाराजा सूरसिंह का नाम भी देकर उसके पीछे

महाराजा गजसिंह के सिंहासनारूढ़ होने पर महाजन और भाद्रा के ठाकुर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह की सेना को वि० सं० १८०३ (ई० स० १७४६) में बीकानेर पर चढ़ा लाये। कई मास तक मोर्चा रहने पर भी जब कुछ परिणाम न निकला तो अभयसिंह की सेना ने, बीकानेर का आधा राज्य अमरसिंह को दिये जाने की शर्त पर मेलकर लौटना चाहा, परन्तु गजसिंह ने यह शर्त स्वीकार न की और दूसरे दिन ससैन्य वह शत्रु सेना के मुक़ाबले के लिए गया। उस समय नीमां का पेमसिंह बीकानेर की सेना की चंदावल में था।

जोधपुर के महाराजा विजयसिंह के समय पदच्युत महाराजा रामसिंह की सहायतार्थ जयआपा सिंधिया की मारवाड़ पर चढ़ाई हुई। उस समय महाराजा गजसिंह बीकानेर से सेना लेकर विजयसिंह की सहायतार्थ गया। शत्रु-सैन्य से मुक़ाबला होने पर विजयसिंह के पक्षवालों की पहले तो विजय हुई, परंतु बाद में उनकी बहुतसी सेना मारी गई। तब विजयसिंह नागोर चला गया, जिसपर शत्रु-सैन्य ने जाकर नागोर को घेर लिया। जब शत्रु-सैन्य से छुटकारे का कोई उपाय न दीख पड़ा, तब विजयसिंह ने जयआपा सिंधिया को छल से दो खोखर राजपूतों के द्वारा मरवा डाला। इसपर मरहठे बिगड़ गये। तब विजयसिंह नागोर छोड़कर बीकानेर चला गया। वहां से महाराजा गजसिंह और विजयसिंह जयपुर

क्रमशः भोमसिंह, रामसिंह, बाघसिंह, भीमसिंह, बिशनसिंह, शेरसिंह, हरिसिंह और शिवनाथसिंह के नाम दिये हैं। उसमें कहीं किशनसिंह का नाम नहीं है।

बीकानेर के सरदारों की वंशावलियां, जो अब तक मिली हैं, कई स्थलों में एक दूसरे से मिलती नहीं। ऐसी हालत मे सरदारों की वंशावलियों के क्रम बिल्कुल ठीक हैं, ऐसा कहना कठिन है। इस पुस्तक में दी हुई सरदारों की वंशावलियों का आधार अधिकतर 'ताज़ीमी, राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स् ऑव् बीकानेर' नामक पुस्तक है, जो श्रीराम मीरमुंशी, बीकानेर एजेंसी-द्वारा लिखी गई और ई० स० १८९८ में प्रकाशित हुई है। जहां तक हो सका है हमने अन्य वंशावलियों की पुस्तकों से भी मिलानकर वंशक्रम शुद्ध करने का प्रयत्न किया है।

के महाराजा माधवसिंह के पास सहायतार्थ गये। महाराजा माधवसिंह ने विजयसिंह को सहायता तो न दी, पर उल्टा उसको मरवा डालना चाहा। यह बात गजसिंह को ज्ञात होने पर उसने विजयसिंह की रक्षा के लिए अपने सरदारों को नियत कर दिया, जिनमें ठाकुर पेमसिंह भी था।

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) की सिक्खों के साथ की लाहौर की अंग्रेज़ों की लड़ाई में नीमां के ठाकुर का मंत्री भी बीकानेर की सेना के साथ गया था, जिसको युद्ध की समाप्ति होने पर महाराजा रत्नसिंह ने सिरोपाव आदि पुरस्कार में दिये।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ नीमां के ठाकुर ने भी अंग्रेज़ों को बड़ी सहायता पहुंचाई। विद्रोहियों के साथ की लड़ाई में वहां के सरदार का रिश्तेदार मोहकमसिंह वीरतापूर्वक लड़ता हुआ मारा गया।

ठाकुर सूरजबख़्शसिंह नीमां का वर्त्तमान सरदार है।

नोखा

राव बीका का एक भाई कर्मसी था। उसके एक वंशज जोरावरसिंह (मारवाड़ में खींवसर ठिकाने का स्वामी) के पुत्र चांदसिंह को महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८१७ (ई० स० १७६०) में नोखा की जागीर मिली। वे कर्मसीहोत कहलाते हैं। महाराजा डूंगरसिंह के समय वहां के सरदार की ताज़ीम बन्द हो गई थी, जो पीछी वर्त्तमान महाराजा साहब ने बहाल कर दी है।

ठाकुर रघुनाथसिंह का पुत्र रूपसिंह वहां का वर्तमान सरदार है[1]।

---

(१) वंशक्रम—[१] चांदसिंह [२] सालिमसिंह [३] सबलसिंह [४] सावंतसिंह [५] रघुनाथसिंह और [६] रूपसिंह।

जारिया

राव जोधा के भाई कांधल का पौत्र वणीर हुआ। उसके वंशज कुशलसिंह के पौत्र और संग्रामसिंह के पुत्र धीरतसिंह[1] को महाराजा गजसिंह के राज्य-समय वि० सं० १८२१ (ई० स० १७६४) में जारिया की जागीर ताज़ीम के साथ मिली। उसके वंशज कांधलोत वणीरोत कहलाते हैं। दलेलसिंह का पुत्र मानसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

दद्रेवा

यह ठिकाना महाराजा सूरसिंह के समय राव कल्याणमल के पौत्र और पृथ्वीराज[2] के पुत्र सुन्दरसिंह[3] (सुन्दरसेन) को वि० सं० १६७४ (ई० स० १६१७) के लगभग मिला। उसके वंशज पृथ्वीराजोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि ठाकुर है।

दद्रेवा पर पहले चौहानों का अधिकार था। राव लूणकर्ण ने वि० सं० १५६६ (ई० स० १५०९) में वहां के स्वामी देपाल के पुत्र मानसिंह पर चढ़ाई की। सात महीने तक मानसिंह ने क़िले में रहकर बीकानेर की सेना का सामना किया; फिर रसद की कमी हो जाने से वह अपने पांच सौ साथियों-सहित बाहर निकलकर लड़ा और राव लूणकर्ण के छोटे भाई घड़सी के हाथ से मारा गया। तब से दद्रेवा का सारा परगना राठोड़ों के

---

(१) वंशक्रम—[१] धीरतसिंह [२] सूरजमल [३] सुकनजी [४] जैतसिंह [५] दलेलसिंह और [६] मानसिंह।

(२) पृथ्वीराज के विस्तृत हाल के लिए देखो ऊपर पृ० १५७-६२।

(३) वंशक्रम—[१] पृथ्वीराज [२] सुन्दरसिंह (सुन्दरसेन) [३] केसरीसिंह [४] विजयसिंह [५] छत्रसिंह [६] जोधसिंह [७] मुकुंदसिंह [८] कुशलसिंह [९] लूणकरण [१०] सूरजमल [११] हरिसिंह [१२] गणपतसिंह और [१३] मेघसिंह।

मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में विजयसिंह के स्थान में तेजसिंह तथा एक ख्यात में उसके स्थान में फ़तहसिंह लिखा मिलता है।

अधीन हो गया और वहां बीकानेर के थाने स्थापित हो गये।

सुंदरसिंह की आठवीं पीढ़ी में ठाकुर सूरजमल हुआ। उसके राज्य-विरोधी आचरणों से महाराजा सूरतसिंह की उसपर अकृपा हो गई। वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) में बीकानेर-राज्य की अंग्रेज़ सरकार से संधि हो जाने पर विद्रोही सरदारों के दमन के लिए जेनरल एलनर की अध्यक्षता में अंग्रेज़ी सेना बीकानेर गई। कई विद्रोही सरदारों का दमन करने के बाद उक्त सेना ने दद्रेवा पर चढ़ाई की। ठाकुर सूरजमल ने बारह दिन तक तो सरकारी सेना का मुक़ाबला किया, पर अन्त में वह पराजित होकर सीकर चला गया।

वि० सं० १८८१ (ई० स० १८२४) में ठाकुर सूरजमल ने भड़ेच इलाक़े के गांव कैरू से निकलकर अंग्रेज़ी अमलदारी के गांव बहल का थाना लूटा और वहीं रहने लगा। इसपर सलेधी के सरदार संपतसिंह के पहुंचने पर उस स्थान का परित्यागकर वह गांव बूढेड़ में जा रहा। अंग्रेज़ सरकार को इसकी ख़बर मिलने पर अबीरचन्द मेहता उसपर भेजा गया। इसी बीच हिसार की अंग्रेज़ी सेना ने सूरजमल पर चढ़ाई कर उसे वहां से निकाल दिया। तब वह बीदावतों के गांव सेला की गढ़ी में जा रहा। इसपर बीकानेर से मेहता सालमसिंह तथा सुराणा लक्ष्मीचन्द की अध्यक्षता में उसपर सेना भेजी गई। दस दिन तक तो सेला के ठाकुर ने बीकानेर की सेना का मुक़ाबिला किया, पर अन्त में उसे गढ़ छोड़कर भागना पड़ा। ऐसी दशा में सूरजमल भी भागकर लाधड़िया की गढ़ी में चला गया। बीकानेर की सेना ने उसे वहां भी जा घेरा। इसी प्रकार वह आठ गढ़ियों में भागा, पर हर जगह उसका पीछा कर उसके निवास-स्थान नष्ट कर दिये गये।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर में महाराजा सरदारसिंह स्वयं बलवाइयों का दमन करने के लिए गया। इस अवसर पर अन्य ठिकानों के अतिरिक्त दद्रेवा के स्वामी ने भी पूरी-पूरी सहायता पहुंचाई।

सूरजमल के बाद हरिसिंह और उसके पीछे गणपतसिंह दद्रेवा का स्वामी हुआ, जिसका उत्तराधिकारी ठाकुर मेघसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

सोभासर (सोभागदेसर)

सोभासर के सरदार राव बीदा के पुत्र संसारचंद के बेटे पाता[1] के वंशधर हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और वे बीदावत-मदनावत कहलाते हैं।

पाता को पैतृक संपत्ति में से निर्वाह के लिए छापर में जीविका मिली, जिसपर उसने वहां अपना ठिकाना स्थिर किया। उसका पुत्र मदनसिंह था, जिसको राव जैतसी ने वि० सं० १५८४ (ई० स० १५२७) में ताज़ीम का सम्मान दिया। मदनसिंह के नाम पर यह शाखा मदनावत प्रसिद्ध हुई। उस(मदनसिंह)का पुत्र गिरधरदास और गिरधरदास का बलराम हुआ। बलराम का उत्तराधिकारी उसका पुत्र गोवर्धनदास हुआ, जिसको गोरखदास भी कहते थे। गोवर्धनदास के केवल एक पुत्र उदयभाण ही था, जिसके अधिकार से उसकी पैतृक संपत्ति निकल गई। तब वह बीकानेर छोड़कर मारवाड़ में चला गया, जहां जोधपुर राज्य की तरफ़ से उसको अलाव आदि गांव जागीर में मिले। उदयभाण का पुत्र खड्गसिंह गोड़वाड़ के महाजनों की बरात में बीकानेर गया, तब उसके साथ अच्छे-अच्छे राजपूत, शस्त्र तथा घोड़ों का होना सुनकर महाराजा अनूपसिंह ने उसको अपने पास बुलवाया और १२ गांवों के साथ लाड़वी का पट्टा दिया।

---

(१) वंशक्रम—[१] पाता [२] मदनसिंह [३] गिरधरदास [४] बलराम [५] गोवर्धनदास [६] उदयभाण [७] धीरजसिंह [८] मोहनसिंह [९] बुधसिंह [१०] शिवदानसिंह [११] बाघसिंह और [१२] गोविन्दसिंह।

मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में दिये हुए वंशवृक्ष में बलराम को बलभद्र, गोवर्धनदास को गुरमुखदान और उदयभाण को उदयसिंह लिखा है एवं खड्गसिंह का नाम बिल्कुल नहीं है।

उन दिनों सोभासर पर द्वारिकादास हरावत का अधिकार था, जिससे महाराजा नाराज़ था। अतः महाराजा की आज्ञानुसार सोभासर खाली कराने के लिए खड्गसिंह रवाना हुआ और उदयभाण भी वहां जा पहुंचा। मुक़ाबला होने पर खड्गसिंह, द्वारिकादास और उसका पुत्र वनमालीदास मारे गये और सोभासर पर उदयभाण का अधिकार हो गया। फिर उसने वहां पर अपना ठिकाना क़ायम किया। उदयभाण की मृत्यु होने पर उसका पौत्र धीरजसिंह (खड्गसिंह का पुत्र) सोभासर का ठाकुर हुआ। जब नागोर के राजाधिराज बख़्तसिंह की सहायतार्थ, महाराजा गजसिंह ने अपनी सेना के साथ मारवाड़ की ओर प्रस्थान किया, तब धीरजसिंह भी अपनी जमीयत के साथ महाराजा की सेना में उपस्थित था। धीरतसिंह का पुत्र कानसिंह पिता की विद्यमानता में निःसंतान मर गया, तब छापर से मोहनसिंह गोद गया, जो वैरिशाल का पुत्र था। मोहनसिंह के पीछे उसका पुत्र बुधसिंह सोभासर का सरदार हुआ। तत्पश्चात् क्रमशः शिवदानसिंह और बाघसिंह वहां के ठाकुर हुए। वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के सिपाही-विद्रोह के समय अंग्रेज़-सरकार की सहायतार्थ स्वयं महाराजा सरदारसिंह बीकानेर से अपनी सेना के साथ गया। उस समय यद्यपि बाघसिंह बालक था, तो भी वहां से बीदावत अनजी के साथ जमीयत रवाना की गई।

बाघसिंह का पुत्र गोविंदसिंह, वहां का वर्तमान सरदार है।

घड़ियाला

देरावर के भाटी रावल रघुनाथसिंह के पुत्र ज़ालिमसिंह[1] के बीकानेर जाने पर महाराजा गजसिंह ने वि० सं० १८४१ (ई० स० १७८४) में उसको घड़ियाला की जागीर और ताज़ीम प्रदान की। वहां के सरदार की गणना परसंगियों में होती है और उसकी उपाधि 'रावल' है।

---

(१) वंशक्रम—[१] ज़ालिमसिंह [२] भोमसिंह [३] भभूतसिंह [४] नत्थूसिंह [५] बलदान [६] दीपसिंह और [७] फ़तहसिंह।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन में महाराजा सरदारसिंह के साथ रहकर घड़ियाला के स्वामी ने भी अच्छी मदद पहुंचाई।

रावल दीपसिंह का पुत्र फ़तहसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

हरदेसर

बीकानेर के राव कल्याणमल के छोटे पुत्रों में से अमरसिंह' को महाराजा रायसिंह ने वि० सं० १६५१ (ई० स० १५६४) में हरदेसर की जागीर और ताज़ीम प्रदान की। उसके वंश के अमरसिंहोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

इस ठिकाने का संस्थापक अमरसिंह बड़ा वीर, स्वाभिमानी और सच्चा राजपूत था। अपने ज्येष्ठ भ्राता रायसिंह का राजनैतिक संबंध मुग़ल बादशाह अकबर से हो जाने के पीछे वह प्रायः उसके साथ बादशाह की नौकरी में ही रहता था। उसने उस(बादशाह)के समय में होनेवाले अनेक युद्धों में बड़ी वीरता दिखलाई थी। बादशाह अक़बर भी उसकी सेवाओं से प्रसन्न था। सन् जुलूस ३६ (वि० सं० १६४७=ई० स० १५९०) में वह किसी

---

(१) वंशक्रम—[१] अमरसिंह [२] किशनदास (केशोदास) [३] जोगीदास [४] रतनदास [५] जोधसिंह [६] खन्नसिंह [७] इन्द्रसिंह [८] सरदारसिंह [९] चैनसिंह [१०] शेरसिंह [११] तारासिंह [१२] जवाहरसिंह [१३] वाघसिंह और [१४] रघुनाथसिंह।

'देशदर्पण' और 'आर्य-आख्यान-कल्पद्रुम' में जवाहिरसिंह के स्थान में जोरावरसिंह नाम दिया है, परन्तु मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' और मुंशी श्रीराम रचित 'ताज़ीमी, राजवीज़, ठाकुर्स एण्ड ख़वासवाल्स् ऑव् बीकानेर स्टेट' में जवाहिरसिंह नाम दिया है। मुंशी सोहनलाल-रचित 'तवारीख़ राज श्रीबीकानेर' में किशनसिंह के पीछे रतनसिंह और उसके पीछे जोधसिंह का नाम दिया है। किशनसिंह के पीछे जोगीदास का नाम नहीं है तथा खन्नसिंह के दो पुत्र जोरावरसिंह और हिन्दूसिंह बतलाकर, जोरावरसिंह का उत्तराधिकारी सरदारसिंह और हिन्दूसिंह का पुत्र लालसिंह बतलाया है। इन्द्रसिंह का नाम कहीं पर नहीं है।

कारण से बादशाह का विरोधी हो गया और उसने शाही अफ़सर अरबख़ां को मार डाला। इसपर अरबख़ां के साथियों ने अमरसिंह पर आक्रमण कर उसको भी मार दिया। तब अमरसिंह के पुत्र केशोदास (किशनदास) ने पिता की हत्या का बदला लेना चाहा, परंतु अपनी थोड़ीसी भूल के कारण वह चाल चूक गया और हमज़ा के पुत्र के धोखे में एक दूसरे शाही अफ़सर करमबेग को मारकर शाही कैंप से चल दिया। तब शाही सेना ने उसका पीछा किया। देपालपुर तथा कनूला के बीच नोशहरा नामक स्थान में शाही सैनिकों ने उस(केशोदास)को घेर लिया। अंत में वह शाही-सैनिकों से वीरतापूर्वक युद्ध करता हुआ अपने पांच आदमियों-सहित मारा गया। केशोदास का उत्तराधिकारी उसका पुत्र जोगीदास हुआ। तदनंतर रतनदास, जोधसिंह, खड्गसिंह आदि क्रमशः हरदेसर के सरदार हुए।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के सिपाही-विद्रोह के समय अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ स्वयं महाराजा सरदारसिंह विद्रोह के स्थानों में गया। उस समय हरदेसर का ठाकुर जवाहरसिंह भी महाराजा के साथ था और उसने अच्छी मदद की।

ठाकुर जवाहरसिंह के पुत्र बाघसिंह का जन्म वि० सं० १९२५ आश्विन सुदि १० (ई० स० १८६८ ता० २६ सितम्बर) को हुआ था। उसकी मृत्यु होने पर उसका पुत्र रघुनाथसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ, जो हरदेसर का वर्तमान सरदार है।

मगरासर

राव लूणकर्ण के छोटे पुत्र वैरसी का बेटा नारंग था, जिसके तीसरे पुत्र भोपत[१] को महाराजा सूरसिंह के राज्यकाल में मगरासर (मंघरासर) की जागीर मिली। भोपत का पुत्र सुंदरदास और उसका हरिसिंह हुआ, जिसको

(१) वंशक्रम—[१] भोपतसिंह [२] सुन्दरदास [३] हरिसिंह [४] केसरीसिंह [५] हठीसिंह [६] साहबसिंह [७] बख़्तावरसिंह [८] हरनाथसिंह [९] दलेलसिंह [१०] प्रतापसिंह [११] विजयसिंह और [१२] नवलसिंह।

महाराजा अनूपसिंह ने 'ठाकुर' की उपाधि प्रदान की।

हरिसिंह के पीछे केसरीसिंह, हठीसिंह, साहबसिंह और बख़्तावरसिंह क्रमशः मगरासर के स्वामी हुए। महाराजा गजसिंह के समय मगरासर के ठाकुर ने राज्य के प्रतिकूल आचरण करना आरंभ किया। इस-पर जयपुर से लौटते समय वि० सं० १८१२ (ई० स० १७५५) में उक्त महाराजा ने उसका दमन कर उसे अपना अधीन बनाया। महाराजा रत्नसिंह के राज्य-समय में महाजन के ठाकुर वैरिशाल का उपद्रव बहुत बढ़ गया। पूगल आदि के कई सरदार उसके शामिल थे। अतएव उनका दमन करने के लिए वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) में महाराजा ने ठाकुर हरनाथसिंह (बख़्तावरसिंह का पुत्र) को कई सरदारों आदि के साथ गांव केला में भेजा, जहां पेमा और जोरा बावरी से, जो चार हज़ार लुटेरों के साथ आ रहे थे, उसका मुकाबला हुआ, जिसमें लुटेरों के बहुतसे आदमी मारे गये और शेष भाग गये तथा जोरा पकड़ा गया। फिर स्वयं विद्रोही सरदारों को दबाने के लिए प्रस्थान कर महाराजा रत्नसिंह केला पहुंचा। वहां से वह पूगल की ओर रवाना हुआ, जहां महाजन का ठाकुर वैरिशाल ठहरा हुआ था। महाराजा सत्तासर पहुंचा ही था कि ठाकुर वैरिशाल भागकर जैसलमेर चला गया। महाराजा ने पूगल पर चढ़ाई कर वहां अपना अधिकार कर लिया और वहां के राव रामसिंह का अपराध क्षमा कर उसके निर्वाह के लिए गुढ़ा आदि गांव दिये।

वि० सं० १८९३ (ई० स० १८३७) में बाघा ऊहड़ ने जोधपुर से मदद लाकर माढ़िया गांव को लूट लिया। तब ठाकुर हरनाथसिंह ने उसका पीछा कर घोड़ारण (मारवाड़) में उसके दल से युद्ध किया, जिसमें कितने एक लुटेरे तो मारे गये और बाक़ी भाग गये। हरनाथसिंह ने लुटेरों का बहुतसा धन लूटकर महाराजा को भेंट किया। उन्हीं दिनों सीकर इलाक़े का शेखावत जुहारसिंह वहां का बहुत बिगाड़कर बीकानेर के लोढ़सर इलाक़े में अपने साथियों-सहित जा डटा। इसपर ठाकुर हरनाथसिंह ने सुराणा माणिकचंद के साथ जाकर उसको घेर लिया। उसी समय सीकर की

जमीयत भी जा पहुंची, जिसकी साजिश से जुहारसिंह आदि क़िला छोड़-कर जोधपुर राज्य में चले गये। ठाकुर हरनाथसिंह ने वहां पर भी उनका पीछाकर उसे वहां से हटने के लिए विवश किया। इसके पीछे महाराजा की आज्ञानुसार हरनाथसिंह ने हरसोलाव के चांपावत अजीतसिंह, करेकड़े के पूरणसिंह तथा नौडिये के विरदसिंह को गिरफ़्तार कर लिया। जोधपुर इलाक़े में रहते समय लोढ़सर के ठाकुर खुंमाणसिंह, रूपेली के बीदावत करणसिंह, सीहोढण के बीदावत करण, ऊहड़ बाघा आदि ने बीकानेर के साधासर और जसरासर गांव लूट लिये तथा वे कई स्थानों से ऊंट पकड़ ले गये। तब ठाकुर हरनाथसिंह तथा सुराणा केसरीसिंह ने उनपर चढ़ाईकर उनको जा दबाया। दो प्रहर तक लड़ाई होने के बाद उपद्रवी सरदार भाग गये। हरनाथसिंह आदि ने उनका पीछाकर कई उपद्रवियों को मार डाला। शेष सीवा (जोधपुर राज्य) में चले गये। वि० सं० १९०४ (ई० स० १८४७) में डूंगरसिंह शेखावत के दल ने आगरे के जेलख़ाने पर हमला कर प्रसिद्ध लुटेरे डूंगरसिंह को छुड़ा लिया। जुहारसिंह बीकानेर के इलाक़े में चला गया। अंग्रेज़ सरकार ने डूंगरसिंह तथा उसके साथियों को गिरफ़्तार करने के लिए मि० फ़ास्टर को रवाना किया। पर उसे सफलता नहीं मिली। डूंगरसिंह के दल ने अवसर पाकर नसीराबाद का ख़ज़ाना भी लूट लिया। उनका आतंक बढ़ता देख महाराजा ने जुहारसिंह की गिरफ्तारी के लिए ठाकुर हरनाथसिंह आदि को कप्तान शॉ के साथ भेजा। गांव बिगा में जुहारसिंह का पता लगने पर उसपर हमला किया गया, पर इसी बीच उपद्रवी आगे निकल गये। फिर घड़सीसर में चारों तरफ़ से जुहारसिंह को घेरकर उसपर आक्रमण किया गया। अंत में ठाकुर हरनाथसिंह के समझाने पर जुहारसिंह ने आत्मसमर्पण कर अपने को अंग्रेज़ सरकार के सुपुर्द कर दिया।

वि० सं० १९११ (ई० स० १८५५) में चूरू पर ठाकुर ईश्वरीसिंह आदि ने जाकर पुनः अपना अधिकार कर लिया। इसपर महाराजा सरदारसिंह ने ईश्वरीसिंह आदि को निकालने के लिए अपनी सेना रवाना की, जिसमें

ठाकुर हरनाथसिंह भी विद्यमान था। राज्य की सेना ने युक्तिपूर्वक एक ही आक्रमण में चूरू पर अधिकार कर लिया। फिर सुजानगढ़ से सेना पहुंचने पर ईश्वरीसिंह चारों तरफ़ से घेर लिया गया। अंत में ईश्वरीसिंह सरकारी सेना से लड़कर मारा गया। इस अवसर पर ठाकुर हरनाथसिंह घायल हुआ। महाराजा ने उसकी सेवा की क़द्र कर उसके ठिकाने मगरासर की रेख माफ़ कर दी।

हरनाथसिंह के पीछे क्रमशः दलेलसिंह, प्रतापसिंह और विजयसिंह मगरासर के सरदार हुए। ठाकुर विजयसिंह का देहांत होने पर उसका उत्तराधिकारी ठाकुर नवलसिंह हुआ, जो मगरासर का वर्तमान सरदार है। उसको महाराजा साहब ने अपना ए० डी० सी० नियतकर ई० स० १६१५ में कैप्टेन, ई० स० १६१६ में मेजर तथा ई० स० १६२६ में लेफ़्टेनेंट कर्नल के पद प्रदान किये हैं।

इकलड़ी ताज़ीम और बांहपसाव के कुरबवाले सरदार

पड़िहारा

राव बीदा के प्रपौत्र गोपालदास का पौत्र मनोहरदास हुआ। उसके वंशज सांडवे के ठाकुर दानसिंह ने अपने एक पुत्र ईश्वरीसिंह को निर्वाह के लिए पड़िहारा की जागीर देकर अलग किया था, किन्तु पीछे से सांडवे के ठाकुर भोमसिंह के कथन पर जैतसिंह (भोमसिंह का पुत्र) ने अपने छोटे भाई रघुनाथसिंह[1] का उसपर अधिकार करा दिया। फिर महाराजा सूरतसिंह ने उस (रघुनाथसिंह) को ताज़ीम देकर सम्मानित किया। उसके वंशज मनोहरदासोत बीदा कहलाते हैं।

रघुनाथसिंह के कोई संतान न होने से उसने अपने भाई अमानीसिंह के पुत्र लक्ष्मणसिंह को गोद लिया जो उसके बाद पड़िहारे का स्वामी हुआ

(१) वंशक्रम—[१] रघुनाथसिंह [२] लक्ष्मणसिंह [३] भोपालसिंह [४] केसरीसिंह [५] हनुमन्तसिंह और [६] ठाकुर भैरूसिंह।

पर वह निःसंतान था, इसलिए सांडवे का भोपालसिंह दत्तक लिया जाकर उसका उत्तराधिकारी हुआ।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन में महाराजा सरदारसिंह के साथ रहकर भोपालसिंह ने भी अच्छी सहायता पहुंचाई। भोपालसिंह के पीछे केसरीसिंह और उसके बाद हनुमंतसिंह क्रमशः पड़िहारा के स्वामी हुए। हनुमंतसिंह का पुत्र भैरूंसिंह पड़िहारे का वर्तमान सरदार है।

सातूं

सातूं का ठिकाना रावत कांधल के पुत्र बाघसिंह को वि० सं० १५४६ (ई० स० १४८६) में राव बीका ने दिया था। महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८१२ (ई० स० १७५५) में वहां के ठाकुर वीरतसिंह के पुत्र विजयसिंह को ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। वे बणीरोत कहलाते हैं। विजयसिंह के पीछे अजीतसिंह, सादूलसिंह और नाहरसिंह क्रमशः वहां के स्वामी हुए।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन करने में महाराजा सरदारसिंह के साथ सातूं का ठाकुर भी विद्यमान था।

नाहरसिंह का उत्तराधिकारी उदयसिंह और उसका वैरिशालसिंह हुआ, जिसका पुत्र प्रतापसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

गारबदेसर

राव लूणकर्ण ने अपने भाई घड़सी के पुत्र देवीसिंह को गारबदेसर

---

(१) वंशक्रम—[१] विजयसिंह [२] अजीतसिंह [३] सादूलसिंह [४] नाहरसिंह [५] उदयसिंह [६] वैरिशालसिंह और [७] प्रतापसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] देवीसिंह [२] राजसिंह [३] किशनसिंह [४] सबलसिंह [५] जगरूपसिंह [६] इन्द्रसिंह [७] छत्रसिंह [८] रघुनाथसिंह [९] सुमाणसिंह [१०] सूरजमल [११] तारासिंह [१२] गिरधारीसिंह और [१३] फ़तहसिंह।

की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया था। उसके वंशधर घड़सीयोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि ठाकुर है।

ठाकुर गिरधारीसिंह का पुत्र फ़तहसिंह गारबदेसर का वर्तमान सरदार है।

देपालसर

रावत कांधल के पौत्र वणीर के वंशज भीमसिंह के पौत्र छत्रसाल[1] को महाराजा गजसिंह के राज्य-काल में वि० सं० १८३५ (ई० स० १७७८) में देपालसर की जागीर और ताज़ीम की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उसके वंशज वणीरोत कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

ठाकुर रामकिशन का पुत्र फूलसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

सांवतसर

इस ठिकाने के सरदार तंवर हैं, जो अपने को ग्वालियर के तंवर राजा मानसिंह का वंशधर मानते हैं। मानसिंह का एक वंशधर केशवदास अपने पुत्र गोपीसहाय-सहित महाराजा कर्णसिंह के समय उक्त महाराजा के साथ अपनी पुत्री का विवाह होने के कारण बीकानेर चला गया। तब बीकानेर राज्य की तरफ़ से ताज़ीम और निर्वाह के लिए जीविका देकर महाराजा ने उसको प्रतिष्ठापूर्वक वहां रक्खा।

गोपीसहाय के दो पुत्र कीर्त्तिसिंह और स्वरूपसिंह थे। कीर्त्तिसिंह के वंशज जोधपुर, कोटा आदि राज्यों में हैं और उनके अधिकार में बीकानेर राज्य में भी ऊंचाइड़ा का ठिकाना है। स्वरूपसिंह के पुत्रों में से दानसिंह के वंशजों के अधिकार में जंझेऊ और ज़ालिमसिंह के वंशजों के अधिकार

---

(१) वंशक्रम—[१] छत्रसाल [२] हठीसिंह [३] अमरसिंह [४] रुद्रसिंह (इन्द्रसिंह) [५] कानसिंह [६] रामकिशन और [७] फूलसिंह।

में लक्खासर की जागीर रही। दानसिंह का एक पुत्र बख़्तावरसिंह था, वह किसी कारण से बीकानेर की जागीर का स्वत्त्व छोड़कर जोधपुर चला गया। उस(बख़्तावरसिंह)के एक पुत्री थी, जिसका विवाह वहां के महाराजा मानसिंह से हुआ था। इस वैवाहिक प्रसङ्ग से उसको वहां से खेतासर की जागीर और ताज़ीम आदि का सम्मान भी प्राप्त हुआ। वि० सं० १८६३ (ई० स० १८०६) में जयपुर का महाराजा जगतसिंह, बीकानेर का महाराजा सूरतसिंह और मारवाड़ के अधिकांश सरदार, जोधपुर की गद्दी पर, वहां के पूर्व महाराजा भीमसिंह की मृत्यु से कुछ महीनों पीछे उत्पन्न होनेवाले पुत्र धोकलसिंह को बिठलाने के लिए बड़ी भारी सेना के साथ चढ़ गये और अधिकांश मारवाड़ पर उनका अधिकार हो गया। उन्होंने जोधपुर नगर को घेरकर वहां भी अधिकार कर लिया, केवल वहां का दुर्ग ही महाराजा मानसिंह के पास रह गया, जिसका उसने यथेष्ट प्रबंध कर विरोधियों का दृढ़ता से मुक़ाबला किया। धोकलसिंह के सहायकों ने जोधपुर का दुर्ग ख़ाली कराने के लिए कई प्रयत्न किये और वि० सं० १८६४ (ई० स० १८०७) में उन्होंने राणीसर की बुर्ज़ की तरफ़ सुरंग लगाकर क़िले में प्रवेश करना चाहा। इसपर दुर्ग-स्थित सेना ने उनका मुक़ाबला किया जिससे उन्हें असफल होकर लौटना पड़ा। इस आक्रमण के समय ठाकुर बख़्तावरसिंह (बहादुरसिंह) महाराजा मानसिंह के पक्ष में रहकर वीरतापूर्वक युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ।

बख़्तावरसिंह के तीन पुत्र अभयसिंह, बख़्तसिंह और चैनसिंह हुए। अभयसिंह भी जोधपुर राज्य की सेवा करता हुआ ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। उसका पुत्र तेजसिंह बालक था, जिससे खेतासर पर बख़्तसिंह और चैनसिंह का अधिकार हो गया। फिर तेजसिंह और बख़्तसिंह के बीच खेतासर की जागीर के लिए बहुत दिनों तक झगड़ा चलता रहा। अन्त में बख़्तसिंह और चैनसिंह ने तेजसिंह को भवाद देकर परस्पर के कलह को शांत कर दिया। तेजसिंह के तीन पुत्र—शिवनाथसिंह, जीवराजसिंह और सुलतानसिंह—हुए। शिवनाथसिंह का भवाद पर अधिकार रहा और

जीवराजसिंह, बीकानेर में जंभेऊ के कल्याणसिंह के दत्तक गया। कल्याणसिंह की एक पुत्री का विवाह बीकानेर के महाराज लालसिंह के साथ हुआ था, जिसके उदर से डूंगरसिंह का जन्म हुआ। इस कारण से बीकानेर का स्वामी होने पर महाराजा डूंगरसिंह ने वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में जीवराजसिंह को रिड़ी की जागीर देकर उसके सम्मान में बहुत कुछ वृद्धि की एवं वर्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी ने भी उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाकर अपनी रजत-जयन्ती के अवसर पर उस-(जीवराजसिंह) को वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में 'राजा' की उपाधि प्रदान की।

जीवराजसिंह का छोटा भाई सुलतानसिंह[1] वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में भवाद से बीकानेर चला गया, जिसको महाराजा डूंगरसिंह ने लखमादेसर गांव जागीर में प्रदानकर अपने सरदारों में दाख़िल किया। वि० सं० १९५६ (ई० स० १८९९) में महाराजा सर गंगासिंहजी का दूसरा विवाह ठाकुर सुलतानसिंह की पुत्री से हुआ। इस संबंध से महाराजा साहब ने उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि कर उसको उसी वर्ष सांवतसर की जागीर अधिक प्रदानकर ताज़ीम का सम्मान दिया। फिर वि० सं० १९८२ (ई० स० १९२५) के लगभग जंभेऊ की जागीर, जिसपर उसका पैतृक स्वत्त्व था, राजा जीवराजसिंह से खालसाकर महाराजा साहब ने उसको प्रदान कर दी। उसी वर्ष कार्तिक सुदि ११ (ता० २७ अक्टोबर) को उसका देहांत हो गया। वह बड़ा ही योग्य सरदार था। उसके चार पुत्र—मालुमसिंह, अमरसिंह, रघुनाथसिंह और रामसिंह—हुए, जिनमें से ज्येष्ठ मालुमसिंह सांवतसर का ठाकुर है। राज्य से उसको ताज़ीम आदि का सम्मान पूर्ववत् प्राप्त है।

ठाकुर मालुमसिंह के चतुर्थ भाई रामसिंह का जन्म वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०२) में हुआ। उसने प्रारंभिक शिक्षा बीकानेर के वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल में प्राप्त की। बीकानेर का वही सर्वप्रथम व्यक्ति है, जो वहां की उच्च परीक्षा में सम्मान के साथ उत्तीर्ण हुआ है। फिर वह बनारस

(१) वंशक्रम—[१] सुलतानसिंह और [२] मालुमसिंह।

के हिन्दू विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा-प्राप्ति के लिए भेजा गया, जहां से उसने एम० ए० की परीक्षा अंग्रेज़ी में सम्मान के साथ पास की। बीकानेर के राजपूतों में वही प्रथम व्यक्ति है, जिसने अंग्रेज़ी की सर्वोच्च परीक्षा सम्मानपूर्वक पास की है। तदनन्तर कुछ समय तक वह उक्त विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी का प्रोफ़ेसर रहा। फिर महाराजा साहब ने उसको बीकानेर बुलाकर 'डाइरेक्टर ऑव् पब्लिक इंस्ट्रक्शन' के पद पर नियुक्त किया। उसने इस पद का कार्य योग्यतापूर्वक संपादन किया, परंतु कुछ समय बाद उसने त्यागपत्र दे दिया। वह महाराजा साहब के दोनों पौत्रों—भंवर करणीसिंह और अमरसिंह—का शिक्षक भी रहा। उसकी कार्य-शैली अच्छी होने से महाराजा साहब ने पुनः उसको 'डाइरेक्टर ऑव् पब्लिक इन्स्ट्रक्शन' के पद पर नियुक्त किया है।

ठाकुर रामसिंह विनम्र, लोकप्रिय और व्यवहार-कुशल व्यक्ति है। साहित्य से उसको बड़ा अनुराग है। हिंदी भाषा में गद्य और पद्य दोनों में वह बड़ी सुंदर रचनाएं करता है। मानव-हृदय की गंभीर भावनाओं का उसकी रचनाओं में पूर्ण समावेश होता है। उसकी रचनाएं अभी बिखरी हुई हैं, केवल 'कानन कुसुमाञ्जली' (गद्य-काव्य) ही प्रकाशित हुई है। राजस्थानी भाषा के प्राचीन साहित्य के उद्धार के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों में वह अग्रगण्य है। इस दिशा में उसने अपने दो सहयोगियों पंडित सूर्यकरण पारीक, एम० ए० (स्वर्गवासी) और विद्यामहोदधि स्वामी नरोत्तमदास, एम० ए० के साथ बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया है। उनके प्रयत्न से प्राचीन राजस्थानी साहित्य के अनेक ग्रंथ-रत्नों का उद्धार हुआ है[1],

---

(१) बीकानेर के राजकीय पुस्तकालय के अतिरिक्त वहां के जैन भण्डारों में भी प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकों आदि का अच्छा संग्रह है। जैन धर्मावलम्बियों में विद्यानुराग की मात्रा बहुत ही कम होने से वह सामग्री यों ही पड़ी-पड़ी नष्ट होती जाती है। कुछ अज्ञान की दशा में इधर-उधर चली भी गई है, तथापि जो कुछ विद्यमान है, वह बड़ी उपयोगी है। यह प्रसन्नता का विषय है कि बीकानेर के उत्साही जैन युवकों, अगरचन्द और भंवरलाल नाहटा (ओसवाल) ने अब इस प्राचीन जैन

जिनमें बीकानेर के महाराजा रायसिंह के भाई महाराज पृथ्वीराज राठोड़-कृत 'वेलि किसन रुकमणी री' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके सुंदर संपादन की भारत ही नहीं, किन्तु यूरोप तक के विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की है। भारतीय भाषाओं के प्रकांड विद्वान् सर जॉर्ज ग्रियर्सन् ने तो इस ग्रन्थ के संबंध में यहां तकलिखा है कि आधुनिक भारतीय भाषाओं में किसी भी ग्रंथ का ऐसा सुंदर संपादन नहीं हुआ। इनके संपादित अन्य ग्रंथों में 'राजस्थान के लोक गीत' (तीन भाग), 'ढोला मारू रा दूहा', 'जटमल ग्रंथावली', 'राव जैतसी रो छन्द', 'राजस्थान के वीर गीत' आदि हैं।

ठाकुर रामसिंह दान-दाताओं की ओर से बनारस हिंदू युनिवर्सिटी की कौंसिल का सदस्य चुना गया है और राजपूताना तथा सेंट्रल इंडिया के इंटरमीडियेट तथा हाई स्कूल के बोर्ड का सदस्य भी रहा है। सार्वजनिक

साहित्य के उद्धार का भार अपने हाथ में लेकर वहां से प्राप्त सामग्री के आधार पर आलोचनात्मक ढङ्ग से कुछ सुन्दर ग्रन्थों की रचना की है, जो इतिहास के लिए महत्त्व-पूर्ण हैं। नाहटा बन्धुओं ने नष्ट होनेवाले जैन साहित्य के ग्रन्थों को परिश्रमपूर्वक निजी व्यय से ख़रीदकर अपने संग्रह में सुरक्षित कर लिया है। बीकानेर-यात्रा के समय मुझे कई वार उनके संग्रह को देखने का अवसर मिला था। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह के लघु भ्राता महाराज पद्मसिंह का घोड़े पर चढ़कर शेर के शिकार का एक वास्तविक चित्र, जो कला की दृष्टि से सुन्दर और लगभग ढाई सौ वर्ष का पुराना है, उनके संग्रह में मुझे देखने को मिला। अब वह चित्र राज्य में है।

बीकानेर के साहित्य-प्रेमी व्यक्तियों में भंवर करणीसिंह और अमरसिंह का अध्यापक पंडित दशरथ शर्मा, एम० ए० भी सुयोग्य व्यक्ति है। बीकानेर के राजकीय पुस्तकालय में वहां के नरेशों-द्वारा रचित कई ग्रन्थों का, जो विद्वानों की दृष्टि में अभी तक नहीं आये थे, पता मुझे उसके द्वारा ही मिला। मैंने उसके पास एक पुरानी और विस्तृत जैन पट्टावली की नक़ल भी देखी, जो उपर्युक्त नाहटा बन्धुओं से प्राप्त हुई है। उसमें अनेक ऐतिहासिक विषयों के अतिरिक्त भारत के अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराजा पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) के दरबार में जैनाचार्य्य के उपस्थित होने पर धर्म-चर्चा होने का उल्लेख है। यह ग्रन्थ निस्सन्देह जैसलमेर आदि कई राज्यों और चौहानों के इतिहास के लिए बड़ा उपयोगी है।

कार्यों से उसको बड़ा अनुराग है और बीकानेर की कई शिक्षा-संबंधी तथा साहित्यिक संस्थाओं का वह जीवन है।

कूदसू

कूदसू की जागीर वर्तमान महाराजा साहब ने बीकमकोर (जोधपुर राज्य) के भाटी ठाकुर बख़्तावरसिंह[1] के छोटे पुत्र प्रतापसिंह को वहां से बुलाकर वि० सं० १९६६ आश्विन सुदि १० (ई० स० १९०९ ता० २४ अक्टोबर) को प्रदान की और ताज़ीम का सम्मान भी दिया। ठाकुर प्रतापसिंह की बहिन का विवाह वर्तमान महाराजा साहब से हुआ है। उसकी गणना परसंगियों में होती है।

बिरकाली

राव जैतसी के पुत्र शृंग (श्रीरंग) के छठे वंशधर कुशलसिंह के दूसरे पुत्र सुलतानसिंह[2] को महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०) में बिरकाली की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। उसके वंशधर शृंगोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी सिपाही-विद्रोह के अवसर पर अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ महाराजा सरदारसिंह के साथ बिरकाली का स्वामी भी उपस्थित था।

ठाकुर अगरसिंह का पुत्र रत्नसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] बख़्तावरसिंह और [२] प्रतापसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] सुलतानसिंह [२] विजयसिंह [३] दलपतसिंह [४] लच्मणसिंह [५] छत्रसिंह [६] रावतसिंह [७] अगरसिंह और [८] रत्नसिंह।

सिमला

राव जैतसी के पुत्र श्रृंग के वंशज भूकरका के ठाकुर मदनसिंह के छोटे पुत्र ज्ञानसिंह[1] को महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८४७ (ई० स० १७६०) में सिमला की जागीर और ताज़ीम की प्रतिष्ठा प्रदान की। उसके वंशज श्रृंगोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

ज्ञानसिंह के चतुर्थ वंशधर बाघसिंह का पुत्र जोरावरसिंह सिमला का वर्तमान सरदार है।

अजीतपुरा

अजीतपुरा के स्वामी, राव जैतसी के छोटे पुत्र श्रीरंग (श्रृंग) के पौत्र मनोहरदास[2] के छोटे बेटे किशनसिंह के वंशधर हैं। किशनसिंह के दो पुत्र प्रतापसिंह और रामसिंह थे। प्रतापसिंह के वंशज सीधमुख के ठाकुर हैं। महाराजा रायसिंह ने वि० सं० १६५१ (ई० स० १५६४) में मनोहरदास को अजीतपुरे की जागीर प्रदान की। फिर किशनसिंह को महाराजा सूरसिंह के समय वि० सं० १६७३ (ई० स० १६१६) में सीधमुख की नई जागीर मिल जाने से वह तो उस जागीर का स्वामी रहा और रामसिंह के वंशज अजीतपुरा के स्वामी रहे। महाराजा सूरतसिंह के समय अजीतपुरा के सरदार को ताज़ीम का सम्मान मिला।

वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) में लाहौर के सिक्खों के साथ की लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ महाराजा रत्नसिंह ने बीकानेर से जो सेना भेजी, उसमें अजीतपुरा के ठाकुर ने भी अपने मंत्री को जमीयत

---

(१) वंशक्रम—[१] ज्ञानसिंह [२] सालमसिंह [३] अमानीसिंह [४] शार्दूलसिंह [५] बाघसिंह और [६] जोरावरसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] मनोहरदास [२] किशनसिंह [३] रामसिंह [४] फ़तहसिंह [५] कीर्तिसिंह [६] दीपसिंह [७] शिवदानसिंह [८] दलेलसिंह [६] गुमानसिंह [१०] लालसिंह [११] भैरोंसिंह [१२] शिवसिंह और [१३] रामसिंह।

के साथ भेजा। इस सेवा के उपलक्ष्य में युद्ध की समाप्ति पर महाराजा रत्नसिंह ने वहां के मंत्री को सिरोपाव आदि देकर सम्मानित किया। महाराजा सरदारसिंह के समय वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में भारतव्यापी सिपाही-विद्रोह हुआ। उस समय महाराजा के साथ रहकर अजीतपुरा के ठाकुर ने अंग्रेज़ सरकार को अच्छी मदद पहुंचाई।

महाराजा सर गंगासिंहजी के राज्य-काल में वि० सं० १९६२ (ई० स १९०५) में बीकानेर के कुछ सरदारों के उपद्रवी हो जाने की आशंका हुई, जिनमें अजीतपुरे का ठाकुर भैरोंसिंह भी शामिल था। इसपर महाराजा साहब ने विरोधी सरदारों के अपराधों की जांच करने का हुक्म दिया। ठाकुर भैरोंसिंह भी अपराधी पाया गया और वह बीकानेर के क़िले में नज़र क़ैद कर दिया गया। भैरोंसिंह के पीछे शिवजीसिंह वहां का स्वामी हुआ। उसका पुत्र रामसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

कारणूता

राव बीदा के प्रपौत्र गोपालदास के दूसरे पुत्र तेजसिंह के दो पुत्र चंद्रभान और रामचंद्र थे। चंद्रभान की औलाद में गोपालपुरा के ठाकुर मुख्य हैं। रामचंद्र के दो पुत्र प्रतापसिंह और भागचंद हुए। प्रतापसिंह के वंशधर चाड़वास, घंटियाल, जोगलिया और नौसरिया के स्वामी हैं। भागचंद के प्रपौत्र बख़्तसिंह के दो पुत्र मानसिंह और ईश्वरीसिंह थे। महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में मानसिंह[1] को ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। उसके वंशजों की उपाधि 'ठाकुर' है और वे तेजसिंहोत बीदा कहलाते हैं। मानसिंह का पुत्र शिवजीसिंह हुआ, परंतु उसके औलाद न थी, इसलिए उसने अपने चाचा ईश्वरीसिंह के पुत्र रघुनाथसिंह के छोटे बेटे मोतीसिंह को दत्तक लिया। मोतीसिंह के पीछे खेतसिंह वहां का सरदार हुआ, परंतु उसके भी

(१) वंशक्रम—[१] मानसिंह [२] शिवजीसिंह [३] मोतीसिंह [४] खेतसिंह [५] बहादुरसिंह और [६] हुक्मसिंह।

संतान न थी, इसलिए उसका छोटा भाई बहादुरसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर के दमन में अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ महाराजा सरदारसिंह के साथ काणूता का स्वामी भी उपस्थित था।

महाराजा डूंगरसिंह के राज्य-काल में वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में सरदारों का उपद्रव खड़ा हुआ। उस समय ठाकुर बहादुरसिंह ने राज्य का ख़ैरख़्वाह रहकर अच्छी सेवा की। इसपर उक्त महाराजा ने प्रसन्न होकर उसके पट्टे की रेख माफ़ कर दी।

ठाकुर बहादुरसिंह का पुत्र हुक्मसिंह काणूते का वर्तमान सरदार है।

बिसरासर

राव जोधा के छोटे भाई रावत कांधल के दूसरे पुत्र राजसिंह के प्रपौत्र राघवदास के चतुर्थ वंशधर छत्रसिंह के दो बेटे आनंदसिंह और देवीसिंह हुए। आनंदसिंह के वंशधरों में रावतसर के रावत प्रमुख हैं। महाराजा गजसिंह के राज्य-काल में वि० सं० १८१६ (ई० स० १७५९) में रावत आनंदसिंह को बिसरासर की जागीर भी मिली। फिर आनंदसिंह के ज्येष्ठ पुत्र जयसिंह का अधिकार तो रावतसर पर रहा और उस-(आनंदसिंह) के छोटे भाई देवीसिंह[1] का अधिकार बिसरासर पर। यहां के सरदार कांधल रावतोत राघवदासोत कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

देवीसिंह के प्रपौत्र खुशहालसिंह का पुत्र दीपसिंह बिसरासर का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] देवीसिंह [२] बुधसिंह [३] बाघसिंह [४] ख़ुशहालसिंह और [५] दीपसिंह।

चरला

राव बीदा का पौत्र केशवदास हुआ, जिसके वंश के बीदासर के स्वामी ज़ालिमसिंह के छोटे पुत्र अजीतसिंह[1] को चरला की जागीर और ताज़ीम महाराजा गजसिंह के राज्यकाल में मिली। उसके वंश के बीदावत केशोदासोत कहलाते हैं।

महाराजा रत्नसिंह के राज्य-काल में चरला का स्वामी कान्हसिंह जयपुर तथा जोधपुर से सहायता प्राप्तकर बीकानेर में लूट-मार करने लगा। इसपर सुराणा केसरीचंद ने जाकर सुजानगढ़ में उसे गिरफ़्तार कर लिया। वहां से वह बीकानेर भेजा गया और पीछे से नेतासर में रक्खा गया।

ठाकुर उदयसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

फोगां

यह ठिकाना महाराजा अनूपसिंह के तीसरे कुंवर आनंदसिंह के ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंह (महाराजा गजसिंह का बड़ा भाई) के पुत्र सरदारसिंह[2] को वि० सं० १८१६ (ई० स० १७५६) में महाराजा गजसिंह ने ताज़ीम-सहित प्रदान किया था। उसके वंशज आनंदसिंहोत राजवी कहलाते हैं।

सरदारसिंह के पीछे अखैसिंह, जवानीसिंह और भूमसिंह क्रमशः फोगां के राजवी हुए। भूमसिंह के कोई संतान न थी, इसलिए उसने खेमसिंह को गोद लिया, जो उसका निकट-संबंधी था।

राजवी गणपतसिंह फोगां का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] अजीतसिंह [२] मुहब्बतसिंह [३] कान्हसिंह [४] मोतीसिंह [५] बिरदसिंह [६] खेतसिंह [७] वैरिशाल और [८] ठाकुर उदयसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] सरदारसिंह [२] अखैसिंह [३] जवानीसिंह [४] भूमसिंह [५] खेमसिंह और [६] गणपतसिंह।

महेरी

महाराजा अनूपसिंह के छोटे पुत्र आनंदसिंह के तीसरे पुत्र गूदड़सिंह[1] के वंशधर महेरी के स्वामी हैं और उनकी उपाधि 'राजवी' है। यह ठिकाना महाराजा गजसिंह के समय क़ायम हुआ। यहां के स्वामी 'आनंदसिंहोत राजवी' कहलाते हैं।

राजवी बहादुरसिंह महेरी का वर्तमान सरदार है।

चंगोई

यह ठिकाना महाराजा अनूपसिंह के छोटे पुत्र आनंदसिंह के चतुर्थ पुत्र तारासिंह[2] के वंशधरों के अधिकार में है। वि० सं० १८४३ (ई० स० १७८६) में महाराजा गजसिंह के राज्य-काल में चंगोई का ठिकाना क़ायम हुआ और वहां के स्वामी को ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। उसकी उपाधि 'राजवी' है और वह 'आनंदसिंहोत राजवी' कहलाता है।

राजवी गोविंदसिंह का पुत्र बृजलालसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

सत्तासर

सत्तासर के स्वामी केलणोत भाटी हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है।

पूगल के राव अभयसिंह के तीन पुत्र रामसिंह, अनूपसिंह और शार्दूलसिंह हुए। अभयसिंह की मृत्यु के पश्चात् रामसिंह पूगल का राव हुआ। अनूपसिंह[3] ने महाराजा सूरतसिंह की सेवा में उपस्थित हो राज्य

(१) वंशक्रम—[१] गूदड़सिंह [२] जगतसिंह [३] भगवानसिंह [४] खेमसिंह [५] किशनसिंह [६] सूरजमालसिंह और [७] बहादुरसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] तारासिंह [२] भवानीसिंह [३] फ़तहसिंह [४] भारसिंह [५] कान्हसिंह [६] गोविन्दसिंह और [७] बृजलालसिंह।

(३) वंशक्रम—[१] अनूपसिंह [२] हनुमन्तसिंह [३] मूलसिंह [४] शिवनाथसिंह और [५] हरिसिंह।

की अधीनता स्वीकार की, तब उक्त महाराजा ने वि० सं० १८६७ माघ वदि ६ (ई० स० १८११ ता० १६ जनवरी) को उसे खींयेरा और ककरालो के साथ सत्तासर की जागीर ताज़ीम-सहित प्रदान की। अनूपसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र हनुमंतसिंह वहां का स्वामी हुआ, जिसको महाराजा रत्नसिंह ने पहले की जागीर के अतिरिक्त वि० सं० १६०२ (ई० स० १८४५) में मोतीगढ़ गांव दिया। हनुमंतसिंह का उत्तराधिकारी उसका ज्येष्ठ पुत्र मूलसिंह हुआ, जिसको महाराजा डूंगरसिंह ने वि० सं० १६३१ पौष सुदि ६ (ई० स० १८७५ ता० १३ जनवरी) को सरदारपुरा गांव बख़्शा और इसके दूसरे वर्ष वि० सं० १६३२ वैशाख वदि १ (ई० स० १८७५ ता० २१ अप्रेल) को हाथी तथा सिरोपाव भी दिये। ठाकुर मूलसिंह के पीछे शिवनाथसिंह सत्तासर का सरदार हुआ, जिसको महाराजा डूंगरसिंह ने वि० सं० १६३६ द्वितीय आश्विन वदि ६ (ई० स० १८७६ ता० ६ अक्टोबर) को फूलसर और डूंगरसिंहपुरा नामक गांव दिये। शिवनाथसिंह निःसंतान था, जिससे उसका देहांत होने पर उसके चाचा गुमानसिंह का पुत्र हरिसिंह सत्तासर का स्वामी बनाया गया, जो वहां का वर्तमान सरदार है।

ठाकुर हरिसिंह का जन्म वि० सं० १६३६ प्रथम श्रावण वदि ३ (ई० स० १८८२ ता० ३ जुलाई) को हुआ। सत्रह वर्ष की आयु (वि० सं० १६५६ = ई० स० १८६६) में वह 'डूंगर लांसर्ज़' में जमादार बनाया गया। उसकी कार्य-कुशलता से प्रसन्न होकर वर्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी ने उसको उक्त रिसाले में लेफ़्टेनेंट का पद देकर अपना ए० डी० सी० नियत किया।

ई० स० १६०२ (वि० सं० १६५६) में महाराजा साहब के साथ सम्राट् एडवर्ड सप्तम की गद्दीनशीनी के अवसर पर वह लंडन गया, जहां उसको सम्राट् ने 'कोरोनेशन मेडल' दिया। तदनंतर वि० सं० १६६५ आश्विन वदि २ (ई० स० १६०८ ता० १२ सितंबर) को महाराजा साहब ने उसको हांसियावास गांव प्रदान किया। इसके तीन वर्ष बाद वि० सं० १६६८ चैत्र सुदि ७ (ई० स० १६११ ता० ५ अप्रेल) को वह मेजर



मेजर जेनरल रावबहादुर ठाकुर हरिसिंह
सी आई ई, ओ बी ई, [सत्तासर]

बनाया जाकर मिलिटरी सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त किया गया। उसी वर्ष उसको लेफ़्टेनेंट-कर्नल का पद मिला और सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की गद्दीनशीनी का मेडल भी प्राप्त हुआ। वि० सं० १९६९ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १९१२ ता० २४ सितंबर) को वह बीकानेर की स्टेट-कौंसिल में मिलिटरी मेंबर नियत हुआ एवं उसको किले के अंदर चौगान तक सवारी पर जाने का सम्मान प्राप्त हुआ। फिर वि० सं० १९७१ चैत्र वदि १२ (ई० स० १९१५ ता० १२ मार्च) को उसको मीरगढ़ गांव दिया गया। अंग्रेज़ सरकार ने भी उसकी योग्यता की क़द्र कर ई० स० १९१५ के वर्षारंभ पर उसको 'राव बहादुर' का ख़िताब दिया। उसी वर्ष वह बीकानेरी सेना में कर्नल बनाया गया।

वि० सं० १९७१-७५ (ई० स० १९१४-१८) तक यूरोप में महायुद्ध हुआ। उस अवसर पर महाराजा साहब ने अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ अपनी सेना भेजी, जिसने इजिप्ट में स्वेज़ नहर के दोनों तरफ़, ट्रिपोली की सीमा के रणक्षेत्र और मेसोपोटामिया में बड़ी सेवा की। उस अवसर पर इन्होंने ठाकुर हरिसिंह को भी वि० सं० १९७४ (ई० स० १९१७) में मेसोपोटामिया के रणक्षेत्र में भेजा, जहां उसने अच्छी तत्परता दिखलाई। इसपर उसको जनरल सर्विस और विक्टरी के दोनों पदक प्राप्त हुए। उसी वर्ष वह बीकानेरी सेना का 'ब्रिगेडियर जेनरल' बनाया गया और उसको ई० स० १९१८ के जून (वि० सं० १९७५ आषाढ) मास में सम्राट् की तरफ़ से ओ० बी० ई० की सैनिक उपाधि मिली। यूरोपीय युद्ध के अवसर पर की गई उसकी सेवा के उपलक्ष्य में महाराजा साहब ने उसको मेजर जेनरल का पद देकर भांडेरा गांव प्रदान किया।

ई० स० १९२३ के जून (वि० सं० १९८० द्वितीय ज्येष्ठ) मास में सम्राट् की वर्ष गांठ के अवसर पर उसको सी० आई० ई० का ख़िताब मिला। सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की रजत-जयन्ती के अवसर पर ई० स० १९३५ (वि० सं० १९९२) में उसको जयन्ती-पदक और नव सम्राट् जॉर्ज षष्ठ के राज्यारोहण के अवसर पर भी ई० स० १९३७ (वि० सं० १९९४) में उसको एक मेडल प्राप्त हुआ।

ई० स० १९३७ (१९९४) के अक्टोबर मास में महाराजा साहब के स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव पर इन्होंने उसपर अपनी पूर्ण कृपा दिखलाकर उसको जागीर में एक गांव और प्रदान करने की आज्ञा दी तथा स्वर्ण-जयन्ती पदक और वैज ऑव् ऑनर (प्रथम श्रेणी) दिया है।

ठाकुर हरिसिंह निरभिमानी और कार्यकुशल व्यक्ति है। उसके बलदेवसिंह, केसरीसिंह, भोमसिंह और अर्जुनसिंह नामक चार पुत्र हैं।

जैमलसर

यह ठिकाना पूगल के भाटी राव शेखा (केलणोत) के वंशधरों के अधिकार में है। राव शेखा के तीन पुत्र हरा (हरिसिंह), खींवा और बाघा थे। उनमें से हरा के वंशधर पूगल के स्वामी रहे। खींवा के पौत्र अमरसिंह का पुत्र सांईदास बादशाह अकबर की आज्ञानुसार महाराजा रायसिंह की गुजरात पर चढ़ाई होने के समय उसके साथ था और वह उसी युद्ध में काम आया। फिर सांईदास के बेटे गोकुलसिंह के पुत्र चांदसिंह[1] को वि० सं० १६७५ (ई० स० १६१८) में महाराजा सूरसिंह ने जैमलसर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान दिया। उसके वंशधरों की उपाधि 'रावत' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है।

चांदसिंह का आठवां वंशधर करणीसिंह था। उस (करणीसिंह) का पौत्र महतावसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] चांदसिंह [२] जगतसिंह [३] देवीदास [४] खड्गसिंह [५] हिन्दूसिंह [६] खेतसिंह [७] भोमसिंह [८] हनवन्तसिंह [९] करणीसिंह [१०] तेजसिंह और [११] महतावसिंह।

महाराजा सुजानसिंह के वर्णन में ऊपर (पृ० ३०१ में) हमने 'दयालदास की ख्यात' और पाउलेट के 'गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' के आधार पर उक्त महाराजा के कुंवर जोरावरसिंह का जैमलसर के स्वामी उदयसिंह पर चढ़ाई करने का उल्लेख किया है; किन्तु जैमलसर की वंशावली में उदयसिंह का कहीं नाम नहीं है। सम्भव है कि उदयसिंह जैमलसर का स्वामी न होकर वहां का कोई कुटुम्बी हो।

थिराणा

राव जैतसी के छोटे पुत्र शृंग (श्रीरंग) के दसवें वंशधर भूकरका के ठाकुर जैतसिंह के पुत्र खेतसिंह और हठीसिंह थे। खेतसिंह के वंशज भूकरका के स्वामी रहे और हठीसिंह[1] को महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १९११ (ई० स० १८५४) में थिराणा की जागीर और ताज़ीम का सम्मान दिया। उसके वंशधर शृंगोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

हठीसिंह का पुत्र जवाहिरसिंह था। उसका पुत्र दुर्जनसालसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

सूंई

सूंई के स्वामी कांधल रावतोत हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। रावतसर के स्वामी आनंदसिंह के चार पुत्र थे। उनमें से जयसिंह रावतसर का स्वामी रहा। अमरसिंह, बहादुरसिंह और हिम्मतसिंह को छोटे भाइयों की रीति के अनुसार पट्टे में रावतसर से जागीर मिली। फिर हिम्मतसिंह को जयसिंह ने अपने कोई संतान न होने से दत्तक ले लिया। जयसिंह के तीसरे भाई बहादुरसिंह के भी कोई संतान न थी, इसलिए हिम्मतसिंह के पौत्र नाहरसिंह का पुत्र जैतसिंह[2] उसका उत्तराधिकारी हुआ, जिसको वि० सं० १९२१ (ई० स० १८६४) में महाराजा सरदारसिंह ने सूंई की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। जैतसिंह भी संतानहीन था, जिससे रावतसर के स्वामी जोरावरसिंह का दूसरा पुत्र हंमीरसिंह वहां गोद गया। हंमीरसिंह का पुत्र गुलाबसिंह और उसका हरिसिंह हुआ, जो सूंई का वर्तमान ठाकुर है।

---

(१) वंशक्रम—[१] हठीसिंह [२] जवाहिरसिंह और [३] दुर्जनसालसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] जैतसिंह [२] हंमीरसिंह [३] गुलाबसिंह और [४] हरिसिंह।

मेघाणा

राव जैतसी का एक पुत्र ठाकुरसी था। उस(ठाकुरसी)के पुत्र बाघसिंह को भटनेर की जागीर मिली। बाघसिंह का उत्तराधिकारी रघुनाथसिंह[1] हुआ, जिससे महाराजा रायसिंह ने भटनेर लेकर उसे नौहर की जागीर प्रदान की। फिर नौहर भी खालसा होकर मेघाणा की जागीर और ताज़ीम का सम्मान वि० सं० १६३७ (ई० स० १५८०) में उक्त ठिकाने के स्वामी को मिला। उसके वंशज बाघावत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

वि० सं० १६१४ (ई० स० १८५७) में भारतवर्ष में ग़दर मच गया। तब अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ बीकानेर से स्वयं महाराजा सरदारसिंह अपनी सेना के साथ गया। उस समय मेघाणा का ठाकुर भी महाराजा के साथ था और उसने महाराजा की आज्ञानुसार अच्छी सेवा की।

रघुनाथसिंह का दसवां वंशधर मुहब्बतसिंह निःसंतान था, इसलिए उसके भाई पन्नेसिंह का पुत्र केसरीसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। सूरजमालसिंह वहां का वर्तमान ठाकुर है।

लोसणा

इस ठिकाने के स्वामी कांधल बणीरोत हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

राव बीका के चाचा रावत कांधल का ज्येष्ठ पुत्र बाघसिंह था। उस(बाघसिंह)का पुत्र बणीर हुआ, जिसके प्रपौत्र बलबहादुर के तीन पुत्र—भोजराज, प्रतापसिंह और भीमसिंह—हुए। उनमें से प्रतापसिंह के

(१) वंशक्रम—[१] रघुनाथसिंह [२] माधोसिंह [३] जीवराज [४] उदयसिंह [५] जगमालसिंह [६] पृथ्वीराज [७] भवानीसिंह [८] भैरोंसिंह [९] शेरसिंह [१०] खेतसिंह [११] मुहब्बतसिंह [१२] केसरीसिंह और [१३] सूरजमालसिंह।

चतुर्थ वंशधर अर्जुनसिंह[1] को महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८९) में लोसणा की जागीर और ताज़ीम की प्रतिष्ठा मिली।

वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के भारतव्यापी ग़दर में विद्रोहियों के दमन के लिए महाराजा सरदारसिंह के साथ ठाकुर पूरणसिंह भी गया था और उसने उस अवसर पर अच्छी सेवा की। पूरणसिंह का उत्तराधिकारी उसके चचाज़ाद भाई कुशलसिंह का पुत्र मेघसिंह हुआ, जिसका पुत्र रघुनाथसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

घड़सीसर

राव बीका का एक पुत्र घड़सी[2] था, जिसको उसके भाई राव लूणकर्ण ने वि० सं० १५६२ (ई० स० १५०५) में घड़सीसर की जागीर और ताज़ीम की इज़्ज़त प्रदान की। घड़सी ने अपने नाम पर घड़सीसर बसाया। उसके वंशज घड़सीयोत बीका कहलाते हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

घड़सी के दो पुत्र देवीसिंह और डूंगरसिंह थे। देवीसिंह के वंशधर गारवदेसर के स्वामी हैं और डूंगरसिंह के वंशधर घड़सीसर के। डूंगरसिंह का बारहवां वंशधर श्यामसिंह था, जिसका दत्तक पुत्र शिवदानसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] अर्जुनसिंह [२] पूरणसिंह [३] मेघसिंह और [४] रघुनाथसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] घड़सी [२] डूंगरसिंह [३] अमरसिंह [४] भानसिंह [५] इन्द्रसिंह [६] मनोहरदास [७] जसवन्तसिंह [८] प्रेमसिंह [९] सुखसिंह [१०] दौलतसिंह [११] नवलसिंह [१२] रामसिंह [१३] रावतसिंह [१४] श्यामसिंह और [१५] शिवदानसिंह।

जोधासर

सीसोदियों की चन्द्रावत शाखा के बख़्तावरसिंह को महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १६०८ (ई० स० १८५१) में जोधासर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। उसके वंशजों की उपाधि 'ठाकुर' है और वे परसंगी कहलाते हैं।

बख़्तावरसिंह के पीछे चांदसिंह वहां का स्वामी हुआ, जिसकी बहिन का विवाह महाराज लालसिंह (वर्तमान महाराजा साहिब का पिता) के साथ हुआ था। चांदसिंह का देहांत होने पर जवानीसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ, परन्तु वह निःसन्तान था, इसलिए उसकी मृत्यु के बाद ठिकाना ज़ब्त कर लिया गया। फिर वर्तमान महाराजा साहब ने उसके हक़दार कल्याणसिंह को वहां का ठाकुर नियत किया, जो इस समय जोधासर का ठाकुर है। इन्होंने उसे कई और गांव भी जागीर में प्रदान किये हैं।

लखासर

लखासर के सरदार तंवर हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। उनकी गणना परसंगियों में होती है।

यह ठिकाना महाराजा कर्णसिंह के समय केशोदास[2] तंवर को, जिसकी पुत्री का विवाह उक्त महाराजा से हुआ था, वि० सं० १७०० (ई० स० १६४३) में मिला और ताज़ीम का सम्मान भी उसे उसी समय प्राप्त हुआ। केशोदास का आठवां वंशधर रघुनाथसिंह था, जिसका पुत्र पीरदानसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

---

(१) वंशक्रम—[१] बख़्तावरसिंह [२] चांदसिंह [३] जवानीसिंह और [४] कल्याणसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] केशोदास [२] गोपीनाथ [३] स्वरूपसिंह [४] ज़ालिमसिंह [५] अजीतसिंह [६] केसरीसिंह [७] महताबसिंह [८] करणीसिंह [६] रघुनाथसिंह और [१०] पीरदानसिंह।

रासलाणा

इस ठिकाने के स्वामी शृंगोत बीका हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। राव जैतसी के पुत्र शृंग के वंशधर वाय के ठाकुर रणजीतसिंह के दो पुत्र शिवजीसिंह और हुक्मसिंह थे। उनमें से शिवजीसिंह की संतान का अधिकार वाय पर रहा और हुक्मसिंह[1] को वि० सं० १६१८ (ई० स० १८६१) में महाराजा सरदारसिंह ने ताज़ीम-सहित रासलाणे की जागीर प्रदान की। हुक्मसिंह का उत्तराधिकारी उसका पुत्र हरिसिंह हुआ। हरिसिंह का पुत्र किशनसिंह वहां का वर्तमान सरदार है। अंग्रेज़ सरकार ने उस (किशनसिंह) को 'राव बहादुर' का ख़िताब प्रदान किया है।

घंटियाल (बड़ी)

राव बीदा के वंशधर तेजसी के वंश के चाड़वास के स्वामी संग्रामसिंह के पुत्र बख़्तावरसिंह[2] को महाराजा सरदारसिंह ने यह ठिकाना ताज़ीम-सहित दिया। उसके वंश के तेजसिंहोत बीदा कहलाते हैं।

ठाकुर मोहब्बतसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

बगसेऊ

इस ठिकाने के सरदार राव जोधा के पुत्र कर्मसी के पौत्र मानसिंह[3] के वंशधर हैं। वे कर्मसिंहोत-मानसिंहोत कहलाते हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

---

(१) वंशक्रम—[१] हुक्मसिंह [२] हरिसिंह और [३] किशनसिंह।

(२) वंशक्रम—[१] बख़्तावरसिंह [२] माधोसिंह और [३] मोहब्बतसिंह।

(३) वंशक्रम—[१] मानसिंह [२] ईश्वरीसिंह [३] केसरीसिंह [४] उदयसिंह [५] जैत्रसिंह [६] कुंभकर्ण [७] गुमानसिंह [८] सवाईसिंह [९] बख़्तसिंह [१०] अनाड़सिंह [११] रावतसिंह [१२] शार्दूलसिंह और [१३] जसवन्तसिंह।

बीकानेर राज्य के रोड़ा ठिकाने के ठाकुर अनाड़सिंह का दूसरा पुत्र रावतसिंह था, जिसका पुत्र शार्दूलसिंह हुआ।

शार्दूलसिंह का जन्म वि० सं० १९३७ माघ सुदि १४ (ई० स० १८८१ ता० १३ फ़रवरी) को हुआ। वह 'वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल' बीकानेर में शिक्षा पाने के अनन्तर राज्य की सेवा में दाख़िल हुआ। प्रथम महाराजा साहब की बॉडी गार्ड (शरीर रक्षक) सेना का एडजुटेंट नियत होकर बीकानेर की सेना में उसे लेफ़्टेनेंट का पद मिला। फिर महाराजा ने उसको अपना अतिरिक्त ए० डी० सी० नियत किया। उसकी अच्छी सेवाओं की क़द्र कर महाराजा साहब ने महाराजकुमार के जन्म की खुशी में वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०२) में उस (शार्दूलसिंह) को बगसेऊ की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। तदनन्तर वह माल और अर्थ विभाग में डिपुटी सेक्रेटरी बनाया गया और सूरतगढ़ की निज़ामत का असिस्टेंट नाज़िम भी नियुक्त हुआ। ई० स० १९१० ता० १ सितंबर (वि० सं० १९६७ भाद्रपद वदि १३) को वह माल तथा अर्थ विभाग का सेक्रेटरी बनाया गया। महाराजा साहब की रजत-जयन्ती पर ई० स० १९१२ (वि० सं० १९६९) में उसकी जागीर में वृद्धि होकर पैर में स्वर्ण का कड़ा पहिनने की प्रतिष्ठा के साथ उसको इकलड़ी ताज़ीम और बांहपसाव का सम्मान दिया गया। उसी वर्ष वह राज्य-कौंसिल में माल का मंत्री (Minister) नियत हुआ। अंग्रेज़ सरकार ने ई० स० १९१६ (वि० सं० १९७३) के जून मास में उसको 'राव बहादुर' का ख़िताब दिया, तथा महाराजा साहब ने भी उसी वर्ष उसको अपनी सेना का लेफ़्टेनेंट-कर्नल नियत किया। ई० स० १९१८ (वि० सं० १९७५) के जुलाई मास में वह राज्य-सभा में पब्लिक वर्क्स मिनिस्टर बनाया गया। जब महाराजा साहब वार केबिनेट की मीटिंग में सम्मिलित होने के लिए ई० स० १९१७ (वि० सं० १९७३) में यूरोप गये तथा ई० स० १९१८-१९ (वि० सं० १९७५) में संधि-सभा में भाग लेने के लिए उनका यूरोप में जाना हुआ, उस समय ठाकुर शार्दूलसिंह मिनिस्टर की हैसियत से उनके साथ विद्यमान

था। फिर वि० सं० १६७६ (ई० स० १६२०) में महाराजा साहब ने उसकी जागीर में और भी वृद्धि की तथा उसी वर्ष ता० १ जनवरी (पौष सुदि १०) को अंग्रेज़ सरकार की ओर से उसको सी० आई० ई० का ख़िताब मिला।

पब्लिक वर्क्स मिनिस्टर के अतिरिक्त ठाकुर शार्दूलसिंह ने तीन वर्ष तक गृह-सचिव का भी काम किया। वि० सं० १६६१ कार्तिक वदि ५ (ई० स० १६३४ ता० २७ अक्टोबर) को वह बीकानेर राज्य की एक्ज़िक्युटिव कौंसिल का वाइस प्रेसिडेंट (उपसभापति) नियत हुआ। वि० सं० १६६२ (ई० स० १६३५ जून) में स्वर्गीय सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की वर्ष-गांठ के अवसर पर उसको 'नाइट' का सम्मान मिला। ई० स० १६३०-३१ (वि० सं० १६८७) में पांच मास, ई० स० १६३१ (वि० सं० १६८८) में चार मास, ई० स० १६३३ (वि० सं० १६६०) में लगभग आठ मास तथा ई० स० १६३६ ता० १ फ़रवरी (वि० सं० १६६२ माघ सुदि ६) से जब तक वी० एन० मेहता प्रधान मंत्री नियत न हुआ तब तक वह स्थानापन्न प्रधान मंत्री रहा। ठाकुर शार्दूलसिंह गंभीर, विवेकशील और कर्त्तव्यपरायण पुरुष था। वि० सं० १६६४ पौष वदि ६ (ई० स० १६३७ ता० २३ दिसंबर) को निमोनिया की बीमारी से उसका परलोकवास हो गया। उसका पुत्र जसवंतसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

राजासर

इस ठिकाने के सरदार महाराजा अनूपसिंह के छोटे पुत्र आनंदसिंह के बेटे अमरसिंह के वंशधर हैं और वे राजवी कहलाते हैं।

यहां का वर्तमान सरदार बोगेरा के राजवी गुमानसिंह का पुत्र गुलाबसिंह है। वि० सं० १६५१ (ई० स० १८६४) में वर्तमान महाराजा साहब सर गंगासिंहजी ने उसको शिक्षा-प्राप्ति के लिए अजमेर के मेयो कालेज में भिजवाया, जहां से उसने ई० स० १६०६ (वि० सं० १६६३) में डिप्लोमा परीक्षा पास की। फिर वह देहरादून इम्पीरियल कैडेट कोर में सैनिक-शिक्षा

की प्राप्ति के लिए भेजा गया। वहां पर उसने दो वर्ष तक शिक्षा प्राप्त की। वहां की शिक्षा समाप्त कर वह बीकानेर लौटा तो महाराजा साहब ने पहले उससे अपने स्टॉफ़ में कार्य लेना आरम्भ किया। फिर वि० सं० १९६६ (ई० स० १९०९ अप्रेल) में वह गंगा रिसाले में ऑनरेरी लेफ़्टेनेंट नियत किया गया। वि० सं० १९६८ (ई० स० १९११) में महाराजा साहब सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की तख़्तनशीनी के जलसे में सम्मिलित होने के लिए लंडन गये, उस समय वह भी उनके साथ था। उसी वर्ष महाराजा साहब ने उसको अपना असिस्टेन्ट प्राइवेट सेक्रेटरी नियुक्त किया और वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में अपनी रजत-जयन्ती पर इन्होंने उसको ताज़ीम, पैर में स्वर्ण का कड़ा पहिनने का सम्मान तथा क़िले में चौगान तक सवारी पर जाने की प्रतिष्ठा प्रदानकर राजासर की जागीर दी। अपनी अच्छी कारगुज़ारी से उसने क्रमशः कप्तान और मेजर के सैनिक पद प्राप्त किये तथा वि० सं० १९७२ (ई० स० १९१५) में वह महाराजा के अंग-रक्षकों का कमांडिंग अफ़सर नियत हुआ। तीन वर्ष बाद वि० सं० १९७५ (ई० स० १९१८) में महाराजा साहब के निजी स्टाफ़ में उसकी नियुक्ति हुई और वि० सं० १९७६ माघ वदि ११ (ई० स० १९२० ता० १६ जनवरी) को वह इन्सपेक्टर जेनरल ऑव् पुलिस के पद पर स्थायी रूप से नियत किया गया। वि० सं० १९८२ (ई० स० १९२५) में उसको लेफ़्टेनेंट कर्नल की उपाधि दी गई। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसे ई० स० १९११ में किंग जॉर्ज कोरोनेशन मेडल तथा ई० स० १९३५ में किंग जॉर्ज सिल्वर जुबिली मेडल मिले। ई० स० १९२३ (वि० सं० १९८०) में महाराजा साहब ने सिरोपाव प्रदानकर उसका मान बढ़ाया। ई० स० १९२६ (वि० सं० १९८२) के जनवरी मास में उसको 'राव बहादुर' की उपाधि मिली। ई० स० १९३८ (वि० सं० १९९५) में महाराजा साहब ने उसको कंट्रोलर ऑव् दि हाउस-होल्ड स्थाई तौर पर और इन्चार्ज फ़ोर्ट अस्थाई तौर पर नियत किया।

सादी ताज़ीमवाले सरदार

पृथ्वीसर (पिरथीसर)

इस ठिकाने के सरदार कांधल-राठोड़ों की बणीरोत शाखा में हैं। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९३४ (ई० स० १८७७) में जारिया के ठाकुर सूरजमल के दूसरे पुत्र मालुमसिंह के वंशधर बींझराजसिंह को पृथ्वीसर की जागीर और 'ठाकुर' की उपाधि मिली तथा उन्हीं दिनों उसको ताज़ीम का सम्मान भी मिला। ठाकुर बाघसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

वड़ावर

इस ठिकाने के सरदार तेजसिंहोत बीदा हैं। यह ठिकाना मलसीसर से निकला हुआ है और जागीर भी मलसीसर से ही मिली है। यहां के सरदार मलसीसर के ठाकुर ईश्वरीसिंह के दूसरे पुत्र अगरसिंह के वंशधर हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा रत्नसिंह के समय वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२९) में अगरसिंह को ताज़ीम का सम्मान मिला। भैरूंसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

कानसर

यह ठिकाना वाय के ठाकुर पेमसिंह के तीसरे पुत्र सालिमसिंह के वंशजों के अधिकार में है, जो शृंगोत बीका राठोड़ हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में सालिमसिंह को कानसर की जागीर और वि० सं० १८६८ (ई० स० १८११) में ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। लक्ष्मणसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

माहेला

यहां के स्वामी कांधल रावतोत राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। रावतसर के रावत नाहरसिंह के तीसरे पुत्र शिवदानसिंह को रावतसर की तरफ़ से माहेला की जागीर प्राप्त हुई और वि० सं० १६२१ (ई० स० १८६४) में महाराजा सरदारसिंह के समय यहां के सरदार को ताज़ीम का सम्मान मिला। शार्दूलसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

आसपालसर

इस ठिकाने के सरदार बीका आनन्दसिंहोत राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'राजवी' है। यहां के सरदार महाराजा अनूपसिंह के छोटे पुत्र आनन्दसिंह के बेटे अमरसिंह के वंशज हैं। महाराजा गजसिंह के समय अमरसिंह के दूसरे पुत्र दलथंभनसिंह को वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) के लगभग ताज़ीम का सम्मान मिला। राजवी गोपालसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

मैणसर (पहली शाखा)

यहां के सरदार नारणोत बीका राठोड़ हैं। वि० सं० १६७१ (ई० स० १६१४) में महाराजा सूरसिंह के समय राव लूणकर्ण के प्रपौत्र और नारंग (नारण) के पुत्र बलभद्र (बलबहादुरसिंह) को मैणसरकी जागीर मिली तथा महाराजा गजसिंह के समय यहां के सरदार को ताज़ीम का सम्मान मिला। यहां बराबर के दो विभाग हैं और ताज़ीम का सम्मान भी समान है। यह शाखा मैणसर के ठाकुर उदयसिंह के पुत्र बहादुरसिंह से पृथक् हुई है। ठाकुर हठीसिंह इस शाखा का वर्तमान सरदार है।

भादला

यहां के ठाकुर रणमलोत रूपावत राठोड़ हैं। राठोड़ राव रणमल (मंडोर) के पुत्र रूपा से रूपावत शाखा चली। रूपा के पौत्र भोजराज ने

कामरां के साथ के युद्ध के समय अच्छी सेवा की। उसके पुरस्कार में राव जैतसी ने वि० सं० १५९१ (ई० स० १५३४) में उसको भादला की जागीर प्रदान की। राव मालदेव का बीकानेर पर आक्रमण होने पर भोजराज दुर्ग की रक्षा करता हुआ मारा गया। ठाकुर सज्जनसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

कक्कू

इस ठिकाने के स्वामी बीदावत मनोहरदासोत राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। यह ठिकाना सांडवे से अलग हुआ है। महाराजा सूरतसिंह के समय सांडवे के ठाकुर भीमसिंह के तृतीय पुत्र जवानीसिंह को वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में 'ठाकुर' की उपाधि और ताज़ीम के सम्मान-सहित यह ठिकाना मिला। विजयसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

पातलीसर

यहां के स्वामी बीदावत मनोहरदासोत राठोड़ हैं और यह ठिकाना सांडवे से निकला हुआ है। महाराजा रत्नसिंह के समय सांडवे के ठाकुर दानसिंह के छोटे पुत्र माधोसिंह के प्रपौत्र रत्नसिंह (रणजीतसिंह) को वि० सं० १६०५ (ई० स० १८४८) में ताज़ीम का सम्मान मिला। आनंदसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

रणसीसर

यहां के सरदार राव बीका के प्रपौत्र शृंग के वंशधर हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। इस ठिकाने का उद्गम भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के तीसरे पुत्र अरपतसिंह से हुआ है। अरपतसिंह (अड़मदसिंह) का पौत्र शेरसिंह था, जिसको महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में रणसीसर की जागीर और वि० सं० १८७२ (ई० स० १८१५)

में ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। मेघसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

तिहाणदेसर

यहां के सरदार नारणोत बीका राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। राव लूणकर्ण के पौत्र नारंग के पांचवे वंशधर आईदान को वि० सं० १७३५ (ई० स० १६७८) में महाराजा अनूपसिंह के समय तिहाणदेसर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। आईदान ने उक्त महाराजा के समय लाड़खानियों से बीकानेर की सांडें छुड़ाने में वीरता प्रदर्शित की। गोपालसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

कातर (बड़ी)

इस ठिकाने के सरदार नारणोत बीका राठोड़ है और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। राव नारंग के पांचवें वंशधर गोरखदान को वि० सं० १७२५ (ई० स० १६६८) में महाराजा कर्णसिंह के समय कातर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। देवीसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

मैणसर (दूसरी शाखा)

इस ठिकाने का पूर्व वृत्तांत ऊपर मैणसर की प्रथम शाखा के हाल में लिखा जा चुका है। वहां के ठाकुर उदयसिंह के दूसरे पुत्र चांदसिंह से यह शाखा पृथक् हुई। इस शाखा का वर्तमान सरदार पेमसिंह है।

गौरीसर

यहां के सरदार बीदावत मानसिंहोत राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। यह ठिकाना महाराजा सरदारसिंह के समय क़ायम हुआ और उसके समय में ही उक्त ठिकाने के स्वामी को ताज़ीम का सम्मान मिला। मेघसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

नौसरिया

यहां के सरदार बीदावत मानसिंहोत राठोड़ हैं, जिनकी उपाधि 'ठाकुर' है। चाड़वास के ठाकुर संग्रामसिंह के चतुर्थ पुत्र पन्नेसिंह को वि० सं० १९१८ (ई० स० १८६१) में नौसरिया की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। रूपसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

दूधवा मीठा

इस ठिकाने का सरदार राठोड़ों की कांधल बणीरोत शाखा में है। महाराजा सुजानसिंह के समय वि० सं० १७९० (ई० स० १७३३) में रावत कांधल के छठे वंशधर भोजराज को दूधवा मीठा की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। बहादुरसिंह का उत्तराधिकारी बाघसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

सिंजगरू

यह ठिकाना राठोड़ों की रणमलोत रूपावत शाखा का है। महाराजा सूरतसिंह के समय लक्ष्मणसिंह को वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में यह ठिकाना प्राप्त हुआ। कालूसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

खारी

यहां के सरदार मेड़तिया राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। ये राव जोधा के पुत्र और दूदा के पौत्र प्रसिद्ध राव जयमल मेड़तिया के पुत्र माधवदास के वंशधर हैं। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९३४ (ई० स० १८७७) में चांदसिंह को खारी की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। प्रतापसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

परेवड़ा

यह ठिकाना भाटी रावलोतों का है। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा सूरतसिंह के समय

जसवन्तसिंह को परेवड़ा का पट्टा और ताज़ीम का सम्मान मिला। बहादुरसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

कल्लासर

यह ठिकाना राठोड़ों की कांधल रावतोत शाखा का है। यहां के स्वामी कांधल के प्रपौत्र जसवन्तसिंह के वंशधर हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा गजसिंह के समय भोपालसिंह को कल्लासर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। गोपालसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

परावा

इस ठिकाने के सरदार जोधा रत्नोत राठोड़ हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और वे राव जोधा के पुत्र सूजा के सातवें वंशधर रत्नसिंह के वंशज हैं। वि० सं० १८४१ (ई० स० १७८४) में महाराजा गजसिंह के समय सुखसिंह को परावा की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। भीमसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

सिंदू

यहां के सरदार रावलोत भाटी हैं। उनकी गणना परसंगियों में होती है और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८५४ (ई० स० १७६७) में हरिसिंह को सिंदू की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। केसरीसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

नैयासर

यहां का सरदार कछवाहों की राजावत शाखा में है और उसकी उपाधि 'ठाकुर' है। बालेरी के ठाकुर गुलाबसिंह के दूसरे पुत्र हुक्मसिंह से यह ठिकाना निकला है। हीरसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

जोगलिया

बीदावत तेजसिंहोत शाखा के राठोड़ों का यह ठिकाना चाड़वास के ठाकुर बहादुरसिंह के भाई गुदड़सिंह से पृथक् हुआ है। वि० सं० १८९३ (ई० स० १८३६) में महाराजा रत्नसिंह के समय गुदड़सिंह के पुत्र भवानीसिंह को 'ठाकुर' की उपाधि और वि० सं० १९७० (ई० स० १९१३) में उस (भवानीसिंह) के पौत्र शिवनाथसिंह को महाराजा सरदारसिंह के समय ताज़ीम का सम्मान मिला। रावतसिंह यहां का वर्त्तमान ठाकुर है।

जवरासर

राठोड़ों की भूंगोत बीका शाखा का यह ठिकाना जसाणा के ठाकुर लालसिंह के दूसरे पुत्र शिवदानसिंह से अलग हुआ और महाराजा सरदारसिंह के समय वि० सं० १९१९ (ई० स० १८६२) में उसको 'ठाकुर' की उपाधि मिली। इस समय इस ठिकाने पर फ़तहसिंह का अधिकार है।

रायसर

यह ठिकाना राठोड़ों की जोधा करमसोत शाखा का है। कर्मसी के सातवें वंशधर सामंतसिंह को वि० सं० १८९२ (ई० स० १८३५) में महाराजा रत्नसिंह ने रायसर की जागीर देकर 'ठाकुर' की उपाधि प्रदान की। रावतसिंह का उत्तराधिकारी राजसिंह इस समय रायसर का सरदार है।

राजासर

यहां के सरदार पंवार (परमार) वंश के हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है तथा उनकी गणना परसंगियों में होती है। जैतसीसर के ठाकुर माधवसिंह के छोटे पुत्र कान्हसिंह को महाराजा रत्नसिंह के समय वि० सं० १८९२ (ई० स० १८३५) में राजासर की जागीर मिली और

महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १६०८ (ई० स० १८५१) में उसे ताज़ीम का सम्मान दिया। कर्णसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

सोनपालसर

यहां के सरदार पंवार (परमार) वंश के हैं, जिनकी गणना परसंगियों में होती है। जैतसीसर के ठाकुर माधवसिंह के छोटे पुत्र शिवदानसिंह को महाराजा रत्नसिंह के समय वि० सं० १८६४ (ई० स० १८३७) में सोनपालसर की जागीर और वि० सं० १६०८ (ई० स० १८५१) में ताज़ीम का सम्मान मिला। ठाकुर जगमालसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

नाहरसरा

यहां के सरदार पंवार (परमार) वंश के हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है तथा उनकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८५१ (ई० स० १७६४) में जैतसीसर के ठाकुर गूदड़सिंह के छोटे पुत्र सरदारसिंह को नाहरसरा की जागीर मिली। इस ठिकाने के स्वामी को ताज़ीम का सम्मान महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १६०८ (ई० स० १८५१) में दिया। पृथ्वीसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

वालेरी

इस ठिकाने के सरदार राजावत कछवाहों की कुंभावत शाखा में हैं। वि० सं० १८०८ (ई० स० १७५१) में महाराजा गजसिंह ने शिवजीसिंह के पुत्र मदनसिंह को वालेरी का ठिकाना और ताज़ीम की प्रतिष्ठा प्रदान की। नाहरसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है, जिसकी गणना परसंगियों में होती है।

खारबारां

यह ठिकाना भाटियों की केल्हणोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है तथा उसकी गणना परसंगियों में होती है। पूगल के राव शेखा के पौत्र किशनसिंह को वि० सं० १५६३ (ई० स० १५०६) में राव लूणकर्ण के समय खारबारां की जागीर मिली। वि० सं० १८९७ (ई० स० १८४०) में महाराजा रत्नसिंह ने भोपालसिंह को ताज़ीम प्रदान की। लालसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

गजरूपदेसर

यह ठिकाना कछवाहों की राजावत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८६६ (ई० स० १८०९) में सुर्जनसिंह को गजरूप-देसर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। नारायणसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

पांडुसर

यह ठिकाना सीसोदियों की राणावत शाखा का है। यहां के स्वामी मेवाड़ के बनेड़ा ठिकाने के कुटुम्बियों में से हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा सरदारसिंह के समय वि० सं० १९२० (ई० स० १८६३) में इस ठिकाने के स्वामी को ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। सुलतानसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

गजसुखदेसर

सीसोदियों की राणावत शाखा का यह ठिकाना मेवाड़ के बनेड़ा के राजा के वंशधरों का है, जिनकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा

सूरतसिंह के समय वि० सं० १८६७ (ई० स० १८१०) में आनंदसिंह को गजसुखदेसर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्राप्त हुआ। जीवनसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

बीनादेसर

राठोड़ों की बीदावत मनोहरदासोत खांप का यह ठिकाना सांडवा के कुटुम्बियों का है। महाराजा डूंगरसिंह के समय दूलहसिंह को वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। छत्रसालसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

धांधूसर

इस ठिकाने के स्वामी कांधलोत राघोदासोत राठोड़ हैं। राव जोधा के भाई कांधल के पुत्र राजसिंह के प्रपौत्र राघोदास से 'राघोदासोत' शाखा चली। राघोदास का प्रपौत्र लखधीरसिंह था। उसके दो पुत्र छत्रसिंह और जोरावरसिंह हुए। छत्रसिंह के वंशजों का प्रमुख ठिकाना रावतसर है और जोरावरसिंह के वंशज धांधूसर के सरदार हैं। इस ठिकाने के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। फ़तहसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

रोजड़ी

यहां के सरदार पूगलिया भाटी हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है तथा उनकी गणना परसंगियों में होती है। पूगल के राव अमरसिंह के छोटे पुत्र गोपालसिंह से यह शाखा चली। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९३८ (ई० स० १८८१) में गुमानसिंह को 'ठाकुर' की उपाधि और ताज़ीम का सम्मान मिला। धन्नेसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

बीठणोक

यह ठिकाना भाटियों की खीयां धनराजोत खांप का है और यहां के सरदार पूगल के राव शेखा के पुत्र ख्यानजी (खानजी) के छोटे बेटे धनराज के पौत्र सारंग के वंशधर हैं, जिनकी उपाधि 'ठाकुर' है। महताबसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है, जिसकी गणना परसंगियों में होती है।

भीमसरिया

यह ठिकाना भाटी रावलोतों का है, जिनकी गणना परसंगियों में होती है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १६३६ (ई० स० १८८२) में यह ठिकाना क़ायम हुआ। महीदानसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

आसलसर

यह ठिकाना कछवाहों की शेखावत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा सूरतसिंह के समय वि० सं० १८५१ (ई० स० १७६४) में यह ठिकाना क़ायम होकर यहां के स्वामी को ताज़ीम का सम्मान मिला। कीर्तिसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

पूनलसर

इस ठिकाने के सरदार शेखावत कछवाहे हैं, जिनकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा गजसिंह के समय वि० सं० १८३५ (ई० स० १७७८) में सामंतसिंह को पूनलसर की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला। दलपतसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

राणेर

यह ठिकाना भाटियों की किशनावत शाखा का है। यहां का सरदार केल्हणोत भाटी है, जिसकी गणना परसंगियों में होती है। पूगल के राव शेखा के पौत्र किशनदास के वंशधर रामसिंह को यह ठिकाना राव जैतसिंह ने वि० सं० १५८८ (ई० स० १५३१) में प्रदान किया। गणपतसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

ऊंचाएड़ा

यहां का सरदार तंवर है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। इस ठिकाने के स्वामी की उपाधि 'ठाकुर' है। महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १९१८ (ई० स० १८६१) में तंवर लछमणसिंह के पुत्र देवीसिंह को ऊंचाएड़ा की जागीर प्रदान की। मोहब्बतसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

केलां

इस ठिकाने के स्वामी पूगल के केल्हणोत भाटी हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है। पूगल के राव शेखा के पुत्र हरा के सातवें वंशधर गणेशदास के छोटे बेटे केसरीसिंह को महाराजा सुजानसिंह ने केलां की जागीर और ताज़ीम का सम्मान दिया। रामसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

जांगलू

यह ठिकाना भाटियों की खींयां धनराजोत शाखा का है। यहां के स्वामी की गणना परसंगियों में होती है। यह खांप भाटी राव केल्हण से निकली है। यहां के सरदार पूगल के राव शेखा के बेटे ख्यान के पुत्र धनराज के पौत्र जोरावरसिंह के वंशधर हैं। वि० सं० १९२८ (ई० स० १८७१) में भगवंतसिंह के पौत्र हुक्मसिंह को महाराजा सरदारसिंह ने जांगलू की जागीर दी। ठाकुर अनूपसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

टोकलां

यह ठिकाना भाटी रावलोत देरावरियों का है । यहां के स्वामी की गणना परसंगियों में होती है तथा उसकी उपाधि 'ठाकुर' है । ज़ालिमसिंह के पुत्र भोमसिंह को टोकलां की जागीर और ताज़ीम का सम्मान मिला । विजयसिंह यहां का वर्तमान सरदार है ।

हाडलां (बड़ी पांती)

यह ठिकाना भाटी रावलोत देरावरियों का है । यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है । हाडलां की जागीर दो हिस्सों में विभक्त है । भाटी ज़ालिमसिंह के पुत्र बाघसिंह और सूरजमालसिंह (फ़तहसिंह) को महाराजा सूरतसिंह ने वि० सं० १८७१ (ई० स० १८१४) में हाडलां की जागीर दी । फिर उसका बंटवारा होने पर दोनों भाइयों को आधा-आधा भाग मिला । वि० सं० १६०८ (ई० स० १८५१) में महाराजा सरदारसिंह ने बाघसिंह के पुत्र गुलाबसिंह और उसके चाचा सूरजमालसिंह को ताज़ीम का सम्मान दिया । यहां की बड़ी पांती का सरदार तेजसिंह है ।

हाडलां (छोटी पांती)

उपर्युक्त सूरजमालसिंह का वंशधर पृथ्वीसिंह यहां का वर्तमान सरदार है और ताज़ीम आदि का सम्मान उसको तेजसिंह के समान ही है ।

छनेरी

यह ठिकाना भाटी रावलोत देरावरियों का है । यहाँ के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है तथा उसकी गणना परसंगियों में होती है । वि० सं० १६३२ (ई० स० १८७५) में महाराजा डूंगरसिंह के समय भभूत (विभूति)-सिंह को 'ठाकुर' की उपाधि और ताज़ीम का सम्मान मिला । मूलसिंह यहां का वर्तमान सरदार है ।

जभभू

यह ठिकाना भाटी रावलोतों का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। वर्तमान महाराजा साहब ने प्रभुसिंह को जभभू की जागीर और ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। उसका पौत्र गुमानसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

लूणासर

इस ठिकाने के सरदार पंवार हैं और उनकी गणना परसंगियों में होती है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है एवं यह नारसरा के कुटुंबियों में है। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९३५ (ई० स० १८७८) में सरूपसिंह के पुत्र शिवसिंह को 'ठाकुर' के ख़िताब के साथ यह ठिकाना मिला। जोरावरसिंह यहां का वर्त्तमान सरदार है।

धीरासर

यहां के सरदार हाड़ा चौहान हैं। उनकी गणना परसंगियों में होती है तथा उपाधि 'ठाकुर' है। पृथ्वीसिंह यहां का वर्तमान ठाकुर है।

दुलरासर

यह ठिकाना कछवाहों की नरूका शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है एवं उसकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा डूंगरसिंह के समय वि० सं० १९३३ (ई० स० १८७६) में नाथूसिंह को 'ठाकुर' का ख़िताब मिला। भोपालसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

इंदरपुरा

यह ठिकाना कछवाहों की शेखावत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। महाराजा रत्नसिंह के समय यह ठिकाना क़ायम हुआ और महाराजा सरदारसिंह

के समय यहां के सरदार को ताज़ीम का सम्मान मिला। हरिसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

मालासर

यहां के सरदार बीदावत तेजसिंहोत राठोड़ हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०२) मे वर्तमान महाराजा साहब ने गोपसिंह को ताज़ीम का सम्मान प्रदान किया। वह बीकानेरी सेना में कर्नल और महाराजा साहब का ए० डी० सी० है तथा उसको अंग्रेज़ सरकार की ओर से 'राय बहादुर' की उपाधि भी प्राप्त हुई है।

समंदसर

यह ठिकाना पड़िहारों का है और यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। वर्तमान ठाकुर बख़्तावरसिंह को वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०२) में ताज़ीम का सम्मान मिला एवं वि० सं० १९७१ (ई० स० १९१४) में दुलरासर और वि० सं० १९७७ (ई० स० १९२०) में सालड़ियावास गांव अधिक मिले। वह महाराजा साहब के साथ ई० स० १९०२, १९०७ और १९११ में इंग्लैंड भी गया था। उसको बीकानेरी सेना में ऑनरेरी लेफ़्टेनेंट कर्नल का पद भी प्रदान किया गया था। बख़्तावरसिंह का पुत्र माधवसिंह यहां का वर्तमान सरदार है। वह प्रसिद्ध पड़िहार बेला का वंशधर है, जिसने बीकानेर राज्य की महत्त्वपूर्ण सेवाएं की थीं।

हामूसर

यह ठिकाना राठोड़ों की बीदावत-खंगारोत शाखा का है और यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। इस ठिकाने के सरदार राव बीदा के पुत्र संसारचन्द्र के प्रपौत्र खंगार के वंशधर हैं। वर्तमान महाराजा साहब ने वि० सं० १९५९ (ई० स० १९०२) में ठाकुर शिवनाथसिंह को ताज़ीम का सम्मान दिया। उसका पौत्र लक्ष्मणसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

दाउदसर

यहां के सरदार तंवर हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है। उनकी गणना परसंगियों में होती है। यहां का वर्तमान ठाकुर पृथ्वीसिंह ई० स० १८९८ (वि० सं० १९५५) में महाराजा साहब का ए० डी० सी० नियत हुआ। फिर वह इनके साथ चीन-युद्ध में सम्मिलित हुआ। वि० सं० १९५८ (ई० स० १९०१) में उसको ताज़ीम का सम्मान मिला। वह कई वार महाराजा साहब के साथ यूरोप की यात्रा में भी साथ रहा। वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि कर महाराजा साहब ने उसको पैर में स्वर्णाभूपण पहिनने तथा बीकानेर के क़िले में सवारी पर बैठे हुए सूरजपोल दरवाज़े तक जाने का सम्मान दिया। वह बीकानेर राज्य का मिलिटरी सेक्रेटरी रह चुका है और इस समय बीकानेरी सेना का ऑनरेरी लेफ़्टेनेंट कर्नल है। उसका पुत्र जसवंतसिंह बी० ए० महाराजा साहब का प्राइवेट सेक्रेटरी है।

नांदड़ा

इस ठिकाने के सरदार रावलोत भाटी हैं। उनकी उपाधि 'ठाकुर' है और उनकी गणना परसंगियों में होती है। लखैसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

खियेरां

यह ठिकाना पूगलिया भाटियों का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। खियेरां का वर्तमान सरदार बनेसिंह है। बनेसिंह बीकानेरी सेना में लेफ़्टेनेंट कर्नल है। उसको अंग्रेज़-सरकार की ओर से 'राव बहादुर' की उपाधि मिली है। वह महाराजा साहब का ए० डी० सी० है और बीकानेर राज्य का मिलिटरी सेक्रेटरी भी रह चुका है।

पिथरासर

यह ठिकाना राठोड़ों की कांधलोत सांईदासोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। वि० सं० १९६७ (ई० स० १९१०) में ठाकुर किशोरसिंह को महाराजा साहब की तरफ़ से ताज़ीम का सम्मान मिला। किशोरसिंह बीकानेर राज्य की ओर से आबू पर राजपूताना के एजेंट-गवर्नर-जेनरल के पास वकील रहा था। तदनंतर वह बीकानेर में अपील कोर्ट का जज भी बनाया गया। किशोरसिंह का पुत्र हिम्मतसिंह और पौत्र भोजराजसिंह हुआ, जो यहां का वर्तमान सरदार है।

खीनासर

यह ठिकाना भाटियों की खींवा-धनराजोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। वि० सं० १९६७ (ई० स० १९१०) में ठाकुर बलवंतसिंह को ताज़ीम का सम्मान मिला। बलिदानसिंह यहां का वर्तमान सरदार है।

सुरनाणा

यह ठिकाना राठोड़ों की रणमलोत-कर्मसोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। वर्तमान ठाकुर भूरसिंह ने वि० सं० १९६१ (ई० स० १९०४) में राज्य-सेवा में प्रवेश किया और वह सूरतगढ़ का नायब तहसीलदार नियत हुआ। फिर क्रमशः पद-वृद्धि होकर तहसीलदार, नाज़िम, असिस्टेंट रेवेन्यु कमिश्नर और कमिश्नर, इंसपेक्टर जेनरल ऑव् पुलिस तथा कंट्रोलर ऑव् दि हाउसहोल्ड के पदों पर उसकी नियुक्तियां हुईं। उसकी अच्छी सेवा के कारण वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में महाराजा साहब ने उसको ताज़ीम का सम्मान दिया तथा अंग्रेज़-सरकार ने वि० सं० १९७५ (ई० स० १९१८) में उसको 'राव बहादुर' का ख़िताब दिया। वह तीन बार इंग्लैंड भी जा चुका है। ठाकुर भूरसिंह, शिष्ट, मृदुभाषी और अनुभवी व्यक्ति है।

रामपुरा

यह ठिकाना पंवारों (परमारों) का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है और उसकी गणना परसंगियों में होती है। वर्तमान सरदार ठाकुर आसूसिंह वि० सं० १९६८ (ई० स० १९११) में सर्वप्रथम गंगा रिसाले मे जमादार के पद पर नियुक्त हुआ। फिर वह महाराजा साहब का ए० डी० सी० नियत हुआ। वि० सं० १९७५ (ई० स० १९१८) में उसको ताज़ीम का सम्मान मिला और वि० सं० १९७६ (ई० स० १९१९) में महाराजा साहब की तरफ़ से उसको जागीर प्रदान की गई। इस समय वह बीकानेरी-सेना मे लेफ्टेनेंट कर्नल है। वह महाराजा साहब के साथ कई वार यूरोप गया है।

देसलसर

यह ठिकाना राठोड़ों की रणमलोत कर्मसोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। वर्तमान ठाकुर मोतीसिंह को वि० सं० १९७६ (ई० स० १९१९) में ताज़ीम का सम्मान मिला। वह पहले गंगा रिसाले में असिस्टेंट कमांडिंग अफ़सर था और यूरोपीय महायुद्ध के समय वह इजिप्ट में बीकानेरी सेना के साथ था। फिर वह उक्त रिसाले का कमांडिंग अफ़सर नियत किया गया। वह बीकानेरी सेना का लेफ्टेनेंट कर्नल है तथा अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसे 'सरदार बहादुर' और 'आई० डी० एस० एम०' की सैनिक उपाधियां मिली हैं। वह महाराजा साहब का ए० डी० सी० भी है।

सारोठिया

राठोड़ों की बीदावत शाखा का यह ठिकाना हरासर से निकला हुआ है। महाराजा सरदारसिंह के समय सारोठिया का ठिकाना क़ायम होकर वहां के सरदार को ताज़ीम आदि का सम्मान मिला। इस समय इस ठिकाने का स्वामी लेफ्टेनेंट कर्नल राव बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह

है। हरासर के निकटस्थ होने के कारण वहां के स्वामी आनंदसिंह की निःसन्तान मृत्यु होने पर महाराजा साहब ने वह ठिकाना भी उपर्युक्त जीवराजसिंह को ही दे दिया है।

इस ठिकाने (सारोठिया) का विस्तृत हाल हरासर के साथ ऊपर पृ० ६६१-२ में दिया गया है।

रावतसर कूंजला

यह ठिकाना राठोड़ों की बीका किशनसिंहोत शाखा का है। यहां के सरदार की उपाधि 'ठाकुर' है। यहां का वर्तमान ठाकुर भूरसिंह है, जिसको वि० सं० १९९० (ई० स० १९३३) में ताज़ीम का सम्मान मिला है।

उपर्युक्त ठिकानों के अतिरिक्त महाराजा साहब ने मेजर-भारतसिंह को भी ताज़ीम का सम्मान दिया है।

ऊपर पृ० ६१६-१७ में बीकानेर राज्य के ताज़ीमी सरदारों की संख्या १३० देकर सादी ताज़ीमवाले सरदारों की संख्या ६६ बतलाई है; किन्तु झोथड़ा का ठिकाना, जो बीका शृंगोतों का था, वहां के सरदार माधवसिंह के निःसन्तान गुज़र जाने पर खालसा हो गया है, जिससे अब सरदारों का एक ठिकाना कम होकर कुल ताज़ीमी सरदार १२९ ही हैं।

ताज़ीमी सरदारों के अतिरिक्त ग़ैर-ताज़ीमी सरदार और भोमिये आदि भी इस राज्य में बहुत हैं, किंतु उनका कोई महत्त्व नहीं है और न उनकी कोई खास प्रतिष्ठा है।

प्रसिद्ध और प्राचीन घराने

बीकानेर राज्य में कई प्रसिद्ध और प्राचीन घराने हैं, जिनका राव बीका के समय से अब तक इस राज्य की उन्नति में पूर्ण सहयोग रहा है। उनकी राजनैतिक सेवाएं ही नहीं, सैनिक सेवाएं भी बड़ी महत्त्वपूर्ण रही हैं। अतएव उनका यहां संक्षेप से उल्लेख किया जाता है।

जब राव बीका बीकानेर राज्य की स्थापना के लिए वि० सं० १५२२ (ई० स० १४६५) में जोधपुर से चला, तब उसके पिता राव जोधा ने मेहता वरसिंह, वैद मेहता लाला और लाखणसी को भी उसके साथ भेजा था। बीका ने अपने लिए बीकानेर राज्य की स्थापना की, उस समय उन लोगों को उसने अपने राज्य के दायित्वपूर्ण पदों पर नियत किया। बीका के साथ जानेवाले व्यक्तियों में उपर्युक्त कर्मचारियों में से मेहता वरसिंह और वैद मेहता लाला के घराने ओसवालों के थे।

महाराजा सूरसिंह के समय तक बीकानेर में बच्छावत मेहताओं का उत्कर्ष बना रहा और उन्होंने इस राज्य की उन्नति में पूरा-पूरा भाग लिया। उनके द्वारा धार्मिक और सामाजिक कार्य भी बहुत हुए और वहां जैन धर्म का विकास हुआ। महाराजा रायसिंह के समय बीकानेर में एक भयङ्कर षड्यंत्र की रचना हुई, जिसके कारण महाराजा की मेहताओं की तरफ़ से कृपा हट गई। प्रधान-मन्त्री बच्छावत मेहता कर्मचंद्र पर भी षड्यंत्र का आरोप था इसलिए महाराजा उससे भी असंतुष्ट हो गया। फलतः कर्मचंद्र मेड़ता होता हुआ बादशाह अकबर के पास चला गया। इस घटना के पीछे

(१) 'कर्मचन्द्र वंशोत्कीर्तनकं काव्यम्' से राव बीका के साथ जोधपुर से मंत्री वत्सराज का जाना पाया जाता है। दयालदास की ख्यात तथा अन्य ख्यातों में वत्सराज के स्थान पर वरसिंह का नाम दिया है। जोधपुर राज्य की ख्यात में बीका के साथ जानेवालों में मेहता नरसिंह (नाहरसिंह) का नाम मिलता है। वरसिंह और नरसिंह दोनों वत्सराज के पुत्र थे। वे दोनों भी सम्भवतः अपने पिता के साथ ही गये होंगे, जिससे पीछे से लिखी हुई ख्यातों में अलग-अलग नाम मिलना सम्भव है।

बच्छावतों का विशेष महत्त्व नहीं रहा। कर्मचंद्र की मृत्यु के बाद उसके पुत्र भाग्यचंद्र और लक्ष्मीचंद्र बीकानेर लौटे, परन्तु वे पूर्व-कथित षड्यंत्र के परिणाम-स्वरूप महाराजा सूरसिंह के समय में मार डाले गये। उसके अन्य वंशधर और कुटुंबी, जो राज्य-सेवा में भाग लेते थे, वहां से अन्यत्र चले गये। उनके वंशज अब भी उदयपुर, जयपुर, किशनगढ़, अजमेर आदि में विद्यमान हैं। उदयपुर आदि राज्यों में समय-समय पर बच्छावत मेहताओं के वंशवाले उच्च पद पर रहे और अब भी उनको उक्त राज्यों की तरफ़ से जागीरें प्राप्त हैं तथा उनमें से कतिपय उच्च पदों पर भी हैं।

बच्छावतों के समान ही ऐतिहासिक दृष्टि से बीकानेर राज्य में वैद मेहताओं का स्थान है। उनके पूर्वज लाला और लाखणसी बीकानेर राज्य की स्थापना के समय विद्यमान थे। तब से यह वंश इस राज्य की सेवा करता चला आ रहा है। इस वंशवालों को कई बार महत्त्वपूर्ण सेवाएं और अमात्य पद का कार्य्य करने का भी अवसर मिला, परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इस वंश की उन्नति का सर्वोत्कृष्ट समय था। उन्हीं दिनों महाराजा रत्नसिंह ने इस वंश के मेहता मूलचंद के पुत्र हिन्दूमल को 'महाराव' की उपाधि दी, जिसको अंग्रेज़ सरकार तथा भारत के तत्कालीन मुग़ल बादशाह बहादुरशाह ने स्वीकार किया। हिन्दूमल के पीछे भी इस वंश के लोगों का महाराजा डूंगरसिंह के समय तक बहुत कुछ प्रभाव रहा और अब भी उनमें से कुछ राज्य के उच्च पदों पर हैं, जिनका उल्लेख आगे किया जायगा।

उपर्युक्त दोनों वंशों के अतिरिक्त वहां मेहता बख़्तावरसिंह तथा सुराणा अमरचंद के वंशधर तथा राखेचा, नाहटा आदि कई वंशों के व्यक्ति राज्य के उच्च पदो पर रहकर सैनिक और राजनैतिक सेवाएं दे चुके हैं, जिनका हमने बीकानेर के नरेशों के इतिहास में यथा प्रसङ्ग वर्णन किया है। यहां पर यह बतलाना भी अनुचित न होगा कि बीकानेर राज्य में राज्य के उच्च और दायित्वपूर्ण पदों पर महाराजा सरदारसिंह तक वैश्य-वर्ग की ही प्रधानता रही।

महाराजा रत्नसिंह के पूर्व बीकानेर में राज्य के उच्च पद महान् विपत्ति का कारण समझे जाते थे। राजा मन्त्री का पूर्ण सम्मान बढ़ाता तथा अच्छी जागीर और पारितोषिक देकर उसको संतुष्ट करता, परन्तु राजा की जब तक कृपा बनी रहती तब तक ही वह सुरक्षित रहता था। उसकी सेवा कितनी ही क्यों न रही हो, पर यदि थोड़ा भी किसी ने राजा के कानों में संदेह डाल दिया अथवा राजा की आज्ञा का पालन करने में विलंब हुआ या थोड़ी त्रुटि भी हुई तो वह पद-भ्रष्ट कर दिया जाता था। यही नहीं, उसको कारावास का दंड देकर कठोर यन्त्रणा-द्वारा उससे मनमाने रुपये वसूल किये जाते थे। कभी-कभी मंत्रियों को बिना अपराध मरवा दिया जाता था और उनका वंश तक नष्ट करने का प्रयत्न किया जाता था। ऐसे उदाहरण राजपूताने के इतिहास में प्रायः सब राज्यों में मिलते हैं। जब किसी को कोई उच्च पद दिया जाता तो उस समय उससे खूब नज़राना वसूल किया जाता था। मंत्री-पद के उम्मेदवारों को तो अपने पद के अनुरूप ही राजा और उसके समीपवालों को सन्तुष्ट करना पड़ता था। फिर कार्य मिलने पर वे प्रजा का रक्त चूसने और अन्याय तथा अत्याचार-द्वारा धनोपार्जन करने में किंचित् कमी न करते थे। इसका परिणाम यह होता था कि सम्पन्न लोग वहां चैन-पूर्वक नहीं रह सकते थे। अंग्रेज़-सरकार से संधि होने के बाद क्रमशः राजपूताना के राज्यों से यह प्रथा दूर होने लगी और बाहर से योग्य तथा अनुभवी व्यक्तियों को अच्छे वेतनों पर बुलाकर उच्च पद दिये जाने लगे। इससे जागीरें देने की प्रथा कम हुई और अब तो प्रायः सभी देशी राज्यों में वंश-परंपरा और जाति-भेद का ध्यान न रखा जाकर योग्य, अनुभवी और शिक्षित व्यक्तियों की, चाहे वे वहां के निवासी हों अथवा अन्य जगहों के, उच्च पदों पर नियुक्ति की जाती है।

बीकानेर राज्य में वैतनिक रूप से पदाधिकारी रखने की प्रणाली सर्वप्रथम महाराजा सरदारसिंह ने आरंभ की। महाराजा डूंगरसिंह के समय इस प्रथा का अधिकता से पालन हुआ। वर्तमान महाराजा साहब

की तत्परता और मंत्रियों की कार्य-कुशलता से शासन-शैली में बहुत कुछ परिवर्त्तन होकर राज्य में श्री वृद्धि हुई। शासन-प्रणाली को समुन्नत बनाने के लिए महाराजा साहब ने समय-समय पर सर मनुभाई मेहता, बी० एन० मेहता, सर कैलाश नारायण हक्सर तथा सर सिरेमल बापना जैसे योग्य और राजनीतिज्ञ व्यक्तियों को अपना प्रधान मंत्री बनाया है। बीकानेर राज्य के पिछले इतिहास को समुज्ज्वल बनाने में वहां के प्रतिष्ठित घरानों, चारणों, कवियों आदि का पूर्ण योग रहा है, इसलिए उनका यहां संक्षेप से परिचय दिया जाता है—

बैद मेहताओं का घराना

बीकानेर के बैद मेहता जैन धर्मावलंबी और जाति के ओसवाल महाजन हैं। वे अपने पूर्वजों का मूल निवास भीनमाल मानते हैं। जब मारवाड़ में अर्हन्त की ध्वनि चारों तरफ़ व्याप्त हो रही थी उस समय उन्होंने जैन धर्म स्वीकार किया। जब मंडोवर पर राव चूंडा का आधिपत्य हुआ तो इन बैद मेहताओं ने उसकी अधीनता स्वीकार की। राव जोधा के समय वे अपनी अमूल्य सेवा के कारण उक्त राव के कृपापात्र हो गये। राव जोधा की इच्छानुसार उसका कुंअर बीका वि० सं० १५२२ (ई० स० १४६५) में अपने लिए नवीन राज्य की स्थापना करने के हेतु रवाना हुआ, उस समय राव जोधा ने अपने विश्वासपात्र सेवक बैद मेहता लाला और लाखणसी को भी उसके साथ भेजा। बीका ने अपने बाहुबल से बीकानेर का नवीन राज्य स्थापित कर लाला और लाखणसी को उच्च पदों पर नियत किया। लाखणसी का पांचवां वंशधर ठाकुरसी हुआ, जिसको महाराजा रायसिंह ने अपना अमात्य बनाया। उस (ठाकुरसी) का छठा वंशधर मूलचंद, महाराजा सूरतसिंह के समय विद्यमान था। वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में उक्त महाराजा ने चूरू के गढ़ पर घेरा डाला। उस समय बीकानेरी सेना में महाराजा के साथ मूलचंद भी विद्यमान था और उसने पूर्ण साहस और वीरता दिखलाई। उसकी उत्तम सेवाओं के

उपलक्ष्य में महाराजा सूरतसिंह ने उसको नौरंगदेसर गांव जागीर में प्रदान किया। उसका छोटा भाई अबीरचंद्र था, जो महाराजा की तरफ़ से चोरी और डाकों को रोकने के कार्य पर नियत था। उसने कई वार डाकुओं से मुक़ाबला किया, जिससे उसके कितने ही घाव लगे। फिर वह दिल्ली के मुग़ल दरबार में बीकानेर राज्य की ओर से वकील बनाकर भेजा गया और वहां ही उसकी मृत्यु हुई।

मूलचन्द का दूसरा पुत्र मेहता हिन्दूमल प्रभावशाली और कुशाग्र-बुद्धि था। महाराजा सूरतसिंह के समय राज्य-सेवा में प्रवेश कर वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में वह दिल्ली में वकील नियुक्त किया गया। उसने महाराजा रत्नसिंह के समय अच्छी राज्य-सेवा की, जिसपर उक्त महाराजा ने उसको अपना मुख्य मंत्री बनाया और वह उसका इतना विश्वास करने लगा कि उसने राजमुद्रा लगाने का कार्य भी उसे ही सौंप दिया। कुछ समय पीछे महाराजा ने उस (हिन्दूमल) को 'महाराव' का ख़िताब प्रदान किया एवं उसकी हवेली पर मेहमान होकर उसको सम्मानित किया। हिन्दूमल की कार्य-प्रणाली से महाराजा रत्नसिंह तथा अंग्रेज़ सरकार दोनों सदा संतुष्ट रहे। उसके मंत्रीत्व-काल में बीकानेर-राज्य में कई नवीन गांव आबाद हुए। पथिकों के आराम के लिए रास्ते ठीक किये गये और सराय, कुएं आदि बनाये गये। उसके प्रयत्न से चोरी और डाकों में कमी हुई। जुहारसिंह (जवारजी) आदि प्रसिद्ध लुटेरों की गिरफ़्तारी में हिन्दूमल ने बड़ा उद्योग किया, जिससे अंग्रेज़ सरकार का उसपर और भी विश्वास बढ़ गया। उसने बीकानेर राज्य के कई सीमा-सम्बन्धी झगड़ों का निपटारा करवाया, जिससे राज्य में शांति की स्थापना हुई। जयपुर, जोधपुर आदि राज्यों के गंभीर मुक़द्दमों में अंग्रेज़-सरकार ने उसकी सम्मति लेकर अंतिम फ़ैसले किये। वि० सं० १९०२ (ई० स० १८४५) में सिक्ख-युद्ध के समय बीकानेरी सेना लाहौर की तरफ़ रवाना हुई। उस समय हिन्दूमल भी उक्त सेना के साथ गया। इस अवसर पर की हुई उसकी सेवा से प्रसन्न होकर

भारत के तत्कालीन गवर्नर-जेनरल सर हेनरी हार्डिञ्ज ने उसको शिमला में बुलाकर एक क़ीमती खिलअत प्रदानकर उसकी अपूर्व कर्मनिष्ठा और राजभक्ति की सराहना की। हिन्दूमल की कार्य-शैली और स्वामि-भक्ति का उदयपुर के महाराणा सरदारसिंह पर भी अच्छा प्रभाव पड़ा। फलतः जब वि० सं० १८९६ (ई० स० १८३९) में महाराजा रत्नसिंह नाथद्वारे की यात्रा के लिए गया और वहां से उदयपुर जाकर महाराणा सरदारसिंह की राजकुंवरी से उसने अपने महाराजकुमार सरदारसिंह का विवाह किया, उस समय महाराणा ने हिन्दूमल को ताज़ीम का सम्मान दिया एवं मेवाड़ राज्य के सम्बन्ध में पोलिटिकल अफ़सरों के पास जो मुक़दमे चल रहे थे उनको तय कराने का भार उसको ही सौंपा। फिर महाराणा वि० सं० १८९७ (ई० स० १८४०) में गया-यात्रा से लौटता हुआ बीकानेर गया और वहां उसका विवाह महाराजा रत्नसिंह की राजकुंवरी से हुआ। उस समय महाराणा और महाराजा रत्नसिंह ने हिन्दूमल की हवेली पर जाकर उसका आतिथ्य ग्रहण किया। वि० सं० १९०४ (ई० स० १८४७) में हिन्दूमल का केवल ४२ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। उसके मृत्यु पर महाराजा रत्नसिंह तथा अंग्रेज़-सरकार के बड़े बड़े उच्च अफ़सरों ने उसके वंशजों से पूर्ण सहानुभूति प्रकट की। वर्तमान महाराजा साहब ने इस स्वामिभक्त अमात्य की स्मृति को चिरस्थाई रखने के लिए बीकानेर में 'हिन्दूमल कोट' नामक स्थान बनवा दिया है। उसके तीन पुत्र—हरिसिंह, गुमानसिंह और जसवन्तसिंह—हुए। महाराजा रत्नसिंह ने हिन्दूमल की सारी मान-मर्यादा हरिसिंह को बहाल कर दी। वह भी महाराजा की तरफ़ से राजपूताना के एजेंट गवर्नर-जेनरल के पास वकील रहा। वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) में सिपाही-विद्रोह हुआ। उस समय उसने अच्छी सेवा की। फिर महाराजा सरदारसिंह ने उसको वि० सं० १९२० (ई० स० १८६३) में अपना मुख्य सलाहकार नियतकर राजमुद्रा लगाने का अधिकार भी उसको सौंप दिया। उसने महाराजा डूंगरसिंह की गद्दी-नशीनी के समय बड़ी अच्छी सेवा की, जिससे प्रसन्न होकर उसने उसको

अमरसर और पलाना गांव दिये तथा उसे अपने यहां की कौंसिल का एक सदस्य भी नियत किया था। वि० सं० १९३९ (ई० स० १८८२) में उसकी मृत्यु हुई। हरिसिंह का ज्येष्ठ पुत्र किशनसिंह था। वह भी राज्य के भिन्न-भिन्न पदों पर काम करता हुआ उच्च पद तक पहुंच गया था। पिता की विद्यमानता में ही वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में उसकी मृत्यु हो गई। किशनसिंह के भी तीन पुत्र—शेरसिंह, लक्ष्मणसिंह और पन्नेसिंह—थे। बीकानेर राज्य से शेरसिंह को 'राव' की उपाधि मिली। शेरसिंह का पुत्र रघुनाथसिंह है। हरिसिंह की संतान में से सवाईसिंह आयु में सबसे बड़ा था, इसलिए महाराजा डूंगरसिंह ने उसको 'महाराव' का खिताब दिया। प्रारंभ में वह (सवाईसिंह) राजगढ़ की हकूमत पर भेजा गया और फिर वह दीवानी तथा फ़ौजदारी की अदालतों के काम पर नियत हुआ। तदनंतर वह स्टेट-कौंसिल का भी सदस्य बनाया गया। वर्तमान महाराजा साहब ने उसको 'मिनिस्टर-इन-वेटिंग' भी नियत किया था। वि० सं० १९७९ (ई० स० १९२२) में उसकी मृत्यु हो जाने पर उसके पुत्र खुम्माणसिंह को 'महाराव' की उपाधि दी गई। उसके दो पुत्र सुमेरसिंह और उम्मेदसिंह हैं।

हिंदूमल का दूसरा पुत्र गुमानसिंह था, वह भी अपने पिता के समान कार्य-कुशल व्यक्ति था। उसने भी सिपाही-विद्रोह के समय अच्छी सेवा की थी। महाराजा सरदारसिंह ने वि० सं० १९१० (ई० स० १८५३) में उसको अपना मुसाहिब बनाया और 'राव' की पदवी दी थी। गुमानसिंह के दो पुत्र हुए, किन्तु उनमें से किसी का भी वंश न चला, जिससे उपर्युक्त सवाईसिंह का ज्येष्ठ पुत्र रामसिंह, गुमानसिंह के पुत्र जवानीसिंह के दत्तक लिया गया। रामसिंह का पुत्र धनपतसिंह है।

हिन्दूमल का तीसरा पुत्र जसवंतसिंह था। उसको महाराजा सरदारसिंह ने आबू की वकालत पर राजपूताना के एजेंट-गवर्नर जेनरल के पास रक्खा था। वह भी कार्य-कुशल व्यक्ति था, जिससे तत्कालीन अफ़सर उससे प्रसन्न थे। सिपाही-विद्रोह के समय उसने भी अपने दोनों

बड़े भाइयों एवं चाचा छोगमल के साथ अच्छी सेवा की थी, जिससे अंग्रेज़ सरकार के उच्च अफ़सरों की उसपर कृपा बढ़ती रही। विद्रोह का सफलतापूर्वक दमन हो जाने पर उसको अंग्रेज़-सरकार की तरफ़ से बाग़ियों से छीने हुए कुछ शस्त्र तथा हिसार की पट्टी में एक गांव भी मिला था। महाराजा सरदारसिंह के पिछले राज्य-समय में वह कुछ कारणों से बीकानेर छोड़कर जोधपुर चला गया। इसपर जोधपुर के महाराजा तख़्तसिंह ने उसको सांभर, मारोठ और जालोर की हकूमतें दीं, जिनका कार्य उसने सफलतापूर्वक किया। इसपर वहां के महाराजा की तरफ़ से राजपूताना के एजेंट गवर्नर-जेनरल के पास प्रशंसा-सूचक पत्र भेजा गया।

महाराजा सरदारसिंह का निःसंतान देहांत होने पर उत्तराधिकारी के लिए झगड़ा पड़ा, उस समय उसको बुलाने पर वह जोधपुर राज्य की सेवा का परित्याग कर पुनः बीकानेर चला गया। उस समय उसने महाराजा डूंगरसिंह को राजगद्दी पर बिठलाने की मंज़ूरी के लिए अच्छी पैरवी की, जिससे प्रसन्न होकर डूंगरसिंह ने राज्यासन पर बैठने के पश्चात् उसको पुनः आबू के वकील के पद पर नियत किया एवं जागीर में एक गांव तथा 'राव' का ख़िताब प्रदान किया। वि० सं० १९३३ (ई० स० १८७६) में महाराजा ने उसकी हवेली पर जाकर उसका आतिथ्य स्वीकार किया और उसे हाथी, ज़ेवर तथा सिरोपाव देकर ताज़ीम का सम्मान भी दिया। वह कार्य-कुशल व्यक्ति था, जिससे बीकानेर के महाराजा तथा उच्च अंग्रेज अफ़सर सदा उससे प्रसन्न रहे। तदनंतर वह राज्य की कौंसिल का सदस्य भी बनाया गया। वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में उसका देहांत हुआ।

जसवंतसिंह का पुत्र छत्रसिंह था, वह सर्वप्रथम अदालत फ़ौजदारी तथा बाद में हनुमानगढ़ का हाकिम नियत हुआ। वि० सं० १९४० (ई० स० १८८३) में जसवंतसिंह की मृत्यु के पश्चात् वह स्टेट-कौंसिल का सदस्य बनाया गया। महाराजा ने उसको भी 'राव' की उपाधि प्रदान की थी।

वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में उसकी मृत्यु हुई। छत्रसिंह का छोटा भाई अभयसिंह था, जो पहले बीकानेर में बड़े कारखाने का अफ़सर रहा। वि० सं० १९३७ (ई० स० १८८०) में महाराजा डूंगरसिंह के समय जसाणा के ठाकुर पर राज्य की सेना भेजी गई उस समय मेहता जसवंतसिंह के साथ अभयसिंह भी विद्यमान था। वह नौहर, हनुमानगढ़ और लूणकरण-सर के ज़िलों का हाकिम भी रहा था। बाद में जयपुर और जोधपुर में बीका-नेर राज्य की तरफ़ से वह रेज़िडेंसियों में वकील रहा। फिर वह सेरिमोनियल अफ़सर (Ceremonial Officer) बनाया गया। उसने कुछ समय तक बीकानेर राज्य के चीफ़ जज के पद पर भी कार्य किया था। राव छत्रसिंह और अभयसिंह निःसंतान थे अतएव गोपालसिंह (महाराव हिंदूमल के छोटे भाई छोगमल के बेटे केसरीसिंह का पौत्र) अभयसिंह का दत्तक लिया जाकर जसवंतसिंह की संपत्ति का स्वामी हुआ। उसको महाराजा साहब ने पूर्ववत् 'राव' का ख़िताब प्रदान किया है। वह पहले सेरि-मोनियल अफ़सर रहा और इस समय बीकानेर राज्य की तरफ़ से आबू में राजपूताना के रेज़िडेंट के पास वकील है।

हिंदूमल का छोटा भाई छोगमल था, वह भी अपने भाई की भांति कुशल-कार्यकर्ता था। महाराजा सूरतसिंह के समय वह उसका निजी कर्म-चारी और विश्वासपात्र सेवक था। महाराजा रत्नसिंह के समय वह राज-पूताना के ए० जी० जी० के पास आबू पर वकील भी रहा था। बीकानेर राज्य के सीमा-संबंधी झगड़ों को तय कराने में उसने पूर्ण योग दिया, जिससे राज्य को काफ़ी लाभ हुआ। इससे प्रसन्न होकर महाराजा सरदारसिंह ने उसका सम्मान बढ़ाया। वि० सं० १९१४ (ई० स० १८५७) के सिपाही-विद्रोह के समय भी उसने अच्छा कार्य किया। वि० सं० १९२९ (ई० स० १८७२) में महाराजा सरदारसिंह का परलोकवास होने पर डूंगरसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसके समय भी उसकी अच्छी प्रतिष्ठा रही। वि० सं० १९३३ (ई० स० १८७७) में लार्ड लिटन के समय महाराणी विक्टोरिया के सम्राज्ञी (Empress of India) पदवी धारण करने का दिल्ली में बृहत् दरबार

हुआ। उस अवसर पर महाराजा डूंगरसिंह ने उसको अपनी तरफ़ से प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। वह महाराजा का मुसाहब और स्टेट कौंसिल का सदस्य भी रहा। उसको डूंगराना और सरूपदेसर आदि गांव जागीर में मिले थे। वि० सं० १६४८ (ई० स० १८६१) में उसका देहांत हुआ। उसके दो पुत्र—केसरीसिंह और बिशनसिंह—थे। केसरीसिंह भी आबू में राजपूताना के रेज़िडेंट का वकील रहा। उस(केसरीसिंह)का पुत्र फ़तहसिंह पिता की विद्यमानता में ही मृत्यु को प्राप्त हो गया इसलिए उस(फ़तहसिंह)-का पुत्र मुकुंदसिंह अपने पितामह का उत्तराधिकारी हुआ। बिशनसिंह का पुत्र बुधसिंह पहले मारवाड़ की रेज़िडेंसी और फिर आबू में राजपूताना की रेज़िडेंसी में महाराजा बीकानेर की तरफ़ से वकील रहा और इस समय देवस्थान के महकमे का हाकिम है।

कविराजा विभूतिदान का घराना

चारण-कवियों में एक खांप बीठू नाम से संबोधित होती है। उस खांप का प्रवर्तक चारण बीठू भादरेस (जोधपुर राज्य!) गांव का निवासी था। फिर उसने अपने नाम पर बीठणोक गांव बसाया। उसके वंशधर बीठू कहलाते हैं। बीठू ने अपनी कवित्व शक्ति से जांगल देश (बीकानेर राज्य) के स्वामी को प्रसन्न कर बहुतसा द्रव्य और बारह गांव प्राप्त किये। कई पीढ़ी बाद उसके वंश में जैकिशन हुआ, जिसने बीकानेर के महाराजा गजसिंह से बहुत कुछ सम्मान प्राप्त किया। जैकिशन का पुत्र प्रभुदान और उसका भौमदान हुआ। भौमदान का पुत्र विभूतिदान समझदार और मन्त्रणा-कुशल व्यक्ति था। जब बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह का वि० सं० १६२६ (ई० स० १८७२) में निःसंतान देहांत हो गया, तब वहां के उत्तराधिकार के लिए कई व्यक्ति खड़े हुए। उस समय विभूतिदान ने महाराज लालसिंह के ज्येष्ठ पुत्र डूंगरसिंह को, जो वस्तुतः वहां का हक़दार था, राजगद्दी पर बिठलाने के लिए पूर्ण प्रयत्न किया। महाराजा डूंगरसिंह

ने राज्याधिकार मिलने पर विभूतिदान की बड़ी क़द्र की। उसको कविराजा का ख़िताब और ताज़ीम का सम्मान तथा पहले के सीथल, रावणमेरी एवं गोरखेरी गांवों के अतिरिक्त उसने तीन गांव—कूकरिया वि० सं० १९३० आषाढ सुदि ७ (ई० स० १८७३ ता० २ जुलाई), बसिया वि० सं० १९३१ आषाढ सुदि १ (ई० स० १८७४ ता० १४ जुलाई) और लालसिंहपुरा वि० सं० १९३५ ज्येष्ठ सुदि १४ (ई० स० १८७८ ता० १३ जून) को—प्रदान किये। यही नहीं उसकी योग्यता से प्रभावित होकर उसने उसको बीकानेर में पोलिटिकल एजेंट के पास वकील नियत किया और फिर उसको वि० सं० १९३४ (ई० स० १८७७) में बीकानेर की स्टेट कौंसिल का सदस्य बनाया। अपनी आयु पर्यन्त वह इन दोनों पदों का कार्य करता रहा। महाराजा डूंगरसिंह की उसपर असाधारण कृपा थी। वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में उसकी बीमारी के अवसर पर महाराजा ने उसकी हवेली पर जाकर उसे बहुत कुछ धैर्य दिया। वि० सं० १९३६ श्रावण सुदि ७ (ई० स० १८७९ ता० २५ जुलाई) को विभूतिदान की मृत्यु हुई। उसके पांच पुत्र—भैरूंदान, भारतदान, सुखदान, मुकुंददान और फूलदान—हुए।

विभूतिदान की मृत्यु होने पर महाराजा डूंगरसिंह ने उक्त (विभूतिदान)के ज्येष्ठ पुत्र भैरूंदान को कविराजा की पदवी देकर पूर्व-प्रतिष्ठा प्रदान की। वह अपने पिता की विद्यमानता में ही राज्य-सेवा में प्रविष्ट हो गया था। वि० सं० १९३६ (ई० स० १८७९) में महाराजा ने उसको बीकानेर के पोलिटिकल एजेंट के पास वकील नियत किया और तनख़्वाह सौ रुपये माहवार स्थिर की। वह दीवानी अदालत, फ़ौज और मंडी का अफ़सर तथा नाज़िम आदि के पदों पर भी समय-समय पर नियत हुआ था। उसने इन पदों पर रहते समय राजा और प्रजा के बीच पूर्ण विश्वास उत्पन्न किया। जब महाराजा डूंगरसिंह के समय विवाद-ग्रस्त विषयों को निपटाकर शासन-सुधार करने के लिए ख़ास कमेटी बनाने की योजना हुई, तब भैरूंदान भी उसका एक सदस्य बनाया गया। फिर ई० स० १८८७ (वि० सं० १९४४) में वह बीकानेर की स्टेट कौंसिल का सदस्य निर्वाचित

हुआ। सरदारों के झगड़े मिटाने और चारणों से चुंगी की रक़म वसूल करने के संबंध में जो विवाद हुआ, उसके मिटाने मे उसने अच्छी कार्य-तत्परता दिखलाकर विरोध न बढ़ने दिया, जिससे उसकी बड़ी ख्याति हुई। फलतः महाराजा साहब की उसपर कृपा बढ़ती गई और उसने भी पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय दिया। महाराजा डूंगरसिंह का परलोकवास होने के पीछे वर्तमान महाराजा साहब के प्रारंभिक शासन-काल तक वह स्टेट कौंसिल का सदस्य रहा। वि० सं० १९७१ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १९१४ ता० १४ अगस्त) को उसकी मृत्यु हुई। वह संतान-हीन था, अतएव उसका तीसरा भाई सुखदान उस(भैरूंदान)का क्रमानुयायी हुआ।

भैरूंदान का दूसरा भाई भारथदान था, जिसका पुत्र रिड़मलदान राज्य-सेवा मे अच्छे पद पर है और स्थानीय वाल्टर-कृत राजपुत्र हितकारिणी सभा का सदस्य भी है।

सेठ चांदमल सी० आई० ई० का घराना

ओसवाल महाजनों में ढड्ढा-परिवार व्यापार के लिए पहले बहुत प्रसिद्ध था और दूर-दूर तक उनका व्यवसाय था। वे क्षत्रियों के प्रसिद्ध सोलंकी वंश से अपनी उत्पत्ति मानते हैं। सारंगदेव नामक व्यक्ति से वे ढड्ढा कहलाने लगे। सारंग के रघुनाथ और नेतसी नामक पुत्र हुए। नेतसी का पुत्र खेतसी था। खेतसी का पुत्र तिलोकसी हुआ, जिसने अपना कारोबार फलोदी (मारवाड़) से हटाकर बीकानेर में आरंभ किया। तिलोकसी के चार पुत्र—पद्मसी, धर्मसी, अमरसी और टीकमसी—हुए। उनमें से अमरसी ने अपना निवास बीकानेर में ही रखा। वह अपने पूर्वजों की भांति व्यवसाय-कुशल व्यक्ति था। उसने निज़ाम-हैदराबाद में अपना व्यापार बढ़ाया। वहां उसकी 'अमरसी सुजानमल' नामक बड़ी प्रतिष्ठित फ़र्म थी। निज़ाम-राज्य के साथ उक्त फ़र्म का लेन-देन रहता था और वहां उसका राज्य और प्रजा में पूरा सम्मान था। निज़ाम-सरकार की इस

फ़र्म के साथ पूरी रिआयत थी। वहां उसके दावे विना स्टांप के सुने जाते थे और उनकी कोई अवधि न थी एवं उनको सुनने के लिए एक ख़ास कमेटी नियुक्त की जाती थी। सेठ अमरसी निःसंतान था, इसलिए उसके छोटे भाई टीकमसी का पुत्र नथमल गोद लिया गया। नथमल के दो पुत्र जीतमल तथा सुजानमल थे। सुजानमल के समय 'अमरसी सुजानमल' नामक फ़र्म की अधिक वृद्धि हुई और कई जगह उसकी शाखाएं स्थापित हुई। पंजाव में लाहौर एवं अमृतसर तथा मेवाड़ में भी उसका व्यवसाय जारी हुआ। सुजानमल के तीन ज्येष्ठ पुत्र—जोरावरमल, जुहारमल एवं सिरेमल—निःसंतान थे, इसलिए उस(सुजानमल)का चतुर्थ पुत्र समीरमल उक्त फ़र्म का मालिक हुआ; पर वह भी संतानहीन था, अतएव उसका छोटा भाई उदयमल इस फ़र्म का मालिक वना। वीका-नेर राज्य में सेठ उदयमल की पूरी प्रतिष्ठा थी। महाराजा सरदारसिंह के समय वि० सं० १६१६ पौष वदि ४ (ई० स० १८५६ ता० १३ दिसम्बर) को उसके नाम स्वयं महाराजा की तरफ़ से आज्ञा-पत्र भेजा गया, जिसके-द्वारा उसको हाथी और पालकी में वैठने, छड़ी तथा चपरास रखने और पैर में स्वर्ण-भूषण पहिनने आदि का सम्मान दिया गया।

उदयमल का पुत्र सेठ चांदमल हुआ, जिसका जन्म वि० सं० १६३६ (ई० स० १८७६) में हुआ था। उसने अपने व्यवसाय में पर्याप्त वृद्धि कर मद्रास, कलकत्ता, आसाम, पंजाव आदि प्रान्तों में अपनी दुकानें खोलीं। भारत के देशी राज्यों और अंग्रेज़ सरकार में उसका पूरा सम्मान था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसको सी० आई० ई० की उपाधि मिली। सेठ चांदमल ने वीकानेर के देशणोक गांव में करणीजी के मंदिर में सफ़ेद संगमर्मर का नक़ाशीदार सुंदर दरवाज़ा वनवाया, जो कला की दृष्टि से वड़ा उत्कृष्ट है। वर्तमान महाराजा साहव ने सेठ चांदमल के सम्मान में पूर्ण वृद्धि की थी। पिछले वर्षों में सेठ चांदमल के व्यवसाय में वड़ा घाटा हुआ, जिससे उसकी विद्यमानता में ही उसका कारोवार कम हो गया। वह उदार स्वभाव का होने के अतिरिक्त राज्य का पूर्ण शुभचिंतक था।

वि० सं० १९९० (ई० स० १९३३) में सेठ चांदमल का निःसंतान देहांत हुआ। उसका उत्तराधिकारी बहादुरसिंह हुआ, जो उस(चांदमल)का निकटवर्ती रिश्तेदार है।

डागाओं का घराना

बीकानेर के माहेश्वरी समाज में डागा-वंश व्यापारी-वर्ग में बहुत प्रतिष्ठित है और व्यवसाय के द्वारा डागाओं ने असाधारण ख्याति तथा संपत्ति प्राप्त की है। उनकी मुख्य फ़र्म का नाम 'राय बहादुर बंसीलाल अबीरचंद' है।

डागा-वंश के सैंसमल का पुत्र चन्द्रभान और पौत्र बंसीलाल हुआ। बंसीलाल के तीन पुत्र अबीरचंद, रामचंद्र और रामरतनदास हुए। तीनों भाई बड़े उद्योगी और व्यवसायी थे। उन्होंने अपने जीवन में बड़ी सफलता प्राप्त की। उनमें से सेठ अबीरचंद ने सर्वप्रथम नागपुर जाकर वहां अपने व्यवसाय को अच्छा फैलाया और बड़ी कीर्ति उपार्जित की। रामचन्द्र बड़ा होनहार और योग्य व्यक्ति था, परन्तु उसका थोड़ी आयु में ही देहान्त हो गया। रामरतनदास ने, जो 'सेठ रतन' के नाम से प्रसिद्ध है, लाहौर जाकर उधर अपना व्यवसाय बढ़ाया। वह भी बड़ा कार्य-कुशल और दानशील व्यक्ति था। लोकोपयोगी कार्यों की ओर रुचि होने से उसने अपने पिता की स्मृति में लाहौर में 'बंसी सागर' तालाब बनवाया तथा पूगल के सेसाड़ा गांव में, जो सिंध के निकट है, जल का अभाव होने के कारण एक बड़ा तालाब बनवा दिया, जिससे वहां के निवासियों का जल का कष्ट मिट गया है। काबुल की चढ़ाई तथा ई० स० १८५७ (वि० सं० १९१४) के सिपाही-विद्रोह के समय उसने सरकार को अच्छी सहायता पहुंचाई और काश्मीर में पड़नेवाले भीषण अकाल के अवसर पर पीड़ितों की सहायता का समुचित प्रबन्ध कर सहृदयता एवं दानशीलता का परिचय दिया। अबीरचंद और रामरतनदास दोनों को अंग्रेज़ सरकार की

तरफ़ से 'रायबहादुर' का ख़िताब मिला था। अबीरचंद का वि० सं० १९३५ (ई० स० १८७८) और रामरतनदास का वि० सं० १९५० (ई० स० १८९३) में देहांत हुआ।

अबीरचंद के कोई सन्तान नहीं होने से सैंसमल के ज्येष्ठ पुत्र मयाराम के बेटे रतनचंद का पौत्र और जानकीदास का दूसरा पुत्र कस्तूरचंद उसके गोद लिया गया। उसने अपने व्यवसाय में पूर्ण उन्नति की। मध्य प्रदेश में उसकी बड़ी साख थी और अपनी व्यापार-कुशलता से वह जनता का पूर्ण विश्वासभाजन बन गया था। अंग्रेज़ सरकार ने उसको क्रमशः 'राय बहादुर', 'दीवान बहादुर', 'सर', 'सी० आई० ई०', और 'के० सी० आई० ई०' के उच्च ख़िताब देकर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से उसको 'कैसरे हिन्द' का चांदी का पदक भी मिला था। उसकी व्यवहार-कुशलता, कार्यशैली, उच्च विचार और राजभक्ति से अंग्रेज़ सरकार तथा बीकानेर के स्वामी उससे सदैव प्रसन्न रहे। वह मध्य प्रदेश की कौंसिल का सदस्य भी रहा था। वर्तमान बीकानेर नरेश ने वि० सं० १९६९ (ई० स० १९१२) में अपनी रजत जयंती के अवसर पर उसको ख़ास रुक्का लिखे जाने का सम्मान प्रदान किया। उसको राज्य की तरफ़ से ताज़ीम का सम्मान भी प्राप्त था। मध्य प्रांत और बरार के व्यापारियों में वह अग्रगण्य था। कितने ही उद्योग-धन्धों की स्थापना में उसका हाथ था और उसके जीवनकाल में उसके वंश की फ़र्म की बड़ी प्रसिद्धि हुई। नागपुर में क्रैडक मार्केट और सर कस्तूरचन्द पैविलियन उसकी स्मृति के अमर स्तंभ हैं। उसके चार पुत्र—विश्वेश्वरदास, नृसिंहदास, बद्रीदास और रामनाथ—हुए।

वि० सं० १९७३ (ई० स० १९१७) में सेठ कस्तूरचंद का परलोकवास हो जाने पर उसके ज्येष्ठ पुत्र सेठ विश्वेश्वरदास ने अपने पिता का सारा कार्य-भार ग्रहण किया और मनोयोग-पूर्वक व्यवसाय करते हुए संपत्ति को बढ़ाया। अंग्रेज़ सरकार ने उसको उसके पिता की विद्यमानता में ही ई० स० १९०१ (वि० सं० १९५८) में 'रायबहादुर' का ख़िताब

प्रदान किया। ई० स० १६२१ (वि० सं० १६७८) में उसको 'सर' और ई० स० १६३४ (वि० सं० १६६१) में 'के० सी० आई० ई०' की उपाधियां मिलीं। ई० स० १६१६ (वि० सं० १६७६) में वह मध्यप्रदेश की दीवानी अदालतों में स्वयं उपस्थित होने से मुक्त किया गया। सेठ कस्तूरचन्द की विद्यमानता में ही वर्तमान महाराजा साहब ने वि० सं० १६६७ (ई० स० १६१०) में अपनी वर्ष गांठ के अवसर पर उसको चांदी की छड़ी और चपरास रखने, बीकानेर के दुर्ग में जहां तक कौंसिल के सदस्य सवारी पर जाते हैं वहां तक सवारी पर जाने, लालगढ़ के राज्य महलों में प्रधान ड्योढ़ी तक सवारी पर जाने, सरकारी काम-काज में कैफ़ियत लिखकर देने-लेने और बीकानेर राज्य में चार घोड़ों की गाड़ी में बैठने का सम्मान प्रदान किया। वि० सं० १६६१ (ई० स० १६३४) में उसके सम्मान में वृद्धि कर महाराजा साहब ने उसे ताज़ीम देकर स्वर्ण की छड़ी साथ रखने, ज्येष्ठ पुत्र को पैर में स्वर्ण का कड़ा पहनने और उस (विश्वेश्वरदास) की पत्नी को पैर में स्वर्णाभूषण पहनने की अनुमति प्रदान की। इसके साथ ही कर्णमहल के दरबार हाल में उसकी बैठक नियत की गई और उसके निजी खर्च में आनेवाली वस्तुओं पर सायर का टैक्स (चुंगी) माफ़ कर उसे अन्य कई प्रकार की रिआयतें प्रदान की गईं। अपनी स्वर्ण जयंती के अवसर पर इन्होंने उसको व्यक्तिगत रूप से 'राजा' की उपाधि भी दी है। वह बीकानेर की व्यवस्थापक सभा का सदस्य है। उसकी बीकानेर राज्य में बड़ी मान-मर्यादा है और अपने सद्गुणों के कारण वह महाराजा साहब का भी विश्वासपात्र है। बीकानेर के बाहर वह दूसरी कई बड़ी-बड़ी कंपनियों और मिलों का डायरेक्टर तथा चेयरमैन है। उसकी फ़र्मों की बड़ी प्रतिष्ठा है और लाहौर एवं मध्य प्रांत का सरकारी ख़ज़ाना भी उसके यहां ही रहता है।

मध्य प्रांत और उसके आस-पास आठ बड़ी-बड़ी कोयले की खानों और मेंगनीज़ आदि की तीस खानों का उसके पास ठेका है। उसके यहां बैंकिंग, जूट, रुई, सोना, चांदी, रत्न, गल्ले आदि का कारोबार होता है। हिंगनघाट में उसकी सूत और कपड़े की मिलें हैं एवं नागपुर तथा कामठी ज़िलों,

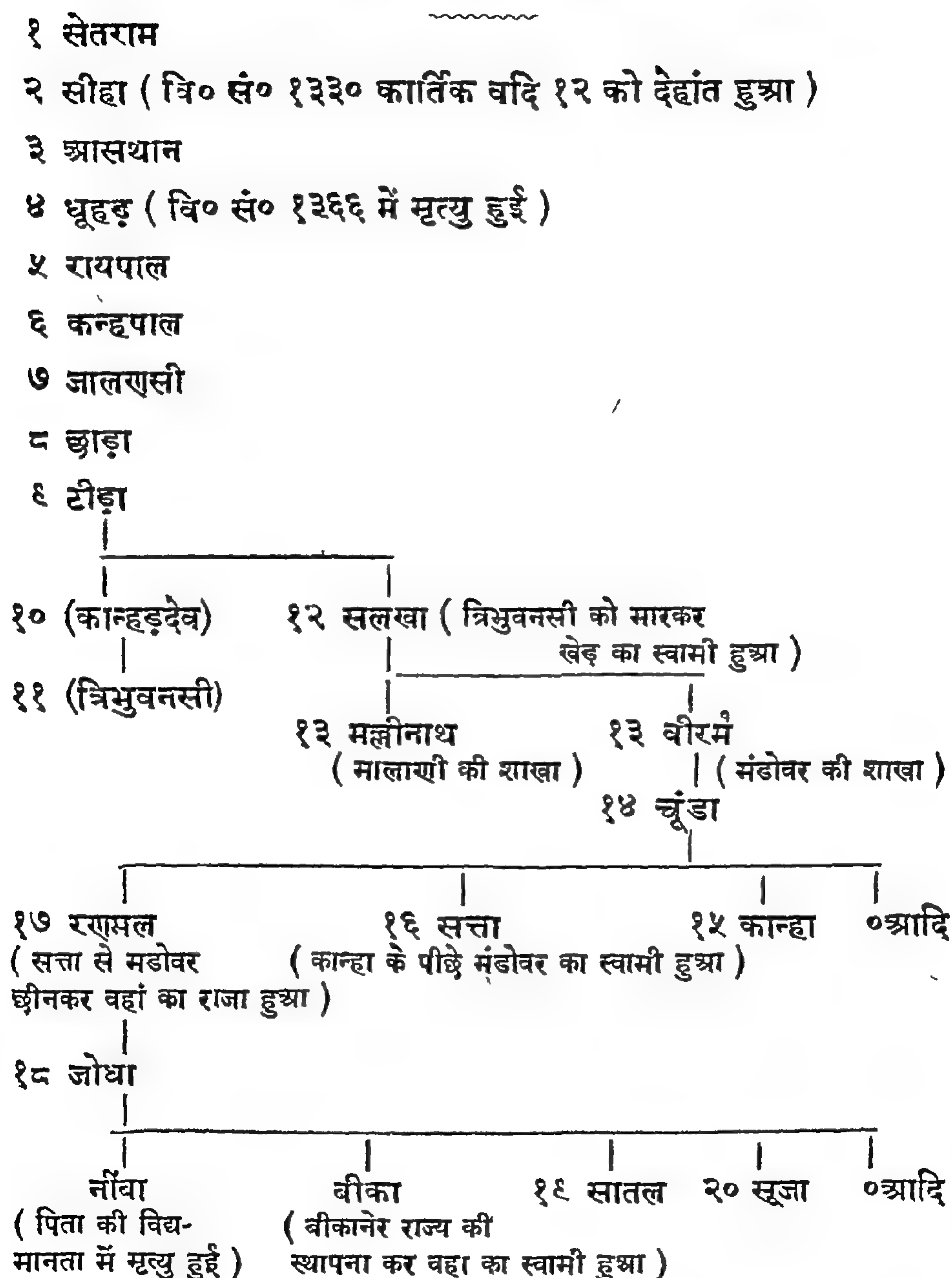
हैदराबाद राज्य और मद्रास अहाते में तीस कॉटन प्रेस और जिनिंग फ़ैक्ट-रियां हैं। लाहौर, रायपुर, सागर आदि में उसकी बहुतसी ज़मींदारी है और बीकानेर, जयपुर, कामठी, नागपुर, जबलपुर, संभलपुर, सागर, बारा-शिवनी, चांदूर, कलकत्ता, बंबई, मद्रास, रंगून, बंगलोर, हैदराबाद, निज़ामा-बाद, परली, सेलू, लोहा, सिकन्दराबाद, मुंदखेड़, गंटूर, तेनाली, दायापल्ली आदि में बड़ी-बड़ी फ़र्में हैं।

सर विश्वेश्वरदास ने अपने पिता की स्मृति में उसके नाम पर चार लाख रुपये व्यय कर नागपुर में स्त्रियों के लिए 'सर कस्तूरमल मेमोरियल डफ़रिन हॉस्पिटल' बनवा दिया है। अन्य सार्वजनिक संस्थाओं को भी दान देने में वह पीछे नहीं रहता और दीन दुखियों के लिए उसका द्वार सदा खुला रहता है। ई० स० १९१४-१८ के महायुद्ध में उसने धन तथा जन से अंग्रेज़ सरकार को पूरी-पूरी सहायता पहुंचाई। अपने कोई पुत्र न होने से उसने, जिस शाखा से उसका पिता गोद आया था उसी शाखा से, खुशहालचंद डागा को, जिसका जन्म ई० स० १९२२ में हुआ था, गोद लिया है।

डागा वंश के व्यक्ति बड़े उदार-हृदय और दानी हुए हैं। उनके बनवाये हुए मन्दिर, कुएं, तालाब, धर्मशालाएं आदि भारत भर में फैली हुई हैं। इनमें रामेश्वर, काशी और रायपुर की धर्मशालाएं उल्लेखयोग्य हैं। भारत के बैंकिंग व्यवसाय में 'रायबहादुर बन्सीलाल अबीरचन्द' नामक फ़र्म का महत्वपूर्ण स्थान है। डेढ़ सौ वर्षों से भी अधिक प्राचीन होने के कारण सरकार और जनता में उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा है।

परिशिष्ट संख्या १

भाटों की ख्यातों के अनुसार राव सीहा से जोधा तक मारवाड़ के राजाओं की वंशावली



(१) रावल मल्लीनाथ से पृथक् होकर इसने जोहियावाटी पर अधिकार करने का प्रयत्न किया, परन्तु जोहिया दल्ला से लड़कर मारा गया।

परिशिष्ट संख्या २

राव वीका से वर्तमान समय तक वीकानेर के नरेशों का वंशक्रम

१ राव वीका—

जन्म संवत् १४६५ श्रावण सुदि १५ (ई० स० १४३८ ता० ५ अगस्त)।
वीकानेर राज्य की स्थापना वि० सं० १५२६ (ई० स० १४७२)।
देहांत संवत् १५६१ आषाढ सुदि ५ (ई० स० १५०४ ता० १७ जून)।

२ राव नरा (संख्या १ का पुत्र)—

जन्म संवत् १५२५ कार्तिक वदि ४ (ई० स० १४६८ ता० ५ अक्टोबर)।
गद्दीनशीनी संवत् १५६१ श्रावण वदि ३ (ई० स० १५०४ ता० ३० जून)।
देहांत संवत् १५६१ माघ सुदि ८ (ई० स० १५०५ ता० १३ जनवरी)।

३ राव लूणकर्ण (संख्या २ का छोटा भाई)—

ज० वि० सं० १५२६ माघ सुदि १० (ई० स० १४७० ता० १२ जनवरी)।
ग० वि० सं० १५६१ फाल्गुन वदि ४ (ई० स० १५०५ ता० २३ जनवरी)।
दे० वि० सं० १५८३ वैशाख वदि २ (ई० स० १५२६ ता० ३१ मार्च)।

४ राव जैतसिंह (संख्या ३ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १५४६ कार्तिक सुदि ८ (ई० स० १४८९ ता० ३१ अक्टोबर)।
ग० वि० सं० १५८३ वैशाख वदि ३० (ई० स० १५२६ ता० ११ अप्रेल)।
दे० वि० सं० १५९८ फाल्गुन सुदि ११ (ई० स० १५४२ ता० २६ फ़रवरी)।

५ राव कल्याणमल (संख्या ४ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १५७५ माघ सुदि ६ (ई० स० १५१९ ता० ६ जनवरी)।
ग० वि० सं० १५९८ चैत्र वदि ८ (ई० स० १५४२ ता० ९ मार्च)।
दे० वि० सं० १६३० माघ सुदि २ (ई० स० १५७४ ता० २४ जनवरी)।

६ महाराजा रायसिंह (संख्या ५ का पुत्र)—

जo विo संo १५६८ श्रावण वदि १२ (ई० स० १५४१ ता० २० जुलाई)।

ग० वि० सं० १६३० माघ सुदि १५ (ई० स० १५७४ ता० ५ फ़रवरी)।

दे० वि० सं० १६६८ माघ वदि ३० (ई० स० १६१२ ता० २२ जनवरी)।

७ महाराजा दलपतसिंह (संख्या ६ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १६२१ फाल्गुन वदि ८ (ई० स० १५६५ ता० २४ जनवरी)।

ग० वि० सं० १६६८ माघ सुदि १२ (ई० स० १६१२ ता० ३ फ़रवरी)।

दे० वि० सं० १६७० फाल्गुन वदि ११ (ई० स० १६१४ ता० २५ जनवरी)।

८ महाराजा सूरसिंह (संख्या ७ का छोटा भाई)—

ज० वि० सं० १६५१ पौष वदि १२ (ई० स० १५९४ ता० २८ नवंबर)।

ग० वि० सं० १६७० मार्गशीर्ष सुदि (ई० स० १६१३ नवंबर)।

दे० वि० सं० १६८८ आश्विन वदि ३० (ई० स० १६३१ ता० १५ सितंबर)।

९ महाराजा कर्णसिंह (संख्या ८ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १६७३ श्रावण सुदि ६ (ई० स० १६१६ ता० १० जुलाई)।

ग० वि० सं० १६८८ कार्तिक वदि १३ (ई० स० १६३१ ता० १३ अक्टोबर)।

दे० वि० सं० १७२६ आषाढ सुदि ४ (ई० स० १६६९ ता० २२ जून)।

१० महाराजा अनूपसिंह (संख्या ९ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १६९५ चैत्र सुदि ६ (ई० स० १६३८ ता० ११ मार्च)।

ग० वि० सं० १७२६ श्रावण वदि १ (ई० स० १६६९ ता० ४ जुलाई)।

दे० वि० सं० १७५५ प्रथम ज्येष्ठ सुदि ९ (ई० स० १६९८ ता० ८ मई)।

११ महाराजा स्वरूपसिंह (संख्या १० का पुत्र)—

ज० वि० सं० १७४६ भाद्रपद वदि १ (ई० स० १६८९ ता० २३ जुलाई)।

ग० वि० सं० १७५५ आषाढ वदि ६ (? ई० स० १६९८ ता० १९ जून)।

दे० वि० सं० १७५७ मार्गशीर्ष सुदि १५ (ई० स० १७०० ता० १५ दिसंबर)।

१२ महाराजा सुजानसिंह (संख्या ११ का छोटा भाई)—

जं० वि० सं० १७४७ श्रावण सुदि ३ (ई० स० १६६० ता० २८ जुलाई) ।

ग० वि० सं० १७५७ पौष वदि १२ (ई० स० १७०० ता० २६ दिसंबर) ।

दे० वि० सं० १७६२ पौष सुदि १३ (ई० स० १७३५ ता० १६ दिसंबर) ।

१३ महाराजा जोरावरसिंह (संख्या १२ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १७६६ माघ वदि १४ (ई० स० १७१३ ता० १४ जनवरी) ।

ग० वि० सं० १७६२ माघ वदि ६ (ई० स० १७३५ ता० २६ दिसंबर) ।

दे० वि० सं० १८०३ ज्येष्ठ सुदि ६ (ई० स० १७४६ ता० १५ मई) ।

१४ महाराजा गजसिंह (संख्या १२ के छोटे भाई आनंदसिंह का पुत्र)—

ज० वि० सं० १७८० चैत्र सुदि ४ (ई० स० १७२३ ता० २६ मार्च) ।

ग० वि० सं० १८०३ आषाढ वदि १४ (ई० स० १७४६ ता० ७ जून) ।

दे० वि० सं० १८४४ चैत्र सुदि ६ (ई० स० १७८७ ता० २५ मार्च) ।

१५ महाराजा राजसिंह (संख्या १४ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १८०१ कार्तिक वदि २ (ई० स० १७४४ ता० १२ अक्टोबर) ।

ग० वि० सं० १८४४ वैशाख वदि २ (ई० स० १७८७ ता० ४ अप्रेल) ।

दे० वि० सं० १८४४ वैशाख सुदि ८ (ई० स० १७८७ ता० २५ अप्रेल) ।

१६ महाराजा प्रतापसिंह (संख्या १५ का पुत्र)—

ज० वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) ।

ग० वि० सं० १८४४ ज्येष्ठ वदि ४ (ई० स० १७८७ ता० ६ मई) ।

दे० वि० सं० १८४४ आश्विन वदि १३ (ई० स० १७८७ ता० ९ अक्टोबर) ।

१७ महाराजा सूरतसिंह (संख्या १५ का छोटा भाई)—

ज० वि० सं० १८२२ पौष सुदि ६ (ई० स० १७६५ ता० १८ दिसंबर) ।

ग० वि० सं० १८४४ आश्विन सुदि १० (ई० स० १७८७ ता० २१ अक्टोबर) ।

दे० वि० सं० १८८५ चैत्र सुदि ९ (ई० स० १८२८ ता० २४ मार्च) ।

१८ महाराजा रत्नसिंह (संख्या १७ का पुत्र)—
जo विo संo १८४७ पौष वदि ६ (ईo सo १७६० ताo ३० दिसंबर)।
गo विo संo १८८५ वैशाख वदि ५ (ईo सo १८२८ ताo ५ अप्रेल)।
देo विo संo १६०८ श्रावण सुदि ११ (ईo सo १८५१ ताo ७ अगस्त)।

१६ महाराजा सरदारसिंह (संख्या १८ का पुत्र)—
जo विo संo १८७५ भाद्रपद सुदि १४ (ईo सo १८१८ ताo १३ सितंबर)।
गo विo संo १६०८ भाद्रपद वदि ७ (ईo सo १८५१ ताo १६ अगस्त)।
देo विo संo १६२६ वैशाख सुदि ८ (ईo सo १८७२ ताo १६ मई)।

२० महाराजा डूंगरसिंह (संख्या १५ के दूसरे भाई छत्रसिंह के प्रपौत्र लालसिंह का पुत्र)—
जo विo संo १६११ भाद्रपद वदि १४ (ईo सo १८५४ ताo २२ अगस्त)।
गo विo संo १६२६ श्रावण सुदि ७ (ईo सo १८७२ ताo ११ अगस्त)।
देo विo संo १६४४ भाद्रपद वदि ३० (ईo सo १८८७ ताo १६ अगस्त)।

२१ महाराजा सर गंगासिंहजी बहादुर (संख्या २० के छोटे भाई)—
जo विo संo १६३७ आश्विन सुदि १० (ईo सo १८८० ताo १३ अक्टोबर)।
गo विo संo १६४४ भाद्रपद सुदि १३ (ईo सo १८८७ ताo ३१ अगस्त)।

परिशिष्ट संख्या ३

बीकानेर राज्य के इतिहास का कालक्रम

राव बीका

वि० सं०	ई० स०	
१४६५	१४३८	जन्म ।
१५२२	१४६५	जोधपुर से जांगलू की तरफ़ जाना ।
१५२५	१४६८	कुंवर नरा का जन्म ।
१५२६	१४७०	कुंवर लूणकर्ण का जन्म ।
१५२९	१४७२	कोड़मदेसर में राजधानी बनाना ।
१५३५	१४७८	भाटियों से युद्ध ।
१५४२	१४८५	राती घाटी पर दुर्ग (बीकानेर) बनवाना ।
१५४५	१४८८	बीकानेर नगर बसाना ।
[१५४५][1]	[१४८८]	बीदा को छापर-द्रोणपुर दिलाना ।
[१५४५]	[१४८८]	रावत कांधल के वैर में सारंगखां पर चढ़ाई ।
[१५४५]	[१४८८]	राव जोधा का बीका को पूजनीक चीज़ें देने का वचन देना ।
१५४६	१४८९	कुंवर लूणकर्ण के पुत्र जैतसिंह का जन्म ।
[१५४९]	[१४९२]	राव सूजा के समय पूजनीक चीज़ें जोधपुर से ले जाना ।
१५६१	१५०४	बीका का परलोकवास ।

(१) ऊपर कोष्ठकों के भीतर दिये हुए संवत् आनुमानिक हैं, निश्चित नहीं ।

वि० सं०	ई० स०	

राव नरा

१५६१	१५०४	गद्दीनशीनी।
१५६१	१५०४	नरा का परलोकवास।

राव लूणकर्ण

१५६१	१५०५	गद्दीनशीनी।
१५६६	१५०९	दद्रेवा पर चढ़ाई।
१५६९	१५१२	फ़तहपुर पर चढ़ाई।
[१५६९]	[१५१२]	चायलवाड़े पर चढ़ाई।
१५७०	१५१३	नागोर के स्वामी मुहम्मदख़ां की बीकानेर पर चढ़ाई।
१५७०	१५१४	लूणकर्ण का चित्तौड़ में विवाह।
१५७५	१५१९	कुंवर जैतसिंह के पुत्र कल्याणमल का जन्म।
१५८३	१५२६	लूणकर्ण का नारनोल की चढ़ाई में मारा जाना।

राव जैत्रसिंह

१५८३	१५२६	गद्दीनशीनी।
१५८४	१५२७	द्रोणपुर पर चढ़ाई।
१५८५	१५२८	जोधपुर के राव गांगा की सहायतार्थ जाना।
१५९१	१५३४	कामरां से युद्ध।
१५९८	१५४१	मालदेव की बीकानेर पर चढ़ाई और राव जैतसी से बीकानेर छूटना।
१५९८	१५४१	कुंवर कल्याणसिंह के पुत्र रायसिंह का जन्म।
१५९८	१५४२	जैतसिंह का युद्ध में मारा जाना।

वि० सं०	ई० स०	
		राव कल्याणमल
१५६८	१५४२	गद्दीनशीनी (सिरसा में)।
१६०१	१५४४	बीकानेर पर अधिकार होना।
१६०६	१५४६	ठाकुरसी का भटनेर पर अधिकार करना।
१६०६	१५४६	कुंवर पृथ्वीराज का जन्म।
[१६१०]	[१५५३]	जयमल की सहायतार्थ सेना भेजना।
[१६१३]	[१५५६]	हाजीखां की सहायतार्थ सेना भेजना।
[१६१७]	[१५६०]	बैरामखां का बीकानेर जाकर रहना।
१६२१	१५६५	कुंवर रायसिंह के पुत्र दलपतसिंह का जन्म।
१६२७	१५७०	कुंवर रायसिंह-सहित बादशाह अकबर के पास नागोर जाना।
१६२६	१५७२	कुंवर रायसिंह की जोधपुर में नियुक्ति।
१६३०	१५७३	रायसिंह का इब्राहीमहुसेन मिर्ज़ा को दंड देने के लिए गुजरात भेजा जाना।
१६३०	१५७४	रायसिंह का राव चंद्रसेन पर भेजा जाना।
१६३०	१५७४	कल्याणमल की मृत्यु।
		महाराजा रायसिंह
१६३०	१५७४	गद्दीनशीनी।
१६३३	१५७६	सिरोही के राव सुरताण देवड़ा पर सेना लेकर जाना।
१६३७	१५८१	काबुल पर भेजा जाना।
[१६३८]	[१५८२]	बीजा देवड़ा से सिरोही छीनकर आधा भाग सुरताण को दिलाना।
१६४२	१५८५	बलूचियों पर सेना लेकर जाना।
१६४३	१५८६	लाहौर में नियुक्ति।

वि० सं०	ई० स०	
१६४४	१५८७	काश्मीर में रायसिंह के चाचा श्रृंग की मृत्यु।
१६४५	१५८९	बीकानेर के वर्तमान क़िले का शिलान्यास।
[१६४७]	[१५९०]	महाराजा के भाई अमरसिंह का शाही सैनिकों-द्वारा मारा जाना।
[१६४७]	[१५९०]	अमरसिंह के पुत्र केशवदास का बाप का वैर लेकर मारा जाना।
१६४८	१५९१	खानखाना की सहायतार्थ सिंध जाना।
१६४९	१५९२	जयसलमेर में विवाह।
१६५०	१५९३	महाराजा के जामाता बघेला वीरभद्र की मृत्यु।
१६५०	१५९३	जूनागढ़ का प्रदेश मिलना।
१६५०	१६९३	दक्षिण में नियुक्ति।
१६५०	१५९३	बादशाह और महाराजा के बीच मनोमालिन्य होना।
[१६५०]	[१५९३]	महाराजा का बीकानेर जाकर बैठ रहना।
१६५०	१५९४	बीकानेर के वर्तमान क़िले का निर्माण होकर वहां बृहत् प्रशस्ति लगना।
१६५१	१५९४	कुंवर सूरसिंह का जन्म।
१६५३	१५९७	बादशाह की नाराज़गी दूर होना और महाराजा की दक्षिण में पुनः नियुक्ति।
१६५७	१६००	कुंवर दलपतसिंह का विद्रोहाचरण कर बीकानेर जाना।
१६५७	१६००	महाराजा को नागोर मिलना।
१६५७	१६००	महाराजा के भाई पृथ्वीराज की मृत्यु।
१६५७	१६०१	नासिक में नियुक्ति।
१६५८	१६०१	बीकानेर में बखेड़ा होने पर महाराजा का स्वदेश लौटना।
१६६०	१६०३	शाहज़ादे सलीम के साथ मेवाड़ की चढ़ाई के लिए नियत होना।
१६६१	१६०४	शम्साबाद तथा नूरपुर मिलना।

वि० सं०	ई० स०	
१६६२	१६०५	अकबर की बीमारी के अवसर पर प्रबंध के लिए दरबार में बुलाया जाना।
१६६३	१६०६	जहांगीर-द्वारा पांच हज़ारी मनसब मिलना।
१६६३	१६०६	महाराजा का शाही आज्ञा प्राप्त किये बिना बीकानेर जाना।
[१६६३]	[१६०६]	कुंवर दलपतसिंह का विद्रोहाचरण करना।
१६६४	१६०८	महाराजा का शाही सेवा में जाना।
१६६५	१६०८	दलपतसिंह का शाही सेवा में जाना।
१६६८	१६१२	महाराजा का बुरहानपुर में देहांत।

महाराजा दलपतसिंह

१६६८	१६१२	गद्दीनशीनी।
१६६९	१६१२	जहांगीर-द्वारा गद्दीनशीनी का टीका मिलना।
१६६९	१६१२	मनसब में वृद्धि होकर ठट्ठे की हकूमत पर भेजा जाना।
१६६९	१६१२	बादशाह की अप्रसन्नता।
१६६९	१६१२	चूड़ेहर में गढ़ बनवाना।
[१६६९]	[१६१२]	अपने भाई सूरसिंह की जागीर ज़ब्त करना और सूरसिंह का बादशाह के पास जाना।
[१६६९]	[१६१२]	जहांगीर का सूरसिंह को बीकानेर का राज्य देना।
१६७०	१६१३	सूरसिंह का शाही सेना के साथ जाकर महाराजा को बंदी करना।
१६७०	१६१४	महाराजा का शाही सेना से मुक़ाबला कर मारा जाना।

वि० सं०	ई० स०	

महाराजा सूरसिंह

१६७०	१६१३	गद्दीनशीनी।
[१६७१]	[१६१४]	कर्मचंद्र के पुत्रों को मरवाना।
[१६७१]	[१६१४]	अन्य विरोधियों को मरवाना।
१६७१	१६१५	नरवर के किसानों के कष्टों की जांच के लिए नियुक्ति।
१६७३	१६१६	कुंवर कर्णसिंह का जन्म।
१६७८	१६२१	किरकी की चढ़ाई के लिए नियुक्ति।
१६७९	१६२२	जालनापुर के थाने पर नियुक्ति।
१६८१	१६२४	शाहज़ादा खुर्रम के बाग़ी होने पर उसे सज़ा देने के लिए परवेज़ के साथ जाना।
१६८३	१६२६	मुलतान की तरफ़ भेजा जाना।
१६८३	१६२६	बुरहानपुर में नियुक्ति।
१६८४	१६२७	तीन हज़ारी मनसब मिलना।
१६८४	१६२७	जागीर में नागोर आदि मिलना।
१६८४	१६२७	जागीर में मारोठ मिलना।
१६८५	१६२८	काबुल में नियुक्ति।
[१६८५]	[१६२८]	ओरछे पर भेजा जाना।
१६८६	१६३०	खानजहां पर भेजा जाना।
१६८८	१६३१	बुरहानपुर में देहांत।

महाराजा कर्णसिंह

१६८८	१६३१	गद्दीनशीनी।
१६८८	१६३१	शाही दरबार में जाना और दो हज़ारी मनसब मिलना।

वि० सं०	ई० स०	
१६८८	१६३१	महाराजा के भाई शत्रुशाल को मनसब मिलना।
१६८८	१६३२	अहमदनगर के फ़तहखां पर भेजा जाना।
१६६०	१६३४	परेंडा की चढ़ाई में शाही सेना के साथ रहना।
[१६६१]	[१६३४]	बुंदेले विक्रमाजीत का पीछा करना।
१६६२	१६३६	शाहजी पर ससैन्य जाना।
१६६५	१६३८	कुंवर अनूपसिंह का जन्म।
१६६८	१६४१	कुंवर केसरीसिंह का जन्म।
१७०१	१६४४	नागोर पर सेना भेजना।
१७०२	१६४५	कुंवर पद्मसिंह का जन्म।
१७०६	१६४६	ढाई हज़ारी मनसब होना।
१७०६	१६४६	कुंवर मोहनसिंह का जन्म।
१७०६	१६५२	तीन हज़ारी मनसब होना और दक्षिण में औरंगज़ेब के साथ नियुक्ति।
१७०६	१६५३	कुंवर अनूपसिंह का उदयपुर में विवाह।
१७१५	१६५८	धर्मातपुर के युद्ध के समय कुंवर केसरीसिंह तथा पद्मसिंह को औरंगज़ेब के पास रखकर बीकानेर जाना।
१७१५	१६५८	धौलपुर के युद्ध में कुंवर केसरीसिंह का सम्मिलित होना।
१७१५	१६५८	बादशाह औरंगज़ेब-द्वारा कुंवर केसरीसिंह को मीना-कारी की तलवार मिलना।
१७१७	१६६०	महाराजा का कुंवर अनूपसिंह तथा पद्मसिंह के साथ शाही दरबार में जाना।
१७१७	१६६०	बादशाह-द्वारा कर्णसिंह की दक्षिण में नियुक्ति।
१७२३	१६६६	चांदा के ज़मींदार को दंड देने के लिए जाना।
१७२४	१६६७	कुंवर केसरीसिंह की बंगाल में नियुक्ति।

वि० सं०	ई० स०	
१७२४	१६६७	बादशाह की अप्रसन्नता और उसका बीकानेर का राज्य और मनसब कुंवर अनूपसिंह के नाम करना।
१७२६	१६६९	कर्णसिंह की औरंगाबाद में मृत्यु।

महाराजा अनूपसिंह

१७२६	१६६९	गद्दीनशीनी।
१७२७	१६७०	दक्षिण में नियुक्ति।
१७२८	१६७१	मोहनसिंह का शाहज़ादे मुअज़्ज़म के साले मुहम्मदशाह (मीरतोज़क) के हाथ से घायल होकर मारा जाना।
१७२८	१६७१	पद्मसिंह का मुहम्मदशाह को मारकर भाई की मृत्यु का बदला लेना।
१७३२	१६७६	महाराणा राजसिंह का राजसमुद्र की प्रतिष्ठा के अवसर पर महाराजा के लिए ज़ेवर, सिरोपाव और हाथी-घोड़े भेजना।
१७३४	१६७७	महाराजा का औरंगाबाद का शासक बनाया जाना।
१७३५	१६७८	आदूणी में नियुक्ति।
१७३५	१६७८	अनूपगढ़ का निर्माण।
[१७३६]	[१६७९]	बनमालीदास को मरवाना।
१७३६	१६७९	मोरोपंत के साथ की मरहटी सेना को दमन करने के संबंध का शाही फ़रमान मिलना।
१७३९	१६८२	तासी (तापी) के पास मरहटी सेना से युद्ध करते हुए पद्मसिंह का मारा जाना।
१७४१	१६८५	केसरीसिंह की मृत्यु।

वि० सं०	ई० स०	
१७४३	१६८६	बीजापुर की चढ़ाई में बादशाह के साथ रहना।
१७४३	१६८६	सक्खर का शासक बनाया जाना।
१७४४	१६८७	गोलकुंडे की चढ़ाई के समय बादशाह-द्वारा बुलाया जाना।
१७४६	१६८९	पुनः आदूणी में नियुक्ति।
१७४६	१६८९	कुंवर स्वरूपसिंह का जन्म।
१७४७	१६९०	कुंवर सुजानसिंह का जन्म।
१७५५	१६९८	महाराजा का देहावसान।

महाराजा स्वरूपसिंह

१७५५	१६९८	आदूणी में गद्दीनशीनी।
[१७५६]	[१६९९]	राजमाता का मुसाहबों को मरवाना।
१७५७	१७००	महाराजा का आदूणी में देहांत।

महाराजा सुजानसिंह

१७५७	१७००	गद्दीनशीनी।
[१७५७]	[१७००]	बादशाह के पास दक्षिण में जाना।
१७६३	१७०७	जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई।
१७६९	१७१२	कुंवर जोरावरसिंह का जन्म।
१७७३	१७१६	महाराजा अजीतसिंह का महाराजा को पकड़ने का विफल प्रयत्न।
१७७६	१७१९	डूंगरपुर में विवाह।
१७७६	१७१९	डूंगरपुर से लौटते समय उदयपुर में ठहरना।

वि० सं०	ई० स०	
१७८०	१७२३	आनंदसिंह के पुत्र गजसिंह का जन्म।
१७८७	१७३०	विद्रोही भाटियों को दबाना।
१७८९	१७३३	महाराजा और उसके कुंवर जोरावरसिंह के बीच मनोमालिन्य होना।
१७८९	१७३३	जैमलसर के भाटियों पर चढ़ाई।
१७९०	१७३४	जोधपुर के महाराजा अभयसिंह का बख़्तसिंह के साथ बीकानेर पर सेना भेजना।
१७९१	१७३४	बख़्तसिंह का नापा सांखला के वंशधरों को मिलाकर बीकानेर के दुर्ग पर अधिकार करने का निष्फल प्रयत्न।
१७९२	१७३५	महाराजा का देहांत।

महाराजा जोरावरसिंह

१७९२	१७३६	गद्दीनशीनी।
[१७९२]	[१७३६]	जोधपुर के थानों को उठाना।
[१७९३]	[१७३६]	बख़्तसिंह और जोरावरसिंह के बीच मेल होना।
[१७९३]	[१७३६]	चूरू के ठाकुर संग्रामसिंह को पदच्युत करना।
१७९३	१७३६	महाराजा की माता का सोरों की यात्रा के लिए जाना।
१७९६	१७३९	जोधपुर के महाराजा अभयसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई।
१७९६	१७३९	जोहियों से भटनेर लेना।
१७९७	१७४०	अभयसिंह का दूसरी बार चढ़ाई कर बीकानेर को घेरना।

वि० सं०	ई० स०	
१७९७	१७४०	जयपुर के महाराजा जयसिंह का बीकानेर की सहायतार्थ जोधपुर को घेरना।
[१७९७]	[१७४०]	जोरावरसिंह का जयसिंह से मिलना।
१७९७	१७४०	उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (दूसरा) और कोटे के महाराव दुर्जनसाल से बांधनवाड़े में मुलाक़ात।
१७९७	१७४०	जोरावरसिंह का जयपुर जाना।
१७९७	१७४०	सांईदासोतों का दमन करना।
१७९८	१७४१	चूरू पर अधिकार करना।
[१७९८]	[१७४१]	जयपुर जाना।
[१७९८]	[१७४१]	जोहियों पर सेना भेजना।
[१८०१]	१७४४	जोरावरसिंह की माता-द्वारा कोलायत में मंदिर की प्रतिष्ठा।
१८०१	१७४४	महाराजा के चचेरे भाई गजसिंह के पुत्र राजसिंह का जन्म।
१८०१	१७४४	चांदी की तुला करना।
[१८०२]	[१७४५]	चंगोई, हिसार और फ़तिहाबाद पर अधिकार।
१८०३	१७४६	महाराजा का स्वर्गवास।

महाराजा गजसिंह

१८०३	१७४६	गद्दीनशीनी।
१८०४	१७४७	जोधपुर की सेना के साथ गजसिंह के भाई अमरसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई।
[१८०४]	[१७४७]	उपद्रवी बीदावतों को मरवाना।
[१८०४]	[१७४७]	नागोर के स्वामी बख़्तसिंह की सहायतार्थ सेना लेकर जाना।

वि० सं०	ई० स०	
[१८०४]	[१७४७]	बीकमपुर पर अधिकार।
१८०५	१७४८	महाराजा के पिता आनंदसिंह की मृत्यु।
[१८०६]	[१७४६]	महाजन के स्वामी भीमसिंह का क्षमा-प्रार्थी होना।
१८०६	१७४६	बीकमपुर पर जैसलमेरवालों का अधिकार।
१८०६	१७४६	बख़्तसिंह की सहायतार्थ जाना।
१८०६	१७४६	तारासिंह का अमरसिंह के मुक़ाबले में मारा जाना।
[१८०६]	[१७४६]	अमरसिंह को रिणी से निकालना।
१८०७	१७५०	बख़्तसिंह की सहायतार्थ पुनः जाना।
१८०८	१७५१	बख़्तसिंह को जोधपुर का राज्य दिलाना।
१८०८	१७५२	जैसलमेर में विवाह।
१८०९	१७५२	मूंधड़ा अमरसिंह को शेखावतों पर भेजना।
[१८०९]	[१७५२]	बख़्तसिंह की सहायता करना।
१८०९	१७५२	बादशाह की तरफ़ से हिसार का परगना मिलने पर मेहता बख़्तावरसिंह का वहां जाकर अधिकार करना।
[१८०९]	[१७५२]	बादशाह अहमदशाह की आज्ञा से मंसूरअली के दमन के लिए सेना भेजना।
[१८१०]	[१७५३]	बादशाह की तरफ़ से सात हज़ारी मनसब, माहीमरातिब का सम्मान एवं राजराजेश्वर, महाराजाधिराज और महाराजशिरोमणि की पदवियां मिलना।
[१८१०]	[१७५३]	बादशाह की तरफ़ से कुंवर राजसिंह को चार हज़ारी मनसब और मेहता बख़्तावरसिंह को 'राव' का ख़िताब मिलना।
१८११	१७५४	रामसिंह और जयआपा सिंधिया के मुक़ाबले में जोधपुर के स्वामी विजयसिंह की सहायतार्थ जाना।
[१८११]	[१७५४]	विजयसिंह का बीकानेर जाकर रहना।

वि० सं०	ई० स०	
[१८१२]	[१७५५]	विजयसिंह को साथ लेकर जयपुर जाना।
१८१२	१७५५	अकाल के समय मेहता भीमसिंह-द्वारा प्रबंध करवाना।
१८१२	१७५६	विजयसिंह का गजसिंह को ५२ गांव भेंट करने की सनद भेजना।
[१८१३]	[१७५६]	सांखू के ठाकुर शिवदानसिंह को क़ैदकर वहां की जागीर प्रेमसिंह को देना।
[१८१३]	[१७५६]	गजसिंह का जयपुर में विवाह।
[१८१३]	[१७५६]	नारणोतों, बीदावतों आदि को अधीन करना।
१८१३	१७५६	भाद्रा के लालसिंह का अपराध क्षमा करना।
[१८१३]	[१७५६]	रावतसर के ठाकुर से दंड लेना।
[१८१३]	[१७५६]	भट्टियों की सहायतार्थ सेना भेजना।
[१८१३]	[१७५६]	बादशाह आलमगीर (दूसरा) का सिरसे जाना।
१८१४	१७५७	नौहर के गढ़ का निर्माण।
[१८१४]	[१७५७]	महाराजा विजयसिंह को आर्थिक सहायता देना।
१८१६	१७५९	बीदासर जाना।
[१८१६]	[१७५९]	विजयसिंह की सहायतार्थ खींवसर जाना।
[१८१६]	[१७५९]	महाजन का बँटवारा कराना।
१८१७	१७६०	भट्टी हुसैन पर सेना भेजना।
[१८१७]	[१७६०]	अनूपगढ़ तथा मौजगढ़ पर चढ़ाई।
१८१८	१७६१	पूगल और रावतसर के सरदारों को दंड देना।
१८२०	१७६३	मेहता बख़्तावरसिंह के स्थान पर मूलचंद बरडिया की नियुक्ति।
१८२०	१७६३	जोहियों और दाऊदपुत्रों से लड़ाई।
१८२१	१७६४	महाराजा से सरदारों की अप्रसन्नता।
१८२२	१७६५	बख़्तावरसिंह का पुनः दीवान नियत होना।

वि० सं०	ई० स०	
१८२२	१७६५	कुंवर सूरतसिंह का जन्म।
१८२३	१७६६	राजगढ़ का बसाया जाना।
१८२३	१७६६	अजीतपुरा के ठाकुर को दंड देना।
१८२५	१७६८	महाराजा माधवसिंह की सहायतार्थ सेना भेजना।
१८२५	१७६८	महाराजा विजयसिंह की मुलाक़ात को मेड़ते जाना।
१८२५	१७६८	सिरसा और फ़तिहाबाद पर सेना भेजना।
१८२७	१७७०	कुंवर राजसिंह की पुत्री का जयपुर के महाराजा पृथ्वीसिंह से विवाह।
१८२८	१७७२	नाथद्वारे जाकर गोड़वाड़ पीछा महाराणा अरिसिंह को सौंपने के संबंध में जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को समझाना।
[१८२६]	[१७७२]	विद्रोही ठाकुरों पर सेना भेजना।
१८३०	१७७३	भट्टियों का पुनः विद्रोही होना।
[१८३०]	[१७७३]	महाराजकुमार राजसिंह का विद्रोहाचरण करना।
१८३६	१७७६	मेहता बख़्तावरसिंह की मृत्यु पर उसके पुत्र स्वरूपसिंह का दीवान होना।
१८३८	१७८१	कुंवर राजसिंह का जोधपुर जाकर रहना।
१८३८	१७८१	कुंवर राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह का जन्म।
१८४२	१७८५	कुंवर राजसिंह को जोधपुर से बुलाकर क़ैद करवाना।
१८४४	१७८७	महाराजा का परलोकवास।

महाराजा राजसिंह

१८४४	१७८७	गद्दीनशीनी।
१८४४	१७८७	महाराजा के भाई सुलतानसिंह, मोहकमसिंह और अजबसिंह का बीकानेर छोड़ना।

वि० सं०	ई० स०	
१८४४	१७८७	राजसिंह का विष-द्वारा देहांत।

महाराजा प्रतापसिंह

१८४४	१७८७	गद्दीनशीनी।
१८४४	१७८७	प्रतापसिंह का देहांत।

महाराजा सूरतसिंह

१८४४	१७८७	गद्दीनशीनी।
१८४७	१७९०	विद्रोहियों को दंड देना।
१८४७	१७९०	महाराजकुमार रत्नसिंह का जन्म।
१८४८	१७९१	महाराजा विजयसिंह का महाराजा के लिए टीका (राज्यतिलक) भेजना।
१८४८	१७९१	सुलतानसिंह का उदयपुर जाना।
१८५५	१७९८	जयपुर के स्वामी महाराजा प्रतापसिंह से मेल होना।
१८५६	१७९९	सूरतगढ़ बनवाना।
[१८५६]	[१७९९]	फ़तहगढ़ का निर्माण।
[१८५७]	[१८००]	जयपुर की सहायतार्थ सेना भेजना।
[१८५७]	[१८००]	जॉर्ज टॉमस की बीकानेर पर चढ़ाई।
१८५७	१८०१	भट्टियों से फ़तहगढ़ छुड़ाना तथा आस-पास नवीन थाने स्थापित करना।
[१८५७]	[१८०१]	मौजगढ़ के खुदाबख्श की सहायता करना।
१८५९	१८०२	खानगढ़ पर अधिकार।
१८६०	१८०३	चूरू के ठाकुर से दंड लेना।
१८६२	१८०५	भटनेर से भट्टियों को निकालकर उक्त दुर्ग का नाम हनुमानगढ़ रखना।
१८६३	१८०७	धोकलसिंह का पक्ष लेना।

वि० सं०	ई० स०	
१८६४	१८०७	जोधपुर को घेरना।
१८६४	१८०७	जोधपुर के महाराजा मानसिंह का बीकानेर पर सेना भेजना।
१८६४	१८०७	बीकानेर तथा जोधपुर राज्यों के बीच संधि होना।
१८६५	१८०८	मानस्टुअर्ट एल्फिन्स्टन का बीकानेर जाना।
१८६६	१८०९	विद्रोही सरदारों पर मंत्री अमरचंद का सेना के साथ जाना।
१८७०	१८१३	जोधपुर और बीकानेर के महाराजाओं के बीच मेल होना।
१८७०	१८१३	चूरू पर चढ़ाई।
१८७१	१८१४	चूरू पर राज्य का अधिकार होना।
[१८७१]	[१८१४]	मंत्री अमरचंद को मरवाना।
१८७२	१८१५	चूरू, भाद्रा आदि के सरदारों का उपद्रव।
१८७३	१८१६	मीरखां की बीकानेर पर चढ़ाई।
१८७३	१८१६	चूरू के ठाकुर पृथ्वीसिंह का पुनः उत्पात करना।
१८७३	१८१६	मीरखां की पुनः बीकानेर पर चढ़ाई।
१८७४	१८१७	पृथ्वीसिंह का चूरू पर अधिकार।
१८७४	१८१८	अंग्रेज़ सरकार से संधि।
१८७५	१८१८	महाराजा के पौत्र सरदारसिंह का जन्म।
१८७५	१८१८	अंग्रेज़ सरकार की सहायता से विद्रोही सरदारों का दमन करना।
१८७७	१८२०	महाराजकुमार रत्नसिंह और मोतीसिंह के उदयपुर में विवाह।
१८७८	१८२१	बारू के विद्रोही ठाकुर का राज्य की सेना-द्वारा मारा जाना।
१८७९	१८२२	जयपुर राज्य से नवाई और डूंडलोद वहां के हक़दारों को दिलाना।

वि० सं०	ई० स०	
[१८७९]	[१८२२]	टीबी के गांवों के संबंध में अंग्रेज़ सरकार के पास दावा पेश करना।
१८८१	१८२४	दद्रेवा के विद्रोही ठाकुर का दमन करना।
१८८४	१८२७	गवर्नर जेनरल लॉर्ड एम्हर्स्ट के पास मेहता अबीरचंद-द्वारा उपहार भेजा जाना।
१८८४	१८२७	टीबी और बेनीवाल के ४० गांव बीकानेर राज्य से पृथक् होना।
१८८५	१८२७	महाराजा का स्वर्गवास।

महाराजा रत्नसिंह

१८८५	१८२८	राज्याभिषेक।
१८८५	१८२८	अंग्रेज़ सरकार के आदेशानुसार जोधपुर के दावेदार धोकलसिंह को अपने राज्य में प्रवेश करने का निषेध करना।
१८८६	१८२९	जैसलमेर पर चढ़ाई।
[१८८६]	[१८२९]	मारोठ तथा मौजगढ़ के संबंध में अंग्रेज़ सरकार के पास दावा पेश करना।
१८८६	१८२९	जॉर्ज क्लार्क का डाकुओं के प्रबंध के लिए शेखावाटी में जाना।
[१८८६]	[१८२९]	सुराणा हुकुमचंद को डाकुओं के प्रबंध के लिए नियत करना।
१८८६	१८२९	महाजन पर राज्य का अधिकार।
[१८८७]	[१८३०]	महाजन के ठाकुर बैरिशाल का जैसलमेर जाना।
१८८७	१८३०	विद्रोही सरदारों का दमन करना।

वि० सं०	ई० स०	
१८८७	१८३०	भाद्रा के ठाकुर का पूगल पर आक्रमण।
१८८७	१८३१	कर्नल लॉकेट का शेखावाटी के लुटेरों के उपद्रव को रोकने जाना।
१८८८	१८३१	विद्रोहियों का उत्पात।
१८८८	१८३१	बादशाह अकबर (दूसरा) के पास से माहीमरातिब का सम्मान प्राप्त होना।
१८८८	१८३१	विद्रोही ठाकुरों का क्षमाप्रार्थी होना।
[१८८६]	[१८३२]	हरिद्वार-यात्रा।
१८८६	१८३३	महाराजकुमार सरदारसिंह का देवलिया में विवाह।
१८६०	१८३३	बीदावतों का देश में उपद्रव करना।
१८६०	१८३३	भाद्रा के ठाकुर प्रतापसिंह का लुटेरे सरदारों को आश्रय देना।
[१८६०]	[१८३३]	कुंभाणे की जागीर खालसा करना।
१८६१	१८३४	कर्नल एल्विस से मिलकर सीमा प्रांत के प्रबंध का निर्णय करना।
१८६१	१८३५	शेखावत डूंगरसिंह का पता लगाने के लिए लोढ़सर के ठाकुर को भेजना।
१८६२	१८३५	जैसलमेर के महारावल गजसिंह से मुलाक़ात होना।
१८६२	१८३६	अपने पूर्वजों के स्मारकों का जीर्णोद्धार करवाना।
१८६३	१८३६	गया-यात्रा के लिए जाना। मार्ग में भारत के गवर्नर जेनरल मेटकॉफ़ से मुलाक़ात तथा गया में राजपूतों से पुत्रियां न मारने की प्रतिज्ञा कराना।
१८६४	१८३७	गया से लौटते समय रीवां में महाराजकुमार सरदारसिंह का विवाह।
१८६४	१८३७	रीवां से लौटते समय विजयपुर और मांडा राज्यों में जाना।

वि० सं०	ई० स०	
१८६४	१८३७	मंघरासर के ठाकुर हरनाथसिंह को बाग़ियों को दंड देने के लिए भेजना।
[१८६४]	[१८३७]	सीमा-संबंधी निर्णय के लिए अंग्रेज़ अफ़सर की नियुक्ति।
१८६५	१८३८	बाग़ी सरदारों को दंड देना।
१८६६	१८३६	पुष्कर की यात्रा कर नाथद्वारे जाना और वहां उदयपुर के महाराणा सरदारसिंह से मुलाक़ात।
१८६६	१८३६	पंजाब के महाराजा रणजीतसिंह का देहांत होने पर उसके पुत्र खड्गसिंह के लिए टीका भेजना।
१८६६	१८४०	नाथद्वारे से उदयपुर जाकर महाराणा सरदारसिंह की राजकुमारी महताबकुंवरी से अपने पुत्र सरदारसिंह का विवाह करना।
१८६७	१८४०	महाराणा का गया-यात्रा से लौटते समय बीकानेर जाकर महाराजा रत्नसिंह की राजकुमारी से विवाह करना।
[१८६७]	[१८४०]	विद्रोही बख़्तावरसिंह का बंदी होना।
१८६८	१८४१	काबुल के युद्ध के समय अंग्रेज़ सरकार को ऊंटों की सहायता देना।
१८६६	१८४२	दिल्ली जाकर भारत के गवर्नर जेनरल (लॉर्ड एलिनबरा) से मुलाक़ात करना।
१८६६	१८४३	बाग़ियों के प्रबंध और गिरफ़्तारी के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से तक़ाज़ा।
१६००	१८४४	भावलपुर तथा सिरसा के मार्ग में सरायें, कुएं आदि बनवाना।
१६०१	१८४४	राजपूतों में कन्याएं न मारने की आज्ञा जारी करना।
१६०२	१८४५	बीदावत हरिसिंह का पकड़ा जाना।

वि० सं०	ई० स०	
१९०२	१८४५	भावलपुर के बागियों का बीकानेर में उपद्रव करना।
१९०२	१८४५	सिक्खों के साथ की लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार की सहायता।
[१९०३]	[१८४६]	भावलपुर के बागियों का पुनः उपद्रव।
१९०४	१८४७	शेखावत डूंगरसिंह की गिरफ़्तारी का प्रबंध करना।
[१९०४]	[१८४७]	शेखावत जुहारसिंह का पकड़ा जाना।
[१९०४]	[१८४७]	सिरसा में मुकुंदसिंह का उपद्रव करना।
१९०४	१८४८	महाराव हिंदूमल की मृत्यु।
[१९०५]	[१८४८]	मुलतान के दीवान मूलराज के बाग़ी होने पर उसके दमन में अंग्रेज़ सरकार की सहायता।
१९०५	१८४८	दूसरे सिक्ख-युद्ध में अंग्रेज़ सरकार की सहायता।
१९०६	१८४९	बीकानेर, भावलपुर तथा जैसलमेर की सीमाएं निर्धारित होना।
१९०७	१८५१	रतनबिहारीजी आदि के मंदिरों की प्रतिष्ठा।
१९०८	१८५१	महाराजा का स्वर्गवास

महाराजा सरदारसिंह

१९०८	१८५१	गद्दीनशीनी।
१९११	१८५४	सती-प्रथा और जीवित-समाधि की रोक।
१९११	१८५४	महाराजा गजसिंह के प्रपौत्र शक्तिसिंह के पौत्र डूंगरसिंह का जन्म।
१९११	१८५५	ईश्वरीसिंह पर सेना भेज कर चूरू ख़ाली कराना।
१९१२	१८५५	हरद्वार-यात्रा और अलवर में विवाह।
१९१४	१८५७	भारतीय सिपाही-विद्रोह के अवसर पर अंग्रेज़ सरकार की सहायता।
१९१६	१८५९	बीकानेर के सिक्के के लेख में परिवर्तन करना।

वि० सं०	ई० स०	
१६१८	१८६१	ग़दर की सेवा के उपलक्ष्य में टीबी परगने के ४१ गांव मिलना।
१६१८	१८६२	अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से गोद लेने की सनद मिलना।
१६२५	१८६८	कुछ सरदारों का विरोधी होना।
१६२५	१८६९	अंग्रेज़ सरकार के साथ अपराधियों के लेन-देन का इक़रार।
१६२८	१८७१	पंडित मनफूल को दीवान बनाना।
१६२८	१८७१	राज्य-शासन के लिए कौंसिल की स्थापना।
१६२९	१८७२	महाराजा का देहांत।

महाराजा डूंगरसिंह

१६२९	१८७२	गद्दीनशीनी।
१६२९	१८७२	कौंसिल-द्वारा जागीरदारों के झगड़े तय होना।
१६२९	१८७३	अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से गद्दीनशीनी की खिलअत आना।
१६३०	१८७३	पंडित मनफूल का बीकानेर से पृथक् होना।
१६३१	१८७४	विद्रोही सरदारों के उपद्रव को शांत करना।
[१६३१]	[१८७४]	जसाणा और कानसर के ठाकुरों के बीच झगड़ा।
१६३१	१८७४	सरदारों के मुक़द्दमों का फ़ैसला।
१६३१	१८७४	कर्नल लिविस पेली से सांभर में मुलाक़ात।
१६३१	१८७४	उदयपुर के महाराणा शंभुसिंह और अलवर के महाराजा शिवदानसिंह की मृत्यु पर शोक-प्रदर्शन।
१६३२	१८७५	बीदासर के महाजनों की शिकायतों की जांच कराना।
१६३२	१८७५	महाराव हरिसिंह को कौंसिल का सदस्य बनाना।
१६३२	१८७५	तीर्थ-यात्रा के लिए जाना।

वि० सं०	ई० स०	
१९३२	१८७६	यात्रा से लौटते समय महाराणी विक्टोरिया के ज्येष्ठ राजकुमार प्रिंस ऑव् वेल्स (स्वर्गीय सम्राट् सप्तम) से आगरे में मुलाक़ात करना।
१९३३	१८७६	महाराजा पर विष-प्रयोग का प्रयत्न।
१९३३	१८७७	कच्छ में विवाह।
१९३३	१८७७	दिल्ली-दरबार के उपलक्ष्य में झंडा आना।
[१९३५]	[१८७८]	शासन-सुधारों का सूत्रपात।
१९३५	१८७८	काबुल की दूसरी लड़ाई में अंग्रेज़ सरकार की सहायता।
१९३६	१८७९	अंग्रेज़ सरकार के साथ नमक का समझौता।
१९३७	१८८०	शिवबाड़ी में लालेश्वर का मंदिर बनवाना।
१९३७	१८८०	महाराजा डूंगरसिंह के छोटे भाई गंगासिंहजी का जन्म।
१९४०	१८८३	सरदारों की रेख में वृद्धि।
[१९४१]	[१८८४]	अमींमुहम्मदख़ां को दीवान बनाना।
१९४२	१८८५	भूमि की माप होकर लगान की रक़म निश्चित होना।
१९४३	१८८६	बीकानेर के क़िले में बिजली लगाना।
[१९४३]	[१८८६]	राज्य के पिछले ऋण की बेबाक़ी।
[१९४३]	[१८८६]	ठाकुरों के ज़ब्त गांवों का फ़ैसला।
१९४४	१८८७	महाराजा का परलोकवास।

महाराजा सर गंगासिंहजी

वि० सं०	ई० स०	
१९४४	१८८७	गद्दीनशीनी।
१९४४	१८८७	महाराजा के पिता लालसिंह का देहांत।
१९४४	१८८७	अपील कोर्ट की स्थापना।
१९४४	१८८७	लेफ़्टेनेंट कर्नल लॉक का पोलिटिकिल एजेंट नियत होना।

वि० सं०	ई० स०	
१९४४	१८८७	कर्नल वाल्टर का बीकानेर जाकर स्वर्गवासी महाराजा के निजी धन का बंटवारा करवाना।
१९४५	१८८८	आबू जाना।
१९४५	१८८८	दीवान अमीमुहम्मदखां की मृत्यु।
१९४५	१८८८	सोढ़ी हुकुमसिंह का दीवान नियत होना।
१९४६	१८८९	मेयो कॉलेज, अजमेर में दाख़िल होना।
१९४६	१८८९	अंग्रेज़ सरकार-द्वारा जोधपुर और बीकानेर राज्यों के सम्मिलित व्यय से रेल निकालने का इक़रारनामा होना।
१९४६	१८८९	जोधपुर और बीकानेर राज्यों के बीच अपराधियों के लेन-देन का इक़रारनामा होना।
१९४८	१८९१	जैसलमेर राज्य के साथ अपराधियों के लेन-देन का इक़रारनामा होना।
१९४८	१८९१	राजधानी बीकानेर तक रेलवे का खुलना।
१९४८	१८९१	पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट की स्थापना।
१९४८	१८९२	महाराजा का जोधपुर जाना।
१९४९	१८९२	जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह का बीकानेर जाना।
१९४९	१८९२	कोटे जाना।
१९५०	१८९३	पुराने सिक्के का चलन बंद होकर नया कलदार सिक्का जारी होना।
१९५१	१८९४	भूमि का बन्दोबस्त होकर लगान स्थिर होना।
१९५२	१८९५	चितराल के युद्ध में भाग लेने की इच्छा प्रकट करना।
१९५२	१८९५	जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंह की मृत्यु पर मातमपुर्सी के लिए जोधपुर जाना।

वि० सं०	ई० स०	
१६५२	१८६६	लाहौर, दिल्ली आदि नगरों की यात्रा।
१६५३	१८६६	पलाना गांव के पास कुआँ खोदते समय कोयले की खान का पता लगना।
१६५३	१८६६	घग्घर नदी से नहरें काटकर राज्य में जल लाने की व्यवस्था।
१६५३	१८६६	सुदान के युद्ध में भाग लेने की इच्छा प्रकट करना।
१६५३	१८६६	लॉर्ड एल्गिन का बीकानेर जाना।
१६५३	१८६६	भारत के कमांडर-इन-चीफ़ सर जॉर्ज व्हाइट का बीकानेर जाना।
१६५३	१८६७	कोटा के महाराव सर उम्मेदसिंहजी का बीकानेर जाना।
१६५४	१८६७	प्रतापगढ़ में विवाह।
१६५४	१८६७	इंदौर के महाराजा सर शिवाजीराव का बीकानेर जाना।
१६५५	१८६८	प्रथम राजकुमार रामसिंह का जन्म।
१६५५	१८६८	देवली जाकर सैनिक-शिक्षा प्राप्त करना।
१६५५	१८६८	रीवां, प्रतापगढ़, जोधपुर और धौलपुर के नरेशों का बीकानेर जाना।
१६५५	१८६८	बूंदी, कोटा और प्रतापगढ़ जाना।
१६५५	१८६८	राजपूताना के एजेंट-गवर्नर-जेनरल सर आर्थर मार्टिंडल का बीकानेर जाकर राज्यधिकार सौंपना।
१६५६	१८६६	दूसरा विवाह।
१६५६	१८६६	बोर-युद्ध में जाने की इच्छा प्रकट करना।
१६५६	१८६६	राज्य में भीषण अकाल पड़ना।
१६५७	१६००	महाराणी विक्टोरिया की तरफ़ से अंग्रेज़ी सेना में मेजर की माननीय उपाधि मिलना।
१६५७	१६००	चीन-युद्ध में अपनी सेना के साथ सम्मिलित होना।
१६५७	१६००	चीन-युद्ध से लौटना।

वि० सं०	ई० स०	
१९५७	१९००	के० सी० आई० ई० का ख़िताब मिलना।
१९५७	१९०१	महाराणी विक्टोरिया का परलोकवास।
१९५८	१९०१	भारत के कमांडर-इन-चीफ़ जेनरल सर पॉवर पामर का बीकानेर जाना।
१९५९	१९०२	सम्राट् एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेकोत्सव में सम्मिलित होने के लिए लंडन जाना।
१९५९	१९०२	महाराजकुमार शार्दूलसिंह का जन्म।
१९५९	१९०२	शासन-प्रणाली में परिवर्त्तन।
१९५९	१९०२	लॉर्ड कर्ज़न का बीकानेर जाना।
१९५९	१९०३	दिल्ली-दरबार में सम्मिलित होना।
१९५९	१९०३	जर्मनी के शाहज़ादे ग्रांड ड्यूक ऑव् हेसी तथा ड्यूक ऑव् कनाट का बीकानेर जाना।
१९५९	१९०३	सोमालीलैंड के युद्ध में सैनिक सहायता।
१९६०	१९०३	ग्वालियर के महाराजा सर माधवराव का बीकानेर जाना।
१९६१	१९०४	मैसूर के महाराजा सर कृष्णराज का बीकानेर जाना।
१९६१	१९०४	के० सी० एस० आई० का ख़िताब मिलना।
१९६२	१९०५	दक्षिण के करणपुरा, पदमपुरा और केसरीसिंहपुरा नामक गांवों के एवज़ में बीकानेर राज्य को बावलवास तथा रत्ताखेड़ा गांव एवं पच्चीस हज़ार रुपये मिलना।
१९६२	१९०५	उपद्रवी जागीरदारों का दमन करना।
१९६२	१९०५	प्रिंस ऑव् वेल्स (परलोकवासी सम्राट् जॉर्ज पञ्चम) का बीकानेर जाना।
१९६३	१९०६	लॉर्ड मिंटो का बीकानेर जाना।
१९६३	१९०७	जी० सी० आई० ई० का ख़िताब मिलना।
१९६४	१९०७	महाराजा की यूरोप-यात्रा।

वि० सं०	ई० स०	
१९६३	१९०६	महाराणी राणावत का देहावसान।
१९६४	१९०८	गया-यात्रा।
१९६५	१९०८	महाराजा का तीसरा विवाह।
१९६५	१९०९	अंग्रेज़ी सेना में लेफ़्टेनेंट-कर्नल नियत होना।
१९६५	१९०९	महाराजा का कलकत्ते और कपूरथला जाना।
१९६६	१९०९	महाराजकुमार विजयसिंह का जन्म।
१९६६	१९०९	महाराजा की माता का देहांत।
१९६६	१९१०	कपूरथला जाना।
१९६७	१९१०	महाराजा को कर्नल का ख़िताब मिलना और सम्राट् पञ्चम जॉर्ज का ए० डी० सी० नियत होना।
१९६७	१९१०	बीकानेर के पोलिटिकल एजेंट का पद टूटना।
१९६७	१९१०	बीकानेर में चीफ़ कोर्ट की स्थापना।
१९६८	१९११	सम्राट् जॉर्ज पञ्चम के राज्याभिषेक पर लंडन जाना।
१९६८	१९११	केम्ब्रिज युनिवर्सिटी की ओर से एल० एल० डी० (डाक्टर ऑव् लॉ) की माननीय उपाधि मिलना।
१९६८	१९११	रेल्वे लाइन का विस्तार होना।
१९६८	१९११	सम्राट् जॉर्ज पञ्चम के राज्याभिषेकोत्सव के दिल्ली-दरबार में जाना।
१९६८	१९११	जी० सी० एस० आई० का ख़िताब मिलना।
१९६९	१९१२	रजत जयन्ती।
१९६९	१९१२	बीकानेर से रतनगढ़ तक रेल्वे लाइन का जारी होना।
१९६९	१९१२	लॉर्ड हार्डिंज का बीकानेर जाना और पब्लिक पार्क का उद्घाटन करना।
१९६९	१९१३	नमक के संबंध में अंग्रेज़ सरकार से नवीन इक़रारनामा होना।
१९७०	१९१३	भारत के वाइसरॉय लॉर्ड हार्डिंज का पुनः बीकानेर जाना।

वि० सं०	ई० स०	
१९७०	१९१३	बीकानेर में प्रजा-प्रतिनिधि सभा की स्थापना।
१९७१	१९१४	यूरोप के महायुद्ध में अंग्रेज़ सरकार की सहायतार्थ सेना भेजना।
१९७१	१९१४	स्वयं यूरोप के युद्ध में भाग लेना।
१९७२	१९१५	युद्ध-क्षेत्र से लौटकर बीकानेर पहुंचना।
१९७२	१९१५	महाराजकुमारी चांदकुंवरी का परलोकवास।
१९७२	१९१५	लॉर्ड हार्डिंज-द्वारा महाराज लालसिंह के स्टेच्यु का उद्घाटन।
१९७२	१९१६	हिंदू युनिवर्सिटी, बनारस के शिलान्यासोत्सव पर बनारस जाना।
१९७२	१९१६	रतनगढ़ से सरदारशहर तक रेल्वे लाइन खुलना।
१९७३	१९१७	इंपीरियल वार केबिनेट और वार कान्फ़रेंस में सम्मिलित होने के लिए यूरोप जाना।
१९७४	१९१७	एडिनबरा युनिवर्सिटी की तरफ़ से एल० एल० डी० की डिग्री मिलना।
१९७४	१९१७	प्रजा-प्रतिनिधि सभा का क्षेत्र विस्तीर्ण कर उसको व्यवस्थापक सभा का रूप देना।
१९७४	१९१८	के० सी० बी० का खिताब मिलना।
१९७४	१९१८	ज़ाती सलामी की तोपों में दो तोपों की वृद्धि।
१९७४	१९१८	मिश्र के सुलतान-द्वारा ग्रांड कॉर्डन ऑव् दि ऑर्डर ऑव् दि नाइल का ख़िताब मिलना।
१९७५	१९१८	वॉर कॉन्फ़रेंस में सम्मिलित होने के लिए दिल्ली जाना।
१९७५	१९१८	युद्ध की समाप्ति पर संधि-सम्मेलन में भाग लेने के लिए यूरोप जाना।
१९७५	१९१९	जी० सी० बी० ओ० की उपाधि मिलना।
१९७५	१९१९	बीकानेर की सेना का मिश्र के युद्ध-क्षेत्र से लौटना।

वि० सं०	ई० स०	
१९७६	१९१९	वर्सेलिज़ के संधिपत्र पर हस्ताक्षर करना।
१९७६	१९१९	आक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी द्वारा डी० सी० एल० (डॉक्टर ऑव् सिविल लॉ) की उपाधि मिलना।
१९७७	१९२०	महाराजकुमार शार्दूलसिंह को शासनाधिकार देना।
१९७७	१९२०	लॉर्ड चेम्सफ़र्ड का बीकानेर जाना।
१९७७	१९२१	नरेन्द्र मंडल का चांसलर होना।
१९७७	१९२१	जी० बी० ई० की उपाधि मिलना।
१९७७	१९२१	बीकानेर राज्य में सलामी की तोपें सदा के लिए १९ नियत होना।
१९७८	१९२१	ज़मींदार परामर्शकारिणी सभा की स्थापना।
१९७८	१९२१	प्रिंस ऑव् वेल्स (भूतपूर्व सम्राट् एडवर्ड अष्टम) का बीकानेर जाना।
१९७८	१९२१	लॉर्ड रीडिंग का बीकानेर जाना।
१९७९	१९२२	महाराजकुमार शार्दूलसिंह का रीवां में विवाह।
१९७९	१९२२	महाराणी तंवर का देहांत।
१९७९	१९२२	बीकानेर में हाई कोर्ट की स्थापना।
१९८०	१९२३	भंवरबाई सुशीलकुंवरी का जन्म।
१९८१	१९२४	भंवर करणीसिंह का जन्म।
१९८१	१९२४	लीग ऑव् नेशन्स की मीटिंग में जेनेवा जाना।
१९८१	१९२४	बीकानेर राज्य की रेल्वे का प्रबंध पृथक् होना।
१९८२	१९२५	गंग नहर का शिलान्यास।
१९८२	१९२५	भंवर अमरसिंह का जन्म।
१९८३	१९२६	नरेंद्र-मंडल की तरफ़ से सम्मान प्रदर्शन।
१९८३	१९२७	सर मनुभाई मेहता को प्रधान मंत्री बनाना।
१९८३	१९२७	लॉर्ड इर्विन का बीकानेर जाना।
१९८४	१९२७	लॉर्ड इर्विन-द्वारा गंग नहर का उद्घाटन।

वि० सं०	ई० स०	
१९८४	१९२७	बनारस हिंदू युनिवर्सिटी-द्वारा एल० एल० डी० की डिग्री मिलना।
१९८६	१९२९	एडवाइज़री बोर्ड की संख्या में वृद्धि करना।
१९८७	१९३०	महाराजकुमारी शिवकुंवरी का कोटे के महाराजकुमार भीमसिंह के साथ विवाह।
१९८७	१९३०	लीग ऑव् नेशन्स की मीटिंग में भाग लेने के लिए यूरोप जाना।
१९८७	१९३०	लन्डन की राउन्ड टेबल कान्फ़रेंस में सम्मिलत होना।
१९८८	१९३१	द्वितीय गोलमेज़ सभा में सम्मिलित होना।
१९८८	१९३२	महाराजकुमार विजयसिंह का परलोकवास।
१९८९	१९३३	बड़ोदा के महाराजा सर सयाजीराव का बीकानेर जाना।
१९९०	१९३४	सर मनुभाई मेहता का मंत्री-पद से पृथक् होना।
१९९०	१९३४	लॉर्ड विलिंग्डन-द्वारा महाराजा के स्टेच्यु का उद्घाटन।
१९९२	१९३५	सम्राट् जॉर्ज पञ्चम की रजत जयंती के अवसर पर लन्डन जाना।
१९९२	१९३६	बड़ोदा के महाराजा सयाजीराव के स्टेच्यु का उद्घाटन।
१९९३	१९३७	उदयपुर जाना और महाराणा भूपालसिंहजी का बीकानेर जाना।
१९९३	१९३७	प्रिंस विजयसिंह की स्मृति में नवीन हॉस्पिटल का उद्घाटन।
१९९४	१९३७	सम्राट् जॉर्ज षष्ठ के राज्यभिषेकोत्सव पर लन्डन जाना।
१९९४	१९३७	स्वर्ण जयंती।

वि० सं०	ई० स०	
१६६४	१६३७	महाराणी भटियाणी को बनारस हिंदू युनिवर्सिटी-द्वारा डॉक्टरेट की उपाधि मिलना।
१६६५	१६३८	मैसूर जाना।
१६६५	१६३६	हैदराबाद, मैसूर, ट्रावनकोर आदि में भ्रमण करते हुए रामेश्वर जाना।

परिशिष्ट संख्या ४

मनसबदारी-प्रथा

बीकानेर राज्य के इतिहास में कई स्थलों पर वहां के राजाओं को मुग़ल बादशाहों की ओर से मनसब मिलने का उल्लेख आया है। भारत में मनसबदारी की प्रथा कब से जारी हुई, मनसब कितने प्रकार के होते थे तथा उनके पानेवालों को शाही दरबार से कितनी तनख़्वाहें मिलती थीं, इनका उल्लेख करना इतिहास के पाठकों की जानकारी के लिए आवश्यक है।

बादशाह अकबर के पहले दिल्ली के मुसलमान सुलतानों ने हिंदुओं को सैनिक-सेवा के उच्च पदों पर बहुधा नियत न किया, परन्तु अकबर ने उनकी इस नीति को हानिकारक जानकर अपनी सेना में सुन्नी, शिया और राजपूतों (हिंदुओं) के तीन दल इसी विचार से रखे कि यदि कोई एक दल बादशाह के प्रतिकूल हो जाय, तो दूसरे दो दल उसको दबाने में समर्थ हो सकें। इस सिद्धान्त को सामने रखकर अकबर ने सैनिक-सेवा के लिए मनसब का तरीक़ा जारी किया और कई हिंदू राजाओं, सरदारों तथा योग्य राजपूतों आदि को भिन्न-भिन्न पदों के मनसबों पर नियत किया।

पहले अमीरों के दर्जे नियत न थे और न यह नियम था कि कौनसा अमीर कितना लवाज़मा रक्खे और क्या तनख़्वाह पावे। अकबर ने फ़ौजी प्रबंध के लिए ६६ मनसब नियत किये और अपने अमीरों, राजाओं, सरदारों तथा जागीरदारों आदि को अलग-अलग दर्जे के मनसब देकर भिन्न-भिन्न मनसबों के अनुसार उनकी तनख़्वाहें एवं लवाज़मा भी नियत कर दिया। ये मनसब १० से लगा कर १०००० तक थे। प्रारंभ में शाहज़ादों के अतिरिक्त किसी को ५००० से ऊपर मनसब नहीं मिलता था, परन्तु पीछे इस नियम का पालन नहीं हुआ, क्योंकि राजा टोडरमल तथा कछवाहा

राजा मानसिंह को भी सात हज़ारी मनसब मिले थे तथा शाहज़ादों के मनसब १०००० से ऊपर बढ़ा दिये गये थे।

ये मनसब ज़ाती थे। इनके सिवा सवार अलग होते थे, जिनकी संख्या ज़ाती मनसब से अधिक नहीं, किंतु कम ही रहती थी, जैसे हज़ारी ज़ात, ७०० सवार; तीन हज़ारी ज़ात, २००० सवार आदि। कभी-कभी ज़ाती मनसब के बराबर सवारों की संख्या भी, लड़ाई आदि में अच्छी सेवा बजाने पर बढ़ा दी जाती, परन्तु ज़ात से सवारों की संख्या प्रायः न्यून ही रहती थी। अलबत्ता सवार दो अस्पा, से (तीन) अस्पा कर दिये जाते थे। दो अस्पा सवारों की तनख़्वाह मामूल से डेढ़ी और से अस्पा की दूनी मिलती थी, जिससे मनसबदारों को फ़ायदा पहुंच जाता था। बादशाह के प्रसन्न होने पर मनसब बढ़ा दिया जाता और अप्रसन्न होने पर घटा दिया या छीन भी लिया जाता था। मनसब के अनुसार माहवारी तनख़्वाह या जागीर मिलती थी। प्रत्येक मनसब के साथ घोड़े, हाथी, ऊंट, खच्चर और गाड़ियों की संख्या नियत होती थी और मनसबदार को निश्चित संख्या में वे रखने पड़ते थे, जैसे—

दस हज़ारी मनसबदार को ६६० घोड़े, २०० हाथी, १६० ऊंट, ४० खच्चर तथा ३२० गाड़ियां रखनी पड़ती थीं और उसकी माहवार तनख़्वाह ६०००० रुपये होती थी।

पांच हज़ारी को ३३७ घोड़े, १०० हाथी, ८० ऊंट, २० खच्चर तथा १६० गाड़ियां रखनी पड़ती थीं और उसका मासिक वेतन ३०००० रुपये होता था।

एक हज़ारी को १०४ घोड़े, ३० हाथी, २१ ऊंट, ४ खच्चर तथा ४२ गाड़ियां रखनी पड़ती थीं और उसे ८००० रुपये मासिक तनख़्वाह मिलती थी।

एक सदी (१००) वाले को १० घोड़े, ३ हाथी, २ ऊंट, १ खच्चर तथा ५ गाड़ियां रखनी पड़ती थीं और उसका मासिक वेतन ७०० रुपये होता था।

घोड़े अरबी, इराक़ी, मुजन्नस, तुर्की, टट्टू, ताज़ी और जंगला रक्खे जाते थे। उनमें से प्रत्येक जाति की संख्या भी नियत रहती और जाति के अनुसार प्रत्येक घोड़े की तनख़्वाह अलग-अलग होती थी, जैसे अरबी की १८ रुपये माहवार तो जंगले की ६ रुपये। इसी तरह हाथी भी अलग-अलग जाति के अर्थात् मस्त, शेरगीर, सादा, मंझोला, करहा, फंदरकिया तथा म्योकल होते थे और उनकी तनख़्वाहें भी जाति के अनुसार अलग-अलग नियत थीं, जैसे मस्त की ३३ रुपये माहवार तो म्योकल की ७ रुपये। ऊंट की माहवार तनख़्वाह ६ रुपये, खच्चर की ३ और गाड़ी की १५ रुपये थी।

सवारों के अनुसार मनसब के तीन दर्जे होते थे। जिसके सवार मनसब (ज़ात) के बराबर होते वह प्रथम श्रेणी का, जिसके सवार मनसब से आधे या उससे अधिक होते वह दूसरी श्रेणी का और जिसके आधे से कम होते वह तीसरी श्रेणी का माना जाता था। इन श्रेणियों के अनुसार मनसबदार की माहवारी तनख़्वाह में भी थोड़ा सा अंतर रहता था, जैसे प्रथम श्रेणी के ५ हज़ारी मनसबदार की माहवारी तनख़्वाह ३०००० रुपये तो दूसरी श्रेणीवाले की २९००० और तीसरी श्रेणीवाले की २८००० होती। इसी तरह घोड़ों के सवारों की तनख़्वाहें भी घोड़ों की जाति के अनुसार अलग-अलग होती थीं। जिसके पास इराक़ी घोड़ा होता उसको ३० रुपये माहवार, मुजन्नसवाले को २५, तुर्कीवाले को २०, टट्टूवाले को १८, ताज़ीवाले को १५ और जंगलावाले को १२ रुपये माहवार मिलते थे। घोड़ों के दाग़ भी लगाये जाते थे और उनकी हाज़िरी भी ली जाती थी। यदि नियत संख्या से घोड़े आदि कम निकलते तो उनकी तनख़्वाह काट ली जाती थी। मनसबदारी का यह तरीक़ा अकबर के पीछे ढीला पड़ गया और बाद में तो यह नाममात्र का प्रतिष्ठा-सूचक ख़िताब सा हो गया था।

मनसब का यह वृत्तांत पढ़कर पाठकों को आश्चर्य होगा और वे अवश्य ही यह प्रश्न करेंगे कि दस हज़ारी मनसबदार अपने मासिक वेतन के ६०००० रुपयों में ६६० घोड़े (सवार और साज-सहित), २०० हाथी,

१६० ऊंट, ४० खच्चर और ३२० गाड़ियां सैनिक सेवा के लिए उत्तम स्थिति में कैसे रख सकता था; परन्तु इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है, क्योंकि उस समय प्रत्येक वस्तु बहुत सस्ती मिलती थी अर्थात् जितनी चीज़ उस वक्त एक आने में मिलती थी, उतनी आज एक रुपये की भी नहीं मिल सकती। बिलकुल साधारण स्थिति के मनुष्य को भी उस समय बहुत ही थोड़े व्यय में उत्तम खाद्य-पदार्थ तथा अन्य आवश्यक वस्तुएं मिल सकती थीं। 'आईन-इ-अकबरी' में अकबर के राज्य के प्रत्येक सूबे की उन्नीस वर्ष (सन् जुलूस या राज्यवर्ष ६ से २४ = वि० सं० १६१७ से १६३५ तक) की भिन्न-भिन्न वस्तुओं की औसत दर नीचे लिखे अनुसार दी है—

पदार्थ	भाव				पदार्थ	भाव			
	रु०	आ०	पा०			रु०	आ०	पा०	
गेहूँ ...	०	४	६	मन	घी ...	२	१०	०	मन
काबुली चने ...	०	६	३	"	तेल ...	२	०	०	"
देशी चने ...	०	३	३	"	दूध ...	०	१०	०	"
मसूर ...	०	४	६	"	दही ...	०	७	०	"
जौ ...	०	३	३	"	शक्कर (सफ़ेद)	३	३	३	"
चावल (बढ़िया)	२	४	०	"	शक्कर (लाल)	१	६	६	"
चावल (घटिया)	१	०	०	"	नमक ...	०	६	६	"
साठी चावल ...	०	३	३	"	मिरच ...	१	६	६	"
मूंग ...	०	७	३	"	पालक ...	०	६	६	"
उड़द ...	०	६	६	"	पोदीना ...	१	०	०	"
मोठ ...	०	४	६	"	कांदा (प्याज़)	०	२	६	"
तिल ...	०	६	६	"	लहसुन ...	१	०	०	"
जवार ...	०	४	०	"	अंगूर ...	२	०	०	"
मैदा ...	०	८	६	"	अनार (विलायती)	६ से १५	८ ०		"
भेड़ का मांस	१	१०	०	"	खरबूज़ा ...	१	०	०	"
बकरे का मांस	१	५	६	"	किशमिश ...	०	३	६	सेर

पदार्थ		भाव	पदार्थ		भाव
		रु० आ० पा०			रु० आ० पा०
सुपारी	...	० १ ६ सेर	मिसरी	...	० २ ६ सेर
बादाम	...	० ४ ६ "	कंद (सफ़ेद)		० २ ३ "
पिस्ता	...	० ३ ६ "	केसर	...	१० ० ० "
अखरोट	...	० २ ० "	हल्दी	...	० ० १ "
चिरौंजी	...	० ७ ६ "			

अकबर के समय का मन, २६ सेर १० छटांक अंग्रेज़ी के बराबर होता था और अकबरी रुपया भी कलदार से न्यून नहीं था। उपर्युक्त भाव देखकर पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं कि उस समय मनसबदार और उनके सैनिक अपना निर्वाह भली भांति किस प्रकार कर सकते थे। मज़दूरों और नौकरों के वेतन का भी अनुमान इसी से किया जा सकता है।

परिशिष्ट संख्या ५

बीकानेर राज्य के इतिहास की दोनों जिल्दों के प्रणयन में जिन-जिन पुस्तकों से सहायता ली गई अथवा प्रसंगवश जिनका उल्लेख किया गया है उनकी सूची।

संस्कृत

अनूपकौतुकार्णव (रामभट्ट)।

अनूपमहोदधि (महाराजा अनूपसिंह)।

अनूपमहोदधि (वीरसिंह ज्योतिषी)।

अनूपमेघमाला (रामभट्ट)।

अनूपरत्नाकर (महाराजा अनूपसिंह)।

अनूपविलास (मणिराम दीक्षित)।

अनूपविवेक (महाराजा अनूपसिंह)।

अनूपव्यवहारसागर (मणिराम दीक्षित)।

अनूपसंगीतरत्नाकर (भावभट्ट)।

अनूप संगीतविलास (भावभट्ट)।

अमृतमंजरी (होसिंगभट्ट)।

अयुतलक्षहोमकोटिप्रयोग (भद्रराम)।

कर्णभूषण (पंडित गंगानंद मैथिल)।

कर्णसंतोष (कवि मुद्गल)।

कर्णावतंस (होसिंगभट्ट)।

कर्मचन्द्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम् (कवि जयसोम)।

कविप्रिया (टीका, महाराजा जोरावरसिंह)।

कामप्रबोध (महाराजा अनूपसिंह)।

कामप्रबोध (जनार्दन)।

काव्य डाकिनी (पंडित गंगानंद मैथिल)।
केरलीसूर्य्यारुणस्य टीका (पन्तुजी भट्ट)।
कौतुकसारोद्धार (महाराजा अनूपसिंह)।
गीतगोविन्द की अनूपोदय टीका (महाराजा अनूपसिंह)।
गंगासिंहकल्पद्रुम (पंडित देवीप्रसाद शास्त्री)।
चिकित्सामालतीमाला (महाराजा अनूपसिंह)।
ज्योतिषरत्नाकर अथवा ज्योतिषरत्नमाला (महाराजा रायसिंह)।
ज्योत्पत्तिसार (विद्यानाथ सूरि)।
तीर्थरत्नाकर (अनन्तभट्ट)।
तंत्रलीला (तर्कानन सरस्वती भट्टाचार्य)।
दशकुमारप्रबंध (शिवराम)।
नष्टोद्दिष्टप्रबोधकध्रौपदटीका (भावभट्ट)।
पाण्डित्यदर्पण (उदयचन्द्र)।
पूजापद्धति (महाराजा जोरावरसिंह)।
पृथ्वीराजविजयमहाकाव्य (जयानक)।
भट्टिवंशप्रशस्तिकाव्य (गोविन्द मधुवन व्यास)।
भागवत पुराण।
भावप्रकाश।
महाभारत (वेदव्यास)।
महाशान्ति (रामभट्ट)।
महेश्वर की शब्दभेद टीका (जैन साधु ज्ञानविमल)।
माधवीयकारिका (शांबभट्ट)।
यंत्रकल्पद्रुम (विद्यानाथ)।
यंत्रचिन्तामणि (दामोदर)।
रसिकप्रिया (टीका, महाराजा जोरावरसिंह)।
राजप्रशस्तिमहाकाव्य (रणछोड़ भट्ट)।
रायसिंहमहोत्सव (महाराजा रायसिंह)।

रुद्रपति (? रामभट्ट) ।
लक्ष्मीनारायणपूजासार (महाराजा अनूपसिंह) ।
लक्ष्मीनारायणस्तुति (महाराजा अनूपसिंह) ।
लक्ष्मीनारायणस्तुति (शिवनंदनभट्ट) ।
लक्ष्मीनारायणस्तुति (शिव पंडित) ।
वायुस्तुतनुष्ठानप्रयोग (? रामभट्ट) ।
वृत्तसारावली (यशोधर) ।
वैद्यकसार (महाराजा जोरावरसिंह) ।
शब्दकल्पद्रुम (राजा राधाकान्तदेव) ।
शान्तिसुधाकर (विद्यानाथसूरि) ।
शिवताण्डव की टीका (नीलकंठ) ।
शुकसप्तति ।
शुभमंजरी (अम्बकभट्ट) ।
श्राद्धप्रयोगचिन्तामणि (महाराजा अनूपसिंह) ।
सन्तानकल्पलता (महाराजा अनूपसिंह) ।
सहस्रार्जुनदीपदान (त्रिम्बक) ।
साहित्यकल्पद्रुम ।
संगीतअनूपांकुश (भावभट्ट) ।
संगीतअनूपोद्देश्य (रघुनाथ गोस्वामी) ।
संगीतवर्तमान (महाराजा अनूपसिंह) ।
संगीतानूपराग (महाराजा अनूपसिंह) ।
संग्रहरत्नमाला (महाराजा अनूपसिंह) ।
संगीतविनोद (भावभट्ट) ।
संस्कृत व भाषा कौतुक (महाराजा अनूपसिंह) ।
सांबसदाशिवस्तुति (महाराजा अनूपसिंह) ।

हिन्दी

अकबरनामा (मुंशी देवीप्रसाद) ।
आर्य आख्यान कल्पद्रुम (दयालदास) ।
इतिहास राजस्थान (रामनाथ रत्नू) ।
ऐतिहासिक बातों का संग्रह (कविराजा बांकीदास) ।
औरंगज़ेबनामा (मुंशी देवीप्रसाद) ।
गीता की टीका (नाज़र आनंदराम) ।
ग्रंथराज अथवा महाराजा गजसिंहजी रो रूपक (गाडण गोपीनाथ) ।
जटमल ग्रंथावली ।
जयपुर राज्य की ख्यात ।
जसरत्नाकर ।
जहांगीरनामा (मुंशी देवीप्रसाद) ।
जैसलमेर की तवारीख (लक्ष्मीचन्द्र) ।
जोधपुर राज्य की ख्यात ।
ढोला मारू रा दूहा ।
तवारीख बीकानेर (मुंशी सोहनलाल) ।
दयालदास की ख्यात (दयालदास) ।
दूहा रत्नाकर ।
देशदर्पण ।
दंपतिविनोद (जोशीराय) ।
नैणसी की ख्यात (मुंहणोत नैणसी) ।
बीदावतों की ख्यात (ठाकुर बहादुरसिंह) ।
मआसिरुलूउमरा (व्रजरत्नदास, बी० ए०) ।
भीमविलास (कृष्णकवि) ।
महाराजा गजसिंह रो रूपक (सिंढायच फ़तेराम) ।

महाराजा गजसिंहजी रा गीत कवित्त दूहा (सिंढायच फ़तेराम)।
मूंदियाड़वालों की ख्यात।
रतनजसप्रकाश।
रतनरूपक (कवि सागरदान)।
रतनविलास (बीठू भोमा)।
राजकुमार अनोपसिंह री वेल (गाडण वीरभाण)।
राजपूताने का इतिहास (गौरीशंकर हीराचंद ओझा)।
राजरसनामृत (मुंशी देवीप्रसाद)।
राजस्थान के लोकगीत।
राजस्थान रा दूहा (स्वामी नरोत्तमदास, एम० ए०)।
राजस्थान के वीरगीत।
राजा रायसिंहजी री वेल।
राव कल्याणमलजी का जीवनचरित्र (मुंशी देवीप्रसाद)।
राव जैतसीजी का जीवनचरित्र (मुंशी देवीप्रसाद)।
राव जैतसी रो छन्द (बीठू सूजा)।
राव बीकाजी का जीवनचरित्र (मुंशी देवीप्रसाद)।
राव लूणकर्णजी का जीवनचरित्र (मुंशी देवीप्रसाद)।
वरसलपुरविजय अर्थात् महाराजा सुजानसिंह रो रासो (मथेन जोगीदास)।
वीरविनोद (कविराजा श्यामलदास)।
वेतालपच्चीसी।
वेलि क्रिसन रुकमणी री (महाराज पृथ्वीराज)।
शुकसारिका।
सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र।

फ़ारसी तथा उर्दू

अकबर नामा (अबुल्फ़ज़ल)।
आईन-इ-अकबरी (अबुल्फ़ज़ल)।
इक़बालनामा जहांगीरी (मोतमिदख़ां)।
उमराएहनूद (मुंशी मुहम्मद सईद अहमद)।
क़ज़वीनी।
तकमील-इ-अकबरनामा (इनायतुल्ला)।
तज़किरतुल वाक़यात (जौहर)।
तबकात-इ-अकबरी (निज़ामुद्दीन अहमद बख़्शी)।
तारीख़-इ-शेरशाही (अब्बासख़ां शीरवानी)।
बादशाहनामा (अब्दुलहमीद लाहौरी)।
मआसिर-इ-जहांगीरी (कामगारख़ां)।
मआसिरुल् उमरा (शाहनवाज़ख़ां)।
मुरु-जल-जहब (अल्मसऊदी)।
मुंत्तख़बुत्तवारीख़ (अल्बदायूनी)।
सवाने उम्री रउसा और शरफ़ा (रायबहादुर सोढ़ी हुकमसिंह)।
सिलसिलेतुत्तवारीख़ (सुलेमान सौदागर)।

मराठी

इतिहास संग्रह (पार्सनिस)।

चीनी

सी—यु—की।

अंग्रेज़ी ग्रन्थ

Aitchison, C. U.—Collection of Treaties, Engagements and Sanads.
Archæological Survey of India, Annual Reports.
Aufrecht, Theodor—Catalogus Catalogorum.
Banarsi Prasad Saxena, Dr —History of Shahjahan of Delhi.
Beal, S.—Buddhist Records of the Western World.
Beale, Thomas William—An Oriental Biographical Dictionary.
Beniprasad, Dr.—History of Jahangir.
Beveridge, H.—Akbarnama (English Translation)
Blochmann, H.—Ain-i-Akbari (English Translation).
Boileau, A. H. E —Personal Narrative of a Tour through the Western States of Rajwara.
Bombay Gazetteer.
Briggs, John—History of the Rise of the Mohammadan Power in India (Translation of Tarikh-i-Ferishta of Mohomed Kasim Ferishta).
Burgess, Dr James—A Chronology of Modern India.
Compton, H —European Military Adventures of Hindustan.
Cooper, Fredrick—The Crisis in the Punjab from the Tenth of May until the Fall of Delhi.
Dalal, C D.—A Catalogue of Manuscripts in the Jain Bhandars at Jaisalmer.
Dodwell, H. H.—The Cambridge History of India (Vol V.).
Duff, C Mabel—Chronology of India.
Elliot, Sir H W.—The History of India as told by its own Historians.
Elphinstone, Mountstuart—An Account of the kingdom of Cabul.
Encyclopaedia Britanica.
Epigraphia Indica.
Erskine, K. D —Gazetteer of the Bikaner State.
Franklin, William—Military Memoirs of Mr George Thomas.
Fraser, James Baillie—Military Memoirs of Lt.-Colonel James Skinner.
Imperial Gazetteer of India.
Indian Antiquary.
Irvine, William—Later Mughals.
Journal of the Asiatic Society of Bengal.
Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society.

Jwala Sahay—The Loyal Rajputana.

Kincaid and Parasnis—A History of the Maratha People.

List of Ruling Princes, Chiefs and Leading Personages.

Lowe, W. H.—Muntakhabuttawarikh (English Translation).

Malleson, George Bruce—A Historical Sketch of the Native States of India.

Manucci, Niccolao—Storia Do Mogor (English Translation by William Irvine)

Memoranda on the Indian States—1938.

Mitra, Dr. Rajendralal—Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Library of His Highness the Maharaja of Bikaner.

Official History of the Great-War—Military Operations in Egypt and Palestine,

Panikkar, K M—His Highness the Maharaja of Bikaner—A Biography.

Peterson, P.—Catalogue of the Sanskrit Manuscripts in the Library of His Highness the Maharaja of Alwar

Powlett, Col P. W—A Gazetteer of the Bikaner State.

Prior, Lt-Col. P. W.—History of the Thirteenth Rajputs (The Shekhawati Brigade)

Prinsep, H. T—A History of the Political and Military Transactions in India during the Administration of the Marquis of Hastings.

Qanungo, K. R—Shershah

Rogers and Beveridge—Memoirs of Jahangir (Tuzuk-i-Jahangiri).

Sarkar, Sir J N—Fall of the Mughal Empire.

Sarkar, Sir J N—Short History of Aurangzeb.

Scot, Jonathan—History of Deccan.

Showers—A Missing Chapter in the Indian Mutiny.

Shriram, Mirmunshi—Tazimi Rajvis, Thakurs and Khawaswals of Bikaner

Sleeman, Major-General Sir W. H.—Rambles and Recollections of an Indian Official

Smith, Vincent—The Oxford History of India.

Stein, Dr. M. A—Catalogue of the Sanskrit Manuscripts in Raghunath Temple Library of His Highness the Maharaja of Jammu and Kashmir

Tessitory, Dr L P—Bardic and Historical Manuscripts.

Tod, Col James—The Annals and Antiquities of Rajasthan (Edited by Crooke)

Waddington, C. W.—Indian India

Webb, W. W.—The Currencies of the Hindu States of Rajputana.

अनुक्रमणिका

(क) वैयक्तिक[1]

---

(१) पृष्ठ संख्या १ से ३६६ तक के नाम प्रथम खंड में और ३६७ से ७६८ तक के द्वितीय खंड में देखना चाहिए ।

ई

उ

छ

ज

ट

ठ

ड

प

ब

भ

स

ह

(ख) भौगोलिक[1]



(१) पृष्ठसंख्या १ से ३६६ तक के नाम प्रथम खंड में और ३६७ से ७६८ तक के द्वितीय खंड में देखना चाहिए ।

आ

इ

ई

उ

ऊ

ए

ओ

औ

क

झ

प

फ़

ब

भ

म

ल

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३७४	१	भटिंडा	भटिंडा ? (भटनेर)
३६४	१५	सरदार	व्यक्ति
३६८	१५	१६०००	१४०००
४१७	६	गोरा	जोरा
४२१	१०	सांडों	सांढों
४२६	१८	जुहारसिंह	शेखावत जुहारसिंह
४३१	१६	अन्नजी भी	अन्नजी भी पुनः
४३३	टिप्पण ११	प्रंशसा	प्रशंसा
४३४	२३	जेल से भागकर	भागकर
४६४	११	वातचित	वातचीत
४७२	दायरा २	सदय	सदस्य
४६१	१४	वलिष्ट	वलिष्ठ
५०३	२४	१८५६	१६५६
५०३	२५	अतिन्म	अंतिम
५०८	२२	लेन	लेने
५११	२०	००	१००
५२३	१४	से	में
५२३	१४	सुजानगढ़ तक हिसार	सुजानगढ़-हिसार
५२४	१५	मनान	मनाना
५३४	२४	गया	गये
५५६	७	परिस्थितवश	परिस्थितिवश

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५७१	१६	तद्न्तर	तदनन्तर
५६०	दायरा २	में	मैं
५६१	२०	अतिथ्य	आतिथ्य
६२१	४	से	वहां से
६६१	टि० १४	१६८५	१६८४
६६१	टि० १५	१६२८	१६२७
७३२	१०	स्वर्ण	स्वर्ण
७६१	४	देहात	देहान्त
७६२	३	कूकरिया	कूकणिया
७६२	४	वसिया	वनिया
७६२	१५	फूलदान	मूलदान
७६८	८	कस्तूरमल	कस्तूरचंद
७८१	१३	क	के
७६४	१७	ह्वोना	होना
७६७	२०	राज्यधिकार	राज्याधिकार
८६५	कालम२-२८	मार्ने (नगर)	मार्ने (नदी)